प्रेमचन्द के साहित्य में शिशु-मनोविज्ञान

(इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी॰ फिल्॰ उपाधि के लिए प्रस्तुत)

शोध-प्रबन्ध

•

प्रस्तुतकर्त्री —
श्रीमती सुज्ञाना क्षत्री

•

निर्देशक—
पद्मभूषण डा॰ रामकुमार वर्मा

हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
जुलाई, १९७२

विषयानुक्रमणिका

विषयनुक्रमणिका

विषय	पृष्ठसंख्या
अध्याय --७ : प्रेमचन्द के शिशु चरित्र	२६२-४१२

(प) वर्गगत

(क) समूह परक शिशु चरित्र--

(अ) स्नेह पाने वाला शिशु पात्र, (ब) स्नेह वंचित शशुपात्र

(स) समूह की भावना को प्रबल मानने वाला शिशु वर्ग,

(द) सामाजिक आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा शिशु वर्ग,

(य) दुर्ललित शिशु वर्ग (र) बाल विधवा शिशु वर्ग ।

(ख) विशिष्ट व्यक्ति परक शिशु चरित्र

(ग) द्विपदीय शिशु पात्र

(घ) स्थिर चरित्र

(ङ) चल- चरित्र

(च) उच्च वर्ग के शिशु पात्र

(छ) मध्य वर्ग के शिशु पात्र

(ज) निम्नवर्ग के शिशु पात्रों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन ।

(फ) मनोगत

विविध आयु वर्ग का मनोवैज्ञानिक अध्ययन

१- जन्म से दो वर्ष तक के शिशु पात्रों का अध्ययन (क्रियात्मक विकास, भावात्मक,क्रियात्मक तथा भाषा विकास के क्रम में दो वर्ष के शिशु का उपक्रम, स्नेहधात्री से अलग होने के समय व दो वर्ष के शिशु का भाव और प्रतिक्रियाएं, नवीन चीजों की ओर आकर्षण का भाव, शिशु में अनुकरण करने की प्रवृत्ति) ।

२- दो से चार वर्ष तक के शिशु पात्रों का अध्ययन ।

३- चार से छ: वर्ष तक के शिशु पात्रों का अध्ययन ।

४- छ: से आठ वर्ष तक के शिशु पात्रों का अध्ययन ।

५- आठ से दस वर्ष तक के शिशु पात्रों का अध्ययन ।

प्राक्कथन

प्राक्कथन

हिन्दी के जिन साहित्यकारों ने शोध-कर्त्ताओं का ध्यान अपनी ओर सर्वाधिक आकृष्ट किया है, उनमें प्रेमचन्द पहली पंक्ति में आते हैं । प्रेमचन्द की कहानियों और उपन्यासों,उनके चरित्रों और उनके साहित्य के विविध उद्देश्यों को ध्यान में रखकर अनेक विद्वानों ने उनका बहुविध अध्ययन प्रस्तुत किया है ।

स्कूलों से लेकर विश्वविद्यालयों तक प्रेमचन्द की कहानियों और उपन्यासों के पाठ्यक्रम में आ जाने से उनपर सस्ते नोटों से लेकर अत्यन्त गवेषणा-पूर्ण प्रबन्धों तक का विपुल साहित्य तैयार हो चुका है । उनके चरित्रों का भी अध्ययन किसी-न-किसी रूप में किया जा चुका है, किया जा रहा है । प्रेमचन्द के पुरुष पात्रों और नारी पात्रों की चर्चा ब्यौरे से की गई है । उनको हिन्दी साहित्य और हिन्दीतर साहित्य के विशाल परिवेश में रखकर देखा गया है । उनके चरित्रों का सामाजिक आर्थिक आधार ढूंढ़कर उनका समाज-वैज्ञानिक अध्ययन भी प्रस्तुत हुआ है,किन्तु प्रेमचन्द के शिशु-पात्रों चरित्रों की ओर किसी का ध्यान नहीं गया है । कुछ तो इसलिए कि प्रेमचन्द के पुरुष और नारी पात्र ही अपनी व्यापकता और विविधता में वैज्ञानिक दृष्टि से पूर्णतया विश्लेषित होते रहे हैं । शिशु या बाल पात्रों पर अधिक ध्यान नहीं दिया गया । उनके पात्रों का चित्रण कहीं-कहीं उपस्थित तो किया गया है, पर उनका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण उपेक्षित रहा है और कुछ इसलिए कि साधारणतया प्रेमचन्द के शिशु-चरित्रों को उनकी विशेष देन के रूप में स्वीकार करने की आवश्यकता ही नहीं समझी गई । अपने शोध के सिलसिले में जिन महत्वपूर्ण निष्कर्षों तक मैं पहुंची हूं, वे इस बात को

पुष्ट करने के लिए पर्याप्त हैं कि उनके शिशु-चरित्र हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है और उनके व चित्रण में कलाकार ने कला की सूक्ष्मता तथा मानवीय पक्ष की अद्भुत पकड़ का परिचय दिया है और साहित्यकारों की भावी पीढ़ी को एक नई प्रेरणा भी प्रदान की है, ऐसा मैं मानती हूं।

मैंने प्रस्तुत प्रबन्ध में प्रेमचन्द के कथा-साहित्य के शिशु और बाल-पात्रों का ही विवेचन किया है। कहानी और उपन्यास साहित्य की दो पृथक् और भिन्न विधाएं हैं। चरित्रों का आकलन, चित्रण और प्रक्षेपण इनमें नितान्त भिन्न दृष्टियों और शैलियों से होता है। कहानी का चरित्र एक अलग पृष्ठभूमि और घटनाचक्र लेकर आता है। उसका चित्र सीमित होता है। वह बहुरंगा नहीं होता। उसके जन्म और विकास की क्रमिक या आकस्मिक गति नितान्त अपनी होती है। उपन्यास में यह सब कुछ भिन्न होता है। अत: एक ही साथ दोनों को लेने का अर्थ है -- सैद्धान्तिक और अध्ययनगत कुछ जटिलताओं को स्वीकार करना तथा भिन्न क्षेत्रों के निष्कर्षों को कहीं सम पर लाने की चेष्टा करना। किन्तु आसानी यह है कि कलाकार ने कुछ कहने के लिए जहां तक कहानी के आधार को पर्याप्त नहीं सक्षम पाया है, वहां स्वभावत: उसने उपन्यास का व्यापक फलक स्वीकार कर लिया है। फलत: अनुसंधित्सु के लिए दोनों को एक साथ लेने में कलाकार की पूरी दृष्टि सहज ही पकड़ में आ जाती है। दूसरी बात यह है कि प्रेमचन्द ने अपने कथा-साहित्य में शिशु-जीवन को अधिक स्वाभाविकता और युगानुकूलता से देखा है। प्रेमचन्द हिन्दी साहित्य के निर्माणावस्था के कलाकार थे। उनमें अभी विविधता औ व्यापकता आई नहीं थी, आ रही थी। जीवन के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और मर्मस्पर्शी स्थलों का आधार शिशु और कभी-कभी मात्र शिशु ही होता है, यह उपलब्धि कथा-साहित्य में अत्यन्त सूक्ष्म विवरणों की पकड़ के बाद सम्भव हुई। प्रेमचन्द तक कथा-साहित्य की दृष्टि में विवरण की नहीं, विस्तार की प्रधानता मिली है। कलाकार अपने विवेच्य क्षेत्र को एक विहंगम दृष्टि से देखता था। उस समय तक वही बहुत बड़ी बात थी.। उस समय तो बहुत से क्षेत्र अनजाने-अनदेखे थे--

उनपर सरसरी निगाह में अवलोकन भी एक उपलब्धि थी । इन दोनों में अलग-अलग वस्तुओं की स्थिति, उनका पृथक्-पृथक् व्यक्तित्व, घटनाओं की छोटी-बड़ी लहरियों की छाप आदि अधिकाधिक विवरण देने की क्षमता में आई और बाद में ही इसकी आवश्यकता भी मालूम हुई । यह एक बहुत बड़ा कारण है कि प्रेमचन्द ने, जिन्होंने शिशुओं का इतना साफ और सटीक चित्रण किया है और जिनमें शिशुओं के लिए साहित्य-रचना की अभिरुचि भी थी, अपने किसी भी उपन्यास को शिशु-चित्रण के आधार पर खड़ा नहीं किया है, किन्तु उन्होंने कहानियों के लघु फलक पर शिशु जीवन की अनेक झांकियां प्रस्तुत की हैं । इनकी कहानियों में कई उच्चकोटि की कहानियां मात्र शिशु को लेकर लिखी गई हैं । जैसे 'ईदगाह', 'सच्चाई का उपहार' 'गुल्ली-डंडा', 'बन्द दरवाजा', 'नादान दोस्त' आदि अन्य कहानियों में (जिनका विस्तृत और वैज्ञानिक अध्ययन इस शोध का मुख्य विषय है) शिशु जीवन को प्रेमचन्द युग तक जितना मूल्य और महत्त्वप्राप्त हो चुका था, उतनी ही विशिष्टता दी गई है । प्रेमचन्द के बाद का कथा-साहित्य इस बात का प्रमाण है कि कलाकारों की चेतना क्रमशः गहरी होती गई है और विषय के विस्तार से सिमटकर वे विषय की गहराई में उतरते गये हैं । प्रेमचन्द से 'अज्ञेय' तक के कथा-साहित्य की इस प्रगति को इसी कसौटी पर जांचा जा सकता है ।

यदि प्रेमचन्द-युग के साहित्येतर विषयों को भी देखें तो यही स्थिति स्पष्ट हो जायगी । समाज-शास्त्र, मनोविज्ञान शास्त्र या प्रशिक्षण शास्त्र में तब तक शिशुओं को केन्द्र बनाकर सम्यक् चिन्तन का आरम्भ नहीं हुआ था । यह सब बाद में हुआ । हिन्दी में तो निश्चय ही शिशु-साहित्य (मनोवैज्ञानिक विश्लेषण) प्रेमचन्द-युग के बाद ही विकसित हुआ ।

प्रस्तुत प्रबन्ध के आठ अध्याय हैं । विषय-प्रवेश में सामान्यरूप से प्रेमचन्द-साहित्य का विवेच्य विषय प्रस्तुत किया गया है । यह एक प्रकार से विषय की भूमिका है । इस भूमिका को मूल विषय की ओर मोड़ने के लिए पहला अध्याय 'हिन्दी कथा-साहित्य का क्रमिक विकास और प्रेमचन्द' प्रस्तुत किया गया है । इसमें हिन्दी-कहानियों तथा उपन्यासों के व्यापक क्षेत्र को प्रेमचन्द की देन के

आधार पर आंका गया है । प्रेमचन्द के पहले और प्रेमचन्द तक इसकी स्थिति स्पष्ट की गई है । दूसरा अध्याय `प्रेमचन्द के चरित्र` सामान्य विशेषताएं` द्वारा विषय में प्रवेश किया गया है । प्रेमचन्द के सभी चरित्रों (नारी, पुरुष और शिशु) की मूलभूत और मौलिक विशेषताओं और उनकी सामान्य भाव-भूमि को पकड़ने का उपक्रम इसमें परिलक्षित होता है । तीसरे परिच्छेद में ` वर्गीकरण के विविध आधार` के में सिद्धान्तत: चरित्रों के वर्गीकरण के आधारों की चर्चा की गई है । सैद्धान्तिक निरूपण में वैज्ञानिकता निभाने की भरसक चेष्टा की गई है । एक दृष्टि से चरित्रों का विभाजन (क) समूह-परक (ख) व्यक्ति-परक (ग) समूह और व्यक्ति परक चरित्रों में किया गया है तथा दूसरी दृष्टि से विभाजन (क) परिवर्तनशील चरित्र (ख) अपरिवर्तनशील चरित्रों में किया गया है । इस विभाजन में मनोवैज्ञानिक या समाज-शास्त्रीय आधार सर्वथा ह नहीं लिया गया है । इन आधारों को ध्यान में तो रखा गया है, किन्तु बहुत कुछ विभाजन की अपनी धारणा अपनाई गई है ।

जन्म से आठ वर्ष तक की अवस्था को शिशु, आठ से सोलह वर्ष तक की अवस्था को बालक और ग्यारह से पन्द्रह वर्ष तक की आयु को किशोर माना गया है । सोलह वर्ष तक की आयु की सीमा शाब्दिक अर्थ में `शिशु` के लिए उपयुक्त नहीं हो सकती, किन्तु वयस्क होने के पहले की अवस्था के लिए भी प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में शिशु शब्द का ही व्यवहार किया गया है । इसका कारण यह है कि शिशु के भावात्मक जगत् का परिचय उनके बाल और किशोर जीवन में ही व्यक्त होता है । अत: मैंने शिशु को एक व्यापक परिवेश दिया है जिसमें न केवल संस्कारगत वरन् प्रभावगत लक्षणों का विश्लेषण किया जा सके ।

चौथा अध्याय `शिशु पात्रों का वैविध्य` है । इस अध्याय में शिशु-चरित्र का अध्ययन उच्च, मध्य और निम्न वर्गों के आधार पर किया गया है । यह स्थिति पहले ही स्पष्ट कर दी गई है कि वर्गों का यह विभाजन सदैव आर्थिक ही नहीं है, वह सामाजिक भी है । भारतवर्ष में निरन्तर औद्योगीकरण की विकसित स्थिति के कारण हमारा सामाजिक विभाजन अधिकाधिक अर्थ प्रधान होता जा रहा है, किन्तु प्रेमचन्द के युग में अर्थ का अभाव भी

सामाजिक प्रतिष्ठा का मूल्य था, जब तक सामंतीय समाज की रूढ़ियाँ और परम्पराएं एकदम नष्ट नहीं हो गई थीं। वयस्कों का अध्ययन तो उन्होंने उच्च, मध्य और निम्न वर्गों में बांटकर किया है। किन्तु शिशुओं का अध्ययन इस दृष्टि से सर्वथा एक नया प्रयास है।

पांचवें अध्याय में 'शिशु-चरित्रों का मनोवैज्ञानिक आधार' मनोविज्ञान शास्त्र की दृष्टि से उपस्थित किया गया है। यह अध्याय शास्त्रीय और सैद्धान्तिक है और संक्षेप में यहां उन सभी प्रमाणों और परिस्थितियों का आकलन किया गया है, जिनसे शिशु-पात्रों का निर्माण और विकास होता है। इस अध्याय का यह अर्थ कदापि नहीं है कि हम प्रेमचन्द के शिशु-चरित्रों में ये सारे मनोवैज्ञानिक तत्व पाते हैं या पाने का कठिन प्रयत्न करना चाहते हैं।

छठें अध्याय में 'चरित्र-चित्रण की सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि तथा प्रेमचन्द के शिशु चरित्र' का प्रचलित प्रणालियों के आधार का उल्लेख किया गया है और इसी पृष्ठभूमि पर उनके कथा-साहित्य में आए समस्त शिशु-चरित्रों का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। वस्तुत: यह अध्याय इस प्रबन्ध की आत्मा है। इसमें प्रस्तुत सारे विवरण वैज्ञानिक ढंग से विश्लेषित और परिशिष्टों में वर्गीकृत विभिन्न आंकड़ों (Data) के आधार पर प्रस्तुत किया गया है।

इस प्रबन्ध का महत्व प्रेमचन्द और हिन्दी साहित्य के मूल्यांकन तक ही सीमित नहीं है, वरन् समकालीन हिन्दीतर साहित्य में शिशु-चित्रण की ओर भी संकेत है।

प्रस्तुत प्रबन्ध की पूर्ण परिकल्पना एक नई दृष्टि से की गई है। निस्सन्देह प्रेमचन्द पर काम करने वाले सभी विद्वानों का आभार मैं स्वीकार करती हूं। प्रेमचन्द के कथा-साहित्य की मृदु-कोमल अनुभूतियों के ताने-बाने से बुने शिशु-चरित्रों का यह आकलन-अध्ययन कभी सम्भव नहीं था।

यदि मुझे हिन्दी के मूर्धन्य कवि मनीषी डा० रामकुमार वर्मा की भाव-प्रवण अनुभवी दृष्टि का वह सहज संकेत प्राप्त नहीं होता जो मेरे लिए सब कुछ स्पष्ट और निर्भ्रान्त बना देता था ।

प्रस्तुत व प्रबन्ध का विषय प्रेमचन्द सम्बन्धी अब तक के अध्ययनों से सर्वथा भिन्न और नवीन होने के कारण इस कठिन कार्य को सम्हालने की क्षमता का बहुधा मैंने अपने में अभाव अनुभव किया है । कभी-कभी तो ऐसा लगता था कि मैंने चिन्तन और अभिव्यक्ति की अपेक्षित परिपक्वता प्राप्त करने के पहले इस क्षेत्र में प्रवेश किया है, किन्तु डा० वर्मा की सहायता और निर्देशन उनके उत्साहवर्द्धन और सहानुभूति ने मुझे निरन्तर गतिशील रखा और यह 'गुरु प्रसाद' ही है कि अन्त में मैं अपने लक्ष्य तक पहुंच सकी । मैं नहीं जानती कि किन शब्दों में उनके प्रति अपना आभार प्रकट करूं । विभागाध्यक्ष डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय के प्रति मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूं, जिन्होंने समय-समय पर मुझे उचित मार्ग दर्शन प्रदान किया है और सम्बन्धित कार्य में अपनी उदारता एवं स्नेह का सच्चा भाव प्रदान किया है । शब्दों द्वारा आभार व्यक्त करना मात्र औपचारिकता ही सिद्ध होगी ।

अन्य अनेक सहायकों की सूची देकर मैं इस कथन को अतिरिक्त बोझिल नहीं बनाना चाहती, किन्तु उन सब के प्रति अपनी गहरी कृतज्ञता ज्ञापित करना अपना कर्तव्य समझती हूं ।

प्रेमचन्द-साहित्य के अध्ययन में यह नवीन दृष्टिकोण विद्वानों के समक्ष आशा और विश्वास के साथ प्रस्तुत करते हुए मुझे प्रसन्नता होती है ।

सुजाना दाकी

(सुजाना दाक्षी)

विषय-प्रवेश

प्रेमचन्द के साहित्य का विवेच्य विषय

पेमचन्द के युग में शोषण, दमन एवं दासता का वातावरण (ब्रिटिश शासन, शोषक और अत्याचारी वर्ग, महात्मा गांधी का प्रभाव, देश-काल का प्रभाव), अन्य सामाजिक विकृतियां-- सम्मिलित कुटुम्ब के अन्तर्गत , नारी जीवन के अन्तर्गत । कला और सामाजिक परिष्कार, प्रेमचन्द गांवों के कलाकार, प्रेमचन्द पर गांधीवाद का प्रभाव, मध्यवर्ग का चित्रण , नागरिक जीवन, आदर्श या यथार्थ ? सामाजिक जीवन ।

-0-

विषय-प्रवेश

-0-

प्रेमचन्द के साहित्य का विवेच्य-विषय

प्रेमचन्द के पूर्व उपन्यास साहित्य की सृष्टि मात्र जीवन की कुतूहलजनक परिस्थितियों के ऐन्द्रजालिक चक्रव्यूह में विविध प्रकार की जिज्ञासाओं से परिपूर्ण थीं। मनोरंजन के साथ कुतूहल की सृष्टि ही उपन्यास कला में मेरुदण्ड की भांति स्थिर रहती थी। कल्पना-लोक के पात्रों, रोमांचकारी प्रेम के प्रसंगों और इन्द्रधनुषी वर्णन वैचित्र्य से ही उपन्यास कला समृद्ध होती आ रही थी। श्रीनिवासदास द्वारा दिल्ली के बाज़ारों में होने वाले क्रिया-कलाप, राधाकृष्ण दास और बालकृष्ण भट्ट द्वारा सामाजिक अन्ध-विश्वासों और कुरीतियों पर कुठाराघात द्वारा इन्हीं विकृष्ट सामाजिक विकृतियों के निरूपण में उपन्यास साहित्य का आदर्श समझा जाता था। घटनाओं के घटाटोप और कुतूहलवर्द्धक प्रसंगों में जीवन के कल्पना-लोक की झांकी मात्र थी। प्रेमचन्द ने पहली बार मानवता के मूल्यों को स्थिर करते हुए घटनाओं के घटाटोप से चरित्रों का चित्रण करने का भगीरथ प्रयत्न किया। समाज की इकाई को पात्रों के माध्यम से भिन्न-भिन्न परिवेशों में प्रस्तुत कर समाज की व्यवस्थित प्रणाली को स्थिर करने के लिए उन्होंने मनोविज्ञान का आश्रय लिया। विविध परिस्थितियों के पात्र और जीवन के संघातों से उत्पन्न मनोविज्ञान की विविध सरणियां प्रेमचन्द की उपन्यास-कला का आधार बनीं। मानव जीवन कल्पना-लोक से उतर कर समाज की स्वस्थ भाव-भूमि पर प्रशस्त

हुआ , उसको स्वाभाविक बनाने के लिए प्रेमचन्द ने मनोगत संस्कारों का आश्रय लिया । यह मनोविज्ञान नागरिक वातावरण एवं शहरी वातावरण से भिन्न है । चूंकि दोनों के परिवेश अलग-अलग हैं । इन परिवेशों की गहराई में प्रवेश कर प्रेमचन्द प्रत्येक परिस्थिति के पात्रों के मनोविज्ञान के अन्तराल में अपनी दृष्टि डालकर स्वस्थ कथा-रचना में समर्थ हो सके ।

वस्तुत: प्रेमचन्द के समस्त साहित्य में पात्र और उसके मनोविज्ञान की स्पष्ट रूपरेखा देखने को मिल जाती है और प्रेमचन्द के उपन्यास और कहानियां केवल मनोरंजन का साधन नहीं हैं,वरन् उनमें समाज के प्रत्येक पात्र की इतनी गहरी रूपरेखाएं हैं,जिससे मानव-मूल्यों का निर्धारण होता है । इसी मनोविज्ञान की विशेषता में वृद्ध से लेकर शिशु तक समाज के शताधिक चरित्र उभर कर आते हैं और हमें समाज के प्रत्येक स्तर का परिज्ञान अत्यन्त सूक्ष्मरूप से प्राप्त होता है । यों तो प्रेमचन्द के सभी पात्र अपने क्षेत्र में उस स्वाभाविकता के साथ सम्प्रेषित (Projected) हुए हैं,किन्तु सबसे महत्त्वपूर्ण अंश शिशु मनोविज्ञान का है । सम्भवत: इस दृष्टि से कि शिशु ही मानव का पिता है । (Child is the father of the man.) इस शिशु मनोविज्ञान ने ही मुझे प्रभावित किया है । प्रेमचन्द की कला इस मनोविज्ञान को लेकर किस प्रकार उपन्यास तथा कहानियों में कथानकों का निर्माण करती है, यह मुझे आकृष्ट करती रही है ।

अनेक उपन्यासकारों ने समाज के विविध वर्गों के चरित्रों को उभारने में अपनी कथाओं का निर्माण किया है । शिशु मनोविज्ञान को प्रमुखरूप से उभार कर जीवन की सम्वेदनाओं को सत्य से सम्बन्धित करना प्रेमचन्द की कला का प्रमुख लक्षण रहा है ।

प्रेमचन्द के युग में शोषण, दमन एवं दासता का वातावरण

ब्रिटिश शासन

प्रेमचन्द के युग में ब्रिटिश शासन ने जन-शोषण की अनेक संस्थाओं को विकास का अवसर दिया था । ये संस्थाएं जोंक की तरह भारत की निरीह जनता को चूस रही थीं । इनमें प्रमुख थे ज़मींदार, जो राज्य और किसान के बीच बैठे किसान के श्रम और पसीने की कमाई का अधिकांश हड़प लेते थे । आये दिन बेगारी, भेंट-नजराना आदि की मांग लगी रहती थी और इनकी पूर्ति के लिए जमीन्दार के प्यादा-करिन्दा भांति-भांति के अत्याचार किया करते थे । इजाफा-लगान तथा बेदखली की कानूनी कार्रवाई के अतिरिक्त मुश्कें बंधवा कर पिटवाना, बिना खाना दिए काम कराना, बहू-बेटियों की इज्जत लूट लेना, घर-बार कुर्क करा देना बिल्कुल साधारण सी बात थी ।

शोषक और अत्याचारी वर्ग

शोषक एवं अत्याचारियों का दूसरा वर्ग था सरकारी अफसरों एवं कर्मचारियों का, गांव का पटवारी, थाने के सिपाही दारोगा, तहसीलदार, डिप्टी तथा उनके चपरासी अहलकार का । झूठे मुकदमे खड़ा करना, हिरासत में ले लेना, पिटवा देना, गोली चलवाना, जेल भेजवाना इनके बायें हाथ का खेल था । घूस-सिफारिश, लूट-खसोट का बाजार गर्म था । जमीन्दारों के ये सहायक थे, और दोनों की मिली मार किसानों के ऊपर पड़ती थी ।

साहूकार और महाजन

शोषकों का एक तीसरा वर्ग था, साहूकारों और महाजनों का । इनके सूद के रुपये ऐसे के, कीटाणु की तरह बढ़ते थे

और धीरे-धीरे किसानों का सर्वस्व आत्मसात् कर लेते थे । मुखिया और पंच भी अत्याचारियों की ही पंक्ति में जा बैठे थे । बड़े-बड़े कारखानों की स्थापना के लिए किसानों की जमीनें छीनी जा रही थीं । भारी उद्योगों के विकास ने श्रमिक-पूंजीपति समस्या को भी जन्म दे रखा था । इस प्रकार विदेशी शासन द्वारा शोषण का एक चक्र बना हुआ था । ऐसी ही परिस्थिति में महात्मा गांधी ने अपने विभिन्न आन्दोलन आरम्भ किए ।

महात्मा गांधी का प्रभाव

महात्मा गांधी के विभिन्न आन्दोलनों से निराश जनता में एक नवीन चेतना का उदय हुआ और अन्याय,अत्याचार के विरोधी भावना को शक्ति मिली । विरोध में अत्याचार एवं दमन की विकरालता और भी बढ़ी । प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में विभिन्न वर्गों की आर्थिक, सामाजिक परिस्थितियों एवं समाज के संघर्ष की कहानी बड़े ही कलात्मक एवं सजीव ढंग से आंकी है । किसानों की मनोवृत्ति एवं उनके आचार-विचार, जमीन्दारों एवं उद्योग-पतियों के विभिन्न रूप, स्वभाव-संस्कार, रहन-सहन एवं शोषण ढंग, पुलिस की धांधली एवं अमानुषिकता,अफसरों का अहंकार, उनकी गुलाम मनोवृत्ति,किसान-मजदूर का सत्याग्रह,मारपीट, मुकदमा, पैरवी आदि का बड़ा ही यथार्थ , सूक्ष्म निरीक्षित, व्यंजक एवं मार्मिक वर्णन `प्रेमाश्रम` (१९२२ई०), `रंगभूमि` (१९२५ई०),`कायाकल्प` (१९२६ई०), `कर्मभूमि` (१९३२ई०),`गोदान` (१९३६ई०) आदि उपन्यासों में है । वास्तव में ये उपन्यास स्वतन्त्रता के पूर्व के भारतीय जीवन का कला के उत्कृष्टतम माध्यम से सामाजिक,आर्थिक एवं राजनीतिक इतिहास प्रस्तुत करते हैं । इनके वर्णन में प्रेमचन्द ने अभूतपूर्व निरीक्षण-शक्ति, सूक्ष्मदर्शिता एवं चित्रण कला का परिचय दिया है ।

युग-काल का प्रभाव

साहित्यकार किस प्रकार अपने युग के इतिहास से प्रभावित होता है, इस विषय में प्रेमचन्द ने स्वयं `कुछ विचार` में अपने विचार व्यक्त

ग्रामीण और मध्यवर्गीय समाज डूबा हुआ था । जन्म,मुंडन,छेदन,विवाह और मृत्यु जितने भी जीवन सम्बन्धी संस्कार हैं उनके चारों ओर आवश्यक आडम्बर लिपटा हुआ है । भोजन भले ही मयस्सर न हो,किन्तु पूजा-पाठ,दान-दक्षिणा, नेग-न्यौछावर,तिलक-दहेज,भोज-भात इनसे निष्कृति नहीं । ये सामाजिक मर्यादाएं हैं, जिनका पालन करना ही होगा । व्यक्तिगत आचार का सर्वथा लोप हो जाने पर भी सामाजिक आचार अपने विकराल रूप में बना हुआ है । स्त्रियों के लिए नैतिकता के कठोर बन्धन हैं । केवल सन्देह मात्र पर समाज कठोर से कठोर दण्ड देने के लिए उतावला रहता है । थोड़ी- थोड़ी बातों पर कानाफूसी पर लगे हुए विवाह सम्बन्ध टूट जाते हैं, द्वार पर आयी बारात लौट जाती है, लोग बिरादरी से बहिष्कृत कर दिए जाते हैं । धार्मिक आडम्बर एवं अन्धविश्वासों से लाभ उठाकर पण्डे-पुरोहित,ओझा-स्यानिए,साधु-सन्यासी भोली-भाली जनता को ठगते हैं । अछूतों की दयनीय दशा थी । प्रेमचन्द ने प्राय: सभी उपन्यासों में इन सामाजिक विकृतियों का चित्रण किया है ।[१]

सम्मिलित कुटुम्ब

भारतीय समाज-व्यवस्था का सबसे महत्वपूर्ण अंग सम्मिलित कुटुम्ब रहा है । इससे परिवार में सहयोग,सद्भाव,स्नेह एवं समानता की भावना रही है । सपत्नी-विद्वेष तथा सास-बहू,ननद-भौजाई,देवरानी-जेठानी आदि के कलह की कहानी भी इस देश में अति प्राचीन है,किन्तु आर्थिक ढांचा इतना परस्परापेक्षी था, पारिवारिक एकता के आदर्श एवं संस्कार इतने दृढ़ थे कि कटुता के छोटे-मोटे फोंके ऊपर ही निकल जाते थे । परन्तु नौकरी पेशे की वृद्धि,औद्योगिक विकास,यातायात की सुविधा, नगरों के आकर्षण, नई शिक्षा एवं सभ्यता आदि के सम्मिलित प्रभाव से वैयक्तिक स्वार्थ प्रबल होने लगे

---

१ श्री शिवनारायण श्रीवास्तव : "हिन्दी उपन्यास : ऐतिहासिक अध्ययन"

और परिणाम स्वरूप परिवार में ही भांति-भांति की समस्याएं पनपने लगीं तथा सम्मिलित कुटुम्ब टूटने लगे । इन कौटुम्बिक हलचलों को आधार बनाकर प्रेमचन्द के पूर्ववर्ती लेखकों ने भी किया था, किन्तु उनमें केवल कहानी कहने की प्रवृत्ति थी, मनोभावों के चित्रण का प्रयास न था । प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में अन्य विषयों के साथ-साथ कौटुम्बिक समस्याओं को भी मनोवैज्ञानिक आधार देकर यथार्थ की भाव-भूमि पर खड़ा किया । स्त्रियों के पारस्परिक कलह (गोदान, कायाकल्प, प्रेमाश्रम) पुरुषों पर उसकी प्रतिक्रिया विमाता का व्यवहार (निर्मला) आदि का बड़ा ही सहज स्वाभाविक चित्रण प्रस्तुत करते हुए भी प्रेमचन्द ने पारिवारिक मर्यादा का समर्थन किया है । संयुक्त परिवार को वे व्यक्ति एवं समाज की दृष्टि से हितकर मानते थे । अतएव उन्होंने सर्वत्र ही इस टूटते हुए सम्मिलित कुटुम्ब को बनाए रखने पर जोर दिया है ।[1]

नारी जीवन

प्रेमचन्द के युग में सबसे अधिक उपन्यास नारी समस्या को आधार बनाकर लिखे गए । यह स्वाभाविक भी था, क्योंकि वह युग वास्तविक अर्थों में मुक्ति आन्दोलन का युग था और भारतीय समाज में सबसे अधिक पीड़ित, प्रताड़ित एवं बन्धन-ग्रस्त थीं यहां की नारियां । विधवा-विवाह निषेध से करोड़ों युवतियों का जीवन समाज के लिए एक समस्या बन गया था । प्रेमचन्द ने विधवा की समस्या को अधिक मानवीय दृष्टि से देखने का प्रयास किया और इनके जीवन की विषमताओं को इस रूप में चित्रित किया कि हमारी सहानुभूति को अपनी ओर आकर्षित कर सके । प्रेमचन्द ने विधवा

---

१ श्री शिवनारायण श्रीवास्तव : "हिन्दी उपन्यास : ऐतिहासिक अध्ययन"

के लिए मार्ग निर्दिष्ट किए -- या तो वे विवाह कर लें या किसी आश्रम आदि में रहकर समाज की सेवा करें । उन्होंने "प्रतिज्ञा" में वयस्क विधवा के लिए सेवा धर्म का निर्देश किया है । अनेक कहानियों में विधवा-विवाह से इसका समाधान हुआ है । उपन्यासों में उन्होंने इस विषय को विस्तार नहीं दिया । विधवा के समान ही वेश्या की समस्या है, जो व्यक्ति एवं समाज दोनों ही के लिए अभिशापस्वरूप है । हमारे प्राचीन साहित्यकारों ने इस समस्या का उद्घाटन नहीं किया था । उन्होंने समाज के आदर्श वर्ग को उपस्थित किया था। उन्होंने समाज के सौन्दर्य और विलास को सामने रखा था तथा वेश्यावृत्ति को आवश्यक और अनिवार्य माना था । कई आधुनिक लेखक भी इस वृत्ति को आवश्यक ही मानते हैं । वे कहते हैं कि वेश्या-वृत्ति समाज के उन गन्दी नालियों की भांति है, जिससे समाज की सारी बुराई और गन्दगी बाहर निकलती है । समाज शास्त्रियों को घर-घर व्यभिचार का केन्द्र हो जाने का भय है, इसीलिए उनकी दृष्टि में यह संस्था ठीक है ।

इस संस्था को नाली की संज्ञा देना अनुचित है । जब नालियां खुले रूप में बहती है तो संक्रामक रोग के फैलने में योग देती हैं । हम अपनी गन्दगी को इन नालियों में फेंक कर इस प्रकार खुला और भयानक क्यों बनाने दें ? हम अपने कूड़ा-करकट को अपने घर के बाहर क्यों फेंके ? यह घर का कूड़ा बाहर जाकर समाज में गन्दगी फैलाता है तो फिर हम घर के कूड़े से समाज का वातावरण क्यों दूषित करें ? घर का कूड़ा बाहर फेंक देने से सफाई का सा समाधान नहीं हो पाता है । इसी प्रकार वेश्यालय की संस्था बुरी प्रवृत्तियों को प्रश्रय देती है ।

दूसरे प्रकार के मत से इस वृत्ति के द्वारा हमारा घर पवित्र हो जाता है । घर की गन्दगी नालियों के द्वारा बाहर चली जाती है । पर हम अपने घर को पवित्र रखकर दूसरे के घर को अपवित्र करें यह कहां तक न्याय-संगत है? अतः यह समाज के सामने जटिल समस्या है । समाज इस समस्या को

जघन्य मानता है, किन्तु क्या किसी समस्या को जघन्य मानने से इस समस्या का हल हो सकता है ? क्या शुतुर्मुर्ग के बालू में अपना सिर छिपा देने से वह रेगिस्तान के तूफान से मुक्त हो सकता है ? औस्कर वाइल्ड का कहना है कि बीसवीं सदी आइने में अपना मुंह देखना नहीं चाहता, वह विकास चाहता है । प्रेमचन्द समाज का विकास चाहते हैं और इस विकास के पीछे उनकी निजी भावनाएं सन्निहित हैं । हिन्दू धर्म में जीवन के दो मार्ग हैं-- प्रवृत्ति और निवृत्ति मार्ग । प्रेमचन्द इन दोनों के बीच से जाना चाहते हैं । उनका कहना है कि हम अपनी समस्या को अपने ढंग से हल करें । कुचलने से समस्या का हल नहीं होता । हममें ज्ञान का विकास और आत्म सम्मान का भाव होना चाहिए । हमारीसंस्कृति, परम्परा, पुरानी है और उनमें बल है । वे पुरातन होते हुए भी सजीव हैं,अत: हम अपनी समस्या का समाधान संस्कृति और परम्परा का पालन करते हुए भी कर सकते हैं ।

आधुनिक युग में अन्य भारतीय साहित्यों में भी वेश्या का चित्रण है । शरतचन्द्र के 'श्रीकान्त' में वेश्या का वर्णन है तथा उसके चरित्र में शील दिखाया गया है । राजलक्ष्मी वेश्या का नाम है,जिसके कार्य-व्यापारों को दिखाकर उसकी आत्मा का गुण दिखाने की चेष्टा करते हैं । करुणा और भावुकता के कारण 'राजलक्ष्मी' वेश्या अद्वितीय है । शरत्चन्द्र इस वृत्ति के मूल में नहीं जाते हैं । महाकवि रवीन्द्रनाथ ने भी वेश्याओं का चित्रण किया है, किन्तु वे भी इसके तह में न जा सके ।

पाश्चात्य उपन्यासकारों में 'अलेग्जण्डर कुप्रीन' ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास "Yama The Hell Hole" में वेश्या जीवन पर प्रकाश डाला है । उन्होंने समस्या को सामने रखने में ही सफलता पाई है, उसे सुलझाने में नहीं ।

'बर्नार्ड शा ने भी "Mrs Warren's Profession" में इसी प्रकार की एक नारी का चित्रण किया है, जो वेश्यावृत्ति को प्रोत्साहन देती है । वह स्वयं वैसी नहीं है, अपनी संतति के प्रति महान् कार्य करती है, किन्तु दूसरों के द्वारा वह इसी कार्य से अर्थोपार्जन करती है । इस प्रकार के चरित्र को उपस्थित कर शा अपने पाठकों को चकित कर देते हैं । अपनी बौद्धिक कलाबाजीसे दहला देना चाहते हैं, किन्तु प्रेमचन्द 'सेवासदन' में समस्या को रखते हुए उसका समाधान भी करते हैं । उनका यह उपन्यास बड़े पैमाने पर लिखा गया है । इसमें एक सामान्य उद्देश्य विराट् उद्देश्य बन जाता है । इसमें समाज की सिर्फ एक समस्या वेश्यावृत्ति की समस्या ही नहीं है । सुमन बहुत बाद में वेश्या बनती है । उसके पहले भी एक समस्या है--'विवाहिता नारी की समस्या'। पति जब अपनी पत्नी पर अत्याचार करे तो पत्नी को क्या करना है । हमारे हिन्दू समाज में पुरुषों ने नारी पर अत्याचार करने का एकाधिकार ले लिया है,यद्यपि हम अपने धर्म में उनको देवी के समान पूजा करने की भावना रखते हैं । प्रेमचन्द ने इस अधिकार को चुनौती दी है । बहुत-सी स्त्रियां परिस्थितियों से बाध्य होकर वेश्या जीवन ग्रहण करती हैं । समाज जितना ऊपर से इनसे घृणा करता है, उतना ही भीतर से वेश्यालयों की कामना भी करता है । यहां नारी की कोमल वृत्तियों को मार कर उसमें छल, प्रपंच,कपट,हृदयहीनता आदि दुर्गुण भरने का प्रयत्न किया जाता है । प्रेमचन्द ने 'सेवासदन' में वेश्यालय के वातावरण का बड़ा ही सजीव किन्तु मर्यादित चित्रण किया है । वेश्या के सम्बन्ध में प्रेमचन्द का सहृदय उदार एवं मानववादी दृष्टिकोण है । उनके मन में उन सामाजिक परिस्थितियों के प्रति आक्रोश है जो अनेक स्त्रियों को वेश्या बनने में बाध्य करती है ।'गबन' में उन्होंने वेश्या 'जोहरा' के वास्तविक प्रेम और आत्म-त्याग को चित्रित करने का प्रयास किया है ।

अनमेल विवाह भी नारी जीवन को विषादवत करने के कारण हुआ करते हैं । अधेड़ या वृद्ध जन जब पैसे के बल पर तरुणी से विवाह कर लेते हैं तो पति-पत्नी दोनों के लिए समस्याएं उठ खड़ी होती हैं । कभी-कभी युवती की अतृप्त भावना भयंकर पारिवारिक कलह का रूप धारण कर लेती है । `निर्मला` में प्रेमचन्द ने ऐसी ही भयंकर स्थिति का वर्णन किया है । `कायाकल्प` भी इसी समस्या को प्रस्तुत करता है ।

स्त्री शिक्षा के प्रसार एवं राष्ट्रीय चेतना से आलोच्य युग में ही नई नारी का उदय भी हो चुका था । विभिन्न सत्याग्रह संग्रामों में इन प्रबुद्ध महिलाओं ने सक्रिय भाग लिया था । प्रेमचन्द ने `रंगभूमि`, `कायाकल्प`, `कर्मभूमि` में इनका भी वर्णन किया है । ये उच्च आदर्शों से प्रेरित एवं भारतीय संस्कारों से जाग्रत महिलाएं हैं । एक दूसरे प्रकार की नारी जो पुरुषों के साथ नि:संकोच भाव से मिलती जुलती हैं,क्लब, सिनेमा,नाचघर एवं दावतों में सम्मिलित होती हैं, टेनिस और ब्रिज खेलती हैं तथा अपने मन से विवाह करती हैं, भी प्रकाश में आ रही थी । प्रेमचन्द के `गोदान` की मालती इसी वर्ग की है । इनका भी चित्रण करके प्रेमचन्द ने हिन्दी उपन्यास में नारी जीवन के सभी पक्षों को घेर सा लिया । पुराने संस्कारों में पली स्त्रियों के साथ नई रोशनी से प्रभावित नारियों का भी समावेश प्रेमचन्द के उपन्यासों में है । प्रेमचन्द को अपने युग में नारी विषयक विभिन्न समस्याओं की विस्तृत चिन्तन भूमि मिली और उन्होंने सामाजिक यथार्थ के विश्वसनीय पट पर उन्हें कुशलता से चित्रित किया । नारी के प्रति पूर्वाग्रह ग्रसित संकीर्ण भावनाओं से मुक्त होकर उनके जीवन के विभिन्न पक्षों को सहानुभूति एवं संवेदना से देखा । हमें भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि इस प्रगतिशील,उदार तथा व्यापक दृष्टि के बावजूद भी प्रेमचन्द नारी जीवन संबंधी पुरातन आदर्श भावना को छोड़ नहीं सके ।

विवाह की पवित्रता एवं पत्नीत्व की मर्यादा पर सदैव उनका आग्रह रहा है। गृह लक्ष्मी का आदर्श उनके उपन्यासों में पूर्ववत् बना रहा।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में प्रादुर्भूत ब्रह्म समाज, आर्य समाज, प्रार्थना समाज, थियोसोफिकल समाज आदि के द्वारा अधिकतर सामाजिक स्तर पर कार्य हुए। गांधी जी के देश-सेवा का क्षेत्र अधिक विस्तृत हुआ और उन्होंने बड़े पैमाने पर एक जनवादी आन्दोलन का प्रारम्भ किया। इस आन्दोलन के तीन पक्ष थे -- व्यक्ति को उत्पीड़ित करने वाली सामाजिक धार्मिक रूढ़ियों के विरुद्ध आन्दोलन, व्यापक निर्धनता के कारण स्वरूप आर्थिक व्यवस्था के विरुद्ध आन्दोलन तथा विदेशी शासन सत्ता के विरुद्ध आन्दोलन। प्रेमचन्द ने इस जन जागरण वादी आन्दोलन के विभिन्न पक्षों को अपने चित्रण का आधार बनाया और सम्मिलित कुटुम्ब की विषमताएं, नारी वर्ग की विभिन्न समस्याएं, धर्म एवं जातिगत भेद-भाव परम्परागत सामाजिक कुरीतियों तथा अन्धविश्वास, धार्मिक नैतिक बाह्याडम्बर, किसान मजदूर की शोचनीय आर्थिक सामाजिक स्थिति, जमीन्दार पूंजीपति की निरंकुशता, सरकारी कर्मचारियों के अन्याय, अत्याचार तथा विभिन्न राष्ट्रीय आन्दोलनों की कथावस्तु को अपना प्रतिपाद्य विषय बनाया। वे समाज और देश के सम्मुख साहित्य के माध्यम से एक नवीन आदर्श की स्थापना करना चाहते थे। प्रेमचन्द का यह विचार था कि "साहित्य सामाजिक आदर्शों का स्रष्टा है, जब आदर्श ही भ्रष्ट हो गया तो समाज के पतन में बहुत दिन नहीं लगते।"[1] फिर "किसी राष्ट्र की सबसे मूल्यवान सम्पत्ति उसके साहित्यिक आदर्श होते हैं। व्यास और वाल्मीकि ने जिन आदर्शों की सृष्टि की, वे आज भी भारत का सिर ऊँचा किए हुए हैं।"[2]

---

१ प्रेमचन्द : "कुछ विचार", पृ०१०२

२ ,, : ,, पृ०१०४

कला और सामाजिक परिष्कार

प्रेमचन्द ने जो कथा-साहित्य का माध्यम लिया, वह एक महत्त्वपूर्ण बात है । प्रेमचन्द बम्बई में एक फिल्म में काम करने गये थे ।यहां उनका उद्देश्य था कि वे चल-चित्र के माध्यम से अपने विचारों को उन लोगों तक पहुंचा सकते हैं जो साक्षर नहीं हैं गो कि प्रेमचन्द को इस बात में निराशा हुई प्रेमचन्द का इतना उच्च तथा महान् उद्देश्य इसी बात में स्पष्ट होता है । इस सम्बन्ध में इन्द्रनाथ मदान ने जो भाव व्यक्त किए हैं, वह इस प्रकार है--"उन्होंने लेखकों को चेतावनी दी कि जो धन की खोज में है उन्हें साहित्य के मन्दिर में स्थान नहीं मिल सकता । वे ... (प्रेमचन्द) शायद ही धन या यश के लोभ में आये हों । एक बार परिस्थितियों से बाध्य होकर उन्होंने चित्रपट के प्रतिन्यास लेखक के रूप में अच्छे वेतन पर एक सिनेमा कम्पनी में काम करना आरम्भ किया,लेकिन शीघ्र ही वे उससे ऊब गये । कला को व्यवसाय का रूप देने से उन्हें घृणा थी । डायरेक्टर जो कि सर्वेसर्वा था, मनुष्य की कुप्रवृत्तियों को उभार कर रुपया बटोरने में ही सफलता समझता था .... उन पर सिनेमा उद्योग का जो प्रभाव पड़ा था, उसे उन्होंने मुझे निम्नलिखित शब्दों में लिखा था --" एक साहित्यिक व्यक्ति के लिए सिनेमा में कोई स्थान नहीं है । मैं इस लाइन में इसलिए आया कि आर्थिक दृष्टि से स्वतन्त्र होने के कुछ अवसर दिखाई दिए ।लेकिन अब मैं देखता हूं कि मैं भ्रम में था और अब मैं फिर साहित्य में लौट रहा हूं । वास्तव में जिस साहित्यिक कार्य को मैं अपने जीवन का उद्देश्य समझता हूं उसे मैंने कभी बन्द नहीं किया । सिनेमा मेरे लिए वैसा ही है,जैसी कि मेरे लिए वकालत होती,पर अन्तर यह है कि वह इससे अच्छी चीज होती ।"[1]

---

[1] इन्द्रनाथ मदान : "प्रेमचन्द एक विवेचन", तीसरा नया संस्करण, १९६४, पृ० ३०-३१ ।

प्रेमचन्द जिस साहित्यिक कार्य को अपने जीवन का उद्देश्य समझते थे,उसकी पूर्ति सिनेमा में नहीं हो सकी । उनकी आर्थिक आवश्यकता की पूर्ति फिल्म के द्वारा हो सकती थी । किन्तु वे अपनी आत्मा को धोखा देना नहीं चाहते थे, अत: वे फिर साहित्य की ओर लौट चले । जैनेन्द्र जी को एक पत्र में उन्होंने इस प्रकार लिखा --" मैं जिन इरादों से आया था उनमें एक भी पूरा होता नजर नहीं आता । ये प्रोड्यूसर जिस ढंग की कहानियां बनाते आये हैं, उस लीक से जौ भर हट नहीं सकते । 'वल्गेरिटी को ये 'एंटरटेनमेण्ट वेल्यू' कहते हैं । अद्भुत में ही इनका विश्वास है । राजा-रानी उनके मंत्रियों के षड्यन्त्र,नकली लड़ाई,बोसेबाजी ये ही उनके मुख्य साधन हैं । मैंने सामाजिक कहानियां लिखी हैं, जिन्हें शिक्षित समाज भी देखना चाहे । लेकिन उनको फिल्म करते इन लोगों को सन्देह होता है चले या न चले । यह साल तो पूरा करना है ही । कर्जदार हो गया था, कर्ज पटा दूंगा, मगर और कोई लाभ नहीं । .....(जी चाहता है) यहां से छुट्टी पाकर अपने पुराने अड्डे पर जा बैठूं । वहां धन नहीं है, मगर संतोष अवश्य है । यहां तो जीवन नष्ट कर रहा हूं ।"[1]

<u>प्रेमचन्द : गांवों के कलाकार</u>

प्रेमचन्द को गांवों का कलाकार कहा गया है । प्रेमचन्द ने गांवों के जीवन को बहुत नजदीक से देखा था । उनका जन्म गांव में हुआ था । वहीं वे पले,बढ़े और पढ़े-लिखे । बाद में सरकारी नौकरी करते समय भी उनका सम्बन्ध अधिकतर ग्रामीण जनता के ही साथ रहा । साहित्य-सेवा करते समय भी उस ग्रामीण जीवन का मोह न छोड़ सके और प्राय: गांव ही में रहे ।

---

१ जैनेन्द्रकुमार : 'प्रेमचन्द : एक स्मृति',पृ०६२

गांव के एक निर्धन परिवार में उत्पन्न होने के कारण गांव के विषय वातावरण का उन्हें गहरा अनुभव था । इसी कारण वे अपने साहित्य में इस जीवन का सच्चा एवं सजीव चित्र खींचने में सफल हुए थे । दूसरा कारण यह था कि वे गांव को असली भारतवर्ष समझते थे । उनका यह दृढ़ विश्वास था कि देश की सच्ची उन्नति तभी हो सकेगी जब यहां के ग्रामीण जीवन को उन्नत बनाया जायगा । उन्होंने गांवों का चित्रण इस उदारता और सहानुभूति के साथ किया कि हमें मानना पड़ेगा कि हिन्दी साहित्य में प्रेमचन्द के आगे तक कोई नहीं जा सका है, वे भी नहीं जिन्होंने इस वर्ग के चित्रण का सैद्धान्तिक बीड़ा उठाया । गांधी जी ने ठीक कहा था कि यथार्थ भारतवर्ष गांवों में है और प्रेमचन्द भारतीय गांवों की अकेली वाणी हैं ।

प्रेमचन्द पर गांधीवाद का प्रभाव

प्रेमचन्द गांधी की विचारधारा से प्रभावित थे अवश्य, उन्होंने महात्मा गांधी का आदेश मानकर अपनी बीस साल की नौकरी से त्यागपत्र भी दे दिया था, किन्तु वे उनकी कार्य-प्रणाली से असन्तुष्ट जान पड़ते हैं । वे गांवों की दयनीय दशा से इतने क्षुब्ध थे कि उन्हें कांग्रेस की समझौतावादी नीति बुरी लगती थी । उनका ख्याल था कि हुकूमत से सख्त टक्कर लिए बगैर काम न चलेगा और वह इसके लिए नुकसानात बर्दाश्त करने के लिए तैयार थे । ओहदे हुक्काम (अफसरों) से उन्हें आमतौर से नफरत (घृणा) थी ।[1]

फिर गांधीवाद, सामन्तवाद, साम्राज्यवाद, एवं पूंजीवाद का कट्टर विरोधी नहीं है । उनके अनुसार सब मिलकर रह सकते हैं । प्रेमचन्द

---

१ मुंशी दयानारायण के पत्र के एक अंश जमाना रहबर से उद्धृत ।

इनके कट्टर विरोधी हैं वे इन्हें समाज के उत्पीड़न का प्रधान कारण मानकर इनका पूर्ण उन्मुलन करने की मांग उठाते हैं ।

प्रेमचन्द किसानों की वास्तविक समस्याओं--कुरीतियों, अत्याचार, जमीन्दार,साहूकार द्वारा होने वाले शोषण कर्ज आदि सबों को अपने दृष्टिकोण में रखते हैं । वे एक ऐसे समाज की कल्पना करते हैं जिसमें उत्पादन कर्ता को अपने उत्पादन से वंचित नहीं किया जाय ।

मध्यवर्ग का चित्रण

प्रेमचन्द मध्यवर्ग का चित्रण करते हुए इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि शासन की बागडोर किसान मजदूर के हाथ में होनी चाहिए न कि मध्यवर्ग के हाथ में । इसीलिए उनके किसान प्रगतिशील,साहसी और कर्मठ हैं । मध्यवर्ग निरन्तर पतन की ओर अग्रसर होता जा रहा है । वे पुंजीवाद के घोर विरोधी हैं । 'रंगभूमि' में उन्होंने नवोदित भारतीय पुंजीवाद की विजय दिखाकर इस भयंकर खतरे की सूचना पहले ही दे दी है । गांधीवाद तो इस विषय में मौन है । वह आशा करता है कि इन पुंजीपतियों को कालान्तर में सद्बुद्धि आयेगी और वे स्वत: ही अपना अधिकार छोड़ देंगे । किन्तु प्रेमचन्द उन्हें पनपने ही नहीं देना चाहते । वे रूसी क्रान्ति से प्रभावित थे और चाहते थे कि भारत में भी एक ऐसे समाज की स्थापना हो । उन्होंने अपने 'महाजनी सभ्यता' नामक लेख में रूस की नवोदित संस्कृति एवं समाज-व्यवस्था की ओर आशाप्रद दृष्टि से देखा है । वे वास्तविक स्वाधीनता का अर्थ आर्थिक स्वाधीनता मानते हैं । मार्क्सवाद समाज की विषमताओं का मूल कारण अर्थ का असमान विभाजन मानता है । प्रेमचन्द की धारणा भी यही थी और वे शोषण के विरोधी थे । उस युग में शोषण का मुख्य केन्द्र गांव ही था । अत: उनके कथा-साहित्य का आधार गांव ही विशेष रूप से रहा ।

नागरिक जीवन

नागरिक जीवन में प्रेमचन्द ने बहुत नहीं लिखा है,लेकिन जितना लिखा है,उतना ही इस जीवन के साथ भी उनके पूर्ण परिचय को स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त है । अपने महत्त्वपूर्ण उपन्यास 'गोदान' में उन्होंने सम्पूर्ण राष्ट्र के चित्रण का श्लाघ्य प्रयत्न किया है । 'गोदान' की कथा-धारा नागरिक और ग्रामीण जीवन के कगारों से इस तरह प्रवाहित है कि एक की अपेक्षा में ही दूसरे को समझा जा सकता है और दोनों मिलकर ही धारा की सार्थकता को सम्भव बना सकते हैं । सम्पूर्ण राष्ट्र की गति उसके जीवन-स्पन्दन और उसकी आकांक्षाओं,अभिलाषाओं को कलाकार प्रेमचन्द ने पकड़ा है और उसे सशक्त अभिव्यक्ति दी है । प्रेमचन्द ने अपने युग की छटपटाहट का बड़ी ही सूक्ष्मता से अंकन किया है,जिसके माध्यम से मरते हुए होरी के युग से उगते हुए गोबर के युग का विकास होने का चित्रण है ।

प्रेमचन्द ने अपने साहित्य में आर्थिक दृष्टि से बड़े पैमाने पर चित्र अंकित किए हैं । प्रारम्भ में जमीन्दारों और महाजनों के प्रति वे आक्रोश और घृणा के भाव से भरे दिखाई देते हैं, वह क्रमश: उनके साहित्य से दूर होता जाता है और अपने अन्तिम उपन्यास 'गोदान' में उन्होंने इस वर्ग का चित्रण भी बड़ी सहानुभूति और तटस्थता से किया है । यह प्रेमचन्द की कला की चरम परिणति थी,जहाँ कलाकार पूर्णत: निर्वैयक्तिक होकर समाज के चित्रण को अपना उद्देश्य बनाता है । उसके लिए कोई ग्राह्य नहीं होता,कोई त्याज्य नहीं । उसका किसी के प्रति राग नहीं होता,किसी से द्वेष नहीं । किसी से उसे घृणा नहीं होती ,किसी से अकारण प्रेम नहीं । कलाकार के लिए सभी एक-से होते हैं ।उसकी सहानुभूति सब तक निर्बाधरूप से पहुँचती है । ऐसी स्थिति में कलाकार द्रष्टा बन जाता है, न्यायाधीश नहीं ।

किसान और मज़दूरों के प्रति प्रेमचन्द कथासाहित्य में आरम्भ से ही एक गहरी सहानुभूति रखी गई है । लेकिन प्रारम्भिक चित्रण में इस सहानुभूति के साथ कथाकार का मोह भी मिश्रित है । मोह कला की सीमा है, इसलिए उतने ही अंशों में प्रारम्भिक चित्रणों में कलात्मक अभाव भी है । ऐसे चित्रणों में प्रेमचन्द इस वर्ग की वकालत करते दिखाई देते हैं और उनकी समस्या को व्यापक पृष्ठभूमि में उपस्थित नहीं करके एकांगी ढंग से सामने रखते हैं । प्रेमचन्द क्रमशः कला की सीमा का उल्लंघन करते चलते हैं और क्रमशः उनके साहित्य में प्रौढ़ता आने लगती है । इस वर्ग के प्रति वर्ग के भाव से मुक्त होते जाते हैं और तटस्थता का वह भाव विकसित करने में समर्थ हो जा सकते हैं, जो महान् कृतियों की पहली शर्त है ।

आदर्श या यथार्थ ?

प्रेमचन्द के प्रारम्भिक उपन्यासों में ज़मीन्दार महाजन तथा अन्य बड़े व्यक्ति क्रोधी, आलसी और स्वार्थी के रूप में चित्रित हैं । 'कर्मभूमि' में प्रेमचन्द ने महन्त को इसी रूप में चित्रित किया है । उसके यहाँ भगवान के नाम पर बेगार ली जाती है, नज़राना वसूल होता है, लगान में एक पाई भी नहीं छोड़ी जाती । इसका परिणाम यह होता है कि समाज का अन्नदाता किसान स्वयं भूखों मरता है । 'प्रेमाश्रम' में अति वृष्टि, बाढ़ आदि प्राकृतिक प्रकोपों से पीड़ित किसान की दयनीय दशा का वर्णन है । ज़मीन्दार और साहूकार को इन प्रकोपों से कोई मतलब नहीं, उसे तो अपना पैसा चाहिए । वह समझता है कि किसान के पास पैसा होते हुए भी वह बिना पिटे देना नहीं चाहता । 'गोदान' में आकर उनकी यह भावना प्रबल हो जाती है । वे आदर्शवादी के मोह से मुक्त हो जाते हैं । उन्हें किसानों तथा कर वसूल करने वालों दोनों

के प्रति सम्वेदना होती है । राय साहब का चित्रण करते हुए उन्होंने दिखाया है कि राय साहब परिस्थितियों के कारण ही किसानों से पैसा वसूल करते हैं । यहां तक आते-आते प्रेमचन्द ने चरित्रों को परिस्थिति विशेष के आधार पर आंका है । इसके पहले उनका विचार निष्पक्ष नहीं है ।

सामाजिक जीवन

इसी प्रकार प्रेमचन्द ने सामाजिक जीवन का भी बड़ा ही विशद् चित्रण किया है । प्रेमचन्द का युग भारतीय समाज का वह युग था जब कि अनेक कारणों से उसकी समस्याएं जटिल और विविध हो गई थीं । रूढ़ियों ने उस समाज को जकड़ रखा था । राजनीति ने उसे दूषित कर रखा था, आर्थिक स्थिति ने उसे अनेक खण्डों में विभाजित कर दिया था और सांस्कृतिक हीनता से प्रभावित था । ऐसे समाज की समस्याएं उलझी हुई और तीखी थीं । उनका प्रथम उपन्यास `प्रतिज्ञा' में विधवा-विवाह की समस्या है । इसमें प्रेमचन्द ने दिखाया है कि विधवा-विवाह समाज के लिए कल्याणकारी है । आर्थिक पराधीनता का भी चित्रण है । उस युग में विधवा-विवाह की समस्या अनेक तरह से प्रभावित समस्या थी -- सांस्कृतिक हीनता, आर्थिक समस्या आदि । राजनीतिक दृष्टि से यदि हम गुलाम नहीं होते तो हममें इस तरह की प्रवृत्ति नहीं होती । हम स्वतन्त्र होकर विचार कर सकते थे । सामाजिक समस्याएं स्थूलत: सामाजिक नहीं थीं, वे आर्थिक सांस्कृतिक और राजनीतिक आदि अनेक विविधताओं से घिरी थीं । प्रेमचन्द ने व्यापक दृष्टि से इस पृष्ठभूमि को उपस्थित किया । `निर्मला' दहेज और अनमेल विवाह की करुण कहानी है । निर्मला का विवाह एक बूढ़े व्यक्ति से होता है । इसके मूल में आर्थिक स्थिति ही नहीं अपितु सांस्कृतिक और सामाजिक दोनों स्थितियों को भी दृष्टिकोण में रखा गया है । इसमें राजनीतिक कारण नहीं दिया गया है ।

राजनीतिक स्थिति को वे निषेधात्मक रूप में उपस्थित करते हैं, उसके यथार्थ रूप में नहीं । सरकार प्रयत्न नहीं करती कि उन समस्याओं का निदान हो । सरकार की ओर से सहानुभूति नहीं, राजनीतिकता का विरोध खुले आम नहीं किया है, क्योंकि वह युग इसका नहीं था, अत: उन्होंने अंग्रेजों का चित्र ऐसा उपस्थित किया है कि हम उससे भय खाते हैं । राजनीतिक समस्याओं के चित्रण में उस युग का कलाकार सीमाओं से बंधा था । प्रेमचन्द को भी स्वयं इस प्रकार की विपत्ति का सामना करना पड़ा था । इस सम्बन्ध में प्रेमचन्द ने जीवन का सबसे महान तथा कटु अनुभव -- "उन्होंने सन् १६०७ में दुनिया का सबसे अनमोल रत्न" कहानी लिखी जो उच्चकोटि की देश-भक्ति की भावना से सिक्त थी । उस कहानी का सार यह था कि संसार कीसबसे अधिक मूल्यवान वस्तु रक्त की वह बूंद है, जो मातृ-भूमि की रक्षा के लिए गिरती है । इसके बाद ऐसी ही और भी कहानियां लिखी गई हैं, जिन्होंने पाठकों में देश-भक्ति की भावना उगाई । 'सोज़े वतन' उनकी कहानियों का पहला संग्रह था, जिसे उन्होंने सन् १६०७ में प्रकाशित कराया । ये सब कहानियां उर्दू के मासिक पत्र 'ज़माना' में छप चुकी थीं । यद्यपि विषय की दृष्टि से वे कहानियां क्रान्तिकारी नहीं थीं, फिर भयभीत नौकरशाही सरकार का ध्यान इसकी ओर चला ही गया । जिले के कलेक्टर ने उन्हें बुलाया और ऐसी कहानियां लिखने के लिए जवाब तलब किया, जिनसे वैधानिक सरकार के प्रति घृणा पैदा होने की सम्भावना थी । लगभग ५०० पुस्तकें कलेक्टर की आज्ञा से जनता के सामने जला दी गईं, और युवक लेखक को कड़ी चेतावनी देते हुए कहा गया कि यदि दूसरी सरकार होती तो उनके हाथ काट लिए गये होते और इस प्रकार उनका लिखना बन्द हो गया होता । यह बात प्रेमचन्द के मर्म पर चोट करने वाली थी, परन्तु वे असहाय थे । इस घटना ने उनके हृदय में ऐसा गहरा घाव कर दिया जो समय पाकर भर तो गया, परन्तु उसका निशान बना रहा । तब 'धनपत राय' मर गया, परन्तु बाजार को अपनी कहानियों से पाटने के लिए प्रेमचन्द का जन्म हुआ[1] । जिसका

---

१ इन्द्रनाथ मदान : "प्रेमचन्द एक विवेचन", तीसरा नया संस्करण, ब१६६४, पृ० २७

अर्थ था भारत के उज्ज्वल भविष्य के प्रति आस्था उत्पन्न करना ।

इस भांति समाज और राजनीति के वात्याचक्रों से जूझते हुए प्रेमचन्द ने ऐसी अन्तर्दृष्टि प्राप्त की जो भारत के जन-जीवन में ऐसे चरित्रों को देख सके, जिनसे इस देश के स्वर्णिम भविष्य की रूपरेखा बन सकती थी ।

-0-

अध्याय --१

हिन्दी कथा साहित्य का क्रमिक विकास और प्रेमचन्द

(क) कहानियों का विकास और प्रेमचन्द

कहानी वाङ्मय का प्रतिपाद्य, कहानी की परम्परा, लिपिबद्ध साहित्यिक कहानी, ऋग्वेद में कथा-साहित्य, उपनिषद् में कथा-साहित्य , रामायण तथा महाभारत में कथा-साहित्य, गुणाढ्य की बृहत्कथा, हिन्दी कहानी का विकास ।

हिन्दी कहानियों का आविर्भाव युग (शिल्प)

विकास युग (क) प्रथम काल १९१७ई-१९२०ई०

(ख) द्वितीय काल १९२०-१९३०ई०

(ग) तृतीय काल १९३० - १९३६ई०

(ख) उपन्यास का विकास और प्रेमचन्द

भारतेन्दु के बाद उपन्यास, बीसवीं शताब्दी में हिन्दी उपन्यास, प्रेमचन्द के उपन्यास कला की विशेषताएं(जन-जीवन की प्रमुख संवेदनाएं, विस्तृत कथा-फलक,विविध प्रकार के चरित्र और उनकी मनोवैज्ञानिक रूप-रेखा, आदर्शोन्मुख यथार्थवाद ।)

-0-

प्रथम अध्याय

-0-

हिन्दी के कथा-साहित्य का क्रमिक विकास
और
प्रेमचन्द

0

(क) कहानियों का विकास और प्रेमचन्द

साहित्य के विभिन्न रूपों में कहानी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। उसके महत्त्व का प्रतिपादन तीन दृष्टियों से किया जा सकता है --इतिहास की दृष्टि से,लोकप्रियता की दृष्टि से और प्रभाव की दृष्टि से। कहानी की कहानीउतनी ही प्राचीन है, जितनी स्वयं मानवता। संसार की प्राय: सभी जातियों के साहित्य में आरम्भ से ही कहानी के उदाहरण उपलब्ध होते हैं। यदि हम भारतीय साहित्य की ओर दृष्टिपात करें तो इस तथ्य की सार्थकता प्रमाणित हो जायगी। भारतवर्ष के साहित्य की गणना विश्व के प्राचीनतम साहित्य में होती है। ऋग्वेद विश्व का सर्वाधिक प्राचीन ग्रन्थ माना जाता है। ऋग्वेद में कथा कहानियों के बीज प्राप्त होते हैं। "भारतीय साहित्य में कहानी का प्राचीनतम रूप ऋग्वेद के यम-यमी,पुरुरवा-उर्वशी, सरमा और पणिगण जैसे लाक्षणिक संवादों,ब्राह्मणों के सौपर्णकाव्य जैसे रूपकात्मक व्याख्यानों,उपनिषदों के सनत्कुमारनारद जैसे ब्रह्मर्षियों की भावमूलक आध्यात्मिक व्याख्याओं,महाभारत के गंगावतरण,शृंग,नहुष,ययाति,शकुन्तला, नल आदि जैसे उपाख्यानों,गीता के प्रवचनों,हरिवंश परिशिष्ट,ब्रह्मवैवर्त,शिव,स्कन्द जैसे पुराणों के वार्तालापों में खोजा जा सकता है।"[1] इस प्रकार ऋग्वेद से लेकर आज तक कथा-कहानियों की एक

---

१ हिन्दी साहित्य कोश,पृ०२१२

अखण्ड परम्परा मिलती है ।विषय-वस्तु तथा रचना-विधान की दृष्टि से समय-समय पर उसमें अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन होते आये हैं,यहां तक कि पुरानी कथा और नई कहानी में जमीन आसमान का अन्तर दृष्टिगोचर होता है । प्राचीनकाल में कहानी जितनी लोकप्रिय थी,उससे कहीं अधिक लोकप्रिय वह आज है । आज तो जीवन के प्राय: सभी क्षेत्रों में कथा-कहानियों का यह प्रेम देखा जा सकता है । जीवन की बढ़ती हुई व्यस्तताओं के बीच व्यक्ति थोड़ा-बहुत समय,समयाभाव की शिकायत करते हुए भी निकाल लेता है और कहानियों द्वारा अपना मनोरंजन करता है । मनोविनोद का इससे सुगम और उपयुक्त साधन शायद उसके पास और कोई नहीं है । इसीलिए अनेक पत्र-पत्रिकाओं में अन्य रचनाओं के साथ कहानी को भी अनिवार्य रूप से स्थान दिया जाता है । यही नहीं, कविता,नाटक,उपन्यासादि साहित्यिक विधाओं को लेकर रचना में प्रवृत्त लेखक तक कहानी-रचना के लोभ को संवरण नहीं कर पाते, और साधारण-से-साधारण व्यक्ति से लेकर महान्-से-महान् विद्वान् तक कहानी द्वारा प्राप्त होने वाले अनुरंजन तथा आनन्द के लिए उत्सुक देखे जाते हैं । इसी से कहानी के प्रभाव का अनुमान लगाया जा सकता है ।

अपनी प्राचीनता और लोकप्रियता के कारण कहानी में एक अद्भुत शक्ति भी निहित है । कहानी की इस शक्ति का परिचय अति प्राचीन दृष्टान्तों और उपाख्यानों में ही मिल जाता है । सिद्धान्त निरूपण, तत्त्व निर्णय,दर्शन की गूढ़ समस्याओं को सुलझाने और अन्य अनेक गम्भीर विषयों को स्पष्ट करने के लिए प्राचीन काल से ही कथा-कहानियों का सहारा लिया जाता रहा है । गूढ़ से गूढ़ विचारों और गहन से गहन अनुभूतियों को सरलतम रूप में जन-मन तक पहुंचाने का कार्य कहानियों से लिया गया । यह कार्य अत्यधिक सुगमता और सफलता के साथ कहानी ने किया । डा० जगन्नाथप्रसाद शर्मा के शब्दों में --"साहित्य के माध्यम से डाले जाने वाले जितने भी प्रभाव हो

सकते हैं, वे रचना के इस प्रकार में अच्छी तरह से उपस्थित किए जा सकते हैं। चाहे सिद्धान्त प्रतिपादन अभिप्रेत हो, चाहे चरित्र-चित्रण की सुन्दरता इष्ट हो, किसी घटना का महत्त्व निरूपण करना हो अथवा किसी वातावरण की सजीवता का उद्घाटन ही लक्ष्य बनाया जाय, क्रिया का वेग अंकित करना हो या मानसिक स्थिति का सूक्ष्म विश्लेषण करना इष्ट हो-- सभी कुछ इसके द्वारा सम्भव है।[1] वर्तमान समय में तो कहानी की यह शक्ति और भी अधिक महत्त्व रखती है। इस युग में समाज जो विविधतापूर्ण रूप धारण करता जा रहा है, जो अनेक प्रकार के वर्ग उसमें बनते जा रहे हैं और इन वर्गों में जो भिन्न-भिन्न प्रवृत्तियां उत्पन्न होती जा रही हैं, उनका प्रभावशाली और सूक्ष्म चित्रण कथा-कहानियों द्वारा ही सम्भव है। समाज और व्यक्ति के जीवन की विकृतियों पर जितना प्रहार कहानी के माध्यम से सम्भव है, उतना किसी अन्य विधि से नहीं। किन्तु समाज और व्यक्ति के जीवन की विकृतियों पर चोट करना ही कहानी का लक्ष्य नहीं है, उनका निराकरण कर, उसमें सुधार लाना भी उसका ध्येय है। इस प्रकार कहानी अपने लघु आकार में मनुष्य के द्वारा मनुष्य को समझाने का प्रयत्न है। जब मनुष्य अपने को समझने का प्रयत्न करता है, तो समझता भी है और जब समझता है तो सुधार की प्रवृत्ति भी उसमें जागृत होती है और इसी में कहानी का महत्त्व तथा सार्थकता निहित है।

पाश्चात्य और पौर्वात्य विद्वानों ने कहानी की जो परिभाषाएं दी हैं, उनमें से कोई एक परिभाषा कहानी का स्वरूप स्पष्ट करने में समर्थ नहीं है। वे सब मिलकर कहानी के रूप को चाहे स्पष्ट करें, किन्तु अलग-अलग वे उसके भिन्न-भिन्न लक्षणों को ही सामने लाती हैं। कहानी के क्षेत्र-विस्तार और रूप-वैविध्य के कारण उसकी व्यवस्थित और सम्यक् परिभाषा

---

१ डा० प्रकाश दीक्षित, एम० ए० : 'हिन्दी कहानी'

देने की कठिनाई का अनुभव करते हुए बाबू गुलाबराय ने उसका साम्य 'बिहारी' की नायिका से दिखाया है, जिसके क्षण-क्षण परिवर्तनशील सौन्दर्य के कारण उसके चित्र को अंकित करने में चतुर चित्रकार भी असफल रहे। फिर भी अपनी असफलता की चिन्ता को छोड़कर साहित्य के विद्वानों ने कहानी की परिभाषा देने का प्रयत्न किया ही है । कुछ पाश्चात्य विद्वानों द्वारा दी गई कहानी की परिभाषा इस प्रकार है[१] । एडगर एलेन पो के अनुसार -- "छोटी कहानी एक विवरणात्मक रचना है, जो इतनी छोटी होती है कि एक बैठक में पढ़ी जा सके । उसे पाठक पर एक प्रभाव डालने के लिए लिखा जाता है । उसमें ऐसे तत्वों का बहिष्कार कर दिया जाता है, जो उस प्रभाव को अग्रसर करने में योग न दें । वह अपने आप में पूर्ण होती है[१] ।

सर ह्यू वालपोल ने कहानी की परिभाषा इस प्रकार दी है-- "कहानी एक कहानी होनी चाहिए, जिसमें घटनाओं तथा दुर्घटनाओं, तीव्र कार्य व्यापार और कौतूहल के द्वारा चरम विन्दु तथा संतोषजनक अन्त तक ले जाने वाले अप्रत्याशित विकासों से पूर्ण बातों का विकास विवरण हो[२] ।" जेम्स डब्ल्यु लीन के अनुसार-"संक्षेप में कहानी नाटकीय रूप में एक चरित्र के जीवन में संक्रमण विन्दु की अभिव्यक्ति है[३]"।

---

१ "A short story is a narrative, short enough to be read in a single sitting, written to make an impression on the reader, excluding all that does not forward that impression complete and final in itself." (Edgar Allen Poe)

२ "A short story should be a story, a record of things full of incident and accident, swift movement, unexpected, developed, developed leading through suspence to a climax and satisfying denonment." (Sir H. Walpole)

३ "Short story is a representation, in a brief, dramatic form, of a point in the life of a single character." (James W. Linn)

कहानी में एक ही चरित्र अथवा एक ही स्थिति द्वारा अनेक भावनाओं का चित्रण रहता है।[1] कहानी को स्वत: पूर्ण होना चाहिए। कहानी घुड़दौड़ के समान है जिसमें आरम्भ और अन्त का सबसे अधिक महत्त्व होता है।[2] कोई भी कथात्मक रचना जो बीस मिनट में पढ़ी जा सके कहानी कही जायगी।[3] "कहानी को इस रूप में हमें प्रभावित करना चाहिए कि वह रूपरेखा में पूर्णत: स्पष्ट संतुलित, उद्देश्य के लिए पर्याप्त विस्तृत किन्तु भीड़-भाड़ के तनिक भी संकेत से रहित और अपने ताने-बाने में पूर्ण होती है।[4]

इन परिभाषाओं के अतिरिक्त इनसाइक्लोपीडिया ब्रटानिका में भी कहानी की परिभाषा पर विचार किया गया है। उसमें दी गई परिभाषा इस प्रकार है।[5]

"अन्त में स्वतन्त्र साहित्यिक विधा के रूप में कहानी का वर्णन करते हुए इससे अधिक और क्या कहा जा सकता है कि वह संक्षिप्त, अत्यधिक संगठित तथा पूर्ण कथा रूप है।"[5]

भारतीय विद्वान् भी कहानी की परिभाषा निर्माण में संलग्न रहे हैं। प्रेमचन्द ने कहानी को पारिभाषित करते हुए लिखा है -- "कहानी (गल्प) एक रचना है, जिसमें जीवन के किसी एक अंग या किसी एक मनोभाव

---

1. A short story deals with a single character or a series of emotions called forth by a situation. The short story must be an organic whole." (Brander Mathew)
2. "A short story is just a horse race. It is the start and finish which counts most. (Ellery)
3. "Any peice of short fiction which can be read in twenty minutes time would be a short story." (H. G. Wells)
4. "It should impress us as absolutely clear in out line, well proportioned, full of enough for the purpose yet without the slightest suggestion of crowding, and within its own frame work complete." (W. H. Hudson)
5. "Ultimately, in describing it as a distinct literary form one can hardly do better than to say that it is short, highly organised, complete form of fiction

को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है । उसके चरित्र, उसकी शैली, उसका कथा-विन्यास सब उसी एक भाव को पुष्ट करते हैं[1] ।'

राय कृष्णदास -- 'आख्यायिका में सौन्दर्य की एक झलक का रस है । मान लीजिए आप किसी तेज सवारी पर चले जा रहे हैं, रास्ते में एक गोल मटोल शिशु खेल रहा है, सुन्दरता की मूर्ति । उसकी झलक मिलते न मिलते भर में सवारी आगे निकल जाती है, किन्तु उतनी ही झलक ऐसी होती है कि उसकी स्थायी रेखा आपके अन्तर्पट पर अंकित हो जाती है । यही काम कहानी भी करती है[2] ।'

श्यामसुन्दरदास[3] -- 'आख्यायिका एक निश्चित लक्ष्य या प्रभाव को लेकर नाटकीय आख्यान है ।'

रामचन्द्र शुक्ल -- 'आख्यायिका साहित्य का वह रूप है, जिसके कथा-प्रवाह और कथोपकथन में अर्थ अपने प्रकृत रूप में अधिक विद्यमान रहता है और उसे दबाने वाले भाव-विधान या उक्तिवैचित्र्य के लिए थोड़ा स्थान बचता है[4] ।'

जैनेन्द्र कुमार -- 'कहानी तो वह भूख है, जो निरन्तर समाधान पाने की कोशिश करती रहती है । हमारे अपने सवाल होते हैं, शंकाएं होती हैं, चिन्ताएं होती हैं और हम उनका उत्तर, उनका समाधान खोजने का पाने का सतत् प्रयत्न करते रहते हैं । हमारे प्रयोग होते रहते हैं । उदाहरणों और मिसालों की खोज होती रहती है । कहानी उस खोज के प्रयत्न का एक उदाहरण है ।

अज्ञेय -- 'कहानी जीवन की प्रतिच्छाया है और जीवन स्वयं एक अधूरी कहानी है, एक शिक्षा है, जो उम्र भर मिलती है और समाप्त नहीं होती ।'

इलाचन्द्र जोशी -- 'जीवन का चक्र नाना परिस्थितियों के संघर्ष में उलटा-सीधा चलता रहता है । इस सुवृहत् चक्र की किसी विशेष परिस्थिति की स्वाभाविक गति का प्रदर्शन ही कहानी होती है ।'

चन्द्रगुप्त विद्यालंकार -- 'घटनात्मक इकहरे चित्रण का नाम कहानी है । साहित्य के सभी अंगों के समान रस उसका आवश्यक गुण है ।'

श्रीकृष्णलाल -- 'आधुनिक कहानी साहित्य का एक विकसित कलात्मक रूप है, जिसमें लेखक अपनी कल्पना-शक्ति के सहारे कम-से-कम पात्रों अथवा चरित्रों के द्वारा

---

१ प्रेमचन्द : 'कुछ विचार'

२

३ श्यामसुन्दरदास : 'साहित्यालोचन', पृ० ११६

४ प्रो० रामचन्द्र शुक्ल का भाषण द२४वां, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, पृ० ६

कम से कम घटनाओं और प्रसंगों की सहायता से मनोवांछित कथानक, चरित्र, वातावरण, दृश्य अथवा प्रभाव की सृष्टि करता है ।[1]

गुलाबराय -- 'छोटी कहानी एक स्वत: पूर्ण रचना है, जिसमें एक तथ्य या प्रभाव को अग्रसर करने वाली व्यक्ति केन्द्रित घटना या घटनाओं के आवश्यक उत्थान-पतन और मोड़ के साथ पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालने वाला वर्णन हो ।'[2]

जगन्नाथप्रसाद शर्मा -- 'कहानी गद्य-रचना का कथा सम्पृक्त वह स्वरूप है, जिसमें सामान्यत: लघु विस्तार के साथ, किसी एक ही विषय अथवा तथ्य का उत्कट संवेदन इस प्रकार किया गया हो कि वह अपने में सम्पूर्ण हो और उसके विभिन्न तत्व एकोन्मुख होकर प्रभावान्विति में पूर्ण योग देते हों ।'

कहानी की उपर्युक्त विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर हम कहानी के स्वरूप तथा लक्षण से परिचित होते हैं तथा कहानी के लक्षण इस प्रकार गिनाए जा सकते हैं--

(१) कहानी एक (विवरणात्मक) संक्षिप्त कथात्मक रचना है ।

(२) कहानी की रूपरेखा पूर्णत: स्पष्ट और संतुलित होती है ।

(३) कहानी अत्यन्त संगठित और उद्देश्यपूर्ति के लिए पर्याप्त, किन्तु लघु - विस्तारी होती है ।

(४) कहानी अपने आप में पूर्ण होती है ।

(५) कहानी ऐसी हो, जिसे बीस मिनट, एक घण्टा अथवा एक बैठक में पढ़ा जा सके ।

(६) कहानी में घटनाएं होती हैं, जो कौतूहल द्वारा चरमबिन्दु की ओर अग्रसर होती हैं ।

(७) कहानी में कथानक का विकास अप्रत्याशित ढंग से होता है ।

(८) कहानी में कार्य-व्यापार की तीव्रता रहती है ।

(९) कहानी घटनात्मक इकहरे चित्रण को कहते हैं ।

(१०) कहानी की घटनाएं व्यक्ति-केन्द्रित होती हैं ।

(११) कहानी जीवन की प्रतिच्छाया है ।

(१२) कहानी में एक ही चरित्र अथवा स्थिति द्वारा अनेक भावों का चित्रण रहता है ।

(१३) कहानी में सम्पूर्ण मनुष्य नहीं उसके चरित्र का एक पक्ष चित्रित रहता है ।

(१४) कहानी में जीवन का एक अंग एक मनोभाव का चित्रण होता है ।

(१५) कहानी में जीवन की विशेष परिस्थिति की स्वाभाविक गति का चित्रण रहता है ।

(१६) कहानी सौन्दर्य की एक झलक का रस होती है ।

(१७) कहानी का आवश्यक गुण रस है ।

(१८) कहानी में कल्पना का योग रहता है ।

(१९) कहानी में नाटकीयता होती है ।

(२०) कहानी का प्रारम्भ और अन्त चमत्कारपूर्ण हो ।

(२१) कहानी पाठक पर एक प्रभाव डालने के लिए लिखी जाती है । कहानी के विभिन्न तत्त्व एकोन्मुख होकर प्रभावान्विति में योग देते हैं ।[१]

उपर्युक्त लक्षणों से कहानी का रूप स्पष्ट हो जाता है । इनमें से कुछ लक्षण कहानी के आकार, कुछ विषय, कुछ उद्देश्य को स्पष्ट करने वाले हैं, किन्तु सभी लक्षण कहानी के अनिवार्य लक्षण नहीं हैं । कुछ ऐसे भी लक्षण हैं, जिनके अभाव में भी कहानी का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है । कहानी के विस्तार, कहानी में कल्पना का उपयोग, कहानी में रस की आवश्यकता आदि लक्षण इसी प्रकार के हैं । कहानी की जान तो कहानी का कहानीपन है । कहानी में यदि कहानीपन के अभाव में चाहे जो कुछ कहा जाय कहानी नहीं कहा जा सकता । कहानी में कहानीपन के लिए दो बातें अनिवार्य हैं-- (१) प्रतिपाद्य की एकान्तता, ध (२) प्रभाव की अन्विति ।

कहानी का प्रतिपाद्य

कहानी का प्रतिपाद्य कोई घटना, कोई चरित्र, कोई वातावरण, कोई भाव अथवा कोई विचार हो सकता है । कहानी का प्रतिपाद्य पाठक के सम्मुख इस रूप में उपस्थित किया जाता है, कि वह सम्यक् रूप से उसका तीव्र संवेदन कर सके । 'पुरस्कार', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'क ख ग', 'पतितपावन'

१ प्रो० रामप्रकाश दीक्षित, एम०ए० : 'हिन्दी कहानी', पृ० ६-१०

आदि कहानियों में संवेदन की जो तीव्रता है,उसका कारण यह है कि लेखक का ध्यान बराबर प्रतिपाद्य की एकान्तता पर रहा है । 'पुरस्कार' में 'प्रसाद' का ध्यान चरित्र पर केन्द्रित है, 'शतरंज के खिलाड़ी' में प्रेमचन्द का ध्यान वातावरण पर 'क ख ग' में चन्द्रगुप्त विद्यालंकार का ध्यान भावना पर और 'पतितपावन' में विश्वम्भर नाथ शर्मा 'कौशिक' का ध्यान घटनाओं पर है ।

प्रतिपाद्य की एकान्तता अनिवार्यत: प्रभाव की एकता की ओर ले जाती है । प्रभाव की एकता ही कहानी का चरम लक्ष्य है ।

हिन्दी कहानी का विकास

'कहानी सदैव से जीवन का एक विशेष अंग रही है । हर एक बालक को अपने बचपन की वे कहानियां याद होंगी, जो उसने अपनी माता और बहन से सुनी थी । कहानियां सुनने को वह लालायित रहता था । कहानी शुरू होते ही वह किस तरह सब कुछ भूलकर सुनने में तन्मय हो जाता था,कुत्ते और बिल्लियों की कहानियां सुनकर वह कितना प्रसन्न होता था-- इसे शायद वह कभी नहीं भूल सकता ।'[1] कहानी की उत्पत्ति कब,कहां और किस प्रकार हुई ,इसका निश्चयात्मक उत्तर देना प्राय: असम्भव है । यदि हम कहें कि कहानी का जन्म मनुष्य के साथ ही हुआ तो इसमें कोई अत्युक्ति नहीं । मनुष्य का जीवन ही अपने-आप में कहानी है । संसार में अवतरित होकर मनुष्य अपने चारों ओर की जड़ चेतन प्रकृति के सम्पर्क में आया उसे अनेक प्रकार के अनुभव हुए,क्योंकि मानव और मानवेतर जगत में क्रिया प्रतिक्रिया चलती रहती है । सृष्टि के विकास का अपना एक क्रम होता है किन्तु उस क्रम को जिसे हम प्रकृति कहते हैं,मानव बदल भी सकता है । उसपर अपना प्रभाव डाल भी सकता है,इसीलिए मानव और मानवेतर जगत की क्रिया-प्रतिक्रिया का स्पष्ट रूप उनका संघर्ष है । मानवेतर जगत से मानव प्रभावित होता है और मानव से मानवेतर जगत । मानव में जीवन और जगत से प्राप्त होने वाले अनुभव को व्यक्त करने की जन्मजात प्रवृत्ति थी । प्रारम्भ में भले ही वह अपने इन अनुभवों तथा प्रतिक्रियाओं को इंगितों द्वारा अभिव्यक्त या प्रकट करता रहा होगा,किन्तु बाद में ज्यों-ज्यों उसमें अभिव्यक्ति के सशक्त एवं

---

१ प्रेमचन्द : 'कुछ विचार',पृ०४०

प्रभावशाली माध्यम से भाषा का विकास होने लगा, त्यों-त्यों वह अधिक सरलता से, अधिक व्यापकता तथा सुबोधता के साथ अपनी बात कह सकने में समर्थ होने लगा । अपनी बात कहने की प्रवृत्ति ने ही कहानी का जन्म दिया । बात का ही रूप 'वार्ता' भी है और इसी वार्ता से कथावार्ता का घनिष्ठ सम्बन्ध है । अत: यह स्पष्ट है कि जीवन और जगत् के सम्बन्ध में मनुष्य के अनुभवों को परस्पर कहने-सुनने की प्रवृत्ति कहानी की उत्पत्ति का आधार उपस्थित करता है ।

कहानी की परम्परा

प्रारम्भ में कहानी कहने की परम्परा मौखिक ही रही । भाषा के विकास के साथ ही साथ लिपि का भी विकास हुआ होगा । विकासक्रम में भाषा पहले आती है, लिपि बाद में । अतएव लिपि के विकास तक कहानी की परम्परा मौखिक रही होगी । कहानी को साहित्यिक रूप बाद में प्राप्त हुआ । लिपिबद्ध तथा साहित्यिक रूप के विकसित हो जाने पर भी आज कहानी की मौखिक परम्परा अबाध रूप से चली आ रही है । आज भी रात को बच्चे अपनी बूढ़ी दादी तथा नानी से कहानी सुनते-सुनते सो जाते हैं । वे कहानी सुनने के लिए लालायित रहते हैं तथा सब कुछ भूलकर तन्मयता से कहानी सुनते हैं । नाई ठाकुर और पंडित जी भी तरह-तरह की कहानियां सुनाने में पटु समझे जाते हैं । आज भी भूतों, प्रेतों, परियों, देवों तथा दानवों की कहानियां सुनी जाती हैं ।

कहानियों की मौखिक परम्परा के पश्चात् सभी देशों में लिपिबद्ध तथा साहित्यिक कहानियों की परम्परा का विकास हुआ । कहानी की लिपिबद्ध तथा साहित्यिक परम्परा का आरम्भ सर्वप्रथम कहां हुआ इस सम्बन्ध में प्राय: अधिकांश विद्वानों का उत्तर है 'भारत में' ।

लिपिबद्ध साहित्यिक कहानी

अधिकांश विद्वानों की मान्यता है कि भारतवर्ष में ही सबसे पहले लिखित कहानी उत्पन्न हुई, क्योंकि ऋग्वेद में कहानी के बीज मिलते हैं और ऋग्वेद को संसार का सबसे प्राचीनतम ग्रन्थ होने का गौरव प्राप्त है । लिपिबद्ध कहानियों की यह परम्परा ऋग्वेद से आरम्भ होकर आज तक चली

आ रही है । वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत, पाली, प्राकृत एवं अपभ्रंश से होती हुई यह हिन्दी तक चली आई है किन्तु पुरानी और आधुनिक कहानी में नाम-मात्र का ही साम्य है । समय और युग के अनुसार उसमें भी परिवर्तन हुए हैं और उसका रूप बदलता आया है । आज उसका रूप इतना बदल गया है कि वह स्वयं अपने पुराने रूप को पहचानने में असमर्थ है । उसका केवल रूप ही नहीं बदला है, संस्कार भी बदले हैं । आत्मा चाहे उसकी भारतीय ही हो, किन्तु रूप और संस्कार उसके विदेशी हैं, वैसे ही जैसे हम सब की आत्मा भारतीय है, किन्तु संस्कार और रूप विदेशी हो गया है । बाबु गुलाबराय के शब्दों में-- 'आजकल की हिन्दी कहानियां, जिनको गल्प,आख्यायिका और लघु कथा भी कहते हैं हैं तो भारत की पुरानी कहानियों की संतति किन्तु विदेशी संस्कार लेकर आई हैं । खद्दर के सूट की भांति उनकी सामग्री प्राय: देशी रहती है, किन्तु काट-छांट अधिकांश में विलायती ढंग का होता है[1]।' कहानी का जो रूप अब स्वीकार किया है उसका प्राचीन 'कथा' तथा 'आख्यायिका' से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं । वर्तमान उपन्यास तथा कहानी प्राचीन कथा तथा आख्यायिका से कुछ सीमा तक स्वतन्त्र रचनाएं हैं । प्राचीन कथाओं में घटनाएं बिना किसी व्याघात के क्रमिक रूप से विकसित होती थीं, जब कि वर्तमान कहानी तथा उपन्यास में घटनाओं का विन्यास कुछ टेढ़ा तथा चमत्कारपूर्ण भी हो चला है[2]।' पण्डित रामचन्द्र शुक्ल ने भी पुरानी तथा नई कहानियों के अन्तर को स्पष्ट करते हुए अपने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' पुस्तक में लिखा है --' पुराने ढंग की कथा-कहानियों में कथा का प्रवाह अखण्ड गति से एक ओर चलता था,जिसमें घटनाएं पूर्वापर क्रम से जुड़ती सीधी चली जाती थीं । पर यूरोप में जो नये ढंग के कथानक नावेल के नाम से चले और बंग भाषा में आकर उपन्यास कहलाए, मराठी में वे 'कादम्बरी' कहलाने लगे । वे कथा के भीतर की कोई भी परिस्थिति आरम्भ में रखकर चल सकते हैं और उनमें घटनाओं की शृंखला लगातार सीधी न जाकर इधर उधर और शृंखलाओं से

---

१ रामप्रकाश दीक्षित, एम०ए० : 'हिन्दी कहानी', पृ०७५

२ डा० ब्रजदत्त शर्मा : 'हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन',पृ०२३

गुम्फित होती चलती है-- घटनाओं के विन्यास की यही वक्रता या वैचित्र्य उपन्यासों और आधुनिक कहानियों की वह प्रत्यक्ष विशेषता है, जो उन्हें पुराने ढंग की कथा-कहानियों से अलग करती है ।[1]

आधुनिक हिन्दी कहानियों के आविर्भाव से पहले कहानी की एक लम्बी परम्परा भारतवर्ष में मिलती है । यह परम्परा वैदिक,संस्कृत, लौकिक संस्कृत, पाली,प्राकृत, अपभ्रंश भाषाओं के साहित्य से होती हुई हिन्दी साहित्य तक चली आई है । ऋग्वेद के संवाद सूक्त, उपनिषदों की रूपक कथाएं, रामायण की अन्तर्कथाएं, महाभारत के उपाख्यान जातक कथाएं, बृहत्कथा, वासवदत्ता, दशकुमार चरित, कादम्बरी, बृहत्कथा - श्लोक , कथासरित्सागर, बेताल पंचविंशतिका शुक सप्तति, सिंहासन ,अत्रिशिका, पंचतंत्र,हितोपदेश, प्राकृत तथा अपभ्रंश में प्राप्त कथा काव्य, हिन्दी आदि-काल के चारण काव्य तथा मध्यकाल के प्रेमगाथा काव्यों, वैष्णव वार्ताओं और अन्तत: भारतेन्दुकालीन कथात्मक रचनाओं में हिन्दी कहानी के आविर्भाव से पूर्व कहानी का विकास क्रम देखा जा सकता है ।

ऋग्वेद में कथा-साहित्य

ऋग्वेद के अन्तर्गत दैवी शक्तियों की आराधना और स्तुति में कहे गये मंत्रों का संग्रह है । इन मंत्रों के बीच-बीच में कुछ ऐसे सूक्त उपलब्ध हैं,जिनमें एकाधिक पात्रों का कथोपकथन है । इन कथोपकथनात्मक सूक्त या संवाद सूक्त में ही कहानी के बीज पाये जाते हैं । ऋग्वेद के संवाद सूक्तों में कहानी के जो बीज या अंकुर थे, वही पौराणिक साहित्य में आख्यानों,उपाख्यानों के रूप में पल्लवित हुआ । ऋग्वेद में पुरुरवा, ययाति, शान्तनु,यदुतुर्वश, द्रुह्य,पुरु और अनु आदि राजाओं से सम्बन्धित आख्यानों के संकेत मिलते हैं । पुराणों में इन्हीं का विस्तार के साथ वर्णन किया गया है । ऋग्वेद आख्यानों का मूल स्रोत मात्र है ।

---

१ रामचन्द्र शुक्ल : 'हिन्दी साहित्य का इतिहास',परिवर्धित संस्करण, पृ०५०२ ।

उपनिषद साहित्य का स्थान कथा-साहित्य की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण

ऋग्वेद के पश्चात् उपनिषद् साहित्य का स्थान कथा साहित्य की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है । उपनिषदों में अध्यात्म,पूर्वजन्म, परजन्म,मोक्ष, आनन्द,यज्ञ आदि विषयों को स्पष्ट करने के लिए कथा-कहानियों का सहारा लिया गया है । उपनिषदों की कहानियां रूपात्मक हैं । इनके पात्र ऋषि, राजा, ब्रह्मचारी और पुरोहित आदि हैं । इन पात्रों के माध्यम से आत्मा परमात्मा, जीव जगत से सम्बन्धित गंभीर प्रश्नों का समाधान उपस्थित किया गया है । विषय की गम्भीरता के बावजूद उपनिषदों की कहानियां मनोरंजक और शिक्षाप्रद हैं । इन कहानियों की शैली प्रश्नोत्तर शैली है । एक व्यक्ति जिज्ञासा उत्पन्न करता है दूसरा उसका समाधान करता है । `छान्दोग्य, कठ, तैत्तिरीय, केन,प्रश्न,मुण्डक तथा बृहदारण्यक आदि उपनिषदों में ऐसी अनेक कहानियां मिल जाती हैं । श्वेतकेतु और उद्दालक की कथा, अश्वनीकुमार और उनके गुरु दध्यंग की कथा, नचिकेता की कथा, देवताओं की शक्ति परीक्षा की कथा,सत्यकाम,सुकेशा, गार्ग्य,कौशल आदि की कथा, शौनक और अंगिरा की कथा, गार्गी और याज्ञवल्क्य की कथा इसी प्रकार की कहानियों के उदाहरण हैं ।`[१]

रामायण तथा महाभारत में कथासाहित्य

उपनिषदों के बाद रामायण तथा महाभारत का नाम आता है । रामायण की रचना वाल्मीकि ने और महाभारत की रचना वेदव्यास ने की । रामायण और महाभारत की कथा का मूल स्रोत राम और कृष्ण के आख्यान हैं । वाल्मीकि ने राम की कथा के साथ अनेक अन्तर्कथाएं जोड़कर उसे व्यापक बनाया । इसी प्रकार वेदव्यास ने भी अपनी कल्पना के सहारे महाभारत की कथा को व्यापक रूप दिया । रामायण के अन्तर्गत जिन पात्रों और परिस्थितियों की अवतारणा हुई है, उनमें यथेष्ठ सजीवता एवं नाटकीयता है । सजीव पात्रों और नाटकीय परिस्थितियों की योजना से रामायण के द्वारा कथा-कहानियों को बड़ा ही सहारा मिला होगा ।

---

१ रामप्रकाश दीक्षित : `हिन्दी कहानी`,पृ०७६

महाभारत में भी रामायण की भांति ही मूलकथा के साथ अनेक प्रासंगिक कथाएं जुड़ी हुई हैं । इसके कथानक में इतिहास, कल्पना और धर्म का अद्भुत सामंजस्य हुआ है । कथाओं की शैली प्राय: वही है जो उपनिषदों में थी । समाज,राजनीति, रीति-नीति,आदर्श,जीवन धर्म तथा दर्शन का व्यापक चित्रण इन कथाओं में हुआ है । 'महाभारत के उपाख्यानों से भावी कथा-साहित्य को प्रेरणा ही नहीं मिली,वरन् विषय और शैली भी मिली । महाभारत के 'शकुन्तलोपाख्यान' 'मत्स्योपाख्यान', 'शिविउपाख्यान सावित्री उपाख्यान' आदि उपाख्यानों का ही विकास आगे आने वाले पुराणों में हुआ ।'[1]

पुराणों में चन्द्र तथा सूर्यवंशी राजाओं,अवतारों उत्सवों, पर्वों आदि की कथाएं मिलती हैं । इन कथाओं में मनोरंजन के साथ तत्कालीन युग के आदर्शों, आकांक्षाओं ,भावों तथा विचारों की अभिव्यक्ति बड़ी कुशलता से हुई है । इनके द्वारा भी कहानियों की विकास-परम्परा का क्रम आगे बढ़ा ।

बौद्ध जातक कथाएं विश्व साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं,क्योंकि इनका प्रभाव मध्यएशिया की प्राय: सभी जातियों के साहित्य,कथा-कहानियों पर विशेषरूप से पड़ा है । बौद्ध भिक्षुओं के साथ ये कथाएं दूर-दूर देशों तक पहुंचीं और वहां के जीवन पर इन्होंने गम्भीर प्रभाव डाला । जातक कथाओं में बुद्धत्व प्राप्त करने के पूर्व बुद्ध को अनेक जन्म धारण करने पड़े,उन्हीं की कथाएं हैं । जातकों में जड़-चेतन दोनों प्रकार के पात्रों की योजना मिलती है, किन्तु सभी सजीव पात्रों के रूप में ही प्रयुक्त हुए हैं । एक कहानी से दूसरी कहानी, दूसरी से तीसरी कहानी उत्पन्न होने की कला का आरम्भ जातक कथाओं से ही होता है । 'कथासरित्सागर','पंचतंत्र' 'सहस्ररजनी' 'चरित्र' की कथा शैली इसी प्रकार की है । जातक कथाओं से कथाओं की कलात्मकता का विकास हुआ । इन कथाओं में इतिहास और कल्पना का सुन्दर सामंजस्य है । वर्णनात्मक और कथोपकथनात्मक शैली की व्यवस्थित योजना इनमें है ।

---

१ रामप्रकाश दीक्षित : 'हिन्दी कहानी',पृ०७७

गुणाढ्य द्वारा पैशाची भाषा में लिखी गई 'बृहत्कथा' महत्त्वपूर्ण है । यह महाग्रंथ आज उपलब्ध नहीं है । गुणाढ्य की बृहत्कथा की सूचना बाण के 'हर्षचरित' दंडी के 'काव्यादर्श', क्षेमेन्द्र की 'बृहत्कथा-मंजरी' तथा सोमदेव के 'कथासरित्सागर' से मिलती है । गुणाढ्य की बृहत्कथा के बाद सुबंधु की 'वासवदत्ता' दंडी के 'दशकुमारचरित' और बाण की 'कादम्बरी' का नाम आता है । गुणाढ्य की बृहत्कथा के आधार पर लिखे गये कथा-ग्रन्थों में बुद्ध स्वामी द्वारा लिखी गई 'बृहत्कथाश्लोक' भी है । यह रचना श्लोकबद्ध है, किन्तु इसमें पर्याप्त कथात्मकता है ।

'वेताल पंचविंशतिका', 'सिंहासन द्वात्रिंशिका तथा शुक सप्तति आदि रचनाएं भी लोकप्रिय कथा साहित्य के उदाहरण हैं । वेताल पंचविंशतिका पच्चीस कथाओं का संग्रह है । इन कथाओं का वक्ता शव में बसा हुआ वेताल है और श्रोता राजा विक्रमादित्य हैं । 'सिंहासनद्वात्रिंशिका' की बत्तीस कहानियों में राजा विक्रमादित्य के राजसिंहासन में लगी हुई कठपुतलियां राजा भोज को कहानियां सुनाती हैं जो राजसिंहासन पर बैठना चाहता है । 'शुकसप्तति' में सत्तर कहानियां हैं । कथा का वक्ता शुक है और श्रोता मैना । इन कहानियों में दुष्ट स्त्रियों की कहानियां हैं, इसके माध्यम से स्त्रियों को शिक्षा देने का प्रयत्न किया गया है ।

'पंचतंत्र' और 'हितोपदेश' नीतिपरक उपदेश प्रधान कथा-ग्रन्थ है । इन दोनों का महत्त्व अद्वितीय है । पंचतंत्र तो अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कर चुका है । ये रचनाएं क्रमशः तेरहवीं तथा चौदहवीं शताब्दी में निर्मित हुईं । इन रचनाओं से मनोरंजन तो होता ही है, धर्म और राजनीति की शिक्षा भी मिलती है । विष्णु शर्मा ने पाटलिपुत्र के राजा सुदर्शन के मूर्ख पुत्रों को राजनीति, धर्म, दर्शन आदि की शिक्षा देने के लिए हितोपदेश की रचना की थी । इन ग्रन्थों में आए हुए पात्र जड़ चेतन मानवधर्मी हैं ये दोनों ग्रन्थ मूलतः नीतिग्रन्थ ही हैं ।

संस्कृत तथा पाली कथा-साहित्य के पश्चात् प्राकृत तथा अपभ्रंश का कथा-साहित्य आता है । प्राकृत में कथा-साहित्य का प्रायः अभाव-सा है । महाराष्ट्री प्राकृत में 'लीलावती-कथा' नामक एक आख्यान

काव्य मिलता है । अपभ्रंश में पर्याप्त कथा-काव्य और कथा-ग्रन्थ उपलब्ध हैं । अपभ्रंश कथा-साहित्य की चर्चा के साथ हम हिन्दी साहित्य के आदिकाल में चले आते हैं । इस काल की रचनाओं में कथा-तत्व पर्याप्त परिमाण में मिलता है । 'आदिकाल में प्राप्त रचनाएं दो वर्गों में रखी जा सकती हैं-- (१) चारण-काव्य और (२) लोक-गाथाएं । 'बीसलदेव रासो', 'जम्बू स्वामी रास', 'रेवतगिरिरास' 'कच्छुली रास', 'गौतम रास', 'दशार्ण भद्र रास', 'कुमारपाल रास', 'रामरासो' 'सगतसिंह रासो', 'खुमाण रासो', 'श्रीपाल-रास', 'हम्मीर रासो', 'परमाल रासो', 'विजयपाल रासो', 'पृथ्वीराज रासो' आदि रचनाएं प्रथम वर्ग के अन्तर्गत आती हैं।[१] इन रचनाओं में काव्य-तत्व की अपेक्षा कथा-तत्व कहीं अधिक समृद्ध है । प्रबन्धात्मक और गेय-दोनों प्रकार की रचनाएं इनमें हैं, किन्तु कथाओं में इनका मूल इतिहाससंबंधी तथा काल्पनिक कथाओं सभी में विद्यमान है ।

लोक-गाथाओं जैसे 'ढोला मारूरा दूहा', 'माधवानल काम कंदला', 'हीर रांझा', 'सिंहासन बत्तीसी', 'मैनासत', 'चंदन मलयागिरि की बात' पद्यात्मक हैं । 'बैताल पचीसी', 'सिंहासन बत्तीसी', 'बगले हंसिनी की कथा', 'फुटकर वातारो संग्रह' पद्यात्मक हैं, 'मदन सतक', 'चन्द्र कुंवर की बात' सदा वच्छ सावलिंगा की बात' मिश्रित है इन सभी रचनाओं पर संस्कृत कथा-साहित्य का गहरा प्रभाव है । इनमें विविध शैलियों का समावेश है, किन्तु इन सबके ऊपर इनकी कथात्मकता है ।

हिन्दी साहित्य के मध्यकाल में प्रेमाख्यानक काव्यों की रचना विशेष हुई । इनमें जायसी का 'पद्मावत' कुतुबन की 'मृगावती' मंझन का 'मधुमालती' उसमान की 'चित्रावली' नूर मुहम्मद की 'इन्द्रावती' आदि रचनाएं विशेष उल्लेखनीय हैं । ये रचनाएं यद्यपि पद्यात्मक हैं, किन्तु इनमें एक उत्कृष्ट कथा-शिल्प का दर्शन होता है । हिन्दुओं द्वारा लिखित 'प्रेमाख्यान काव्यों में 'सत्यवती कथा', 'नल दमयन्ती की कथा', 'राजा चित्र-मुकुट और चन्द्रकिरण की कथा', 'उषा चरित्र' आदि उल्लेखनीय हैं । इनमें भी एक मूल कथा है और कथानक के विकास के साथ विभिन्न उपकथाएं आती जाती हैं ।

---

१ रामप्रकाश दीक्षित : 'हिन्दी कहानी', पृ०८१

मुसलमानों के साथ उनकी कहानियां भी हमारे देश में आईं । समय के प्रवाह में इन कहानियों का प्रचार बढ़ा और इनका भी प्रभाव हिन्दी कथा-साहित्य पर निश्चित रूप से पड़ा । इनमें 'सहस्त्र रजनी चरित्र' 'लैला मजनूं', 'शीरीं फरहाद', 'छबीली मटियारिन', 'सारंगा सदा वृक्ष', 'किस्सा साढ़े तीन यार', 'तोता मैना', 'गुलबकावली', 'हातिमताई' आदि का नाम उल्लेखनीय है ।

मध्यकाल के उत्तरार्द्ध और आधुनिककाल के भारतेन्दु युग में भी कथा-कहानियां विकसित होती रहीं । यह विकास 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' 'दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता', 'गोरा बादल की कथा', 'प्रेमसागर' 'नासिकेतोपाख्यान', 'उदयभान चरित' या 'रानी केतकी की कहानी' 'राजा भोज का सपना', 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न' में देखा जा सकता है । वास्तव में इन रचनाओं का लक्ष्य वैष्णवों की जीवनियां उपस्थित करना और वैष्णव धर्म की श्रेष्ठता प्रदर्शित करना है । जटमल द्वारा रचित 'गोरा बादल' की कथा' पद्य से गद्य में आई । इसमें ऐतिहासिक कथानक है और उसमें पर्याप्त कथातत्त्व भी मिलता है । लल्लूलाल का 'प्रेमसागर' और सदल मिश्र का 'नासिकेतोपाख्यान' दोनों ही पौराणिक शैली पर लिखी गई हैं । सैयद इंशा अल्ला खां की 'रानी केतकी की कहानी' को हिन्दी के कुछ आलोचक हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी होने का गौरव प्रदान करते हैं । इन रचनाओं के बाद शिवप्रसाद सितारे हिन्द का 'राजा भोज का सपना' और 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न' का नाम आता है । कल्पना पर आधारित ये रचनाएं मौलिक हैं, किन्तु इनमें कथानक का विकास नहीं हुआ है । कहानी मानते हुए भी वस्तु-विन्यास का अविकास इन रचनाओं में खलता है । इन रचनाओं के साथ हिन्दी कहानी की पूर्व पीठिका समाप्त हो जाती है और उसकी अपनी कहानी आरम्भ होती है ।

हिन्दी कहानियों का आविर्भाव युग

पाश्चात्य संस्कृति तथा उसके भौतिक दृष्टिकोण के प्रसार, राष्ट्रीय जागरण, सांस्कृतिक आन्दोलन, व्यक्ति स्वातन्त्र्य की वृद्धि, गद्य का प्रसार, मुद्रण की सुविधाओं और पत्रों के युग में 'हिन्दी प्रदीप',

`सरस्वती` और `सुदर्शन` के प्रकाशन से कथा-साहित्य में अभूतपूर्व क्रान्ति हुई। यद्यपि प्रारम्भ में `हिन्दी प्रदीप` में `कात्यायन वररुचि की कथा` `उपकोशाकी कथा` `सुदर्शन` में पौराणिक आख्यान और `सरस्वती` में `रत्नावली`, "मालविकाग्नि मित्र", `कादम्बरी`, `सीम्बलीन एथेन्स का `टाइमन`, `पैरी क्लीज` `कॉमेडी ऑफ एरर` (कौतुक मय मिलन) जैसी देशी-विदेशी कहानियों, काव्यों, नाटकों के अनुवाद भी प्रकाशित हुए, किन्तु `सरस्वती` में १६०० में किशोरीलाल गोस्वामी की `इन्दुमती` कहानी प्रकाशित हुई, जो परम्परागत अनूदित या तथाकथित मौलिक कहानियों से सर्वथा भिन्न प्रकार की थी। यद्यपि इसपर सेक्सपियर के `टेम्पेस्ट` तथा किसी राजपूत कहानी का प्रभाव माना गया है, किन्तु शिल्प की दृष्टि से यह एक नवीन कहानी थी। इसके पश्चात् कुछ समय तक रूपान्तरित और अनुवादित कहानियों का बाहुल्य था। बंगला से कहानियों के अनुवादकों में गिरिजा कुमार घोष, लाला पार्वती नन्दन तथा `बंग महिला` का प्रमुख स्थान है। `सुदर्शन` में माधव मिश्र पौराणिक आख्यायिकाओं के अनुवाद कर रहे थे। इन अनुवादों के अतिरिक्त हिन्दी में छन्दोबद्ध कहानियां भी लिखी गई, जिनमें न तो विषय का आदर्श है और न शैली का निश्चित रूप है। `जम्बु की न्याय`, `निन्यानवे का फेर`, `नकली किला`, `कुलीनाथ पाराडे` `विद्या-विहार` इत्यादि इसी शैली की रचनाएं हैं। इसके साथ प्रारम्भ में बंग भाषा के गल्प की शैली का भी अनुकरण हुआ है। किशोरीलाल गोस्वामी की `गुलबहार` मास्टर भगवानदास की `प्लेग की चुड़ैल` रामचन्द्र शुक्ल की `ग्यारह वर्ष का समय` गिरिजादत्त बाजपेयी की `पंडित और पंडितानी` इत्यादि आधुनिक कहानी के निकट हैं, किन्तु इनमें से कुछ विदेशी शैली की हैं, कुछ जीवन स्केच, इतिहास, निबन्ध के निकट हैं। `कहानी-शिल्प` का सौन्दर्य इनमें नहीं है। बंग महिला की `दुलाई वाली` सरस्वती में १६०७ में प्रकाशित हुई जो हिन्दी की प्रथम मौलिक आधुनिक कहानी है और दूसरी `इन्दु` में १६११ई० में प्रकाशित `प्रसाद` की कहानी `ग्राम्य` है। १६११ई० में ही `भारत-मित्र` में चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की `सुखमय जीवन कहानी` भी प्रकाशित हुई। १६१२ई० में

`इन्दु` में `प्रसाद` की `रसिया बालम` जी०पी० श्रीवास्तव की कहानियां, `सरस्वती` में `कौशिक` की `रक्षा बन्धन`(१६१३ई०) गुलेरी की `उसने कहा था`(१६१६ई०), ज्वालादत्त शर्मा, चतुरसेन शास्त्री तथा `अदीब`, `ज़माना` प्रेमचन्द की कहानियां तथा प्रसाद की `इन्दु` में `पुरस्कार` `आकाश-दीप` `बिसाती` `स्वर्ग के खण्डहर`, `प्रतिनिधि` राधिकारमण सिंह की `कानों में कंगना`(१६१३ई०) और `बिजली` के प्रकाशन से हिन्दी कहानी की प्रगति अबाध गति से आगे बढ़ने लगी।

हिन्दी की आधुनिक कहानी के विकास में एक ओर मानव जीवन के प्रेम, करुणा, विनोद, हास्य, व्यंग्य, विस्मय, आश्चर्यपूर्ण साधारण और यथार्थ परिस्थितियों के आघात-प्रतिघात सहायक हुए हैं, दूसरी ओर प्राचीन प्रेम प्रधान खंड-काव्य, प्रबन्ध-काव्य नाटकों और प्रेमाख्यानों से प्राप्त काव्यात्मक कल्पना ने योग दिया है।[१] आविर्भाव युग में हिन्दी कहानी की उत्पत्ति हुई। वह युग कहानी के आरम्भ और प्रयोग का युग था। विभिन्न कहानीकार दिशा की खोज में ही थे। उनमें से `चन्द्रधर शर्मा गुलेरी`, `जयशंकर प्रसाद` तथा `प्रेमचन्द` ऐसे कहानीकार थे जो दिशा खोजने के साथ-साथ मार्ग भी बना रहे थे। इन्हीं तीन महान् व्यक्तियों द्वारा विकास युग में हिन्दी कहानी का विकास हुआ।

<u>विकास युग</u>

`प्रसाद` और प्रेमचन्द का हिन्दी कहानियों के विकास में विशेष योग रहा है। इनके द्वारा विकास-युग में कहानी का पर्याप्त पल्लवन हुआ। प्रसाद जी हिन्दी के प्रथम मौलिक कहानीकार माने जाते हैं। उन्होंने अपनी प्रतिभा के बल पर हिन्दी को उच्चकोटि की कहानियां प्रदान कीं। मानव-मन के रहस्यों की गम्भीर जानकारी प्रसाद जी को थी। इसीलिए चरित्र-चित्रण में उन्हें अद्भुत सफलता मिली। कल्पना की रंगीनी भावों की सुकुमारता, काव्य की सरसता और कला का सौष्ठव एक साथ उनकी

---

१ हिन्दी साहित्य कोश, पृ०२१५

कहानियों में मिल जाता है । कहानी के विकास युग में सर्वाधिक लोकप्रिय कहानीकार प्रेमचन्द जी हुए हैं । वे उर्दू से हिन्दी में आये थे । उर्दू में कहानी लेखक रूप में पहले ही वे प्रतिष्ठा प्राप्तकर चुके थे । हिन्दी में उनकी कहानी 'पंच परमेश्वर' सन् १६१६ई० में प्रकाशित हुई । इसके बाद एक-पर-एक लगभग ३०० कहानियां उन्होंने लिखीं जो अनेक कहानी-संग्रहों में प्रकाशित हुए । 'रानी सारंधा', 'अलग्योझा', 'ईदगाह', 'बूढ़ी काकी', 'दफ्तरी', 'पूस की रात' 'सुजान भगत', 'आत्माराम', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'कफ़न', 'दो बैलों की कथा' 'बड़े भाई साहब', 'बड़े घर की बेटी', 'नशा' आदि अनेक उच्चकोटि की कहानियां लिखीं । प्रेमचन्द यथार्थवादी कलाकार हैं । उन्होंने जीवन-जगत से कहानी ली, कथानक चुने और यथार्थ शैली पर उन्होंने कहानी का रूप दिया ।

हिन्दी कहानियों के विकास युग में प्रसाद और प्रेमचन्द का विशेष योग रहा । जहां प्रसाद की प्रकृति भावमूलक थी, वहां प्रेमचन्द यथार्थवाद में लीन आदर्शमूलक हैं । प्रेमचन्द की यह आदर्शवादी परम्परा विकास युग की मूल आत्मा है । प्रसाद की भावमूलक परम्परा की अपेक्षा प्रेमचन्द की यथार्थवादी परम्परा का प्रभाव समूचे विकास युग के कहानीकारों पर अधिक पड़ा । जहां प्रसाद की भावमूलक प्रवृत्तियों का मूल धरातल इतिहास, अतीत और कल्पना पर आधारित था वहां प्रेमचन्द की यथार्थमूलक प्रवृत्तियों का मेरुदण्ड समाज, व्यक्ति और राष्ट्र की संवेदनाओं पर आधारित था । 'प्रसाद' ने अपनी कहानियों में भी काव्य और नाटक की भांति मनुष्य की आत्मा को लोकोत्तर आनन्द और सौन्दर्यानुभूति से जोड़ा क्योंकि प्रसाद प्रकृति के कवि हैं और आनन्द तथा प्रेम को ही अपनी कला का लक्ष्य मानते हैं । प्रेमचन्द समाज के आलोचक और सुधारक थे । वे अपनी कला को मानव जीवन की समस्याओं और आन्दोलनों की क्रान्तिकारिणी शक्ति मानते हैं ।

सामाजिक धरातल से प्रेमचन्द ने समाज के रूढ़िग्रस्त रीति-रिवाज, जाति, धर्म और परम्परा को अपनी कला का विषय बनाया । इनकी कहानियों में यथार्थवादी मनोविज्ञान से हृदय रंजक रूपमें अवतरित हुआ है

कि हमारे सामने जीवन का स्वस्थ दृष्टिकोण उपस्थित हो जाता है । प्रेमचन्द ने पति-पत्नी-, विधवा-विवाह,अन्तर्जातीय विवाह, वृद्ध-विवाह और बहु-विवाह से सम्बन्धित अनेक उत्कृष्ट कहानियों की सृष्टि की है,जिनमें समस्याओं और स्थितियों के प्रति सर्वत्र सुधार का आग्रह है । घरों की आर्थिक समस्याओं के साथ-साथ इन्होंने संयुक्त-परिवार-परम्परा के खोखले को सर्वत्र दिखाया है । इस दिशा में मध्यवर्ग और निम्न मध्य वर्ग के परिवार ही उनके विषय बन सके हैं । व्यक्तिगत भाव-धरातल पर प्रेमचन्द ने एक और व्यक्ति के चरित्र को लिया है, जहां सत्-असत् तथा नैतिकता और अनैतिकता का अध्ययनपूर्ण सफलता से हुआ है । दूसरी ओर प्रेमभाव को भी उन्होंने अपनी कहानी-कला में विकसित किया है । प्रेम को उन्होंने चरित्र और उसकी नैतिकता का मापदण्ड माना है और उसकी चरम परिणति उन्होंने विवाह में स्वीकार किया है । उनकी कहानियों `बूढ़ी काकी`, `आत्माराम`, और `कफ़न` में मनोविज्ञान का वह रूप सुस्पष्ट हुआ है जो पात्रों के चरित्र को प्रकाश में लाता है साथ ही साथ उनकी वाह्य परिस्थितियों और समस्याओं को भी उपस्थित करता है ।

राष्ट्रीय भाव-धारा में प्रेमचन्द गांधीवादी हैं । अछूतोद्धार दलित निर्धन देहाती के साथ अपार संवेदना, सुधार और राष्ट्रीय भावना का जागरण इनकी कहानी-कला का एक विशेष स्तम्भ है ।

ऐतिहासिक धरातल पर लिखी गई कहानियों के भाव पक्ष में आदर्शवाद और प्राचीन मर्यादा की प्रतिष्ठा है । `राजा हरदौल` `मर्यादा की वेदी`, `जुगनू की चमक`, `रानी सारंधा` आदि आदि कहानियों में भारतीय इतिहास के राजपूत और सामंतकाल के गौरवपूर्ण आदर्श चरित्र गुम्फित हैं । उन्होंने मुगलकालीन कथावस्तुओं को भी चित्रित किया है । मुगलकालीन वैभव, विलास तथा ऐश्वर्य के चित्रण के बीच उन्होंने पतन की दिशा की ओर संकेत कर हमें जागरूक और चैतन्य होने का संदेश दिया है ।

प्रेमचन्द के सम्पूर्ण कहानी-साहित्य में हमें क्रमिक विकास और अलग-अलग कलात्मक स्वर मिलते हैं,जो काल-परिस्थिति सापेक्ष्य हैं ।

ऐतिहासिक दृष्टि से प्रेमचन्द की कहानियों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है--

(क) प्रथम काल -- १९१७ ई० से १९२०ई० तक

(ख) ि.तीय काल -- १९२०ई० से १९३०ई० तक

(ग) तृतीय काल -- १९३०ई० से १९३६ई० तक

उपर्युक्त तीनों कालों की कहानियों में भावात्मक और कलात्मक अन्तर है ।

प्रथम काल में `सप्तसरोज` से लेकर `नवनिधि` तथा प्रेमपचीसी की प्रारम्भिक कहानियां आती हैं । इन कहानि ों का अपना स्वतंत्र भावात्मक और कलात्मक स्तर है । इन सभी कहानियों का ध्येय तथा भावधाराएं प्राय: एक सी हैं । इन कहानियों की कुछ मूलगत विशेषताएं हैं । कहानी की भावभूमि लम्बी चौड़ी है । इनमें कई रस, कई चरित्र, कई घटनाओं तथा संवेदनाओं का समावेश हुआ है । ये कहानियां प्राय: वर्णनात्मक शैली में हैं । कथावाचक की भांति कहानीकार ने सब कुछ अपनी ही तरफ से कहने का प्रयत्न किया है । अत: चरित्रों की केवल व्याख्या हुई है । उनके मनोभावों को व्यंजित नहीं किया गया है । कहानी का मूल्य,घटना-विन्यास और आदर्श पालन में है,स्वाभाविकता में नहीं । प्राय: सभी कहानियां संयोगात्मक हैं ।

`सौत` ,`पंच परमेश्वर`,`नमक का दरोगा`,`बड़े घरकी बेटी` ,`रानी सारंधा`,`मर्यादा की वेदी`,`पापका अग्निकुंड`,`ममता` और`अमावस्या की रात्रि` आदि कहानियों के कथानक कितने लम्बे हैं। इनके कथानक की लम्बाई और विस्तार पर आज आसानी से उपन्यास लिखे जा सकते हैं ।`नव निधि` की ऐतिहासिक कहानियाँ भी लम्बी\व्यापक और विस्तृत हैं, इसका कारण है कि इनमें भाव पक्ष या संवेदनाएं एक भाव-बिन्दु पर नहीं हैं । उनमें कई संवेदनाएं और भाव-बिन्दु आ जाती हैं । इनमें आदेश और परामर्श हैं । इन कहानियों में ऊंचे आदर्श और कर्त्तव्य-पालन के उदाहरण हैं । इसीलिए इनमें एक साथ कई रस और कई इकाइयां आ गई हैं ।

द्वितीय काल-- द्वितीयकाल में प्रेमचन्द की कहानियों की शैली में परिवर्तन हुए हैं । कहानी के सम्बन्ध में प्रेमचन्द की

धारणा स्वयं आगे बढ़ी । "आजकल आख्यायिकाओं का अर्थ व्यापक हो गया है उसमें प्रेम की कहानियां, जासूसी किस्से, भ्रमण वृतान्त, अदभुत घटना, विज्ञान की बातें, यहां तक कि मित्रों की गपशप सभी बातें शामिल कर दी जाती हैं ।"[1] पुन: लिखते हैं-- "विकासावस्था की कहानियों के विषय में वर्तमान आख्यायिका का मुख्य उद्देश्य साहित्यिक रसास्वादन करना है और जो कहानी इस उद्देश्य से जितनी दूर जा गिरती है, उतनी ही दूषित समझी जाती है[2] ।"

प्रेमचन्द ने 'प्रेम प्रसून' की भूमिका में कहानी के मुख्य तीन गुणों की ओर संकेत किया है --

(१) कहानी में कोई आध्यात्मिक या नैतिक उपदेश हो ।

(२) कहानी की भाषा अत्यन्त सरल हो ।

(३) कहानी की वर्णन शैली स्वाभाविक हो ।

फलत: द्वितीय काल की कहानियों का उद्देश्य मनोरंजन के अतिरिक्त रसास्वादन भी कराना हो गया है । इस काल में गल्पों का आधार कोई-न-कोई दार्शनिक तत्व या सामाजिक विवेचन है । इस काल में आकर प्रेमचन्द ने स्वयं अपनी कहानियों के परम लक्ष्य की ओर संकेत करते हुए कहा कि "ऐसी कहानी जिसमें कि किसी अंग पर प्रकाश न पड़ता हो, जो मनुष्य में सद्भावों को सुदृढ़ न करे या जो मनुष्य में कुतूहल का भाव न जागृत करे कहानी नहीं[3] ।"

इस काल की कहानियों का धरातल सत्य और सुन्दर दोनों के समन्वय पर आधारित है । प्रथम काल की कहानियों में मुख्यत: आदर्श की प्रतिष्ठा हुई है, द्वितीय काल में वह आदर्शवाद पूर्णत: यथार्थोन्मुख हुआ है। प्रेमचन्द के शब्दों में --"हमने इन कहानियों में आदर्श को यथार्थ से मिलाने की चेष्टा की है[4] ।"

प्रेमचन्द के इस आदर्शोन्मुख यथार्थ वाद में गांधीवाद मुखरित हुआ है । द्वितीय काल में प्राय: कहानियों का अन्त इसी बिन्दु पर हुआ है । उदाहरण के लिए 'सत्याग्रह' में झूठे प्रपंची सत्याग्रही का चित्रण करके

१ प्रेम प्रसून की भूमिका, पृ०१
२ प्रेम द्वादशी की भूमिका, पृ०.
३ ,, ,, पृ०४
४ ,, प्रसून की भूमिका पृ०६

सच्चे सत्याग्रही की कल्पना की गई है और उसका व्यक्तित्व निश्चित किया गया है । 'बूढ़ा का स्वांग' में खोखले पति को दिखाकर जगती हुई स्वतन्त्र नारी-भावना का स्वप्न देखा गया है । 'महातीर्थ' में तीर्थ की अपेक्षा मानव सेवा व्रत को श्रेष्ठ सिद्ध किया गया है । 'जेल' में मृदुला के व्यक्तित्व में असहयोग और गांधी सत्याग्रह की ओर संकेत है । 'मैकू' में मद्य-निषेध का सफलता से प्रतिपादन हुआ है ।

प्रथम काल की कहानियों के कथानक लम्बे, इतिवृत्तात्मक और क्षिप्रता लिए हुए हैं । द्वितीयकाल में उनमें कलागत सुधार और काट-छांट है । इस काल में प्रेमचन्द ने स्वयं कहानी की लम्बाई, इतिवृत्त और घटना-बाहुल्य का विरोध किया । 'आख्यायिका में इस बाहुल्य की गुंजाइश नहीं । बल्कि कई सुविज्ञजनों की सम्मति तो यह है कि उसमें केवल एक ही घटना या चरित्र का उल्लेख होना चाहिए ।'[१]

उपर्युक्त प्रकाश में प्रेमचन्द ने अपनी कहानियों के विस्तार और इतिवृत्त में सुधार की चेष्टा की है । 'प्रेम पूर्णिमा', 'प्रेम चतुर्थी' 'प्रेम प्रसून', 'प्रेम पचीसी' की कहानियों तथा 'स्त्री-पुरुष', 'माता का हृदय' 'मैकू', 'मुक्ति का मार्ग', 'डिग्री के रुपए', 'वज्रपात' और 'शतरंज के खिलाड़ी' आदि कहानियों में उतना ही कथानक लिया गया है, जितने से कहानी की मूल संवेदना संबंधित है । इस काल में प्रेमचन्द ने कम-से-कम सा कहानियां लिखीं । उनमें 'शंखनाद' 'शान्ति', 'नैराश्य लीला', 'डिग्री के रुपए', 'शिकारी राजकुमार', 'लाल फीता' 'बैंक का दिवाला', 'गरीब की हाय', 'बूढ़ी काकी', 'आत्माराम', 'विध्वंस', 'दुर्गा का मन्दिर', 'गृहदाह', सफेद खून, 'आदर्श विरोध', 'वज्रपात', 'बेहम' 'दफतरी', 'सेवा मार्ग', 'ज्वालामुखी', 'आभूषण', 'धर्मसंकट', मुक्तिमार्ग, 'शतरंज के खिलाड़ी', 'नागपूजा', 'प्रारब्ध', 'पूर्व संस्कार', 'गुप्तधन', 'बलिदान' आदि कहानियां प्रतिनिधि रूपों में आई हैं और सब अपनी कला-वैचित्र्य और प्रयोगों में स्वतन्त्र हैं ।

चरित्र के विचार से आरम्भकाल की कहानियों के

---

१ प्रेम प्रसून की भूमिका, पृ०.५

मुख्य चरित्र किसान, जमीन्दार, नौकर और घर की बहुएं,माताएं तथा बूढ़ी खाला जैसी औरतें हैं । इसी प्रकार के चरित्र विकास काल में भी हैं, किन्तु यहां पुरुष और स्त्री चरित्रों की सीमा और विस्तार दोनों में अन्तर आ गया है । स्त्री-पुरुष का अपना-अपना व्यक्तित्व निखर कर निश्चित हो गया तथा इनका मनोविज्ञान मनोभाव अधिक उभर कर स्पष्ट हो पाया है । आरंभ की कहानियों में चरित्रों का अपूर्ण रूप उनके आचरणों कृत्यों के माध्यम से देखा जा सकता है,किन्तु यहा पात्रों का वह रूप अनेक मनोविज्ञान और मनोविश्लेषण के माध्यम से किया जा सकता है ।

आरंभकाल की कहानियों में स्त्री पात्रों का स्थान बहुत ही संकुचित है,उनका व्यक्तित्व और रूप बहुत ही अस्पष्ट है । स्त्रियां प्राय: यथार्थ की भाव-भूमि पर खड़ी रहकर आदर्शवादी और मर्यादा-वादी हैं । एक तरह से वे अपनी समस्याओं के सम्बन्ध में पंगु हैं । उनकी जागरूकता उनकी मर्यादा में सो गई है,किन्तु द्वितीय काल की स्त्रियां अपेक्षा-कृत अधिक मुखर और स्पष्टवादिनी हैं । स्थान-स्थान पर उन्हें कहानी में नायकत्व भी मिला है । उनके व्यक्तित्व के चारों ओर कहानी की घटना तथा अन्य पात्र घूमते हुए दृष्टिगोचर होते हैं । उनके जीवन-दर्शन में परिवर्तन और क्रान्ति आ गई है । उनमें नवीन चेतना का उदय है । 'शंखनाद' में गुमान की पत्नी कहती है--' अब समझाने बुझाने से काम नहीं चलेगा सहते-सहते हमारा कलेजा पक गया ।' 'आभूषण' में स्त्री ने ईश्वर को भी ललकारा है 'ईश्वर के दरबार में पूछूंगी कि तुमने मुझे सुन्दरता क्यों नहीं दिया बदसूरत क्यों बनाया ।' यहां स्त्री पुरुष की अपेक्षा अधिक प्रगतिशील और जीवनपूर्ण हो गई है । इ उनका रूप निखर आया है । ये भारतीय ललनाएं अवश्य हैं, लेकिन अब यथार्थ की दृढ़ भाव-भूमि पर खड़ी होकर अपने सत् रूप को भी पहचान रही हैं ।

प्रथम काल की कहानियों में प्राय: पुरुष-चरित्र के पैसे से सम्बन्धित समस्याएं खड़ी की गई थीं और उन्होंने उसी

दिशा में उनके आचरण भी दिखाए हैं । लेकिन यहां पैसे को छोड़कर व्यक्ति और उसका जीवन और भी उभरा हुआ है । उनकी आन्तरिकता हमारे सामने अधिक स्पष्ट है । उदाहरण के लिए 'नमक का दारोगा' का आचरण उसकी नौकरी से सम्बन्धित है । 'ईश्वरीय न्याय', 'बैंक का दिवाला' आदि कहानियों के सत्यनारायण तथा लालासाईदास का आचरण मूलत: उनके चरित्रों से सम्बन्धित हैं नौकरी से नहीं । नौकरी तो बस प्रयोजन मात्र है । यहां अब भी मध्यवर्ग और निम्नवर्ग के चरित्र अपनी पिछली मर्यादा अंध-विश्वास और लोकमत के झूठे अभिमान से प्रेरित हैं । वे अपने में, अपनी समस्याओं में दफ्तरी, भाई-भाई, बेह्म, मैकू आदि रूपों में अवश्य लड़ रहे हैं, लेकिन इनमें निश्चितरूप से वर्ग-संघर्ष की चेतना उभर चुकी है ।

विकास काल की कहानियों में हम शिशु-चरित्र को भी ज्यादा उभरा और स्पष्ट पाते हैं । इन शिशुओं के चित्रण में प्रेमचन्द ने उनके बाह्य कार्य-कलापों द्वारा उनके मानसिक संघर्ष का भी उद्घाटन किया है । मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से ये शिशु बड़े ही सफल चित्रित हुए हैं । उदाहरण के लिए 'नैराश्य लीला' में कैलाश कुमारी बालिका है । वह विधवा हो जाती है, पर उसे पति की मृत्यु का दु:ख नहीं होता, क्योंकि वह जीवन में उसके महत्व को नहीं समझ पाती । अत: उसका सुन्दर मनोवैज्ञानिक चित्र उपस्थित हुआ है, जो संभवत: प्रेमचन्द की आरम्भिक कहानियों में नहीं है । इसी प्रकार 'शंखनाद' के बाल समुदाय तथा व धान का बड़ा ही सजीव और मार्मिक चित्रण हुआ है । 'बैर का अन्त' कहानी में विश्वेश्वर राय की मृत्यु के पश्चात् उनके तीनों बच्चों की दयनीय अवस्था बड़ी ही कुशलता से अभिव्यंजित है । 'सुहागी' में भी बाल-विधवा मनोविज्ञान है । इन शिशु पात्रों के चित्रण में हम देखते हैं कि इनका चरित्र-विश्लेषण अथवा व्यक्तित्व प्रतिष्ठा उनके आचरण के धरातल पर नहीं है, बल्कि इनकी आधारशिला पात्रों की आन्तरिकता ही है । इनमें हम शिशुओं के क्रिया-कलाप याद नहीं रखते, उनके मनोभाव हमें अधिक आकृष्ट करते हैं ।

इस काल में देश-काल-परिस्थिति चित्रण में पहले की अपेक्षा शैली में अधिक व्यंजना और अधिक प्रभविष्णुता और अधिक गंभीरता आ गई है । इनके चित्रण में एक और जहां समूची परिस्थिति की सारी तस्वीरें मिलती हैं, वहां व्यंग्य के माध्यम से हमें चुनौती भी मिलती है । यहां इन चित्रणों में कल्पना के साथ- साथ वस्तुस्थिति में अधिक पैठ हुई है । कुछ कहानियों का धरातल मनोवैज्ञानिक अनुभूति है । 'बूढ़ी काकी', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'नैराश्य लीला', 'वज्रपात', 'शांति', 'दफ्तरी' आदि कहानियों की प्रेरणा और भावभूमि में कहानीकार की अनुभूतियां हैं । ये कहानियां पूर्ण मनोवैज्ञानिक सत्य और यथार्थ पर लिखी गई हैं तथा विकासकाल की ये कहानियां शिल्पविधि की दृष्टि से उत्कृष्ट हैं । इस काल में प्रेमचन्द ने विभिन्न शैलियों का प्रयोग किया है । रूपकात्मक शैली की कहानी केवल इसी काल में लिखी गई है, आगे फिर कभी नहीं । यह काल कहानी की शिल्पविधि का संक्रान्तिकाल है, जहां वे एक और उत्कृष्टता पर पहुंच गये हैं तो दूसरी ओर केवल प्रयोग की संधि-बिन्दु पर खड़े मिलते हैं ।

तृतीय काल (उत्कर्षकाल) -- इस काल में प्रेमचन्द ने कहानियों के सम्बन्ध में यह दृष्टिकोण बनाया कि वर्तमान आख्यायिका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और जीवन के यथार्थ, स्वाभाविक चित्रण को अपना ध्येय समझती है । उसमें कल्पना की मात्रा कम अनुभूति की मात्रा अधिक रहती है, बल्कि अनुभूतियां ही रचना-शील भावना से अनुरंजित होकर कहानी बन जाती है ।

इस काल में प्रेमचन्द की कहानियों की शिल्प-विधि निश्चित हो गई । उनकी कला की रेखाएं सजीव होकर स्वयं बोलने लगीं और उनमें कहानी का यथार्थ धरातल तथा मनोवैज्ञानिक अनुभूतियाँ उभर आईं । यहां प्रेमचन्द कहानी की आत्मा की ओर अधिक झुके, शिल्प-विधि की ओर कम । विकास काल में वे जागरूक चेतन शिल्पी थे, इस काल में वे जागरूक और चेतन मानव द्रष्टा हैं । जीवन के गहन विश्लेषणों के

महापंडित हैं । उनका शिल्पी व्यक्तित्व उनके अवचेतन जगत् में छिपकर सजीव रेखाओं से कहानी-कला को संवारता है । उनका चेतन मन उन उन रेखाओं में जीवन दर्शन, जीवन के विभिन्न प्रसंगों की अवतारणा करता चला है, जो मनोविश्लेषण जो मानव दर्शन जैसी रेखाओं में बंधने लायक है, उसके लिए प्रेमचन्द ने वैसी ही शिल्प-विधि का प्रयोग किया है । अतएव यहां उनके शिल्पी व्यक्तित्व का चरम उत्कर्ष हुआ है ।

कथानक की दृष्टि से इस काल में प्रेमचन्द द्वारा प्राय: तीन धरातलों पर कथानक का निर्माण हुआ है--

(१) किसी व्यक्ति या समस्या के केवल एकपक्ष को धरातल मानकर कथानक का निर्माण जैसे `कुसुम`, `गुल्ली डंडा`, `घास वाली`, `मिस पद्मा` । ये कहानियां प्राय: मध्यम श्रेणी की हैं । इनमें संवेदना की इकाई और कथानक की एकसूत्रता अपूर्व है ।

(२) किसी व्यक्ति के जीवन के लम्बे भाग को लेकर उसपर कहानी की सृष्टि जैसे `दो कब्रें`, `अलग्योझा`, `नया विवाह` ।

(३) मनोवृत्ति की अनुभूति के धरातल पर खड़ी कहानियां जैसे `कफ़न`, `मनोवृत्ति`, `पूस की रात`, `नशा`, `जादू` आदि इनके कथानक छोटे और अपने में अत्यन्त गठित हैं । ऐसा लगता है कि कोई मनोवैज्ञानिक बिन्दु ही कहानी भर में कथानक के नाम पर सूक्ष्मरेखा बन गई है ।

पात्रों की दृष्टि से आरम्भ काल की कहानियों में पुरुष-चरित्र सपाट था, एकांगी था, विकास कालमें वह यथार्थ की ओर झुका, उसमें अपने आदर्श का मोह था, अत: वह सच्चे रूप में हमारे सामने न आ सका । उदाहरण के लिए `आत्माराम` कहानी में आदि से लेकर विकास तक यथार्थ है, लेकिन अन्त में वह आदर्शवाद के पर्दे में छिप जाता है । `शतरंज के खिलाड़ी` में पुरुष है जिनके चरित्र का बहुत कुछ भाग हमारे सामने आया है, लेकिन अन्त में ऐतिहासिक मर्यादा उन्हें हमारे जीवन से दूर भगा ले जाती है । `मुक्ति मार्ग` के भी पुरुष पात्र बहुत यथार्थ थे, किन्तु अन्त में उनका

भी अन्त आदर्श के परदे में होता है । यह प्रेमचन्द के दृष्टिकोण के कारण ही है । उत्कर्ष काल में वही पुरुष वही निम्नवर्ग का सर्वहारा चरित्र 'कफन' में आकर अपनी मृत पतोहू के कफन के पैसे को शराब में उड़ा देता है और अपने निम्नतम चरित्र के धरातल पर खड़ा होकर कहने लगता है --' कैसा बुरा रिवाज है कि जिसे जीते जी तन ढकने को चिथड़ा भी न मिले, उसे मरने पर क्या कफन चाहिए,कफन तो लाश के साथ जल हीजाता है '।[1] पुरुष-चरित्र की यह स्वाभाविकता, यह सच्चापन, प्राय: सब वर्गों के चरित्रों में मिलता है । 'गुल्ली-डंडा' के इंजीनियर में, 'एक आंच की कसर' में उच्चकोटि के नेता के रूप में, 'पूस की रात' में हल्कू किसान के रूप में । ये सब पुरुष पात्र अपने सच्चे मनोवैज्ञानिक रूप में उपस्थित हुए हैं । इनमें हम अपनापन पाते हैं । उत्कर्ष-काल के चरित्र, लगता है हमारे ही व्यक्तित्व के दर्पण हैं ।

इस काल के स्त्री पात्रों में दोनों रूप हैं-- वे क्रान्तिकारी भी हैं और उनमें स्त्री सुलभ लोच भी है । जैसे 'मिस पद्मा' में स्त्री अति आधुनिक रूप में आई है । मिस पद्मा एम०ए०,एल०एल०बी० पास करके स्वतन्त्र जीवन बिताती है । उसमें रूप है, यौवन है, और धन भी है । उसे पराधीनता से और विवाह को जीवन का व्यवसाय बनाने से घृणा है, क्योंकि उसका दृष्टिकोण है कि भोग में कोई नैतिक बाधा नहीं, वह इसे देह की भूख समझती थी । यह उसके चरित्र का सैद्धान्तिक दृष्टिकोण है, किन्तु व्यक्तित्व की स्पष्टता और स्वाभाविकता इस बात में है कि वह प्रसाद जैसे युवक के साथ अपनी सारी कमजोरियों के साथ लिप्त हो जाती है और अपना सारा सिद्धान्त भूल जाती है । वह स्त्री बनकर पुरुष से पराजित होती है । यहां स्त्री का आधुनिकतम चरित्र पूर्ण स्वाभाविक और यथार्थ बनकर आया है । 'कुसुम' में कुसुम अपने पति को सर्वस्व मानती है । वह अत्यन्त परम्परावादी आदर्श पत्नी है ,किन्तु जब उसका पति उसे ठुकराता है

---

1 कफन और शेष रचनाएं, पृ०१०

जाता है तो वह क्रोधित होकर कह डालती है -- "ऐसे देवता का रूठे रहना ही अच्छा है । जो आदमी इतना स्वार्थी, इतना दंभी, इतना नीच है, उसके साथ मेरा निर्वाचन होगा ।"[1] अत: हम देखते हैं आरंभिक काल के स्त्री चरित्र एक ओर जहां पूर्ण आदर्शवादी थे वे विकास काल में एक पक्षीय हो जाते हैं, अर्थात् वे क्रान्तिकारी हैं तो अन्त तक क्रान्तिकारी हैं । आदर्शवादी हैं तो अन्त तक आदर्शवादी । लेकिन यहां वे विशुद्ध नारी-मनोभाव के प्रतिनिधि हैं ।

यद्यपि प्रेमचन्द ने बाल मनोविज्ञान पर आधारित शिशु पात्रों का निर्माण नहीं किया तथापि इस काल के जितने भी शिशु पात्र आये हैं, वे चेतन नहीं अचेतन रूप में ही सही बड़े ही पुष्ट और मनोवैज्ञानिक हुए हैं । 'गुल्ली डंडा' में 'मैं' और 'गया' जो दो पात्र हैं उनके खेल का कितना स्पष्ट चित्रण है । 'मैं' के मन में उठने वाले सारे मनोवेगों का मनोवैज्ञानिक चित्रण कहानी में है । "मैं एक थानेदार का लड़का, एक नीच जाति के लौंडे से पिट गया, यह मुझे उस समय भी अपमान जनक मालूम हुआ, लेकिन घर में किसी से शिकायत न की" इन पंक्तियों में बाल-स्वभाव का कितना यथार्थ और मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है । 'एक आंच की कसर' में परमानन्द जब मंच पर चढ़ता है उस समय प्रेमचन्द ने उसका चित्र इस प्रकार उपस्थित किया है "बालक बड़ा सुन्दर, होनहार, हंसमुख था । मुस्कराता हुआ मंच पर आया और जेब से एक कागज निकाल कर बड़े गर्व के साथ उच्च स्वर से पढ़ने लगा ...." इसके पश्चात् पिता के बिगड़ने पर वह बालक बड़ी निर्भीकता से अपने को निर्दोष दिखाता है । वह तो पिता के आज्ञानुसार ही काम कर रहा है । अत: उसे भय कैसा ? 'ईदगाह' में बालकों का एक समुदाय उपस्थित होता है । इन्हीं के पारस्परिक सम्बन्ध से इनके चरित्र का अन्तर्पक्ष और बाह्य पक्ष दिखाई देता है । 'तैंतर' में तो नवजात शिशु का मनोविज्ञान उसकी दृष्टि संवेदना, स्नेह

---

१ मानसरोवर, भाग२, पृ०२४

और दुत्कार के भाव के प्रति प्रतिक्रिया का मनोवैज्ञानिक पक्ष उभर पड़ा है । 'अलग्योझा' में भी बालकों के हृदय में अपने पराये के नाते के प्रति उनकी अनभिज्ञता की सुन्दर अभिव्यंजना हुई है और स्नेह के संदर्भ में उनकी प्रतिक्रिया दिखाई गई है । अतः हम देखते हैं कि शिशुओं के चित्रण में भी उनकी मनोवैज्ञानिक अनुभूतियां प्रधान हो गई हैं । इस सम्बन्ध में प्रेमचन्द जी का अपना विश्लेषण पूर्णतः सही उतरा है । " गल्प का आधार अब घटना नहीं, मनोविज्ञान की अनुभूति है । आज का लेखक कोई रोचक दृश्य देखकर कहानी लिखने नहीं बैठता । उसका उद्देश्य स्थूल सौन्दर्य नहीं वह तो कोई ऐसी प्रेरणा चाहता है, जिसमें सौन्दर्य की ~~कलक~~ झलक हो और इसके द्वारा पाठक की सुन्दर भावनाओं को स्पर्श कर सके[1] ।"

शैली की दृष्टि से इस युग की कहानियां एक चित्र की भांति हो गई हैं जिनमें कथा का आरम्भ विकास और अन्त तीनों एक होकर आपस में मिल य गये हैं । पहले की भांति यहां कहानी का आरम्भ भाग विकास भाग से अलग नहीं, वरन् एकमें मिला हुआ है । आरम्भ ही यहां विकास के गर्भ में बोलने लगा, क्योंकि यहां प्रेमचन्द के शब्दों में अनुभूतियां ही रचना-शील भावना से अनुरंजित होकर कहानी बन गईं । यहां कहानी अपनी शिल्पविधि में बहुत संयम और अत्यन्त गठन के साथ आई है । कला के संयम में उसके दूसरे सारे अंग तादात्म्य स्थापित करके एकात्म स्तर पर पहुंच गए हैं ।

भाषा की दृष्टि से इस कालकी कहानियों में कथोपकथन में अधिक व्यंग्य, वाक्पटुता, सूक्ष्मता और ईमानदारी आ गई है । "प्रेमचन्द की भाषा-शैली सरल और सुबोध है । इसे सजाने के लिए कथाकार ने शब्दों का सुन्दर चुनाव (~~किया है और~~) कर अपनी भाषा को शृंगार ~~प्रदान~~ किया है । यही नहीं, बल्कि मुहावरा, उपमा, व्यंग्य आदि का भी प्रयोग किया है जो सर्वत्र कहानियों में बिखरे मिलते हैं[2] ।" प्रेमचन्द का भाषा पक्ष इतना समृद्ध

---

१ मानसरोवर, प्रथम भाग, भूमिका, पृ० ६

२ डा० रामाराम रस्तोगी : 'हिन्दी साहित्य परिशीलन तथा अन्वेषण' (प्रेमचन्द जी और उनकी भाषा शैली), पृ० १५६

और विशाल था कि उसमें पंडित,मौलवी,जज,वकील और गांव के गरीब किसान सभी अपने अनुकूल भाषा पा जाते थे । प्रेमचन्द भाषा के बड़े धनी थे ।जैसी आवश्यकता होती, स्वाभाविकता लाने के लिए वे उसी तरह की भाषा का प्रयोग करते थे । प्रेमचन्द ने भाषा की चुस्ती, मुहावरों की सजावट,कहावतों और सूक्तियों के अपूर्व समन्वय से अपना व्यक्तित्व डाल दिया है और इस अनोखी भाषा को लोगों ने 'प्रेमचन्दी भाषा' की संज्ञा दी है ।

प्रेमचन्द की कहानियों को हमने तीन कालों में विभाजित करके उनके क्रमिक विकास पर एक विहंगम दृष्टि डाली है । संक्षेप में कहानियों के विषय में प्रेमचन्द की धारणा स्वयं बदली और उन्होंने उसी के अनुसार अपनी कहानियों को रूप दिया । विकास काल में उनके विचार थे--'हमने इन कहानियों में आदर्श को यथार्थ से मिलाने की चेष्टा की है । क्योंकि कुछ देर के लिए तो हमें इन कुत्सित व्यवहारों से अलग रहना चाहिए, नहीं तो साहित्य का मुख्य उद्देश्य ही गायब हो जाता है ।'[1] उत्कर्ष काल में आकर उनकी कहानियों के लक्ष्य में आमूल परिवर्तन हो गया --'वहां हमारा उद्देश्य सम्पूर्ण मनुष्य को चित्रित करना नहीं,वरन् उसके चरित्र का एक अंग दिखाना है । यह परमावश्यक है कि हमारी कहानी के जो परिणाम-तत्व निकले वह सर्वमान्य हो और उसमें बारीकी हो ।'[2]

प्रेमचन्द के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को एक दृष्टि में देखने से हमें प्रेमचन्द आधुनिक हिन्दी कहानी साहित्य में सबसे बड़े और कृती व्यक्ति लगते हैं । उनमें हम एक ही बिन्दु पर कल्पना, आदर्श,यथार्थ और लोकमंगल की भावना का सुन्दरतम समन्वय पाते हैं ।

---

१ कफन और शेष रचनाएं,पृ०११ प्रारम्भ

२ प्रेम प्रसून (भूमिका),पृ०६

(ख) उपन्यास का विकास और प्रेमचन्द

भारतीय जीवन में कथा-साहित्य का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है । किन्तु भारतेन्दु काल (१८५०-१९००) में जिस उपन्यास-साहित्य का जन्म हुआ, वह कुछ-कुछ प्राचीन होते हुए भी उससे भिन्न है । उपन्यास-साहित्य जिस रूप में आज है, वह पश्चिम से आई हुई नई सभ्यता और प्रिंटिंग प्रेस की देन है और वह मानव समाज को समग्र रूप से देखने का सर्वप्रथम प्रयास है । ई०एम० फार्स्टर के कथनानुसार जीवन के गुप्त रहस्यों को अभिव्यक्त करने की विशेषता जितना उपन्यास में है उतना अन्य किसी कला में नहीं है ।

हिन्दी उपन्यास का इतिहास, किसी भी देश के उपन्यास के इतिहास की तरह, हिन्दी-भाषी क्षेत्र की सभ्यता और संस्कृति के नवीन रूप के विकास का साहित्यिक प्रतिफलन है । समृद्धि और ऐश्वर्य की सभ्यता महाकाव्य में अभिव्यंजना पाती है, जटिलता, वैषम्य और संघर्ष की सभ्यता उपन्यास में । हिन्दी उपन्यास के लिए जैसे-जैसे कच्चा माल तैयार होता गया, वैसे-वैसे पश्चिम की तथाकथित भौतिक सभ्यता हमारी वाणी और वेश-भूषा को ही नहीं, प्रत्युत हमारी दृष्टि और चेतना को भी आक्रान्त करने में सफल होती गई । हमारे उपन्यास यदि आज पश्चिमी उपन्यासों के समकक्ष सिद्ध नहीं होते तो मुख्यत: इसलिए कि हमारी वर्तमान सभ्यता व अपेक्षया आज भी कम जटिल, कम उलझी हुई और कहीं ज्यादा सीधी-सादी है ।

उपन्यास सर्वत्र ही साहित्य का उपेक्षित अंग रहा है । उद्देश्य की दृष्टि से वह मात्र मनोरंजन का साधन बन कर रह जाता था । साहित्यिक उत्कर्ष के लिए उसे `गद्य-काव्य` बनकर उन गुणों से मण्डित होना पड़ता था जो वस्तुत: काव्य के हैं । `कथा सरित्सागर` `अलिफ लैला`, `डिकामेरन` मनोरंजन के साधन मात्र थे, `हर्ष चरित` `कादम्बरी` की विशेषता यह है कि इनमें वे गुण हैं जो संस्कृत-काव्य के लिए शोभाकर होते हैं । शताब्दियों की प्रतीक्षा के बाद साहित्य का

यह अन्त्यज अपनी छिपी भावनाओं को लेकर अपनी सामर्थ्य का परिचय दे सका है और अब तो आभिजात्य का भी दावा कर सकता है । देवकीनन्दन खत्री से लेकर अज्ञेय तक के हिन्दी-उपन्यास का इतिहास इस सामान्य तथ्य का दृष्टान्त है ।

उपन्यास भी आज गल्प (फिक्शन) की व्यापक श्रेणी में स रखा जाता है, किन्तु आज वह नाम को ही गल्प रह गया है । जब तक उपन्यास गल्प-मात्र था, तब तक उसका मुख्य उद्देश्य मनोरंजन और उपदेश गौण रहता था । आज गल्प नाम के अतिरिक्त सत्य और केवल सत्य की नाना दृष्टियों से गृहीत और अनेकानेक पद्धतियों से अंकित चित्र शृंखला बन चुकी है ।

आधुनिक साहित्य में उपन्यास

आधुनिक साहित्य में उपन्यास का एक और दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान है । काव्य, नाटक, समालोचना आदि की परम्परा संस्कृत साहित्य में विद्यमान थी । काव्य और आलोचना तो हिन्दी में अविच्छिन्न रही, किन्तु मध्ययुग में नाटक की परम्परा अवश्य लुप्तप्राय हो गई थी । उपन्यास रचना का आरम्भ हिन्दी में नई चीज थी । उसका सम्बन्ध संस्कृत की प्राचीन औपन्यासिक परम्परा और पौराणिक कथाओं से जोड़ना विडम्बनामात्र है । हिन्दी में औपन्यासिक परम्परा पश्चिमी और बंगला साहित्य के प्रभावान्तर्गत विकसित हुई । प्रो० नलिन विलोचन शर्मा के शब्दों में "हिन्दी में उपन्यास-रचना का आरम्भ हुआ तो उसका सम्बन्ध प्राचीन औपन्यासिक परम्परा से नाममात्र का भी नहीं था । इस दृष्टि से हिन्दी उपन्यासों की स्थिति हिन्दी काव्य से सर्वथा भिन्न है । संस्कृत के प्राचीनतम काव्य से लेकर अद्यतन हिन्दी काव्य की परम्परा अविच्छिन्न है किन्तु हिन्दी का उपन्यास साहित्य का वह पौधा है, था, जिसे अगर सीधे पश्चिम से नहीं लिया गया हो तो उसका बंगला कलम तो लिया ही गया था न कि सुबन्धु दण्डी और बाण की लुप्त-परम्परा पुनरुज्जीवित की गई थी ।"[1]

[1] नलिन विलोचन शर्मा : "हिन्दी गद्य की प्रवृत्तियाँ", पृ० २२

जिस समय अनेक पौराणिक कथाएं और विचित्रता तथा चमत्कार से पूर्ण कहानियां जनता का मन बहला रही थी, उस समय भारतेन्दु युग के लेखकों ने ऐतिहासिक और सामाजिक उपन्यासों की ओर ध्यान दिया । इन लेखकों ने अपने उपन्यासों में ऐतिहासिक घटनाओं का चित्रण करके शौर्य, प्रेम चरित्र की उच्चता और कार्य व्यापार की कुशलता का परिचय कराया है । साथ ही उन्होंने सामाजिक कुसंस्कारों के प्रति भी उदासीनता ग्रहण नहीं की । उन्होंने जीवन के विविध क्षेत्रों से सम्बन्धित शिक्षाप्रद और नैतिक उपन्यासों की रचना की । उस सुधारवादी युग की मांग भी वैसी ही थी । गुण-दोषों का ठीक-ठीक विवेचन करना और कठोर नैतिक अनुशासन और जीवन को उन्नति के मार्ग पर ले चलना इन औपन्यासिक कृतियों का अन्तिम ध्येय था । शिक्षाप्रद उपन्यासों के साथ-साथ तिलस्मी और जासूसी उपन्यासों ने फारसी और संस्कृत की लोक-प्रचलित कथाओं से प्रेरणा लेकर नवजात व्यवसायी मध्यवर्ग का मनोरंजन किया । श्री राधाचरण गोस्वामी, गदाधर सिंह, रामशंकर व्यास, राधाकृष्ण दास आदि ने 'दीपनिर्वाण', 'सरोजिनी', 'कादम्बरी', 'दुर्गेशनन्दिनी', 'मधुमती', 'राधारानी' आदि अनेक उपन्यासों की रचना की या उनके अनुवाद किए । स्वयं भारतेन्दु ने कई उपन्यासों का अनुवाद करना चाहा, किन्तु अपना कार्य वे अपूर्ण छोड़ गये । कहा जाता है कि 'चन्द्रप्रभा और पूर्ण प्रकाश' का अनुवाद कराकर उन्होंने उसे स्वयं शुद्ध किया था । यह मराठी से अनूदित उपन्यास है और उसमें वृद्ध विवाह का अत्यन्त मनोरंजक ढंग से विरोध किया गया है ।

भारतेन्दु के बाद उपन्यास

भारतेन्दु के बाद उपन्यास-क्षेत्र में किशोरीलाल गोस्वामी का नाम उल्लेखनीय है । उनके 'त्रिवेणी', 'स्वर्गीय कुसुम', 'हृदयहारिणी', 'लवंगलता' आदि उपन्यासों में राष्ट्र-प्रेम प्रचार और प्रचलित सामाजिक कुरीतियों और कुप्रथाओं का मूलोच्छेदन किया गया है । तदनन्तर देवीप्रसाद शर्मा, राधाचरण गोस्वामी, कीर्तिप्रसाद खत्री, गोपालराम गहमरी, गोकुलनाथ, तथा राधा कृष्णदास ने उपन्यास साहित्य

की समृद्धि की । इन लेखकों ने उपन्यासों में ऐतिहासिक घटनाओं का चित्रण कर शौर्य,प्रेम,चरित्र की उच्चता और कार्य-व्यापार की कुशलता का परिचय कराया है । साथ ही सामाजिक कुसंस्कारों के प्रति उन्होंने उदासीनता ग्रहण नहीं की । विषय की दृष्टि से बालकृष्ण भट्ट(नूतन ब्रह्मचारी`, `सौ अजान एक सुजान`) रत्नचन्द्र प्लीडर,श्रीनिवासदास, लज्जाराम शर्मा तथा कुछ उपर्युक्त लेखकों ने शिक्षा-प्रद नैतिक उपन्यास लिखे । उन्होंने सामाजिक गार्हस्थ्य आदि जीवन-क्षेत्रों से सम्बन्धित शिक्षा और नीति से पूर्ण उपन्यासों की रचना की । उनसे सामाजिक,धार्मिक और राजनैतिक विषयों पर भी प्रकाश पड़ता है । गुण-दोषों का ठीक-ठीक विवेचन करना और नैतिक अनुशासन और जीवन की उन्नति के मार्ग पर ले चलना इन औपन्यासिक कृतियों का अन्तिम ध्येय है । इसी समय देवकीनन्दन खत्री ने अपने तिलस्मी और जासूसी उपन्यास प्रकाशित किए । यह प्रवृत्ति वैसे तो पहले से चली आ रही थी,किन्तु देवकीनन्दन खत्री के उपन्यासों में चरमोत्कर्ष पर पहुंच कर बहुत दिनों के लिए वह हिन्दी साहित्य का प्रधान अंग बन गई । इस प्रकार भारतेन्दु काल में जो उपन्यास लिखे गये उनकी तिलिस्मी उपन्यासों को छोड़कर नैतिकता और शिक्षा की सबसे बड़ी विशेषता है । लेखक जनता को अधोगति के गर्त से निकाल कर उचित मार्ग पर लाना चाहते थे । नैतिकता और शिक्षा के अतिरिक्त उनमें प्रेमतत्व भी प्रमुख हैं । किन्तु कला की दृष्टि से यह उपन्यास-साहित्य बहुत उच्चकोटि का नहीं कहा जा सकता । उसकी शैली में पुरानापन है । भारतेन्दुकाल में मौलिक औपन्यासिक रचनाओं के अतिरिक्त बंगला,संस्कृत, अंग्रेजी आदि की रचनाओं के अनुवाद भी प्रकाशित हुए । अनुवाद उन्हीं रचनाओं के हुए जो हिन्दी उपन्यासों के पूर्वोल्लिखित दृष्टिकोण को पुष्ट बना सकती थीं । मौलिक या अनूदित सभी प्रकार के उपन्यासों में सत्य का अनुसरण करने का प्रयत्न किया गया । उनमें समाज-सुधार जातीय गौरव की रक्षा, ऐतिहासिक सत्य, काव्य-दर्शन और मनुष्यत्व को प्रश्रय मिलता है । बंगला उपन्यासों के अनुवादों से हिन्दी में अनेक नवीन शब्द, मुहावरों और वाक्यों का प्रचार हुआ। साथ ही उनसे अतिरंजना , संस्कृत पदावली और कोमल तथा सुकुमार भावनाओं

और कल्पनाओं को प्रश्रय मिला ।

बीसवीं शताब्दी में हिन्दी उपन्यास

बीसवीं शताब्दी में हिन्दी उपन्यास-साहित्य का अत्यन्त तीव्र गति से विकास हुआ । यह कहना अनुचित न होगा कि वर्तमान समय में उपन्यास,नाटक और कविता से भी अधिक महत्वपूर्ण है ।

बीसवीं शताब्दी के उपन्यास कला विषय और उपादान तीनों दृष्टियों से उन्नीसवीं शताब्दी (उत्तरार्द्ध) के उपन्यासों की अपेक्षा अधिक उन्नत हैं । उपन्यास मात्र कथा न रहकर कथोपकथन से सुसज्जित हुए । उपन्यासकारों ने रीति-परम्परा के अनुकरण पर प्रेम,मान, अभिसार आदि को स्थान दिया और पारसी थिएटरों और उर्दू-काव्य का अनुसरण किया । किन्तु कला की दृष्टि से वास्तविक विकास उस समय हुआ जब कि लेखक मनोविज्ञान और बाह्य एवं आन्तरिक संघर्ष का आश्रय ग्रहण कर उपन्यास-रचना में प्रवृत्त हुए। अब तक के उपन्यासों में केवल अलौकिक घटनाएं ही प्रधान रहतीथीं । अब मानव-मन और मानव जीवन का स्वाभाविक चित्रण होने लगा । इस नवीन पद्धति का श्री गणेश प्रेमचन्द के उपन्यासों से होता है । उन्नीसवीं शताब्दी का उपन्यास-लेखक कथा कहने वालों की तरह श्रोताओं और पाठकों का ध्यान रखे बिना कथा कहते चला जाता है । उपन्यास सामाजिक,धार्मिक,राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण और तिलिस्मी,साहसिक,जासूसी,ऐतिहासिक ,पौराणिक, चरित्र-प्रधान,भाव प्रधान आदिअनेक प्रकार के लिखे गए । इस प्रकार के उपन्यासकारों में अन्य अनेक के अतिरिक्त किशोरीलाल गोस्वामी,प्रेमचन्द(`वरदान`,`प्रतिज्ञा`,`सेवासदन`, `प्रेमाश्रम`,`निर्मला`,`कायाकल्प`,`रंगभूमि`,`कर्मभूमि`,`गोदान` आदि उपन्यास) चण्डीप्रसाद हृदयेश (मंगल प्रभात), लज्जाराम शर्मा,गोपालराम गहमरी, वृन्दावनलाल वर्मा (`गढ़कुण्डार`,`विराटा की पद्मिनी`,`कचनार`,`झांसी कीरानी लक्ष्मीबाई`,`मृगनयनी आदि) ,जैनेन्द्रकुमार (`परख`,`तपोभूमि`, `सुनीता`,`त्यागपत्र`आदि) ,विश्वम्भरनाथ कौशिक ( `माँ`, `भिखारिणी` आदि), चतुरसेन शास्त्री ( `हृदय की परख`,`हृदय की प्यास`,`अमर -

`अभिलाषा`, `आत्मदाह`, `वैशाली की नगरवधु` आदि), प्रतापनारायण श्रीवास्तव (`विदा`, `विजय` आदि), पाण्डेय बेचन शर्मा `उग्र` (दिल्ली का दलाल`, `बुधुवा की बेटी` आदि), ऋषभचरण जैन (`भाई`, `दिल्ली का व्यभिचार`, `सत्याग्रह`, `बुर्दाफरोश` आदि), इलाचन्द्र जोशी (सन्यासी` पर्दे की रानी`, `प्रेत और छाया`, `निर्वासित`, `जिप्सी` आदि), `अज्ञेय` (`शेखर : एक जीवनी`, `नदी के द्वीप` आदि), यशपाल (`दादाकामरेड` `देशद्रोही`, `दिव्या` आदि), भगवती चरण वर्मा (`पतन`, `तीन वर्ष`, `चित्रलेखा`, `टेढ़े मेढ़े रास्ते`, `भूले बिसरे चित्र`, `सामर्थ्य और सीमा आदि) सियाराम शरण गुप्त (नारी), जयशंकर`प्रसाद` (तितली और कंकाल), उषादेवी `देवी मित्र`, `रांगेय राघव`, उपेन्द्रनाथ `अश्क` आदि के नाम उल्लेखनीय हैं ।

प्रथम महायुद्ध के बाद कॉंग्रेस के नेतृत्व में राजनीतिक चेतना उत्पन्न हुई, जिनके साथ-साथ सामाजिक और आर्थिक आन्दोलनों का भी जन्म हुआ । उपन्यास लेखकों ने जमीन्दारों के अत्याचार, दरिद्र किसान, अंग्रेज शासक की आर्थिक नीति और उसके भीषण परिणाम, नागरिक जीवन, नारी-समस्या, समाज में खान-पान का व्यवहार विवाह प्रथा, शिक्षा आदि अनेक विषयों के आधार पर उपन्यासों का निर्माण किया । प्रेमचन्द, विश्वम्भरनाथ कौशिक, जैनेन्द्र कुमार, प्रतापनारायण श्रीवास्तव आदि ने अपने सामाजिक उपन्यासों से इस प्रकार के अनेक सुन्दर चित्र उपस्थित किए हैं । सामाजिक परिस्थितियों से बाहर भगवतीचरण वर्मा ने `चित्रलेखा` में पाप-पुण्य की चिरन्तन समस्या की मीमांसा की । लेखकों ने गार्हस्थ्य और पारिवारिक जीवन के भी मार्मिक वर्णन किए । विशेषरूप से यूरोपीय आचार-विचार और भारतीय पद्धति के बीच संघर्ष के । राजनीतिक चेतना के साथ-साथ भारतीय इतिहास का भी पुनर्मूल्यांकन किया जाने लगा । बंगला में राखालदास बंद्योपाध्याय ने मार्ग-प्रदर्शन किया था । हिन्दी में वृन्दावनलाल वर्मा ही एक उल्लेखनीय ऐतिहासिक उपन्यास लेखक हैं ।

उनकी `गढ़कुण्डार`, `विराटा की पद्मिनी`, `झांसी की रानी`, ~~`विराटा की पद्मिनी`, झांसी की रानी`~~, `मृगनयनी` आदि अत्यन्त सुन्दर औपन्यासिक कृतियां हैं । इस समय उपन्यास का पूर्ण विकसित और परिष्कृत स्वरूप प्रेमचन्द ही लेकर आये जिनकी अन्तिम परिणति उनके `गोदान` (१९३६) नामक उपन्यास में मिलती है । प्रेमचन्द के `वरदान`, `प्रतिज्ञा`, `निर्मला`, `सेवासदन`, `प्रेमाश्रम` `कायाकल्प`, `रंगभूमि`, `कर्मभूमि` `गबन` आदि अन्य उपन्यास हैं । `गोदान` किसान -जीवन का महाकाव्य है और प्रेमचन्द अपने पूर्व निर्धारित मार्ग से कुछ हट गये हैं । नायक होरी कीअसफलता भी उसे गौरव और दृढ़ता प्रदान करती है । प्रेमचन्द में अद्वितीय वर्णनात्मक शक्ति है और वे मनोवैज्ञानिक दृष्टि से मानव-स्वभाव का अत्यन्त सुन्दर उद्घाटन करते हैं । उन्होंने अपनी कथाओं के उपकरण जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों से जुटाए हैं । साहित्य के क्षेत्र में वे अपने को मजदूर ही समझते रहे । वे सामाजिक,धार्मिक,आर्थिक, और राजनीतिक अनीतियों का विरोध करते हुए मनुष्यत्व को सर्वोपरि वस्तु मानते थे । प्रेमचन्द कीसबसे बड़ी विशेषता यही है कि उन्होंने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से सम्बन्धित पददलितों की हिमायत की । ग्रामीण जीवन तो जैसे उनके अपने जीवन का अभिन्न अंग था और नागरिक जीवन की अपेक्षा वे उसे अधिक स्वस्थ और आत्मबल -सम्पन्न मानते थे, यद्यपि वे यह भी मानते थे कि स्वच्छता शिक्षा आदि की दृष्टि से ग्रामीणों को भी नगर-निवासियों से बहुत कुछ सीखना है । साथ ही गांधी युग की `गांवों की ओर चलो` (Back to the villages वाली भावना भी उनमें काम कर रहीथी । इन्हीं कारणों से वे अपने उपन्यासों में दुहरे कथानक रखते थे । उन्होंने तीव्र अन्तर्दृष्टि द्वारा प्रत्येक समस्या का विश्लेषण किया और आदर्शोन्मुख यथार्थवादी दृष्टिकोण ग्रहण किया ।

प्रेमचन्द की उपन्यास कला की विशेषता

प्रेमचन्द ने जनहित के लिए जन-भाषा में जन-साहित्य की सृष्टि की । उनका साहित्य समाज के लिए प्रकाश-स्तम्भ है । प्रेमचन्द की वाणी उनके युग की वाणी है । उनके उपन्यास का मूलाधार

समाज का शोषित और पीड़ित वर्ग था । उनके उपन्यास के विस्तृत चित्र-फलक में समाज की सारी विषमताएं और विविधताएं आ गई हैं । उन्होंने जमींदार कृषक, पूंजीपति, श्रमिक भिक्षुक, पटवारी, तहसीलदार, कानूनगो, डिप्टी कलक्टर नेता, पुलिस, वकील, डाक्टर, इंजीनियर तथा सम्पादक आदि समाज के सभी स्तरों के व्यक्तियों की सत्-असत् प्रवृत्तियों पर प्रकाश डाला है । प्रेमचन्द ने इस रूप में समाज का सामूहिक चित्रण किया है और सन्देह नहीं कि समाज के सांगोपांग चित्रण में उन्हें अपूर्व सफलता मिली है ।

जन-जीवन की प्रमुख ~~विशेषताएं~~ संवेदनाएं

प्रेमचन्द सामाजिक कलाकार हैं, जिनका साहित्य युग को प्रतिबिम्बित करता है । प्रेमचन्द ने जीवन को अपने अनुभव की आंखों से देखा था। अत: जन-जीवन की सम्वेदनाएं उनकी विकलता, भीतर की कुरेदन और तड़पन उन्हें अभिव्यक्त करने के लिए बाध्य करती थी । उनका उपन्यास साहित्य भारत की भीषण समस्याओं और विकृत परिस्थितियों का एक विशाल मानचित्र है जिसमें समाज के प्रत्येक वर्ग की, प्रत्येक पक्ष की प्राय: सभी प्रमुख समस्याएं-- सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, पारिवारिक, प्रशासकीय आदि आ गई हैं । प्रेमचन्द ने इन प्रमुख समस्याओं के अन्तर्गत अन्य अनेक छोटी-छोटी समस्याओं जैसे सामाजिक के अन्तर्गत लोकनिन्दा, दहेज प्रथा, अनमेल विवाह, वेश्यावृत्ति, विधवा समस्या, आभूषणप्रियता, मद्यपान आदि के अन्तर्गत धार्मिक आडम्बर, अन्धविश्वास, अस्पृश्यता आदि, पारिवारिक के अन्तर्गत संयुक्त परिवार, वियुक्त परिवार, विमाता, सास-बहू, ननद-भाभी, सपत्नी आदि को बड़ी ही सूक्ष्म दृष्टि से देखा और उनपर अपनी रचनाएं कीं । इसीलिए प्रेमचन्द को युग-द्रष्टा और युग-स्रष्टा दोनों ही कहा गया है ।

विस्तृत कथा फलक

प्रेमचन्द के कथा-साहित्य का कैनवास कितना विस्तृत है, इसका ज्ञान हमें उनके उपन्यासों के अध्ययन पर ही प्राप्त होता है । जो कुछ उन्होंने देखा, सुना उसे कुशल वर्णन-शक्ति द्वारा बड़े ही प्रभावशाली

ढंग से व्यक्त किया । इनके प्रमुख उपन्यासों पर दृष्टि डालने से यह स्पष्ट हो जाता है :-

`सेवासदन` -- इस उपन्यास की मुख्य समस्या सामाजिक है । यह उनकी अद्भुत कृति है । यह प्रेमचन्द की पहली कृति है, जिसमें उन्होंने समाजोपेक्षी दृष्टि से समाज की समस्या और गहनता को समझना चाहा है और इसमें उनकी गम्भीर अध्ययनशीलता और सूक्ष्म निरीक्षण की कला दृष्टिगत होती है । इस उपन्यास के प्रथम दो अध्यायों में समाज का पाखण्ड उघार कर रख दिया है । `यहां ऐसे समाज की तस्वीर मिलती है, जिसमें विवाह सौदे का, लेन-देन का दूसरा नाम है, जिसे लोग खुले आम नहीं, शिष्टता और विवशता के आवरण में ढांक कर करते हैं जिसमें पाप नियम भी है और सम्पन्नता का साधन भी और जिसमें धर्म आडम्बर भी है और व्यापार भी ।`[1]

`प्रेमाश्रम` -- प्रेमाश्रम हिन्दी का ही नहीं, भारत का पहला राजनैतिक उपन्यास माना जाता है । इसमें विदेशी शासन के विरुद्ध संघर्ष के साथ-साथ इसी चलने वाले दूसरे संघर्ष अर्थात् जमीन्दार किसान के संघर्ष की भी बात है । इसका कथानक निश्चित तथा वास्तविक जीवन का दर्पण है । क्योंकि जब से भारत में विदेशी शासन का प्रारम्भ हुआ तब से ये दो संघर्ष अर्थात् विदेशी पूंजीशाही के विरुद्ध संघर्ष और यहां के जमीन्दार तथा पूंजीपतियों के विरुद्ध संघर्ष साथ-साथ चलते रहे हैं ।

`गबन` -- `गबन` लिखने में प्रेमचन्द के दो उद्देश्य निहित हैं-- एक ओर वे मध्य-वित्तवर्ग का यथार्थ जीवन चित्रित करना चाहते हैं, दूसरी ओर पुलिस के कारनामों का पर्दाफाश करके उसकी वास्तविकता से परिचय कराना चाहते हैं । कथा के दो पक्ष हैं-- पूर्वार्द्ध पक्ष जो इलाहाबाद में घटित होता है और उत्तरार्द्ध पक्ष जिसकी घटनाओं का केन्द्र कलकत्ता है । इस विस्तृत कथाफलक पर प्रेमचन्द मध्यवर्ग के चरित्र का जितना सुन्दर, सजीव तथा मनोज्ञ उद्घाटन करने में समर्थ हुए हैं, उतना अन्य किसी उपन्यासकार द्वारा सम्भव नहीं हुआ ।

---

1 `प्रेमचन्द एक अध्ययन`, पृ०१३६

--राजेश्वर गुरु ।

`कर्मभूमि` -- इस उपन्यास में दो आन्दोलन हैं --एक शहर में एक गांव में । शहर का आन्दोलन म्युनिस्पैलिटी के खिलाफ है, गांवका जमीन्दार के विरुद्ध । शहर का आन्दोलन सफल होता है, गांव का असफल ।

`गोदान` -- निर्विवाद रूप से यह प्रेमचन्द की सर्वश्रेष्ठ कृति है । यह भारतीय जीवन का महाकाव्य है । इसमें एक ओर शहर का जीवन है, दूसरी ओर गांव का । शरत या रवीन्द्र के भी किसी उपन्यास का क्षेत्र इतना विशाल नहीं है । `गोदान` में हम पचास साल के भारतीय इतिहास को जिस खूबी से वर्णित पाते हैं, वह लेखक की महान रचनाशक्ति का परिचायक है । छः सात सौ पृष्ठ में उपन्यासकार ने इस उपन्यास द्वारा `गागर में सागर` भर दिया है ।

विविध प्रकार के चरित्र और उनकी मनोवैज्ञानिक रूपरेखा-- प्रेमचन्द के उपन्यासों में विविध प्रकार के चरित्र आये हैं और उनका चित्रण भी मनोवैज्ञानिक ढंग से हुआ है । `प्रतिज्ञा` में मनुष्य के सूक्ष्म-से-सूक्ष्म मनोभाव का सुन्दर चित्रण है । एक आर्थिक 'पूर्णा' 'कमलाप्रसाद' और 'सुमित्रा' के चरित्रों का जो अन्तर्द्वन्द्व लेखक ने दिखाया है, वह बहुत सुन्दर है । `सेवासदन` की सुमन वेश्यालय में भी अपने हाथ से भोजन पकाती है । उसको ऐसा चित्रित करके प्रेमचन्द ने मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि का परिचय दिया है ।

`वरदान` की विरजन संतुलित मन वाली समाज के गुण-दोषों को न देखने वाली नारी है । उसके कमला के जितने भी पत्र हैं न उनमें प्रेमदाह है, न प्रेमोन्माद ।

`कर्मभूमि` का नायक अमरकान्त है । उसके चरित्र का अत्यन्त सूक्ष्म और मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है । वह चरखे को आत्मशुद्धि का साधन समझता है । दूसरी ओर वह बड़ा `ट्रेजिक` पात्र नजर आता है, जो पिता से भाग कर पत्नी की शरण में आया, पत्नी से भाग कर पत्नी की शरण में आया, काले खां से घृणा करके उससे श्रद्धा करने लगा । जहां अमरकान्त के चरित्र में गतिशीलता लक्षित होती है, वहां उसके पिता, उसकी पत्नी और काले खां के चरित्र में भी विकास होता है । पिता पुत्र के बलिदान से प्रभावित होता है, पत्नी अपने संस्कारों पर विजय प्राप्त करती है और काले खां का वैराग्य जागता है । किन्तु अमरकान्त इनके बीच जैसे अवाक् खड़ा रह जाता है ।

इस उपन्यासमें सुखदा ,सकीना और नैना के रूप में नारी के तीन चित्र प्राप्त होते हैं । सुखदा सम्पन्नता के विलासमय जीवन से मुक्त होकर सेविका का पथ स्वीकार करती है । सकीना नारी की प्रेरणा-शक्ति और असीम सम्भावनाओं का प्रतीक है । नैना भारतीय नारीत्व के गौरव को सुरक्षित रखती है । वह अपने को समाज पर न्यौछावर कर देती है ।

`गोदान` के होरी तथा अन्य पात्रों का भी चरित्र-चित्रण बड़ा ही मनोवैज्ञानिक ढंग से हुआ है । यह होरी के जीवन-संग्राम की कथा है । उसका संग्राम केवल इसलिए है कि वह अपना सिर पानी से ऊपर रख सके । किसी प्रकार अपना अस्तित्व कायम रख सके । यह किसी बड़े या महान् आदर्श के लिए संग्राम नहीं है, सच्चे अर्थ में यह केवल जीवन-संग्राम है । होरी के लिए जीवन कायम रखना ही इतनी बड़ी समस्या है,जिसके प्रतिकूल भयानक शक्तियाँ हैं । उसके पास दुनिया को बेहतर बनाने के लिए लड़ने की फुर्सत भी नहीं ।

इस प्रकार प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में अनेकानेक चरित्र लिए हैं और उनकी विभिन्न मनोवैज्ञानिक स्थितियों का चित्रण किया है ।

आदर्शोन्मुख यथार्थवाद-- प्रेमचन्द के उपन्यासों में आदर्श और यथार्थ का मेल रहता है । इसलिए प्रेमचन्द की पात्र-कल्पना अपने प्रत्येक उपन्यास में एक आदर्श पात्र लेकर चली है । स्वयं प्रेमचन्द ने कहा है कि प्रत्येक उपन्यास में उन्होंने एक आदर्श पात्र की कल्पना की है ।केवल यथार्थवाद हमें निराशावादी बना देता है और आदर्श अकर्मण्य व स्वप्नद्रष्टा । आदर्श को सजीव बनाने के लिए यथार्थ का उपयोग करना आवश्यक है । उसके द्वारा जनरंजन के साथ साथ जन कल्याण की साधना करते हैं । जीवन में जो कलुषित है,उसके निराकरण के द्वारा जीवन - परिष्कार इनके साहित्य का लक्ष्य है, इसलिए इनकी कृतियों में कल्याण भावना और जीवन के प्रति गहरे विश्वास का भाव सर्वत्र पाया जाता है । `सेवासदन`, `प्रेमाश्रम` , `कर्मभूमि, `रंगभूमि` , `गबन` आदि सभी इसके उदाहरणरूप में हैं । पिछली कृतियों में

ये तत्व कुछ अवश्य धुंधले पड़ गये हैं,किन्तु `कफ़न` जैसी कहानियों और `गोदान` में हमें विषाद की गहरी छाया मिलती है । इसका कारण शायद युग की घोर करुणा है,जिसने आशा तत्व को घोर आघात पहुंचाया है और उससे उनका विश्वास छिन गया है । युग की भीषण व्यवस्था ने उनके जीवन में करुणा का तीखा स्वर छोड़ दिया है, प्रेमचन्द की पिछली कृतियों में कथा का अनन्द करुणा के तीखे स्वरों के मध्य व्यक्त हुआ है ।

हिन्दी को प्रेमचन्द की देन अतुलनीय है । भारतेन्दु भारत की दशा पर अश्रु बहाने के सिवाय कुछ न कर सके । मैथिलीशरण `भारत-भारती` में हम कौन थे, क्या हो गये हैं और क्या होंगे अभी इन समस्याओं पर विचार करने के सिवाय कुछ आगे नहीं बढ़ पाये, किन्तु भारत की कराहती हुई आत्मा की अभिव्यक्ति, उसके शरीर और आत्मा के घाव को सच्चाई और निर्भीकता के साथ दिखाने का अपूर्व साहस प्रेमचन्द में ही दिखलाई देता है । प्रेमचन्द ने रवीन्द्र की भांति कल्पनावादी हैं और न शरत की भांति मर्मवादी। ये तो जमीन के कलाकार हैं । उन्होंने जन-हित के लिए साहित्य -रचना के लिए अपना और अपने साहित्य का उत्सर्ग कर दिया ।

-0-

अध्याय --२

प्रेमचन्द के चरित्र : सामान्य विशेषताएं

(क) प्रेमचन्द के चरित्र विभिन्न वर्गों से

(ख) आदर्शवादी चरित्र

(ग) यथार्थवादी चरित्र

(घ) आदर्शोन्मुख यथार्थवादी चरित्र ।

-०-

द्वितीय अध्याय

-०-

प्रेमचन्द के चरित्र : सामान्य विशेषतायें

प्रेमचन्द के चरित्र विविध वर्गों से आते हैं । एक तरह से मानव जीवन के चरित्र के अध्ययन में उन्होंने अपने साहित्य का प्रमुख उद्देश्य माना है । ` मैं उपन्यास को मानव जीवन का चित्र मात्र समझता हूं मानव चरित्र पर प्रकाश डालना ही उसका मूल तत्त्व है [१] ।` मानव जीवन के चरित्र को वे न तो बिल्कुल श्वेत और न बिल्कुल श्याम मानते हैं । इन दोनों का मिश्रण ही मानव जीवन है । वे चरित्रों को परिस्थितियों के सन्दर्भ में रख कर देखने के पक्ष में हैं । परिस्थितियां मनुष्य को देवता बना सकती हैं और उसी मनुष्य को बदली हुई परिस्थितियां नराधम । इस तरह चरित्रों के निर्माण में प्रेमचन्द ने परिस्थितियों को बहुत अधिक महत्त्व दिया है, गोकि यह भी सही है कि मनुष्य की महतीसामर्थ्य का परिचय हमें तभी मिलता है जब वह परिस्थितियों से ऊपर उठने की चेष्टा करता है और वस्तुत: उठ जाता है । प्रेमचन्द के जिन पात्रों को हम विश्व-साहित्य के महत्त्वपूर्ण कथा-साहित्य के पात्रों के साथ बिठायेंगे (होरी, धनिया, सूरदास) वे सभी पात्र अपने चारों ओर की परिस्थितियों से निरन्तर संघर्ष करने वाले हैं और उनके जीवन में ऐसे अवसर आते हैं, जब वे परिस्थितियों पर विजय पाते हैं ।

प्रेमचन्द के आगमन के पहले कथा-साहित्य में चरित्रों का महत्त्व इस दृष्टि से कभी नहीं आंका गया था । तिलिस्म और

---

१ प्रेमचन्द : `कुछ विचार`, सं० १९६१, पृ० ४७

ऐयारी के उपन्यास में जिसके कलाकार देवकीनन्दन खत्री हैं, चरित्रों का घटनाओं के सामने कोई मूल्य नहीं है । चरित्र घटनाओं के भीषण प्रवाह में अवश्य बहक जाते हैं । यही स्थिति जासूसी और साहसिक उपन्यासों की भी है । ऐतिहासिक रोमांस के उपन्यासों के चरित्र की ऐतिहासिकता भी नाममात्र की होती थी । रोमांस की प्रवृत्ति ही इन उपन्यासों की विशेष प्रवृत्ति होती थी । पहली बार आदर्शोन्मुख यथार्थवादी धारा के उपन्यासों में चरित्रों का महत्त्व दिखाई देता है । 'सौ अजान और एक सुजान', 'नूतन ब्रह्मचारी', 'निस्सहाय हिन्दू' जैसी रचनाओं में चरित्रों के व्यक्तित्व और उनकी विशेषताओं के प्रति कलाकार की जागरूकता स्पष्ट है । किसी भी भाषा के प्रारम्भिक कथा-साहित्य में घटना को अनिवार्यत: प्रधानता मिलती रही है । चरित्रों की क्रमश: प्रतिष्ठा में कथा-साहित्य के विकास का एक क्रम-सा दिखाई देता है । हिन्दी कथा-साहित्य में प्रारंभिक कृतियों में चरित्र की ओर कलाकार का ध्यान था ही नहीं । इसलिए और इसलिए भी इन कृतियों का मुख्य उद्देश्य मनोरंजन था । हम ऐसे कलाकारों से चरित्रांकन की किसी निश्चित प्रणाली की आशा नहीं कर सकते हैं । बाद के कलाकारों ने जब चरित्रों की ओर ध्यान देना आरम्भ किया तब उनकी एक परम्परा का विकास भी हुआ । यह नहीं कि इन उपन्यासों की घटनाएं चरित्रों के लिए नियोजित की गई थीं । अत: कलाकारों का ध्यान चरित्रों की ओर विशेष था, किन्तु इतना जरूर था कि चरित्रों को व्यापक परिवेश में रखकर उन्हें देखा जाने लगा था । उनमें समूह की विशेषताओं की भलक भी मिलने लगी थी और उनकी अपनी विशेषताओं का भी इंगित दिखाई देने लगा था । पूर्ण वैज्ञानिक रूप में चरित्रों की प्रतिष्ठा प्रेमचन्द के आगमन के बाद ही हुआ । उनके उपन्यास पूर्व परम्परा के समान समाज के बाह्य अंगों का चित्रण करते हुए मनुष्य के अन्तर्जगत की भी व्याख्या करता है । अन्तर्जगत की व्याख्या वर्तमान युग की अपनी निजी विशेषता है । अत: प्रेमचन्द का युग इन दोनों-- भूत, भविष्यत् की विशेषताओं का सन्धिकाल है । इसी से इनके तथा इस प्रकार के अन्य उपन्यासों को समन्वित उपन्यास

की कोटि में रखते हैं । यह कोटि बहुत ही व्यापक है । जीवन का सांगोपांग चित्रण इस समन्वित वर्ग द्वारा ही सम्भव है । इसीलिए प्रेमचन्द जी को उपन्यास-सम्राट कहा जाता है ।[1]

प्रेमचन्द की आरम्भिक कृतियों के चरित्र

प्रेमचन्द की प्रारम्भिक कृतियों के चरित्र घटना-प्रवाह के साथ बहते दिखाई देते हैं । इनके व्यक्तित्व में हमें वह शक्ति नहीं मिलती, जो उन्हें घटना के प्रवाह को स्वाभाविक ढंग से मोड़ने में सक्षम बनाए । इन चरित्रों में एक विवशता परिस्थितियों के प्रति पूर्ण समर्पण तथा चिन्तन की दीनता दिखाई देती है । उदाहरण के लिए उनके प्रथम उपन्यास 'वरदान' के मुख्य पात्र 'प्रताप' को लिया जा सकता है । परिस्थितियों से लड़ने के बदले प्रताप सन्यास ले लेता है । सन्यास की पूरी मनोवृत्ति भी उसमें चित्रित नहीं की जा सकी है । वस्तुत: प्रताप का सन्यास कलाकार प्रेमचन्द की अक्षमता है, जो कला की दुर्बलता है । मन्मथनाथ गुप्त और रमेन्द्र वर्मा ने 'वरदान' के कथानक की तुलना 'देवदास' से की है और उन्होंने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि दोनों की कथावस्तु बहुत कुछ एक है । उनके पात्र अनेक सम परिस्थितियों से गुजरते हैं, किन्तु दोनों कृतियों की कला में वही अन्तर है, जो एक बच्चे द्वारा बनाए घरौंदे और एक कुशल शिल्पी द्वारा बनाए घर में है ।

इसके बाद आने वाले चरित्रों में पृथक् और स्वतन्त्र व्यक्तित्व के तत्व उभरने लगते हैं । ये चरित्र घटनाओं के प्रवाह में निस्सहाय दिखाई नहीं देते, वरन् बीच-बीच में अपना हाथ-पैर चलाकर किनारे लगने की चेष्टा करते दिखाई देते हैं और कभी-कभी लग भी जाते हैं । इन चरित्रों में परिस्थितियों से लड़ने का प्रयत्न दृष्टिगोचर होता है । यह सही है कि सब जगह इन्हें सफलता नहीं मिलती, किन्तु यह प्रयत्न ही मानव

---

1 दशरथ ओझा : 'समीक्षा शास्त्र', पृ० १७०

के मूल्य को स्थापित करने के लिए पर्याप्त माना जाना चाहिए । प्रेमचन्द का दूसरा उपन्यास `प्रतिज्ञा` `वरदान` की तुलना में सुलझा हुआ उपन्यास है । मध्य वर्ग के जीवन को लेकर लिखा हुआ यह भी है, किन्तु इसकी समस्याएं अधिक यथार्थ हैं । `वरदान` की तरह यह बिल्कुल हवा में उड़ता हुआ नहीं है । इसके पात्र प्रेमा, दाननाथ प्रतिक्रियाएं उत्पन्न करते हैं । इससे भी महत्त्व-पूर्ण उपन्यास `सेवासदन` है । `सेवासदन` के पात्र परिस्थितियों से संघर्ष करने वाले माने जा सकते हैं । यह सही है कि हरदम उन्हें सफलता नहीं मिलती, किन्तु उनकी आंशिक विजय भी महत्त्व रखती है । कभी-कभी समस्याओं के समाधान रूपमें जिन कृत्रिम वातावरण का निर्माण कलाकार ने किया है, वह हमें आश्वस्त भले न करे, इस बात का प्रमाण तो है ही कि प्रेमचन्द समस्याओं से परिचित हैं । इसके बाद ही निस्सन्देह ऐसे चरित्र आते हैं जो अपनी परिस्थितियों से संघर्ष करते और घटना की धारा को अपनी सामर्थ्य से मोड़ने में समर्थ हो सकते हैं । प्रेमचन्द के कथा-साहित्य में हीन अकिंचन विवश स्थिति से समर्थ दृढ़ और उन्नत स्थिति तक मानव-चरित्र का विकास क्रमश: हुआ है । यह उनकी निरन्तर विकसित कला और उनकी व्यापक सहानुभूति का ही परिणाम है ।

आदर्शवादी परम्परा में प्रेमचन्द के प्रारम्भिक चरित्र

प्रेमचन्द के प्रारम्भ के चरित्र आदर्शवादी परंपरा में रखे जायंगे । यह ठीक है कि प्रेमचन्द ने जीवन के स्वाभाविक और यथार्थ रूप के चित्रण को ही अपने साहित्य का मुख्य आधार बनाया है, लेकिन यह भी ठीक है कि प्रेमचन्द प्रारम्भ में यथार्थ के उस पथ से घबड़ाते दिखाई देते हैं, जो उनकी नैतिक मान्यताओं और बौद्धिक आग्रहों के अनुरूप नहीं है । प्रेमचन्द यह मानते दिखाई देते हैं कि आदमी कमजोरियों का पुतला है । साहित्य में इन कमजोरियों का चित्रण बुराइयों से लड़ने में सहायता नहीं देगा, वरन् इसे और हतोत्साह करेगा । `मैं पूरे जोर से कहता हूं कि केवल यथार्थ की नकल का नाम ही कला नहीं है । फिर यथार्थ को यथार्थ रूप दिखाने से फायदा ही क्या ? वह तो हम अपनी आंखों से देखते ही हैं । कुछ देर के

लिए तो हमें इन कुत्सित व्यवहारों से दूर रहना चाहिए नहीं तो साहित्य का मुख्य उद्देश्य ही नष्ट हो जाता है ।`[1]

`हममें जो कमजोरियां हैं, वह मर्ज की तरह हमसे लिपटी हुई हैं, जैसे शारीरिक स्वास्थ्य एक प्राकृतिक बात है और रोग उसका उलटा उसी तरह नैतिक और मानसिक स्वास्थ्य भी प्राकृतिक बात है-- और हम मानसिक तथा नैतिक गिरावट से उसी तरह सन्तुष्ट नहीं रहते जैसे कोई रोगी अपने रोग से सन्तुष्ट नहीं रहता । जैसे वह सदा किसी चिकित्सक की तलाश में रहता है, उसी तरह हम भी इस फिक्र में रहते हैं कि किसी तरह अपनी कमजोरियों को परे फेंक कर अधिक अच्छे मनुष्य बनें, इसीलिए हम साधु फकीरों की खोज में रहते हैं, पूजा-पाठ करते हैं, बड़े-बूढ़ों के पास बैठते हैं, विद्वानों के व्याख्यान सुनते हैं और साहित्य का अध्ययन करते हैं ।`[2] इसलिए मनुष्य के उस पक्ष को ही वे अपने चरित्रों में उभारना ठीक समझते थे, जो दूसरों में भी सत्-प्रवृत्तियां जगाए उन्हें नैतिक बनाये और सही रास्ते पर आगे बढ़ने की प्रेरणा दे । यह कलाकार प्रेमचन्द की एक महत्वपूर्ण मान्यता थी, जिसके प्रकाश में उनके साहित्य का वह पक्ष देखा जा सकता है, जो शृंगारिक होकर भी अनैतिक नहीं है ।

प्रेमचन्द के साहित्य में ऐसे चरित्र तो हैं ही जो पूर्णत: आदर्शवादी कहे जा सकते हैं, ऐसे चरित्र भी हैं, जिन्हें हम पूर्णत: यथार्थवादी भी कह सकते हैं, किन्तु वस्तुत: प्रेमचन्द की दृष्टि आदर्शोन्मुख यथार्थवादी है । अपने साहित्यिक जीवन के अपराह्न में उन्होंने यह अनुभव किया कि साहित्य में आदर्शवादी दृष्टि मात्र प्रभावपूर्ण नहीं हो सकती । साहित्य को यथार्थ की भूमि पर खड़ा होना ही होगा । यथार्थ अपने सम्बन्ध में जो उपस्थित करता है, साहित्यकार को चाहिए कि वह उसकी व्यंजना को पकड़े । कहानी-क्षेत्र में प्रेमचन्द ने अपनी इस दृष्टि का परिचय `कफन` शीर्षक

---

१ कन्हैयालाल मिश्र `प्रभाकर` : `प्रेमचन्द से भेंट` (आजकल--प्रेमचन्द स्मृति अंक, अक्तूबर, १९५६ ई० ।

२ प्रेमचन्द : `कुछ विचार`, पृ०८-९

कहानी में किया है और यही काम उन्होंने उपन्यास के क्षेत्र में `गोदान` में किया है । प्रेमचन्द के प्रारम्भ के पात्र उनके सिद्धान्तों की प्रतिध्वनि उपस्थित करते हैं । उतने ही अंशों में वे व्यक्तित्व हीन होते हैं और निर्जीव भी । यह कलापूर्ण विकसित तथा परिपक्व स्थिति की कला नहीं है । क्रमश: प्रेमचन्द इन चरित्रों को अधिक स्वतन्त्र रूप में विकसित होने देते हैं और कला की वह पूर्णता उपलब्ध कर लेते हैं जहां उनमें से प्रत्येक को वह स्वतन्त्रता प्राप्त है कि वह अपना जीवन खुद जीये । `गोदान` के चरित्र प्रेमचन्द के किसी भी सिद्धांत से मेल खाने वाले नहीं कहे जा सकते, उनके निर्माण के पीछे कोई सैद्धान्तिक आग्रह नहीं है । वे उस जीवन का प्रतिनिधित्व करते हैं,जो सहज है,स्वाभाविक है, बिखरा-बिखरा,केन्द्रहीन है और अनेक अंशों में कहीं-कहीं अनिश्चित भी ।

प्रेमचन्द ने अपने चरित्रों के अध्ययन के लिए अनेक प्रणालियों से काम लिया है । किसी चरित्र को वे एक परिस्थिति में रखते हैं तथा चरित्र तथा परिस्थिति की क्रिया-प्रतिक्रियाओं का उल्लेख करते हैं । आरम्भ में इस क्रिया-प्रतिक्रियाओं के आकलन के पीछे उनका अपना निश्चित आदर्शवादी मत रहा करता था, जिससे यह मूल्यांकन ग्रसित कहा जा सकता है । एक विशेष परिस्थिति में एक विशेष पात्र की प्रतिक्रिया जैसी होनी चाहिए हरदम वैसी ही अंकित नहीं होती थी , वैसी ही अंकित होती थी, जैसी आदर्श की मांग होती थी । उदाहरण के लिए हम उनके कथा-संग्रह `मानसरोवर` भाग एक की कहानी `अलग्योझा` को ले सकते हैं । इस कथा में रग्घू जब दस वर्ष का होता है तब उसकी माता की मृत्यु हो जाती है । विमाता के आते ही उसके बुरे दिन आ जाते हैं । विमाता उसे अनेक तरह से कष्ट देती है । रग्घू प्रारम्भ में अपने पिता से कहता है किन्तु उससे कोई लाभ नहीं होता ।विमाता के अत्याचार दिन-पर-दिन बढ़ते ही जाते हैं । गांव के लोग भी उसकी विमाता `पन्ना` का ही पक्ष लेते हैं । सबल की शिकायतें सब सुनते हैं,निर्बल की फरियाद कोई नहीं सुनता । रग्घू का हृदय मां की ओर से दिन-दिन फटता जाता है । यहां तक कि आठ साल गुजर जाते हैं और `भोला महतो` के नाम भी मृत्यु का संदेश आ पहुंचता है । पन्ना के सामने एक बड़ी समस्या उपस्थित

होती है कि वह चार बच्चों की परिवरिश कैसे करेगी । रग्घु आज अठारह साल का है, यदि वह चाहे तो पन्ना के सारे दुःख दूर कर सकता है, किन्तु वह कैसे उससे इस बात की आशा कर सकती है, उसने उसे कभी स्नेह नहीं दिया और सदा उसके साथ दुर्व्यवहार ही किया । पिता की मृत्यु के पश्चात् रग्घु के स्वभाव में परिवर्तन होता है । वह अपनी माता की सारी बुराइयों तथा अपने पर किए गए अत्याचार को भूल जाता है । अपने छोटे भाई-बहनों के साथ इस प्रकार व्यवहार करता है कि पन्ना देख कर अवाक् रह जाती है । रग्घु सम्पूर्ण गृहस्थी का भार अपने कन्धे पर उठा लेता है । जन्मकाल से ही अपने गले में पड़ी हुई सोने की मोहर बेंचकर भाई-बहनों के लिए एक गाय खरीदता है । माता के बार-बार आग्रह करने पर भी विवाह करने को राजी नहीं होता, क्योंकि वह जानता है कि कर्कशा पत्नी के आते ही अलग्यौझा का प्रश्न उठेगा और उसका सारा आदर्श चौपट हो जायगा । माता के ही आग्रह से विवाह करता है । मुलिया आती है और वही होता है जिससे रग्घु इतने दिनों से डर रहा था । मुलिया अलग हो जाती है । रग्घु इसी चिन्ता में धीरे-धीरे दुर्बल और मरीज होकर मर जाता है । रग्घु के चरित्र में वह आदर्श है जो प्रत्येक ग्रामीण युवक में होना चाहिए ।

रग्घु के छोटे भाई केदार में भी वही आदर्श है । जब तक रग्घु जीवित है केदार के मन में उसके प्रति विद्वेष और प्रतिद्वन्द्विता का भाव है । मरते समय रग्घू केदार को अन्तिम भेंट के लिए उसे बुलाता है, किन्तु केदार यह समझ कर कि कहीं दवा के लिए न भेज दें बहाना बता देता है । भाई की मृत्यु के पश्चात् उसके मन में अतीव सन्ताप होता है । वह भी अपना जीवन मुलिया तथा उसके बच्चों की सेवा में उत्सर्ग कर देता है। चरित्र के अंकन की यह प्रणाली साहित्य में अपेक्षाकृत प्राचीन कही जायगी । प्रेमचन्द ने इस अत्यन्त नवीन प्रणाली का भी प्रयोग किया है, जिसमें वे एक पात्र को अनेक परिस्थितियों में रखकर उनकी पारस्परिक तुलना करते हैं । उनकी

'ईदगाह' शीर्षक कथा में चार-पांच शिशुओं का समुदाय हमारे सामने आता है। हामिद, मोहसिन, महमूद, नूरे और सम्मी ये पांच एक ही गांव के बालक ईद के दिन ईदगाह देखने चलते हैं। ये पांचों अत्यन्त प्रसन्न हैं और मेला जाने की खुशी में सब कुछ भूले हुए हैं। बार-बार अपनी जेब से पैसे निकालते, गिनते और रख देते हैं। ये पांचों बालक हैं बाल वर्ग की सारी भावनाएं उनमें हैं, किन्तु इस एक ही परिस्थिति में उनके चरित्रों की विविधताएं स्पष्टरूप से परिलक्षित हो रही हैं। हामिद, मोहसिन, महमूद, नूरे तथा सम्मी सभी अपनी प्रकृति के अनुकूल बातचीत करते तथा गप छेड़ते हैं। सभी अपने-अपने पसन्द के खिलौने खरीदते हैं, मोहसिन भिश्ती लेता है, महमूद सिपाही, नूरे वकील और सम्मी धोबिन। इस प्रकार प्रत्येक बालक अपने-अपने खिलौने की श्रेष्ठता के पक्ष में दलील उपस्थित करता है। हामिद की अवस्था सबसे कम है, किन्तु वह इन सबों में चालाक और होशियार है। वह खिलौना नहीं खरीदता, मिठाई नहीं खाता, किन्तु अपने साथ लिए हुए तीन ही पैसे में दादी के लिए चिमटा खरीदता है। यह चिमटा दादी के प्रति अपार प्रेम का द्योतक है। हामिद के चरित्र की ~~विशे~~ विशिष्टता स्पष्टरूप से है। यहां एक ही परिस्थिति में सभी बालकों के चरित्र की विविधता दिखाई गई है। इस प्रणाली के चरित्र का अंकन अधिक पूर्ण और मनोवैज्ञानिक है। 'गोदान' के चरित्र में यह पूर्णता और वैज्ञानिकता हमें और भी स्पष्टरूप से मिलती है। प्रेमचन्द ने अपने साहित्य में स्त्री और पुरुष चरित्रों के अतिरिक्त बाल-चरित्रों का भी बड़ी सफलता से अंकन किया है। आलोचकों का ध्यान उनके स्त्री और पुरुष चरित्रों की ओर तो गया है, किन्तु उनके बाल-चरित्रों की ओर उतना नहीं। हिन्दी में जयशंकर प्रसाद' और बंगला में शरतचन्द्र से तुलना करते हुए आलोचकों ने इस आम धारणा का प्रचलन कर रखा है कि प्रेमचन्द को नारी-मनोविज्ञान का उतना अच्छा परिचय नहीं था। उनके पुरुष-चरित्र अधिक विकसित और पुष्ट माने जाते हैं। यह कहा जा सकता है कि 'प्रसाद' की नारियों की तरह प्रेमचन्द की नारियों में रंगीनी और मोहकता नहीं है और न शरतचन्द्र की नारियों की तरह गद्गद् भावुकता ही है। प्रेमचन्द ने अपने चरित्रों को काव्यात्मक

वातावरण में विचरण करने की स्वतन्त्रता हरदम नहीं दी है, और न उन्होंने जीवन को भावुकता के खिलवाड़ के रूप में ही चित्रित किया है । भावुकता को प्रेमचन्द हिन्दी साहित्य के लिए उपयोगी तत्व नहीं मानते थे । एक बार जैनेन्द्र ने प्रेमचन्द से पूछा कि शरत के उपन्यासों के सम्बन्ध में उनके क्या विचार हैं? इस प्रश्न के उत्तर के सिलसिले में प्रेमचन्द ने कहा कि बंगला उपन्यासों की मूल विशेषता उनकी भावुकता है । यह भावुकता बंगाली जाति की विशेषता है । यह बड़ी बात है कि भावुक बंगाली इतनी भावुकता से पूर्ण साहित्यिक रचना कर लेते हैं, किन्तु यह हिन्दी के लिए रास्ता नहीं । हिन्दी के कलाकार को तो यथार्थ की दृढ़भूमि पर खड़ा होना होगा । ऐसा करने को वह बाध्य है और इसी में हिन्दी का कल्याण है । अपने चरित्रों को प्रेमचन्द ने इसीलिए भावुकता से बचाने का प्रयत्न किया है । ऐसे अनेक अवसर आये जब वे भावुकता के प्रवाह में अपने पाठकों को ले जा सकते थे और अपने लिए एक ऐसे पाठकों की भीड़ एकत्र कर सकते थे जो आज शरत के पीछे दीवाने हैं, किन्तु बहुत ही सतर्कता से और संयम से भी कठोरता पूर्वक उन्होंने इस लोभ से अपने को बचाया । प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी कथा-साहित्य का विकास इस बात का प्रमाण है कि यह भविष्य को देखते हुए प्रेमचन्द की एक बड़ी उपलब्धि थी, त्याग तो यह था ही । प्रेमचन्द की नारियों पर अध्ययन करने पर हमें ऐसा लगता है कि नारी मनोविज्ञान का उन्होंने बड़ी सूक्ष्मता से अध्ययन किया था । रंगीनी और भावुकता से अलग इन नारियों का जो प्राकृत रूप दिखाई देता है वह हमारे निष्कर्ष को पुष्ट करने के लिए पर्याप्त है । उदाहरण के लिए हम उनकी प्रौढ़तम कृति 'गोदान' के तीन नारी-पात्रों को लें । धनिया 'गोदान' की अत्यन्त प्रमुख स्त्री पात्र है । मालती की तुलना में उसमें बाह्य आकर्षण का नितान्त अभाव है । वह स्वभाव की अत्यन्त कटु दिखाई देती है । उसमें ऐसे हाव-भावों का भी अभाव है, जो मनचले पाठकों को अपनी ओर सहसा आकर्षित कर लें फिर भी धनिया प्रेमचन्द की कलात्मक दृष्टि से अत्यन्त सशक्त रचना है । न केवल धनिया की रचना में कला की यथार्थवादिता एक ऊंचाई छू लेती है, बल्कि

इस चरित्र द्वारा प्रेमचन्द ने यह सिद्ध कर दिया है कि प्रेमचन्द को नारी - मनोविज्ञान की गहरी पहचान है और वे उस वातावरण, परिस्थिति, शिक्षा, संस्कार तथा विभिन्न मनोवेगों के बीच अपनी नारियों को रखकर अत्यन्त निखरा हुआ चित्र उपस्थित कर सकते हैं । बड़ी सफाई से प्रेमचन्द ने नारी मनोविज्ञान के पहलुओं को धनिया के माध्यम से उपस्थित किया है ।नारियों का सबसे कोमल पक्ष आत्म-प्रशंसा सुनना है । होरी और धनिया के बीच का वार्तालाप उपस्थित किया जा सकता है, जिसमें प्रेमचन्द ने इस पक्ष को बड़ी खूबी से दिखाया है ।

"होरी ने पुचारा दिया-- यह मैं जानता हूं, लेकिन उनकी भलमंसी को भी तो देखो, मुझसे जब मिलता है तेरा बखान ही करता है-- ऐसी लक्ष्मी है, ऐसी सलीकेदार है ।"

"धनिया के मुख पर स्निग्धता झलक पड़ी । मनभाये मुखिया हिलाए वाले भाव से बोली -- मैं उसके बखान की भूखी नहीं हूं, अपना बखान धरे रहे ।"

"होरी ने स्नेह भरी मुस्कान के साथ कहा -- मैंने तो कह दिया, भैया वह नाक पर मक्खी भी नहीं बैठने देती, गालियों से बात करती है, लेकिन वह यही कहे जाय कि वह औरत नहीं लक्ष्मी है । बात यह है कि उसकी घरवाली जबान की बहुत तेज थी। बेचारा उसके डर के मारे भागा-भागा फिरता था । कहता था जिस दिन तुम्हारी घरवाली का मुंह देख लेता हूं, उस दिन कुछ-न-कुछ जरूर हाथ लगता है । मैंने कहा-- तुम्हारे हाथ लगता होगा यहां तो रोज देखते हैं, कभी पैसे से भेंट नहीं होती ।"

"तुम्हारे भाग ही खोटे हैं, तो मैं क्या करूं । लगा अपनी घरवाली की बुराई करने-- भिखारी को भीख नहीं देती थी, झाड़ू लेकर मारने दौड़ती थी , लालचिन ऐसी थी कि नमक तक दूसरों के घर से मांग लाती थी ।

"मरने पर किसी की क्या बुराई करूं ।मुझे देखकर जल उठती थी ।"

भोला बड़ा गमखोर था कि उसके साथ निबाह कर लिया । दूसरा होता तो जरूर मर जाता । मुझसे दस साल बड़े होंगे भोला, पर राम-राम पहले ही करते हैं ।

तो क्या कहते थे कि जिस दिन तुम्हारी घरवाली का मुंह देख लेता हूं, तो क्या होता है ?

उस दिन भगवान कहीं न कहीं से कुछ भेज देते हैं[1] ।

धनिया के स्वभाव में कटुता परिस्थितियों की देन है । उसे निरन्तर अपने जीवन से संघर्ष करना पड़ा है । जवानी में ही बुढ़ापा को स्वीकार करना पड़ा है । उसके जीवन में सुख और सुविधा के दिन कभी आये नहीं । ऐसी स्थिति में उसके मन का चिड़चिड़ापन ,उसके भीतर का आक्रोश उसके दिन-दिन उसके जीवन की छोटी-मोटी घटनाओं में ही अभिव्यक्त होता है । वह बड़े दबंग स्वभावकी है । लोग उससे भय खाते हैं,खासकर पुलिस के दरोगा से झड़प हो जाने के बाद तो उसके सम्बन्ध में लोगों ने अनेक सच्ची झूठी धारणाएं बनारखी हैं । होरी से भी वह झगड़ती है और उसे जली-कटी सुना देती है । होरी कभी गुस्से में आकर उसे पीटता भी है,किन्तु वह निर्विवाद रूप में होरी को प्यार करती है । बाहर की स्पष्ट शुष्क बालुका के नीचे प्यार की अत्यन्त शीतल संतोषदायिनी सलिला प्रवाहित होती रहती है,जिसका अनुभव होरी करता है और जिसका आभार भी वह मानता है । विषम परिस्थितियों के बीच आर्थिक दृष्टि से जर्जर पति-पत्नी को रखकर प्रेमचन्द के कलाकार ने धनिया के जिस नारीत्व का आकलन किया है, वह किसी अत्यन्त सधी हुई कलम से ही संभव है । बड़ी खूबी से प्रेमचन्द ने धनिया को होरी के जीवन के पूरक के रूप में चित्रित किया है और बड़ी सतर्कता से उन्होंने उसके पृथक् व्यक्तित्व का अंकन भी किया है । धनिया की मनुष्यता नारी जाति को विरासत में मिली । दया,माया,ममता,मधुरिमा अगाध विश्वास आदि विशेषताओं से वह पूरित है और इन सभी विशेषताओं के उदाहरण यत्र-तत्र उसके जीवन में भरे पड़े हैं ।

---

1 प्रेमचन्द : 'गोदान', आठवां संस्करण,पृ० २३ ।

मालती के चरित्र को देखकर यह कहा जा सकता है कि प्रेमचन्द नारी-चरित्र के रंगीन और भावुक पक्ष को बड़ी सफलता से उपस्थित कर सकते हैं । मालती के चरित्र के दो पक्षों की ओर स्वयं उन्होंने ही हमारा ध्यान आकृष्ट किया है -- एक उसका तितली रूप और दूसरा उसका मधु-मक्खी रूप । तितली के साथ जो एक चंचलता, सुकुमारता नयन रंजकता और निरुद्देश्य भोग प्रवृत्ति लिपटी हुई है, हमें ऐसा लगता है कि मालती के जीवन में उन्होंने यह सब कुछ दिखलाया है । मालती का बाह्य आकर्षण इतना आकर्षक इतना अदम्य है कि मिस्टर खन्ना उसके पीछे अपनी गृहस्थी चौपट कर देते हैं और ओंकारनाथ गटागट शराब पी जाते हैं । उसकी भोगलिप्सा इतनी स्पष्ट है कि जीवन और जगत की अनेक वस्तुओं को तलस्पर्शिनी दृष्टि से देखने वाले प्रोफेसर मेहता भी भ्रम में आ जाते हैं और यह मान लेते हैं कि मालती कभी त्याग कर ही नहीं सकती । उसके रूप में वह जादू है कि एक कटाक्ष के लिए बड़े-बड़े धनी मानी, ज्ञानी-ध्यानी तरसते रह जाते हैं । इस प्रकार प्रेमचन्द ने एक ऐसी रंगीन मोहक और सद्यः प्रभाव उत्पन्न करने वाली चंचल रमणी का चित्र खींचा है, जिसकी तुलना हिन्दी साहित्य की किसी भी ऐसी नारी-पात्र से की जा सकती है, किन्तु प्रेमचन्द की खूबी यह है कि उन्होंने मालती को ऐसी मालती को कहीं भी भावुकता का शिकार होने नहीं दिया है । मालती आत्म दया से ग्रसित नहीं है और न दूसरे किसी से दया चाहती है । उसे अपनी परिस्थितियों का ज्ञान है अपने दायित्व का ज्ञान है और अपनी शक्ति और सीमाओं का भी ज्ञान है । जिस मेहता के सम्बन्ध में गोदान का पाठक इतना आश्वस्त रहता है कि वह यह उम्मीद ही नहीं करता कि वैज्ञानिक दृष्टि रखने वाला यह व्यक्ति प्रेम की इतनी कठोर परीक्षा करने वाला यह व्यक्ति प्रत्येक समस्या के सम्बन्ध में इतना निर्वैयक्तिक होकर सोचने वाला यह व्यक्ति कभी भावुक होकर चांदनी रात में मालती से प्रेम की भिक्षा भी मांग सकता है । प्रोफेसर मेहता गोदान के पाठक को इस दृष्टि से निराश करते हैं । गोविन्दी के सम्बन्ध में सशंक होता है वह मालती समस्त भावुकताओं को पार कर, समस्त दुर्बलताओं से ऊपर उठकर

मेहता के प्रेम को ठुकरा देती है और मानवी न रहकर एक प्रकार से देवी बन जाती है । कलाकार प्रेमचन्द ने मालती की पारिवारिक परिस्थितियों का चित्रण कर तथा उसके दायित्व का अंकन कर यह दिखला दिया है कि मालती केवल तितली ही नहीं है मधुमक्खी भी है । वह एक ऐसी मधुमक्खी है जो अपने अध्यवसाय और निरन्तर कार्यशीलता से मधुपूर्ण छत्ते का निर्माण भी करती है, किन्तु जिस छत्ते का उपभोग दूसरे करते हैं-- मालती के चरित्र-निर्माण में कलाकार ने अत्यन्त सूक्ष्म किन्तु परस्पर विरोधी तत्वों का ऐसा संघटन किया है, जिनकी रासायनिक क्रिया-प्रतिक्रिया द्वारा नारी -चरित्र के अनेक मनोवैज्ञानिक पहलुओं को उभारा जा सकता है । मालती मेहता को बहुत अधिक प्यार करती है, लेकिन वह उनके प्रेम प्रस्ताव को ठुकरा भी देती है । मालती साज-शृंगार और भोग विलास में रहने वाली युवती है, लेकिन वह गोबर के बीमार बच्चे की परिचर्या में दिन को दिन और रात को रात नहीं समझती है । इसी तरह की और भी कुछ विरोधी घटनाओं का विश्लेषण सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक आधार पर संभव है । यह सब कुछ है, किन्तु मालती का व्यक्तित्व विभक्त नहीं किया जा सकता । वह संतुलन बनाए रख सकने में समर्थ भी है । मेहता के प्रति उसका एकान्त समर्पण सत्य है । जीवन के प्रति उसका सेवा-भाव यथार्थ है । समाज के प्रति उसका तिरस्कार भाव भीउतना ही सही है ।

गोविन्दी के माध्यम से प्रेमचन्द ने नारियों के उस वर्ग का प्रतिनिधित्व कस्त्रस्त कराया है जो जीवन के पुराने मूल्यों में विश्वास करती हैं । गोविन्दी एक ऐसी नारी है, जिसको भारतीय समाज की सीता और सावित्री की परम्परा ने पालित पोषित और विकसित किया है ,जिसपर आज भी पुराण पंथियों का सच्चा या झूठा गर्व है । गोविन्दी को पति का तिरस्कार मिलता है । गोविन्दी पर पति अत्याचार करता है । सम्भवतः गोविन्दी पर खन्ना साहब की मार भी पड़ती है, किन्तु गोविन्दी चूंकि खन्ना साहब की पत्नी है, इसीलिए सकी खन्ना साहब उसके

देवता हैं और उनका कोई भी आचरण कम-से-कम 'गोदान' की घटनाओं में कहीं कोई प्रतिक्रिया उत्पन्न नहीं करता । एक बार ऐसे आचरण के विरोध से या अपनी परिस्थितियों से ऊबकर गोविन्दी घर छोड़कर भाग आती है, किन्तु कलाकार ने अपने इस चरित्र की रक्षा के लिए अस्वाभाविक ढंग से मेहता को पहुंचा दिया है, जहां लान पर मन मारे गोविन्दी बैठी है । उनके ठीक-बेठीक बातचीत के बाद वे गोविन्दी को फिर घर भेज देते हैं । गोविन्दी का अत्याचार को चुपचाप सह लेना गोविन्दी के युग को देखते हुए सब कुछ अस्वाभाविक है । उसके जीवन की एक ही घटना स्वाभाविक है, उसका घर छोड़कर भाग आना । इसी घटना के आधार पर गोविन्दी में नारी मनोविज्ञान की सच्ची पकड़ का दावा 'गोदान' का कलाकार कर सकता है । सच पूछा जाय तो गोविन्दी के निर्माण की सार्थकता उसे मालती की तुलना में रखने में मालती के चरित्र-विकास के लिए गोविन्दी का ऐसा होना सम्भवत: आवश्यक था । यह भी संयोग की बात है कि जीवन में अपने पति की प्रेयसी मालती के लिए इतना कुछ बर्दाश्त करने वाली गोविन्दी कला में भी इसके लिए आत्मोत्सर्ग करती है । गोविन्दी सती साध्वी स्त्री है, किन्तु उसके चरित्र की दृढ़ता पर पाठक की वैसी आस्था नहीं है, जैसी आस्था अन्त में मालती के चरित्र के प्रति हो जाती है जो किसी भी अर्थ में कभी भी सती नहीं कहला सकती थी । एक तरह से प्रेमचन्द ने गोविन्दी के चित्रण के संस्कार को सर्वाधिक महत्व दिया है और इन संस्कारों के पोषण के लिए यत्र-तत्र से पर्याप्त सामग्रियां जुटाई हैं । संस्कार चरित्र-निर्माण हो सकता है और महत्वपूर्ण तत्व भी हो सकता है, किन्तु संस्कार ही चरित्र नहीं है, फिर भी गोविन्दी के चित्रण में जहां प्रेमचन्द दिखाई देते हैं, वहां आ क्षणों के मनोवैज्ञानिक महत्व को पकड़ने में सफल हुए हैं ।

प्रेमचन्द के पुरुष-पात्र अपेक्षाकृत अधिक विविध और व्यापक क्षेत्र से लिए गए हैं । इन पात्रों के माध्यम से प्रेमचन्द ने जीवन के कार्य-व्यापार की गतिशीलता को देखने का प्रयत्न किया है । इसलिए यदि

स्थूल दृष्टि से प्रेमचन्द के पुरुष पात्र अधिक महत्वपूर्ण मालूम पड़ते हैं तो यह उनके नारी चरित्र के अध्ययन के अभाव का कोई कारण नहीं है । प्रेमचन्द के बाल-चरित्रों का विस्तार हम विस्तार में आगे प्रस्तुत करेंगे ।

यों समग्रत: प्रेमचन्द ने जीवन के अत्यन्त विस्तृत क्षेत्र का परिचय दिया है । समाज के विभिन्न वर्गों, जीवन के अनेकानेक क्षेत्रों और जीवन की असंख्य परिस्थितियों को पृष्ठभूमि बनाकर उनके साहित्य के चरित्र गतिशील हैं । मुख्यत: उन्होंने ग्रामीण जीवन और किसान वर्ग को अधिक चित्रित किया है । प्रेमचन्द के युग का भारत गांवों का भारत था और उनके युग में अस्सी प्रतिशत से ज्यादा व्यक्ति किसान थे । इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए प्रेमचन्द के साहित्य में अनेक महत्व को समझा जा सकता है ।

प्रेमचन्द का यथार्थवाद अनैतिक और अश्लील यथार्थवाद नहीं था । साहित्य में यथार्थवाद की दृष्टि आदर्शवाद की दृष्टि से अधिक कष्टसाध्य एवं साधना पूर्ण है । आदर्शवाद द्वारा किसी ऐसे चरित्र की सृष्टि की जा सकती है, जो सद्य: प्रभाव उत्पन्न करे । इसका प्रभाव अत्यन्त तीखा भी हो सकता है, लेकिन वह उतना ही अस्थायी भी होगा । आदर्शवाद के आधार पर चरित्रों की सर्जना कला की सूक्ष्म और अन्वित दृष्टि की मांग नहीं करती । किन्तु यथार्थवाद कला के क्षेत्र में निरापवाद शब्द नहीं है । यथार्थवाद में यह भय रहता है कि जिसका चित्रण हो रहा है, वह यथार्थ का खण्ड चित्र न हो या यह आशंका रहती है कि जिस यथार्थ का वर्णन हो रहा है, वह उचित परिवेश में नहीं देखा जा रहा है । खंडित यथार्थ साहित्य में विकृत चित्र उपस्थित करता है और सन्दर्भ से टूटा हुआ यथार्थ भ्रान्ति का जन्म देता है । यथार्थवाद की प्रकृत दृष्टि वही है, जिसमें यथार्थ की पूर्णता और संदर्भ के औचित्य को बनाया रखा गया है । उस यथार्थ से कलाकार का गहरा परिचय तो होना ही चाहिए उसकी अभिव्यक्ति के समय उसमें अपेक्षित तटस्थता भी होनी चाहिए । प्रेमचन्द ने यथार्थ के साथ यह निभाया है, इसीलिए उनका यथार्थवाद कलात्मक भी है और ग्राह्य भी । जहां प्रेमचन्द ने समस्याओं

के समाधान दिए हैं, किन्तु यथार्थ के चित्रण में उनकी ईमानदारी में कहीं सन्देह नहीं किया जा सकता है ।

पुरुष और नारी के चरित्र-विश्लेषण के साथ ही साथ प्रेमचन्द ने शिशु-चरित्रों का भी आंकलन बड़ी गहराई से किया है । शिशु पात्रों का विवेचन अत्यन्त कष्टसाध्य है, क्योंकि पुरुष वर्ग और नारी वर्ग तो जीवन की परिस्थितियों में उलझते हैं और उसके समाधान के लिए प्रयत्नशील होते हैं, किन्तु शिशु अपने बाल-मनोविज्ञान में अपने इन परिस्थितियों का महत्व ही नहीं समझता और उसके पास वह बुद्धि और तर्क भी नहीं होता जिससे वह जीवन की परिस्थितियों को सुलझा सके वह तो एकमात्र अपने माता-पिता या अभिभावकों पर निर्भर रहता है । ऐसी स्थिति में वह किस भांति जीवन की बदलती हुई घटनाओं में योग दे सकता है । मनोदृष्टि से तो उसकी अत्यन्त संक्षिप्त अनुप्रेरणाएं (Instincts) रहती हैं । भूख, प्यास, निद्रा, आत्मरक्षा के अतिरिक्त उसके पास अन्य वृत्तियां ही नहीं हैं । इस परिस्थिति में उसके चित्रण में कितनी सावधानी बरतनी चाहिए, यह एक विशिष्ट कलाकार ही जान सकता है । मां को रोते देखकर शिशु भी रोने लगता है । यदि शिशु से पूछा जाय कि तू क्यों रोता है तो वह बिना समझे मां की ओर संकेत कर देगा, क्योंकि वह स्वयं रोने का कारण नहीं जानता । इस अबोधता में शिशु का चारित्रिक-विश्लेषण में विशेष कौशल की अपेक्षा रखता है । प्रेमचन्द ने शिशु के मनोभावों के चित्रण में जिस मानसिक आधार को ग्रहण किया है, उसपर आगे विचार किया जायेगा ।

-०-

अध्याय --३

शिशु पात्रों के विवेचन का आधार

इतिहास का जीवन : साहित्य के चरित्र में अन्तर

खड्गशील चरित्र, ढाल से दीख पड़ने वाले चरित्र ,

काष्ठ शील, शिविका रूढ़ शील ।

सजीव व्यक्ति के तीन आयाम--

(क) १- समूह परक चरित्र

२- व्यक्ति परक चरित्र

३- समूह परक और व्यक्ति परक चरित्र

(ख) १- अपरिवर्तन शील

२- परिवर्तनशील चरित्र -- पुरुष चरित्र, स्त्री चरित्र, शिशु चरित्र, शिशु चरित्र : विविध आयु वर्ग

१- शिशु वर्ग (जन्म से ८ वर्ष)

२- बालक वर्ग (८ से १६ वर्ष)

३- किशोर वर्ग (११ से १५ वर्ष)

-०-

तृतीय अध्याय

-0-

शिशु-पात्रों के विवेचन का आधार

मानव ने जिस दिन अभिव्यक्ति सीखी होगी, आश्चर्य नहीं, उसी दिन संसार की पहली कहानी बन गई हो । कहानी केवल अभिव्यक्ति ही नहीं है, वह जिज्ञासा की पूर्ति भी है । वह मनोद्गारों के एक तीखे और पूर्ण क्षण की स्मृति भी है, इसीलिए मनुष्य ने जब पहली बार आंख खोली होगी तो कौतुहल से उसने दुनियां देखी होगी और उसी क्षण उसके भीतर कोई पूर्ण संकुल अनुभूति अभिव्यक्ति के लिए आकुल होने लगी होगी और आगे चलकर उसी ने कभी अन्तत: कहानी का रूप ले लिया होगा । बहुत दिनों तक कहानी मनोरंजन का साधन बनी रही । जब तक जीवन स्थिर, शान्त और अपेक्षाया ऐश्वर्य और सुखों से भरा था तब तक अभिव्यक्ति के इस माध्यम को किसी दूसरी उपलब्धि के उपयोग में ले आने की बात नहीं सोची गई । ऐसे उसमें बहुत-सी बातें आईं, किन्तु मनोरंजन ही उसका मुख्य उद्देश्य बना रहा । दुनिया की सभ्यता जब कृषि और पशु-पालन की सीमा को लांघकर औद्योगीकरण की सीमा में प्रवेश करने लगी, तब साहित्य की विविध विधाओं में और स्पष्टत: कहानी में भी उद्देश्य परिवर्तित होने लगा । हम साहित्य को जीवन की आलोचना मानने लगे तथा साहित्य में जीवन का प्रतिबिम्ब ढूढ़ने लगे । साहित्य जीवन को गतिशील बनाने का उपक्रम करने लगा । कथा-साहित्य में कैसे सत्य ने गल्प का स्थान लिया, यह एक मनोरंजक और सूक्ष्म अध्ययन द्वारा समझा जा सकता है । प्रारम्भ की कहानियों में मनोरंजन-तत्त्व को प्रमुख बनाए रखने की दृष्टि से घटनाओं को महत्त्व मिलता था । घटना-प्रधान कहानियों में चरित्र उद्दाम वेग

में तिनके की तरह बहते नजर आते हैं । किन्तु अठारहवीं शताब्दी के आस-पास औद्योगिक क्रान्तियों से प्रभावित होकर कथा-साहित्य में घटनाओं के बदले चरित्रों को प्रमुखता मिली । यह माना जाने लगा कि हम कथा-साहित्य में चरित्र गढ़ते हैं,घटना नहीं । दूसरे शब्दों में घटनाओं के ऊपर चरित्रों को महत्त्व दिया जाने लगा और आधुनिक कथा-साहित्य का उद्देश्य ही चरित्रों का निर्माण या चरित्रों का अध्ययन हो गया । जहां पृष्ठभूमि को महत्त्व देकर कथा-साहित्य का निर्माण किया गया है, वहां भी पृष्ठभूमि या वातावरण का बहुत कुछ पात्रवत् चित्रण है ।

इतिहास की जीवन : साहित्य का चरित्र में अन्तर

मानव-चरित्र के अंकन में एक ओर अनेक प्रेरणाओं से साहित्य ने अपने चरण बढ़ाये हैं,तो दूसरी ओर बहुत जमाने से इतिहास भी ऐसा ही करता आ रहा है, किन्तु इतिहास का जीवन और साहित्य के चरित्र में स्पष्टतः अन्तर है । साहित्य का चरित्र कलाकार की वृत्ति से अछूता नहीं हो सकता । ई०एम० फोस्टर ने अपनी पुस्तक `आसपेक्ट्स आफ नावेल(Aspects of Novel) में एक स्थान पर लिखा है[1]-- "A novel is based on evidence + or − x the unknown quality being the temperament of the novelist."

कलाकार जीवन को देखने की एक दृष्टि रखता है । उसकी यह दृष्टि उसकी शिक्षा, उसके संस्कार,उसका सामाजिक स्तर,उसकी मनोवृत्ति और उसकी संवेदनशीलता आदि अनेक आधारों पर बनती है । फास्टर ने जिसे `टैम्परामेंट` कहा है वह एक साथ ही कई तत्त्वों के मिश्रण से बना हुआ है । इतिहासकार जहां घटनाओं का अंकन फोटोग्राफर की तरह करता है या कहना चाहिए बिना किसी आलोचना-प्रत्यालोचना के करता है, वहां साहित्यकार अपनी उस विशिष्ट दृष्टि से एक तरह से जीवन की आलोचना करता हुआ घटनाओं का चित्रण करता है । इसी पुस्तक में `फास्टर` ने अन्यत्र लिखा है--

---

१ Aspects of Novel : E. M. Foster Page 44.

"The Historian records where as the novelist must create"[1] कथाकार से इसबात की मांग की जाती है कि वह अपने चरित्रों के सम्बन्ध में ऐसा कुछ जरूर बताए, जिसे हम स्थूल आंखों से नहीं देख पाते हैं,जो सूक्ष्म है और जो चरित्र का वह अंश है, जिसे आवृत माना जा सकता है । ऐतिहासिक चरित्र और साहित्यिक चरित्र इसी आधार पर अलग-अलग माने जा सकते हैं । प्रेमचन्द ने साहित्य और इतिहास का अन्तर बताते हुए अपना विचार व्यक्त किया है --" इतिहास में सब कुछ यथार्थ होते हुए भी वह असत्य है और कथा-साहित्य में सब कुछ काल्पनिक होते हुए भी सत्य है ।"[2] फिर " कहानी में नाम और सन् के सिवा और सब कुछ सत्य है और इतिहास में नाम और सन् के सिवा कुछ भी सत्य नहीं । गल्पकार अपनी रचनाओं को जिस साँचे में चाहे ढाल सकता है, किसी दशा में भी वह उस महान् सत्य की अवहेलना नहीं कर सकता जो जीवन-सत्य कहलाता है ।"[3] इतिहासकार जीवन के स्थूल कार्य-कलापों का ही लेखा-जोखा देता है । साहित्य-कार बाह्य कलापों को आन्तरिक अनेक सूक्ष्म मनोवृत्तियों और उद्वेगों से जोड़ता है और उन अनेक सूक्ष्म भावों -अनुभावों के ताने-बाने से उसे सम्पृक्त करता है, जिनकी अनुभूति इतिहासकार की बोध-परिधि से कहीं परे की चीज है । इसीलिए कहा जा सकता है कि साहित्य में जो कुछ चित्रित होता है और जिसे हम साधारणत: यथार्थ कहते हैं वह जीवन का स्थूल यथार्थ नहीं है । "कला दीखती तो यथार्थ है, पर यथार्थ होती नहीं । उसकी खूबी यह है कि वह यथार्थ न होते हुए भी यथार्थ मालूम हो । उसका मापदण्ड भी जीवन के मापदण्ड से अलग है । जीवन में बहुधा हमारा अन्त उस समय व हो जाता है जब वह वांछनीय नहीं होता । जीवन किसी का दायी नहीं है, उसके सुख -दु:ख ,हानि-लाभ ,जीवन-मरण में कोई क्रम-- कोई सम्बन्ध ज्ञात नहीं होता -- कम से कम मनुष्य के लिए वह अज्ञेय है । लेकिन कथा-साहित्य मनुष्य का रचा हुआ जगत है और परिमित

---

१ Aspects of Novel : E. M. Foster page 46.

२ प्रेमचन्द : "कुछ विचार", पृ०३०

३ .. .. .पृ०४६

होने के कारण सम्पूर्णत: हमारे सामने आ जाता है, और जहां वह हमारी मानवी न्याय-बुद्धि या अनुभूति का अतिक्रमण करता हुआ पाया जाता है । हम उसे दण्ड देने के लिए तैयार हो जाते हैं । कथा में अगर किसी को सुख प्राप्त होता है तो उसका कारण बताना होगा । यहां कोई चीख मर नहीं सकता, जब तक मानव न्याय-बुद्धि की मौत न माँगे । स्रष्टा को जनता की अदालत में अपनी हरएक कृति के लिए जवाब देना पड़ेगा । कला का रहस्य भ्रान्ति है, पर वह भ्रान्ति जिस पर यथार्थ का आवरण पड़ा हो[१] । साहित्य न तो जीवन का स्थूल यथार्थ ही है और न वह ऐसे स्थूल यथार्थ को अंकित करने वाला है, जैसा इतिहास । सच तो यह है कि साहित्य का यथार्थ सर्वांशत: जीवन का यथार्थ नहीं है, हो ही नहीं सकता । पहली बात तो यह है कि जीवन का स्थूल यथार्थ साहित्यकार के लिए अनेक सूक्ष्म मनोभावों का परिस्थिति और घटना के सम्बन्ध में परिवर्तित प्रतिक्रिया है । अत: साहित्यकार हर स्थूल यथार्थ के अध्ययन की अनिवार्य शर्त यह मानता है कि उसके सूक्ष्म मनोभावों को पकड़ा जाय । इतिहासकार के लिए यह एकदम ही जरूरी नहीं है । दूसरी बात यह है कि जीवन में जितना कुछ घटता है साहित्य में सब का सब उसी प्रकार नहीं समेटा जा सकता । कुछ प्रतिक्रियाओं को, कुछ घटनाओं को छांटना अनिवार्य हो जाता है और यह जो छांटने की प्रतिक्रिया है, वह साहित्यकार के जीवन से अनिवार्य रूप से सम्बद्ध हो जाती है । मनुष्य जाति के लिए मनुष्य ही सबसे विकट पहेली है, वह खुद अपनी ही समझ में नहीं आता । किसी-न-किसी रूप में वह अपनी ही आलोचना किया करता है-- अपने ही मनोरहस्य खोला करता है[२] । हेनरी हडसन का कहना है कि 'साहित्यकार मूलत: भाषा के माध्यम द्वारा जीवन का अनुभव अपनी रचनाओं में उड़ेलता है ।' ब्रेडले का कथन है कि जिस प्रकार शेक्सपियर को जीवन में (हेमलेट की रचना के पूर्व) लगातार कई सम्बन्धियों की मृत्यु का दु:ख देखना

---

१ प्रेमचन्द : 'कुछ विचार', पृ० ३२-३३

२ ,, : ,, पृ० ३०

पड़ा और थियेटर की नौकरी छूटने की भी उसे आशंका बनी रही, ठीक उसी प्रकार हेमलेट को भी सम्बन्धियों की मृत्यु का दु:ख सहना पड़ा और उसके पितृव्य स्वयं उसके पिता का बध करके हेमलेट के राज्याधिकार को अपहृत करना चाहते थे । इस प्रकार विचार करने पर ब्रेडले इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि सम्भवत: शेक्सपियर अपने जीवन और व्यक्तित्व को ही हेमलेट के रूप में अभिव्यक्त करना चाहता था ।[1] साहित्य को हू-ब-हू वैसा ही नहीं देखा जा सकता है जैसा दर्पण में । इसलिए साहित्य जीवन का दर्पण भी नहीं है । साहित्यकार कतिपय परिस्थितियों के बीच मनुष्य को रखकर देखता है और उन सम्भावनाओं को पकड़ता है, जिनके आधार पर दिखाई गई प्रतिक्रियाएं सम्भव हो सकती हैं । पाठक या श्रोता का उन प्रतिक्रियाओं में सहज विश्वास ही साहित्य का प्रकृत यथार्थ है । इसीलिए मूर्धन्य आलोचकों ने यह स्वीकार किया है कि कहानी हो या उपन्यास उसके कथानक की सफलता की पहली शर्त है, उसकी विश्वसनीयता । साहित्य में चरित्रों की यथार्थता के लिए यह आवश्यक है कि वह साहित्य के अपने नियमों का पालन करे । उपन्यास के सिलसिले में इस बात की चर्चा करते हुए फास्टर ने लिखा है --"Novel is a work of art with its own laws which are not of daily life and that a character in a novel is real when it leaves in accordance with such laws."[2]

साहित्यकार अपने चरित्रों से तादात्म्य का अनुभव करके ही उन्हें यथार्थ बना सकता है ।[3] "The character in a book is real only in the case when the novelist knows every thing about it."

वास्तविक जगत में हम एक-दूसरे को अच्छी तरह नहीं जानते हैं, इसका कारण यह है कि चाहकर भी हम अपनी सारी गुत्थियां न तो दूसरों को समझा सकते हैं और न बता ही सकते हैं । दूसरों के सामने हमारा एक रूप होता है और वस्तुत: हमारा एक दूसरा रूप भी वर्तमान रहता है । समाज में हमारा अभिन्न

---

१ डा० दशरथ ओझा : 'समीक्षा शास्त्र', पृ० २८
२ Aspects of Novel : E. M. Foster p. 61.
३ Aspects of Novel : E. M. Foster P. 61.

से अभिन्न मित्र भी इस बात का दावा नहीं कर सकता कि वह हमारे बारे में सब कुछ जानता है और अच्छी तरह जानता है । स्वयं हम अपने बारे में जितना जानते हैं क्या वह भी पूर्ण माना जा सकता है, तब भी समाज चलता है, दुनिया चलती है और सब कुछ चलता है । किन्तु कथा-साहित्य में यह सब कुछ नहीं चलता । वहां कथाकार को अपने चरित्र के बारे में सब कुछ जानना होता है, सब कुछ बताना होता है । 'कथा में अगर किसी को सुख प्राप्त होता है तो इसका कारण बताना होगा, दु:ख भी मिलता है तो उसका कारण बताना होगा।'[1] जिस चरित्र को वह बताना चाहता है, यदि उसका सब ज्ञान उसे अधूरा होता है तो वह चरित्र दूसरों को भी अधूरा लगता है । और यदि वह उसके बारे में सब कुछ बताने में असमर्थ है तो वह चरित्र अविश्वसनीय बन जाता है । कथा साहित्य में यह सुविधा है कि अपनी दृष्टि से हर साहित्यकार अपने चरित्र को भली-भांति जाने और अपने आयामों में उसे पूरी आस्था और सच्चाई के साथ उपस्थित करे । इसीलिए वास्तविक जीवन के धुंधले और पकड़ में आ आकर फिसल जाने वाले चरित्र भी कथा-साहित्य में इस तरह रखे जा सकते हैं कि वे स्पष्ट हों, स्पष्ट दीखें और कलाकार की पकड़ ज़बरदस्त मालूम हो । ऐसे चरित्रों के स्रष्टा और दृष्टा को इस बात का संतोष होता है कि उन्होंने जीवन का यथार्थ चरित्र पकड़ लिया है । हमारे जीवन का वह अंश जो साक्षियों द्वारा पुष्ट न होते हुए भी महत्वपूर्ण है , केवल कथा-साहित्य में ही विश्वसनीय हो सकता है । विक्षिप्त चरित्र जीवन में भूलते-भटकते कहीं मिल जाते हैं तो हमारा घबड़ा जाना स्वाभाविक है, किन्तु साहित्य में उन्हें पाकर हम घबड़ाते नहीं, उल्टे हमें लगता है कि हमारी बेचैनी यहां शान्त हो रही है, क्योंकि हम परत-पर-परत खोलकर विक्षिप्तता की जड़ पकड़ने का संतोष पाने लगते हैं ।

साहित्य में चरित्र-चित्रण की दृष्टि से क्रिया-कलापों का सबसे अधिक महत्व होता है । एक तरह से क्रिया-कलापों द्वारा ही साहित्य में चरित्रों की उद्भावना होती है । श्री जगदीश पाण्डेय ने अपने 'शील निरूपण : सिद्धान्त और विनियोग' शीर्षक पुस्तक में क्रिया-कलाप के आधार पर पात्रों के कुछ वर्गीकरण भी किए हैं, जो इस प्रकार हैं ।

---

१ प्रेमचन्द : 'कुछ विचार', पृ०३३

सहनशील चरित्र

१- सहनशील पहली श्रेणी के व्यक्ति आक्रामक विरोध समर्थ, अपना मार्ग द्वन्द्वों के बीच निर्धारित करने वाले,अपनी ज्वाला से स्वयं जलने वाले और कृत फल भोक्ता होते हैं । ये स्वधर्म परिचालित होते हैं और इनका ताण्डव किसी दूसरे के डमरू के डिमडिम का अनुगामी नहीं होता, बल्कि अपनी रागात्मक अनिवार्यता का होता है । इनकी रचना में वायु और तेज(अग्नि) के उपकरणों की कुछ इतनी प्रबलता रहती है कि जीवन-लीला के पर्यवसान तक अपनी सहिष्णुता,सामरिक उत्साह,स्वाभिमान के अदम्य रोष और भाविक तपस्या से वे श्रोता, पाठक या द्रष्टा के हृदय परएक करुणोदात्त पुरुषार्थ और विराट् भावोत्कर्ष के अमिट संस्कार छोड़ जाते हैं । दुखान्त नाटकों के वीर नायकों की गरिमा इसी में है ।"

ढाल से दीख पड़ने वाले चरित्र

२- ढाल से या छाया से दीख पड़ने वाले चरित्रों में ..... रामायण के सप्तर्षि हैं, सुग्रीव और बहुत अंश तक हनुमान भी है ।

सीता की सरलता राम के बनवास -विधान ब को सफल बनाती है । जार्ज बर्नार्ड शा की कर्कशा मार्जोरी के क तर्क-नखों की खरोंच के सामने मर्यादा पुरुषोत्तम का मर्यादा सौन्दर्य न टिकता ।शैव्या, डेस्टिमोना,दमयन्ती,की पूर्णत: अमानी सरलता का अहं का निरपेक्ष अभाव एक मधुर सौन्दर्य का आलोक छोड़ जाता है, परन्तु यह बात भी निर्विवाद है कि ये नायकों के मार्ग में फूल बनकर बरस पड़ी हैं । ये अधिकृत मनोवृत्ति की हैं और सबसे बड़ा दोष यह है कि अकृत या परकृत की फल-प्राप्ति इन्हें होती है । अकृताभ्यागमक की यह पद्धति हमारी न्याय-बुद्धि को आघात पहुंचाती है और विश्व-विनायक के प्रति रोष और भर्त्सना की भावना उत्पन्न कर हमें विक्षुब्ध करती है । .... जो भी हो शील की दृष्टि सेतत्त्वत: ऐसे

व्यक्तित्व तादात्म्य की चरमावस्था को प्राप्त होते हैं और इसलिए अपनी स्वतंत्र प्राणशीलता खो बैठते हैं ।'

काष्ठशील

३- 'इनके अतिरिक्त आधार काष्ठ-शील की अभिव्यक्ति कलाकार के पक्षपात-धर्म का परिणाम है । निहाई की आवश्यकता इसलिए होती है कि हथौड़े की चोट जलते हुए लोहे पर पड़ सके । छुरा तेज करने के लिए चमोटी की धार पर सान चढ़ाने के लिए,हथियार को तीक्ष्ण करने के लिए, शिलापट्टिका की आवश्यकता होती ही है । राम के लिए, प्रतिनायक,रावण ऐसी ही शिला-पट्टिका है ।'

शिविका रूढ़ शील

४- 'शिविकारूढ़ शील वह शील है जो पात्र के अपने कर्मों,वचनों से निर्मित न होकर अन्य पात्रों के मुल्यांकन श्रद्धा-प्रतिमाओं द्वारा अपनी आकृति प्राप्त करता है । जुलियस सीजर, ईर्ष्यालु कैसियस और श्रद्धालु एण्टनी तथा वीर जनता की प्रतिमाओं से बनता है, यहां तक कि सीजर भी जन-गण-मन में प्रतिबिम्बित अधिनायक और भाग्य विधाता की अपनी प्रतिमा को ही वास्तविक मानकर शील को नट शैली अपना लेता है और अपने लिए अन्य पुरुष का व्यवहार करता है । उसका अपना योगदान केवल कपट औदत्य का है ।' मनुष्य का स्थूल क्रिया-कलाप उनके चेतन,उपचेतन और अवचेतन मन से बंधा हुआ है इसलिए चरित्रों के अंकन में कलाकार को भीतर-बाहर सब ओर आंकना पड़ता है ।

दृष्टिकोण की भिन्नता के आधार पर चरित्रों की अनेक कोटियां बनाई जा सकती हैं । पहले वर्ग में वे पात्र आते हैं,जिन्हें हम गौण

---

१ जगदीश पाण्डेय : 'शील-निरूपण : सिद्धान्त और विनियोग',पृ०४,५,६।

पात्र और मुख्य पात्र कह सकते हं । दूसरे वर्ग में वे पात्र आते हैं जो व्यक्तिपरक मात्र और समूह परक पात्र हैं और तीसरे वर्ग के पात्रों को परिवर्तनशील और अपरिवर्तनशील माना जा सकता है । निस्सन्देह वर्गीकरण के अन्य अनेक आधार हो सकते हैं । किन्तु यहां मुख्य आधारों को ही ध्यान मेंरखा गया है । इस वर्गीकरण का यह भी अर्थ नहीं कि मुख्य पात्र व्यक्तिपरक पात्र न हो या वह परिवर्तनशील या अपरिवर्तनशील न हो । कोई चरित्र एक साथ ही तीनों कोटियों में आ सकता है या वह दो ही कोटियों में सीमित रह जा सकता है । यह कोटि-निर्धारण अध्ययन की सुविधा पर अधिक निर्भर है ।

सजीव व्यक्ति के तीन आयाम

एक सजीव व्यक्ति के तीन आयाम होते हैं । पात्रों की लम्बाई,चौड़ाई और मुटाई सब मिलाकर उन्हें वह व्यक्तित्व देती है, जिसे हम उसका स्वस्थ्य और पूर्ण व्यक्तित्व मान सकते हैं । केवल लम्बाई चौड़ाई वाला पात्र सपाट पात्र होता है । पात्रों की मांसलता के लिए यह आवश्यक भी है कि उसमें मुटाई भी हो । जब पात्र बिना किसी सिद्धान्त के किसी एक दिशा की ओर निरन्तर प्रेरित होता हुआ बढ़ता है अपने परिस्थितियों से कुछ सीखता समझता नहीं और अपने अनुभवों से कुछ लाभ नहीं उठाता तो ऐसे पात्रों को हम गतिशील मानकर भी पूर्ण चरित्र नहीं मान सकते । चरित्र की पूर्णता के लिए यह आवश्यक है कि परिस्थितियों पर विजय प्राप्त करने की चेष्टा वह भी ह उसमें दिखाई जा सके, परिस्थितियों से वह ऊपर उठे भी परिस्थितियों के साथ अवश्य बहे नहीं । इस तरह देखा जाय तो हर कथा-साहित्य में दो तरह के चरित्र अवश्य होते हैं । ऐसे चरित्र जो उसके मुख्य पात्र कहे जा सकते हैं और ऐसे पात्र जो उसके गौण पात्र कहे जा सकते हैं । साधारणतः उपन्यास में कुछ ही पात्र मुख्य पात्र होते हैं ,बाकी सभी पात्र गौण पात्र होते हैं । कहानी में बहुधा एक पात्र को मुख्य पात्र बनाया जा सकता है । यह नियम तो नहीं है किन्तु कहानी के लिए यह आसान

तो अवश्य है । मुख्य पात्रों में व्यक्तित्व के तीनों आयाम अवश्य रहते हैं । गौण पात्र में इसमें से कभी-कभी एक तथा कभी-कभी दो आयामों का अभाव होता है । आधुनिक कथा-साहित्य में गौण पात्रों में भी सभी आयामों से काम लेने की प्रथा चल पड़ी है अर्थात् मुख्य पात्र और गौण पात्र में आयामों का अन्तर नहीं होता । समस्त घटना-चक्र और उद्देश्य को देखते हुए उनके पारम्परिक महत्त्व का अन्तर होता है । आधुनिक कथाकार यह मानता है कि हर जन्म लेने वाले चरित्र का यह अधिकार है कि उसका उचित ढंग से पोषण हो और हर जन्म लेने वाले पिता का यह कर्तव्य है कि वह उन्हें विकास के समुचित साधन प्रदान करे । इसलिए आधुनिक कथाकार अपने कृतियों मे कम-से-कम पात्रों का समावेश करते हैं । उन्हें यह भय होता है कि एक बार जिस पात्र का उदय चाहे जिस किसी छोटे-मोटे कारण से हो जाता हो, उसका समुचित निर्वाह आसान नहीं है । इस दृष्टि से न जैनेन्द्र और अज्ञेय के कथा-साहित्य को देखना उचित होगा । इसके विपरीत प्रेमचन्द अपनी प्रारम्भिक कृतियों में एक तरह से `गोदान` को छोड़कर अपने सभी उपन्यासों में पात्रों के एक बड़े समूह को जन्म देते हैं, किन्तु वह सब का पोषण ठीक से नहीं कर पाते । उनके चरित्र घटना के पूरे प्रवाह के बीच बहुधा जो आत्म-हत्या कर लेते हैं या एकाएक जो सदा के लिए गायब हो जाते हैं या अकारण जो सन्यास ले लेते हैं, यह सब जनक के उत्तरदायित्व या कर्तव्य में त्रुटिमात्र ही है । गौण पात्रों को अविकसित, दुर्बल या निर्जीव छोड़ देना कलाकार की अक्षमता भी हो सकती है या उसकी बेइमानी भी हो सकती है । होता यह है कि मुख्य पात्रों के चित्रण में कलाकार इतना व्यस्त हो जाता है कि गौण पात्रों की ओर देखने की फुर्सत तक नहीं होती । अपनी समस्त सहानुभूति अपना सारा स्नेह, अपने हृदय का सम्पूर्ण रस उन्हीं में बांट देता है । गौण पात्रों की अपेक्षा सब मिलाकर कलाकृति को दोषग्रस्त बना देती है । सचेत पाठकों का ध्यान इन अविकसित पात्रों की ओर जाता ही है ।

किसी भी प्रकार के पात्रों के विवेचन के लिए हम आधार ढूंढते हैं और यह आधार वर्गीकरण होता है । किसी प्रकार का वर्गीकरण एक दुष्कर कार्य है और वर्गीकरण कभी पूर्ण वैज्ञानिक सत्य नहीं हो

सकता । अत: सुविधा के लिए पात्रों का निम्न ढंग से वर्गीकरण किया गया है --

(क) १- समूह परक चरित्र

समूह परक चरित्र पूरे समूह का प्रतिनिधित्व करता है । उसमें वे सारी विशेषताएं पाई जाती हैं,जो एक वर्ग या समूह में होती हैं । मजदूरों के वर्ग,किसानों के वर्ग इत्यादि का प्रतिनिधित्व प्राय: उपन्यासों में एक ही पात्र करता है । उसमें उस वर्ग के समस्त गुण-दोष विद्यमान रहते हैं । वह अपने वर्ग की आवाज उठाता है[1] । समूहपरक चरित्र कहीं भी आसानी से पहचाना जा सकता है । चाहे वह किसी भी उपन्यास या कहानी में हो वह बहुत कुछ एक तरह का ही होता है । मूलत: उसके चित्रण में समानता होती है ।

२- व्यक्तिपरक पात्र

इसमें व्यक्तिगत विशेषताएं होती हैं । यद्यपि मनुष्यों में स्थूल गुण-दोषों की समानता होती है, पर सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर यह स्पष्ट पता चलता है कि किसी-न-किसी गुण-दोष में मनुष्य एक-दूसरे से भिन्न है । यदि किसी में दया की अधिकता है तो दूसरे में क्रोध की । यदि कोई रागी है तो दूसरा विरागी । कोई योगी है तो कोई भोगी । इस प्रकार कुछ गुण या दोषों की अतिशयता के कारण मनुष्य दूसरे से अलग अपना एक व्यक्तित्व रखता है । यही अन्तर उपन्यास में व्यक्ति-प्रधान चरित्र की सृष्टि करता है[2] । व्यक्तिपरक पात्र का अपना व्यक्तित्व होता है इसलिए वह किसी और दूसरे पात्र के समान दिखाई नहीं देता । सबसे अलग वह पूर्ण इकाई होता है । उसकी विलक्षणता ही उसकी रचना की मूल प्रेरणा है । ऐसा पात्र बहुत दिनों तक याद रहता है । विलक्षण होने

---

१ डा० दशरथ ओझा : समीक्षा शास्त्र , पृ० १५६

२ ,, : ,, पृ० १५६

के कारण पाठक उसे जल्दी नहीं भूलता । व्यक्तिपरक चरित्रों के निर्माण में भी कतिपय बातों को ध्यान में रखना आवश्यक होता है । व्यक्ति की विलक्षणताएं स्थूल और सूक्ष्म दो कोटियों में बांटी जा सकती हैं । स्थूल विलक्षणताओं से मेरा मतलब उन वाह्य विलक्षणताओं से है, जो बोलने, चलने, पहनने, ओढ़ने, व खाने-पीने आदि आचरणगत विशिष्ट ढंगों से संबंधित है । सूक्ष्म विलक्षणताएं बहुत कुछ विचारगत और भावगत होती हैं । अजीब ढंग के कपड़े पहनाकर या विचित्र ढंग की भाषा को आधार बनाकर यदि कोई कलाकार व्यक्तिपरक चरित्र की विलक्षणता को उभारना चाहता है तो ऐसे प्रयास को हम कलात्मक नहीं मानेंगे । ये स्थूल विलक्षणताएं व्यक्तित्व की आन्तरिक प्रवृत्तियों से उत्पन्न नहीं भी हो सकती हैं और थोड़ी देर के लिए पाठक या दर्शक को चौंका देने के लिए पर्याप्त हों उनपर चिरस्थायी प्रभाव नहीं डाल सकती । वस्तुत: जीवन और जगत् को देखने की जो नयी दृष्टि किसी में होती है और उसको समझने का जो नये ढंग का प्रयास वह करता है, वह यदि उसके वाह्य कार्य-कलापों को विलक्षण बना दे तो विलक्षणता यही है । महात्मागांधी के हृदय की सरलता औरउदारता ही उनके जीवन के वाह्य कार्य-कलापों में प्रतिबिम्बित होती थी । इसीलिए महात्मा गांधी का व्यक्तित्व अपनी विलक्षणताओं के माध्यम से किसी पर स्थायी प्रभाव डालता था किन्तु आज ऐसे अनेक व्यक्ति हैं,जो महात्मा गांधी के वाह्य आचरणों का उसी रूपमें अनुकरण करते हैं । किन्तु अपने दर्शकों पर वैसा वैसा प्रभाव डाल सकने में सर्वथा असमर्थ हैं । यदि स्थूल विलक्षणताओं से व्यक्तिपरक चरित्र के लिए पर्याप्त साधन स्वीकार करें तो मनोरंजन गृहों में विदूषकों की भूमिका में आये चरित्र सबसे प्रभावशाली व्यक्तिपरक चरित्र हो सकते थे । किन्तु निस्सन्देह वे साहित्य के महत्वपूर्ण व्यक्ति -चरित्र नहीं हैं। अत: व्यक्तिपरक पात्र विलक्षण विशिष्ट मानसिक-गठन के आधार पर होते हैं ।

३- समूह और व्यक्तिपरक चरित्र

भारतीय साहित्यिक परम्परा में समूहपरक चरित्रों के निर्माण को प्रधानता मिलती है । वहां व्यक्ति की विलक्षणताओं का चित्रण समूह का प्रतिनिधि बनाए रखते हुए किया गया है । कालिदास का दुष्यन्त एक समूहपरक चरित्र है, किन्तु उसमें व्यक्ति परक चरित्र की विशेषताएं हैं । इस स्थिति को ध्यान में रखें तो इसी वर्गीकरण की कोटि में एक तीसरे प्रकार के चरित्र को मान्यता देनी होगी । ऐसा चरित्र समूहपरक होते हुए भी व्यक्तिपरक होता है या कहें व्यक्तिपरक होते हुए भी समूह परक । पहले के उदाहरण के लिए कालिदास का दुष्यन्त है, दूसरे का शेक्सपियर का `शाईलॉक`। `प्रत्येक महान चरित्र में इन (व्यक्ति और वर्ग) दोनों प्रकार के चरित्रों का अद्भुत मिश्रण होता है । वर्गयुक्त होने के कारण वह सत्य होता है, व्यक्तित्व युक्त होने के कारण विश्वसनीय ।`[1] समूहपरक चरित्रों का निर्माण कला की दृष्टि से अपेक्षाकृत सरल माना जाता है, इससे अधिक कठिन व्यक्तिपरक चरित्रों का निर्माण है जो एक साथ ही समूह की भावना भी उत्पन्न करते हैं और अपने व्यक्तित्व की विलक्षण विशेषताओं का भी परिचय भी देते हैं । ऐसे चरित्र विश्व-साहित्य में इने-गिने हैं । सही अर्थ में ऐसे चरित्र ही सार्वकालिक और सार्वजनिक होते हैं । देश और काल की सीमाओं में बंधे नहीं रहते । वे मानव जीवन की विराट् प्रवहमान धारा की एक पूर्ण और विशिष्ट लहर का प्रतिनिधित्व करते हैं । उनका स्थान विश्व-साहित्य में सुरक्षित रहता है ।

(ख) अपरिवर्तनशील चरित्र

चरित्रों के अंकन के लिए सामान्यतः साहित्यकार कतिपय परिस्थितियों और घटनाओं की योजना करता है । उनके बीच चरित्रों

---

[1] "Every great character of fiction, must exhibit, therefore an intimate combination of the typical and individual traits. It is through being typical that the character is true; it is through being individual that the character is convincing."

डा० दशरथ ओझा : `समीक्षा शास्त्र`, पृ० १५६

को रखकर वह उनकी प्रतिक्रियाएं देखता-समझता है और उन्हें अभिव्यक्त करता है । ऐसे पात्र जो परिस्थितियों के सम्पर्क में हरदम एक ही प्रतिक्रिया उपस्थित करते हैं, अपरिवर्तनशील (flat) पात्र कहे जाते हैं । ऐसे चरित्र परिस्थितियों के बदलने पर भी कभी बदलते नहीं । एक ही परिस्थिति एवं काल के अन्तर पर खड़ी होकर भी उनमें कोई अन्तर नहीं ले आती । ऐसे पात्रों की विशेषताएं भी निश्चित होती हैं । उनके बारे में विश्वास के साथ यह कहा जा सकता है कि उनकी गतिविधि भी क्या होगी । बहुधा ऐसे पात्र एक ही विचार या क्रिया को केन्द्र बनाकर निर्मित होते हैं[1] । प्रारम्भ से अन्त तक ऐसे चरित्रों में कोई विकास नहीं होता और न कोई परिवर्तन ही होता है । चाहे कितनी विपत्ति में झकझोरे जाएं, पर वे अपना मार्ग नहीं बदल सकते । सुख चाहे उन्हें कितना ही यशस्वी बना दें, पर वे अपने गुणों को स्थिर बनाए रखते हैं, कभी वासना की बू से प्रभावित नहीं होने देते[2] ।

२- परिवर्तनशील चरित्र

परिवर्तनशील या विकसित चरित्र (Round.) परिस्थितियों के सम्पर्क में भिन्न प्रतिक्रियाएं देते हैं और भीतर और बाहर प्रतिक्रियाओं का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है अर्थात् उनका विकास हरदम होता रहता है, वे हरदम सीखते और अनुकूल बनते रहते हैं । उनमें किसी सिद्धांत या क्रिया के लिए कोई निश्चित आग्रह नहीं होता । प्रत्येक परिस्थिति को वे तत्सम्बन्धी विशिष्ट मूल्य में स्वीकार करते हैं । परिवर्तनशील चरित्रों के संबंध में परिस्थितियों को देखकर हम[3] प्रतिक्रिया के सम्बन्ध में भविष्यवाणी नहीं कर सकते । फारस्टर के लेखानुसार परिवर्तनशील चरित्र की ये अनिवार्य शर्तें हैं--

---

१ "They are constructed round a single idea or quality." E. M. Foster : 'Aspects of Novel' p. 65

२ डा० दशरथ ओझा : 'समीक्षा शास्त्र', पृ० १५६

३ "The taste of the round character is whether it is capable of surprising in a convincing way. If it never surprises, it is flat. If it does convince it is flat pretending to be round." — Aspects of Novel : E. M. Foster, p. 75.

पहली शर्त यह है कि उसे परिस्थितियों के सम्पर्क में परिवर्तित होना चाहिए। दूसरी शर्त यह है कि जिन परिस्थितियों के सन्दर्भ में चरित्रों में परिवर्तन दिखाया जाता है, उन परिस्थितियों में वैसे परिवर्तन की सारी संभावनाएं होनी चाहिए। परिस्थितियों के साथ चरित्रों में परिवर्तन दिखाना भर ही चरित्र में गतिशीलता या परिवर्तनशीलता का पर्याप्त कारण नहीं माना जा सकता। बहुधा परिस्थितियां बदल कर जिन पात्रों में परिवर्तन दिखाया जाता है, वह हमें विश्वस्त नहीं मालूम होता। उदाहरण के लिए जीवन भर शराब पीने वाला कोई व्यक्ति किसी उपदेशक के वाक्य से इस प्रकार प्रभावित दिखाया जाता है कि वह उसी क्षण शराब न पीने की प्रतिज्ञा करता है और फिर कभी नहीं पीता। ऐसा हो सकता है, किन्तु ऐसा हो सके इसके लिए साहित्य में चरित्र-निर्माता को पहले से ही सम्भावनाओं का चित्रण करना पड़ता है। यह दिखाना पड़ता है कि जिस व्यक्ति में वह यह परिवर्तन दिखा रहा है, उसमें इस तरह सुधर जाने के तत्व वर्तमान थे। उन तत्वों को विकसित होने का कोई अवसर नहीं मिल रहा था। उन्हें कोई सच्चा प्रेरणा नहीं मिल रही थी। कलाकार यदि इन सम्भावनाओं के चित्रण में सफल नहीं हुआ या इन सम्भावनाओं का चित्रण किया ही नहीं तो चरित्र में वह परिवर्तन आकस्मिक मालूम होता है और हमें उसके परिवर्तन में विश्वास नहीं होता। ऐसे चरित्र परिवर्तनशील चरित्र ऊपर से ही माने जा सकते हैं, उनका यह परिवर्तन कृत्रिम परिवर्तन है। गहराई में सोचने पर हम ऐसे चरित्र को परिवर्तनशील चरित्र मानने को स्वीकार नहीं करेंगे।

<u>पुरुष चरित्र</u> -- साहित्यकार जितने पात्रों की सृष्टि करता है। उनके वर्गीकरण का एक और आधार हो सकता है, जिस आधार में हम उन्हें दो वर्गों में बांट सकते हैं-- पुरुष वर्ग के चरित्र और स्त्री वर्ग के चरित्र। इस वर्गीकरण की सार्थकता इस बात में है कि स्त्री और पुरुष के मनोविज्ञान अलग-अलग हैं। हर देश और समाज की परम्परा, विकास-प्रक्रिया, शिक्षा-स्तर, भौतिक समृद्धि और आध्यात्मिक उपलब्धि के आधार पर वहां स्त्री और पुरुष के पारस्परिक सम्बन्धों का निर्धारण होता है और उनके पृथक् व्यक्तित्व का भी आंकलन किया

जा सकता है । किसी भी कलाकार द्वारा प्रस्तुत पुरुष पात्र का सही-सही मूल्यांकन तभी हो सकता है, जब हम उन सभी चीजों से परिचित हों जो उस पुरुष के चरित्र के निर्माण में साधन या माध्यम बनी हैं । मानव शास्त्र के अध्ययन के सिलसिले में ऐसे भी परिवार आए हैं, जहां पुरुषों की स्थिति हमारे समाज से भिन्न होती है । मानव-शास्त्रियों ने ऐसे परिवार का नाम 'मातृ-सत्ताक-परिवार' रखा है । इसमें पति पत्नी के घर आ जाता है,पत्नी के साथ रहता है, परन्तु बच्चों पर माता का ही अधिकार होता है ।उन लोगों का अधिकार होता है,जिनका बच्चों की मां के रुधिर से नाता है । लड़की अपने मां-बाप के घर रहती है, उसके बच्चों की देख-माल लड़की का भाई लड़की के माता-पिता करते हैं ।..... इस प्रकार के परिवार में माता का निवासस्थान परिवार का केन्द्र हो जाता है, इसलिए स्थान की दृष्टि से यह 'मातृ-स्थानी' (Matrilocal) कहाता है । इसमें वंश परम्परा माता के नाम से चलती है।[1] ऐसे समाज में पुरुषों का मनोविज्ञान पितृ-सत्ताक-परिवार के पुरुषों के मनोविज्ञान से भिन्न होगा । यहां पुरुषों का स्थान नगण्य होता है । अत:उसके शिशु के जन्म के समय वह ऐसा व्यवहार करता है कि लोगों का ध्यान उसकी ओर जाय तथा शिशु के पिता होने का गर्व उसे प्राप्त हो ।' सन्तान होने पर पत्नी शय्यारूढ़ हो जाती है, कई जातियों में सन्तान होने पर पति को भी विशेष तौर पर व्यवहार करना पड़ता है । वह भी पत्नी की तरह अपने को रोगी-सा दिखाने लगता है । इस प्रकार के व्यवहार को 'पितृ-प्रतिबन्ध' (Couvade) कहा जाता है । वह काम-धंधे पर नहीं जाता । बीमारों का-सा खाना खाता है, उसके लिए कई बातें वर्जित मानी जाती हैं।[2] इसका कारण बताते हुए कुछ मानव-शास्त्रियों का कहना है कि 'पति की स्थिति अपने सास-श्वसुर के यहां नगण्य थी, उस समय यह बताने की आवश्यकता होती थी कि अमुक व्यक्ति सन्तान का पिता है,क्योंकि लड़की के मां-बाप के यहां पति की तरफ तो किसी का ध्यान

----

१ प्रो० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार : 'मानव शास्त्र',पृ०३८६

२ ,, ,, : ,, पृ०४४३

नहीं जाता था । पति के इस प्रकार के व्यवहार से सब को पति के घर में सत्ता का मान होता रहता था ।[1] किसी देश या समाज के पुरुष पात्र का निर्माण भी सब समझकर ही किया जाता है । ठीक यही स्थिति स्त्री-चरित्र के निर्माण और मूल्यांकन की भी है । जिस देश में नारी की शिक्षा पर ध्यान नहीं दिया गया, जिस समाज में उसे पर्याप्त प्रतिष्ठा नहीं दी गई और जहां उसके चिन्तन और कार्य-कलापों को पुरुषों की तरह स्वतंत्रता नहीं प्रदान की गई । वहां की स्त्रियों में कुछ ऐसी विशेषताएं निश्चित रूप में होंगी जो अन्य स्त्रियों की विशेषताओं से भिन्न होंगी । जिन्हें समुचित शिक्षा दी गई है, जिनका समाज में पुरुषों की तरह आदर है और जिन्हें अपने सम्बन्ध में सोचने और निर्णय लेने का पूरा अधिकार है । किसी भी चरित्र के निर्माण और विकास में परम्पराओं और रूढ़ियों का निश्चित हाथ होता है । पुरुष और स्त्री पर इन परम्पराओं और रूढ़ियों का प्रभाव समान नहीं होता, इसका कारण चाहे इनकी अशिक्षा हो या जीवन में समान अवसर की उपलब्धि किन्तु यह सच है कि एक ही समाज में एक ही प्रकार की रूढ़ियों और परम्पराओं में पलकर पुरुष और स्त्रियों के चारित्रिक विकास में अन्तर होता है । कम-से-कम भारतीय समाज में यह बात बहुत दूर तक सही है ।

स्त्री चरित्र -- भारतीय समाज में आज भी स्त्रियों का विकास पुरुषों के समकक्ष नहीं हो सका है । स्त्रियां अनेक दृष्टियों से हीन मानी जाती हैं । उन्हें शिक्षा का उचित अवसर नहीं दिया जाता । उन्हें अनेक सामाजिक बन्धनों को स्वीकार करना पड़ता है । इनकी प्रगति के मार्ग में सामाजिक रूढ़ियां और अन्धविश्वास रोड़े अटकाते हैं । सिद्धान्तत: यह मान लेने पर भी स्त्रियों और पुरुषों का अधिकार गणतंत्र में समान है, व्यवहार में अब भी इन दोनों वर्गों में अनेक असमानताएं बरती जाती हैं । अत: एक ही घटना में स्त्री और पुरुष की भिन्न प्रतिक्रिया सम्भव है । भारतीय चिन्तन-धारा में स्त्री और पुरुष के तात्विक अन्तर को हरदम महत्व दिया जाता रहा है । दया, माया,

---

1 प्रो० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार : मानव शास्त्र, पृ० ४४३

ममता, मधुरिमा, अगाध विश्वास, धैर्य, सहानुभूति आदि विशेषताएं पुरुष की अपेक्षा स्त्री में अधिक मानी जाती है । दूसरी ओर स्त्री की कुछ अन्य विशेषताओं के सम्बन्ध में प्रत्येक देश और समाज की अपनी परम्पराएं बनी होती हैं । उदाहरण के लिए भारतीय समाज में यह जनश्रुति प्रचलित है कि पुरुष के भाग्य को और त्रिया के चरित्र कोई नहीं जानता --

त्रिया चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं,
देवो न जानाति कुतो मनुष्यः ।।

इसीलिए कलाकार के मन पर पुरुष और स्त्रियों के चरित्रांकन के समय क्षीण रूपमें ही सही, अनेक रूढ़ियों और विश्वासों की छाया पड़ती रहती है । बहुत कम ऐसे कलाकार होते हैं, जो इन सब बातों से मुक्त होकर एक नई दृष्टि से सब कुछ देख सकने में समर्थ हों ।

शिशु-चरित्र -- इसी प्रकार चरित्रों का एक पृथक् वर्ग शिशु-चरित्र वर्ग भी माना जा सकता है । जन्म से लेकर आठ वर्ष तक की आयु वाले बच्चे को शिशु मानते हैं । ८ वर्ष से १६ वर्ष तक की आयु वाले बच्चे को बालक वर्ग में रखते हैं और ११ से १५ वर्ष के बच्चे को किशोर वर्ग में रखते हैं । मैंने सुविधा की दृष्टि से शिशु वर्ग में जन्म से लेकर १६ वर्ष तक के बच्चे को परिगणित कर लिया है । क्योंकि शिशु के मनोविज्ञान की परिणति उसकी अवस्था के बाद होता है ।

शिशु की मुख्य विशेषताएं, उनकी आरम्भिक बाल-लीलाएं, उनका धीरे-धीरे उलटने-पलटने लायक बनना, रेंगना, धीरे-धीरे चलना, बोलना और उसका स्वर फूटना और बोलने का अभ्यास बढ़ना ही उसके जीवन की मुख्य घटनाएं मानी जा सकती हैं । जीवन के अन्य उलझे हुए क्रिया-कलापों से वह नितान्त अनभिज्ञ होता है । उसमें किसी तरह का कोई मनोविकार नहीं होता । अतः उसे बहुत कुछ साफ, निर्मल और पवित्र माना जाता है । ऐसे शिशु का सम्बन्ध समाज और देश से अधिक अपने परिवार से होता है, इसीलिए बहुधा पारिवारिक जीवन की घटनाएं ऐसे ही शिशु को केन्द्र बनाकर नियोजित होती हैं।

ऐसे शिशु-चरित्र का सम्बन्ध माता-पिता की भावनाओं या उससे कुछ और आगे बढ़कर भाई-बहन सगे सम्बन्धियों से सम्बद्ध होता है । अधिक-से-अधिक इस शिशु चरित्र का दायरा अड़ोस-पड़ोस तक फैलता है या अपने पूरे गांव को समेट लें सकता है । मनोवैज्ञानिक दृष्टि से इस आयु वर्ग के शिशु का पृथक् अध्ययन प्रस्तुत किया गया है ।

२- बालक वर्ग

इस वर्ग का शिशु-चरित्र अपने परिवेश और अपने वातावरण के कारण शिशु वर्ग के चरित्रों से भिन्न हो जाता है । उसके जीवन की मुख्य घटनाएं उसका गांव के खेत-खलिहानों में घूमना, खेलना-कूदना या शहर की गलियों-बाजारों में फेरे लगाना अथवा प्रारम्भिक पाठशाला में प्रवेश करना आदि होता है । वह अपने चारों ओर के जीवन और समाज को देखना शुरू कर देता है और उसके प्रति उसमें जिज्ञासा और कौतूहल के भाव जगने लगते हैं । उसके पास सवालों का एक बड़ा खजाना होता है और उत्तर की गहरी प्यास । वह जीवन की जटिलताओं को समझता तो नहीं, किन्तु उसे ऐसा लगने लगता है कि वह सीमित नहीं है और जो कुछ वह देखता है उन सब को बहुत आसानी से जाना नहीं जा सकता । उसमें चिन्तन की प्रारम्भिक प्रक्रिया शुरू हो जाती है और उसे लगता है कि उसे अब बहुत जल्द बड़ा हो जाना चाहिए । उसके जीवन की घटनाएं अनेक सामाजिक,आर्थिक और राष्ट्रीय समस्याओं को स्पर्श करती चलती हैं, वह केवल परिवार का नहीं, केवल एक समाज का नहीं,वरन् राष्ट्र का छोटा ही सही एक इकाई बन चुका होता है । उसके जीवन की क्रिया - प्रतिक्रिया अनेक दूसरी-दूसरी क्रिया-प्रतिक्रियाओं से उलझने लगती हैं कि उसपर राष्ट्र के चिन्तकों को ध्यान देना पड़ता है ।

३- किशोर वर्ग

किशोर वर्ग में आने वाला शिशु-चरित्र बहुत कुछ जीवन में प्रवेश कर चुका होता है । वह जीवन की समस्याओं को समझने लगता है । उसे जीवन की जटिलताओं का अनुमान हो जाता है । वह व्यक्ति की

सीमाओं और उपलब्धियों से परिचित हो जाता ह । वह जानता है कि जीवन में अभाव भी है और उस अभाव को दूर करने के साधन सबको उपलब्ध कभी नहीं हो सकते । जीवन की कटुता उसके हृदय को बड़ी बेरहमी से बेधती है । समाज के बन्धन उसे बेतरह खलते हैं । शायद यह यथार्थ जीवन की सीमाएं हैं और उसका अनगढ़ रूप कि वह भावनाओं के जगत में विचरने लग जाता है । उसके सपनों की एक रंगीन दुनिया होती है । वह सब कुछ सुन्दर देखना चाहता है,सुन्दर पाना चाहता है । वह जाति का, समाज का, देश का, कर्णधार बनने की सामर्थ्य विकसित करने लगता है । वह किसी भी राष्ट्र की सच्ची सम्पत्ति है । उसके बनने और बिगड़ने से राष्ट्र बनता और बिगड़ता है । उसका जीवन अनेकानेक आर्थिक,राजनैतिक,सामाजिक और सांस्कृतिक समस्याओं का केन्द्र-बिन्दु होता है । वह उगता हुआ गुलाब होता है,जो यदि ठीक से खिल सका तो अपने पूर्ण वातावरण को सुगन्धित कर सकता है और यदि असमय ही मुरझा गया तो खिन्नता,विवशता और विषाद की एक सिसकी बनकर सबको बेध देता है ।

किसी भी देश के शिशु,बालक और किशोर-चरित्रों का निर्माण उस देश की सामाजिक,आर्थिक,राजनीतिक और सांस्कृतिक स्थिति को ध्यान में रखकर ही हो सकता है । आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा, राजनीतिक दृष्टि से पराधीन और सांस्कृतिक दृष्टि से अविकसित देश के शिशु-चरित्र इन सभी दृष्टियों से उन्नत देशों के शिशु-चरित्र से भिन्न होते हैं । उनका सारा वातावरण परिवेश और परिस्थितियां इतनी भिन्न होती हैं कि एक ही वर्ग के किन्तु भिन्न देशों के शिशु-चरित्रों में स्पष्टतः अन्तर मिलता है ।यही नहीं एक ही देश में भिन्न-भिन्न वर्गों के शिशु-चरित्रों में अन्तर होना अवश्यम्भावी है ।

-o-

चतुर्थ अध्याय

-0-

शिशु-पात्रों का वैविध्य

(क) सामाजिक और आर्थिक-स्तर

(१) उच्च-वर्ग के शिशु-पात्र

(२) मध्य-वर्ग के शिशु-पात्र

(३) निम्न वर्ग के शिशु-पात्र

(ख) ग्राम एवं नगर

(ग) पारिवारिक स्तर

परिवार का रूप : संयुक्त, वियुक्त

(१) संस्कार : कुटुम्ब की परम्पराएं या मान्यताएं

अ- धर्म

ब- समाज

स- व्यक्ति

(२) प्रभाव : वातावरण

चतुर्थ अध्याय

-0-

शिशु-पात्रों का वैविध्य

शिशु-वर्ग की विविधता का आधार वह परिवार और समाज होता है, जिसमें शिशु के संस्कार और जीवन के विकास की स्थितियां आती हैं। एक ही समय में उत्पन्न होने वाले शिशुओं के परिवार विभिन्न जातीय और वंशीय होंगे तो उनके मनोभाव भी अलग-अलग होंगे। जाति की मान्यताएं, समाज की परम्परा और वंश के संस्कार शिशुओं के मनोविज्ञान में अत्यन्त क्रियाशील हो जाते हैं और उनके जीवन की विविधता में पृष्ठभूमि का कार्य करते हैं। जिस प्रकार एक ही पौधे का बीज भिन्न-भिन्न प्रकार की भूमि या जलवायु में फूलों या फलों के रंग व स्वाद में परिवर्तन ला देते हैं, उसी प्रकार समाज और परिवार की विविधता में शिशु का स्वभाव, आचरण और क्रिया-कलाप भिन्न हो जाते हैं। इस सन्दर्भ में सबसे पहले समाज पर विचार करना आवश्यक होगा।

(क) सामाजिक और आर्थिक -स्तर

सामाजिक प्रतिष्ठा और आर्थिक स्तर के अनुरूप व्यक्ति का समाज में स्थान निर्धारित होता है। जिस समय सामन्तवादी व्यवस्था थी, उस समय समाज में दो ही वर्ग थे। एक तो उच्च वर्ग और दूसरे को निम्नवर्ग कहा जा सकता है। वस्तुत: इस वर्गीकरण का आधार आर्थिक है। उच्च-वर्ग के व्यक्ति वे थे जो शासन में अधिकार रखते थे, जिनके पास सत्ता थी और जो वस्तुत: उपभोग की समस्त सामग्रियों के उपभोक्ता थे। ऐसे लोग समाज में मुट्ठी भर थे। दूसरे वर्ग के लोग उत्पादक थे, वे अन्न उपजाते थे, खेत-खलिहानों में काम करते थे एवं उच्च-वर्ग की सुख-सुविधा के साधन जुटाते थे। उनका जीवन निरन्तर

परिश्रम में कट जाता था, किन्तु उन्हें कभी परिश्रम का फल भोगने का अवसर ही नहीं मिलता था । यह वर्ग मुख्यत: किसान वर्ग था । सामंतवादी व्यवस्था में सामाजिक प्रतिष्ठा के अनुरूप समाज में वर्गीकरण का एक दूसरा रूप भी देखने को मिलता है । इस वर्गीकरण का आधार रूढ़ियों और परम्पराओं पर टिका था । इसे बहुत कुछ धर्म और राज्य का संरक्षण प्राप्त था । इसके अनुसार भारतीय समाज में चतुर्वर्ण विभाजन को मान्यता दी गई थी । समाज में सबसे प्रतिष्ठित, ब्राह्मण को माना जाता था । इसके बाद क्षत्रिय का स्थान आता था । उसके नीचे वैश्य का स्थान और सबसे नीचे शूद्र माने जाते थे । ब्राह्मण पुरोहित वर्ग था । धर्म का नियामक वर्ग था । वह विद्या के अर्जन और वितरण का एकाधिकारी था । क्षत्रिय शासक वर्ग था । वह राज्य में शान्ति व्यवस्था का उत्तरदायी था । उसके पास रण-कौशल और बाहुबल था । अधिकारी वर्ग होकर भी वह ब्राह्मणों को अपने से अधिक प्रतिष्ठा देता था । वैश्यों का वर्ग व्यापारी वर्ग था, वह राष्ट्र के लिए धन कमाता था । राष्ट्र को समृद्ध करता था और उत्पादित वस्तुओं के वितरण का साधन था । शूद्र सबकी सेवा करने वाला वर्ग था । सेवा-वृत्ति के कारण उसे सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं थी । भाग्यवाद और प्रारब्ध तथा परम्परावाद में विश्वास करने के कारण भारतीय समाज में यह वर्ग या वर्ण व्यवस्था किसी-न-किसी रूप में आज तक चलती आ रही है । आधुनिक काल में अनेक परिवर्तनों से यह व्यवस्था छिन्न-भिन्न होने लग गई है, किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि निकटभविष्य में भारतीय साधारण जनता के बीच इसकी मान्यता एकदम नहीं रह जायगी ।

पूंजीवादी व्यवस्था

पूंजीवादी व्यवस्था ने समाज में अर्थ को प्रधान कर दिया । समाज में व्यक्ति का स्थान सामाजिक-प्रतिष्ठा के अनुकूल नहीं, वरन् आर्थिक स्तर के आधार पर निर्धारित होने लगा । मुगल साम्राज्य के पतन के पश्चात् अंग्रेजों के शासन का आविर्भाव हुआ और उसके साथ ही भारतवर्ष में पूंजीवाद ने पदार्पण किया । पूंजीवाद का बल औद्योगीकरण पर रहा । पाश्चात्य देशों में सामाजिक वर्गों के आर्थिक

निर्धारण के जो मानदण्ड बनाए गए, वे उसी रूप में भारतवर्ष में स्वीकृत नहीं हुए ,इसके कई कारण थे । पाश्चात्य देशों में औद्योगीकरण की प्रक्रिया निर्बाध चलती हुई एक परिणति तक पहुंची । उसने फ्यूडल (सामन्तवादी) व्यवस्था के सामाजिक व्यवस्था के मानदण्डों को मूलत: परिवर्तित कर दिया और जिन नये मानदण्डों का सृजन किया, वे पूर्णत: प्रतिष्ठित हो गए । सामाजिक स्थिति का निर्धारण व्यक्ति की चल-अचल सम्पत्ति करने लगी । आगे चलकर धनवान व्यक्ति के परिवार वाले स्वभावत: सम्पत्ति के अधिकारी बनते रहे और इस तरह सामाजिक प्रतिष्ठा का आधार पैतृक सम्पत्ति बनती रह गई । उदाहरण के लिए इंगलैण्ड के `लार्ड' परिवार का नामोल्लेख किया जा सकता है । पाश्चात्य देशों में यह प्रक्रिया इतनी पूर्ण हुई कि वहां सामाजिक स्थिति के लिए दूसरे आधार बने ही नहीं, किन्तु भारतवर्ष में यह स्थिति भिन्न हुई । भारतवर्ष प्रधानत: कृषि-प्रधान देश रहा है । औद्योगीकरण की पश्चिमी प्रक्रिया को यहां पूरी सफलता नहीं मिली । एक तो भारत वर्ष की अनेक स्थितियों को देखते हुए यहाँ `कुटीर शिल्प' ही उपयुक्त थे । और उनका निरन्तर विकास हो रहा था, दूसरे, पाश्चात्य देशों की तरह अपने अभाव और आवश्यकता से प्रेरित होकर उस कोटि के औद्योगीकरण की ओर बढ़ने की बाध्यता भी नहीं थी । बाहर से आने वाले अंग्रेज शासकों की नीति ने भी भारतीय औद्योगीकरण को पश्चिमी साँचे में ढलने नहीं दिया । अंग्रेजों की नीति थी,भारतवर्ष को कच्चे माल का क्षेत्र बनाना और यहां से कच्चेमाल ले जाकर माल तैयार करके उस माल को भारत लाकर खपाना । उन्होंने इस नीति का पालन तब तक बड़ी सतर्कता से किया , जब तक परिस्थितियां इसके [illegible] हुई ।

<u>भारत में औद्योगीकरण का विकास</u>

प्रथम महायुद्ध के अवसर पर उन्हें भारत के औद्योगिक विकास की दिशा में सोचना पड़ा । यहां अनेक कल-कारखानों को खोलने की व्यवस्था करनी पड़ी । प्रथम महायुद्ध के

बाद से भारत में निरन्तर औद्योगीकरण की प्रक्रिया तीव्र होती रही है । आज की हमारी राष्ट्रीय सरकार इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य कर रही है ।

एक तो इस औद्योगीकरण की धीमी प्रगति के कारण और दूसरे कृषि प्रधान देश की परम्परा रूढ़ि सामाजिक व्यवस्था के कारण पूंजीवाद, भारतीय समाज में, व्यक्ति के सामाजिक स्तर का निर्धारण, मात्र अर्थ के आधार पर करने में असमर्थ रहा । एक ओर तो इस समाज में प्रतिष्ठित चतुर्वर्ण की धारणा बनी ही रही, दूसरी ओर पूंजीवाद द्वारा उपस्थित आर्थिक आधार पर सामाजिक प्रतिष्ठा की धारणा स्थान बनाने लगी । भारतीय सामाजिक ढाँचे को समझने के लिए इन दोनों धारणाओं की पारस्परिक क्रिया-प्रतिक्रियाओं को समझना आवश्यक है । पाश्चात्य आर्थिक मानदण्ड के आधार पर एकबारगी भारतीय समाज का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता । इन मुख्य धारणाओं के भीतर अनेक छोटी-मोटी अवान्तर धारणाएं भी काम करती रही हैं । इन सब का सूक्ष्म विश्लेषण और अध्ययन आवश्यक है, किन्तु आज यह स्थिति बहुत कुछ स्पष्ट होती जा रही है कि पूंजीवाद भारतीय समाज को उसी रूप में विभाजित कर रहा है, जिस रूप में उसने आज से बहुत दिन पहले पाश्चात्य देशों को वर्गीकृत किया था । पूंजीवाद व्यवस्था समाज को तीन भागों में विभक्त करती है--

(१) बुर्जुआ-वर्ग

(२) मध्य-वर्ग

(३) निम्न-वर्ग

(१) <u>बुर्जुआ वर्ग</u>

आधुनिक समाज में जिसे हम बुर्जुआ-वर्ग कहते हैं, वह वस्तुत: सामन्तवादी समाज का भोक्तावर्ग ही है । आर्थिक दृष्टि से वे सम्पत्ति के शिखर पर आसीन हैं । इनके पास आवश्यकता से कहीं अधिक धन होता है । इस धन के उपार्जन में न तो उन्हें बुद्धि से काम लेना होता है, न शरीर से । इनकी सम्पत्ति उस समुद्र की तरह होती है, जिसमें असंख्य नदियां अनिवार्यत: अनन्त जलराशि उड़ेलती रहती हैं । इनका धन धन कमाता है । यह वर्ग चूंकि पूंजीवादी

व्यवस्था में वस्तुओं के उत्पादन, वितरण और उपभोग की समस्त क्रियाओं पर नियन्त्रण रखता है, सबपर उसका अबाध अधिकार होता है, इसलिए वह समाज में सबसे ऊपर प्रतिष्ठित रहता है। सामन्तवादी व्यवस्था में समाज का उच्च वर्ग कला और साहित्य का पोषक और संरक्षक वर्ग था किन्तु पुंजीवादी व्यवस्था में उसका कोई सम्बन्ध इनसे नहीं रहा अर्थात् साहित्य और कला के पोषण और संरक्षण के लिए भी मध्यवर्ग की ओर देखना पड़ा।

बुर्जुवा वर्ग चूंकि किसी तरह का शारीरिक या मानसिक परिश्रम नहीं करता, इसीलिए वह जीवन के परिश्रम से अनवगत होता है। जीवन के प्रति उसका सारा दृष्टिकोण काल्पनिक और रोमानी होता है। उसकी अभिलाषा काल्पनिक होती है, उसकी इच्छाएं अनन्त होती हैं और कई अर्थों में वायव्य भी। उदाहरण के लिए सत्ता उनके हाथ में होती है। जीवन की मौलिक आवश्यकताओं पर उनका एकाधिकार होता है अतः समाज को वे अपने स्वार्थ को ध्यान रखकर बनाते बिगाड़ते हैं। समाजवादी अर्थ व्यवस्थाएं इसलिए इस प्रकार के किसी उच्च वर्ग का अस्तित्व नहीं स्वीकार करती हैं। समाज में वर्ग रहें यह उनकी मान्यता नहीं। समाजवाद, वर्गहीन समाज की कल्पना करता है। जीवन की आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन, वितरण और उपभोग पर वह समाज के प्रत्येक सदस्य का समान अधिकार मानता है। समाज में वर्गों की उपस्थिति ही संघर्ष का मूल कारण है। जब तक समाज में वर्ग रहेंगे तब तक संघर्ष भी रहेगा।

(२) मध्यवर्ग

मध्य वर्ग पुंजीवादी-व्यवस्था की अपनी देन है। सामन्तवादी व्यवस्था में दो वर्ग वर्तमान थे ही, उच्च वर्ग और निम्न वर्ग। किन्तु वहां मध्य वर्ग नहीं था। उस समय जमींदार और किसान का सम्बन्ध सीधा था। उपभोक्ता वर्ग और उत्पादक वर्ग के बीच

कोई तीसरी शक्ति नहीं थी । शासक और शासित एक-दूसरे से साथे जुड़े थे । किन्तु पूंजीवादी व्यवस्था ने समाज को जटिल बना दिया । दो वर्गों का सम्बन्ध सीधा न होकर तिर्यक हो गया और तब भी उनके बीच रेखाओं के अनेक मोड़ उपस्थित हुए । एक तरह से उच्च वर्ग से निम्न वर्ग तक पहुंचने के लिए जिन चक्करदार मार्गों और गलियों से गुजरना पड़ता था, उन समस्त जटिल प्रक्रियाओं को सम्हालने के लिए एक तीसरे वर्ग की आवश्यकता हुई । यही वर्ग मध्य वर्ग था । इस वर्ग में सामान्यतः नौकरी पेशा शिक्षक, क्लर्क और इसी कोटि के अन्य लोग आते हैं । मध्यवर्ग में विशेषतः बुद्धिजीवी लोग हैं । इनके पास इतना धन नहीं होता कि वे धन से धन कमा सकें । किन्तु इतनी बुद्धि अवश्य होती है कि वे धन की गतिविधि पहचान सकें ,उसे विकसित होने के मार्ग बता सकें । सामाजिक व क्रान्ति के प्रायः समस्त विचारों का सर्जन प्रायः मध्यवर्ग में ही होता है । मध्य वर्ग बौद्धिक चेतना से पूर्ण वर्ग होने के कारण राष्ट्र की सामाजिक,राजनीतिक और आर्थिक स्थितियों को ठीक से पहचानता है । अतः उसमें होने वाले परिवर्तनों के क्रम की भी जानकारी रखता है । प्रत्येक राष्ट्र की अपनी आवश्यकताएं होती हैं, उसके अपने प्रश्न होते हैं, उसकी अपनी समस्याएं होती हैं । मध्यवर्ग का बुद्धिजीवी वर्ग उन समस्याओं और आवश्यकताओं के प्रकाश में राष्ट्र को बनाना चाहता है । इसीलिए औद्योगिक सभ्यता के बाद की समस्त क्रान्तियां मध्य वर्ग के द्वारा हुई हैं । मध्य वर्ग

मध्य वर्ग को कुछ लोग दो भागों में और कुछ लोग तीन भागों में बांटते हैं । दो भागों का वर्गीकरण है उच्च-मध्य-वर्ग और निम्न- मध्यवर्ग । तीन वर्गों का वर्गीकरण मानने वाले उपरोक्त दो वर्गों के अलावा मध्य-मध्य वर्ग की भी चर्चा करते हैं ।

उच्च मध्यवर्ग

उच्च मध्य वर्ग में वे लोग आते हैं जिनमें मध्य वर्ग की समस्त प्रवृत्तियां होती हैं ,किन्तु जो अर्थ की दृष्टि से सबसे

अधिक सुविधाजनक स्थिति में होते हैं-- नामी गरामी डाक्टर, वकील, जज, प्रोफेसर, बैरिस्टर, उच्च अधिकारी जैसे लोग इसी वर्ग में आते हैं जो अपने परिश्रम से पर्याप्त धन उपार्जित करने की स्थिति में होते हैं।

निम्न-मध्य वर्ग

निम्न मध्य वर्ग उन लोगों का है, जो बुद्धिजीवी तो हैं अर्थात् जो शारीरिक परिश्रम करके जीविकोपार्जन नहीं करते, किन्तु जिन्हें इतना धन भी नहीं मिलता कि अपने परिवार का मामूली ढंग से भी भरण-पोषण कर सकें। जीवनयापन की समस्या उनके लिए जटिल होती है और इनका जीवन आर्थिक और तज्जनित अनेक छोटे मोटे संघर्षों का जीवन होता है। इनके सामने जीवन की मामुली आवश्यकताओं की पूर्ति भी बड़ी समस्या बन कर उपस्थित होती रहती है। "इस वर्ग के अन्तर्गत दफ्तर के साधारण क्लर्क, बाबू आदि आते हैं, जिनकी जीविका साधारण माहवारी वेतन पर आधारित है।"[1]

मध्य-मध्य वर्ग

मध्य-मध्य वर्ग के व्यक्ति इन दोनों के बीच की स्थिति के व्यक्ति होते हैं। इनके पास न तो इतना धन होता है कि वे उच्च-मध्य-वर्ग के लोगों की तरह आराम और सुविधा का जीवन बिता सकें और न धन का ऐसा अभाव ही होता है कि वे निम्न-मध्य वर्ग की तरह सदा अभावों से ग्रसित रहें। वे समस्थिति वाले लोग होते हैं। उनके पास इत्मीनान की जिन्दगी नहीं होती, किन्तु कटु संघर्ष की भी जिन्दगी नहीं होती है। इस वर्ग में स्कूल और कालेजों के अध्यापक और दफ्तरों के में काम करने वाले उच्च श्रेणी के बाबू आते हैं।

---

१ हिन्दी साहित्य कोश, पृ०४११

(३) निम्नवर्ग

पुंजीवादी व्यवस्था में सबसे निचले स्तर पर निम्नवर्ग है । समाजवादी इसे सर्वहारा वर्ग कहते हैं । निम्नवर्ग शारीरिक परिश्रम करने वाला वर्ग है । वह अपनी अनेक सीमाओं के कारण निरन्तर शोषित होता रहता है । समाज के भीषण अत्याचार और शोषण को वह बिना किसी प्रतिकार किये सहता चलता है । निम्नवर्ग विचारों से हीन होता है, इसलिए वह क्रान्ति का अग्रदूत कभी नहीं हो सका है और न वहां परिवर्तन की कोई प्रक्रिया ही शुरू हो सकी है । निम्नवर्ग एक तरह से पुंजीवादी सामाजिक व्यवस्था का गलित-पचित अंग है । अपनी इन विषम स्थितियों के कारण वह अशिक्षित,अविकसित और अल्प सामर्थ्यवान् वर्ग होता है । उसमें रूढ़ियों और अन्धविश्वासों का बोलबाला होता है । इसलिए इस वर्ग में आन्तरिक विकास की कोई लहर नहीं होती । किसी भी पुंजीवादी सामाजिक ढाँचे की सबसे बड़ी समस्या यह है । इसीलिए सामाजिक परिवर्तन के अन्त रूप में मार्क्सवादी इसी वर्ग को काम में लाना चाहते हैं और इसी वर्ग का चित्रण कर वे अपनी भावनाओं को पक्ष में ले आना चाहते हैं ।

पुंजीवादी समाज के जिन तीन वर्गों की चर्चा की गई है उन तीन वर्गों के शिशुओं को उन्हीं वर्गों के प्रकाश में देखा जा सकता है । उच्च वर्ग के शिशु-चरित्र उच्च वर्ग की परम्पराओं और संस्कारों को ढोने वाले होते हैं । मध्यवर्ग के शिशु-चरित्रों में मध्य वर्ग की विशेषताएं होती हैं । निम्न वर्ग के शिशु चरित्रों में निम्न वर्ग की अशिक्षा अन्धविश्वास और कुरीतियां परिलक्षित होती हैं । प्रत्येक वर्ग के चरित्र का सम्बन्ध अपने वर्ग के संस्कार से अनिवार्यतः आबद्ध होता है । उनकी सामाजिक आर्थिक और व्यावसायिक स्थितियों का प्रभाव शिशु मन पर अबाध रूप से पड़ता है । मनोवैज्ञानिकों ने अध्ययन किया है कि बच्चों के जीवन पर उनके मां-बाप के सामाजिक -आर्थिक (सोशियो- इकोनोमिक) तथा व्यावसायिक (आकुपैशनल) स्थितियों का भी काफी प्रभाव पड़ता है । विभिन्न सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति के वातावरण में पले बच्चों की मानसिक योग्यता में

काफी अन्तर मिले हैं । दोनों में स्थायी सम्बन्ध होता है । इस स्थान पर एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन का उल्लेख करना अनुचित न होगा ।

"१८ महीने की आयु से लेकर ५४ महीने की आयु के ३८० बच्चों की मानसिक योग्यता की जांच की गई । देखा गया कि अकुशल मजदूरों के बच्चों की औसत बुद्धि -लब्धि ६५.८ थी और व्यावसायिक व्यक्तियों के बच्चों की औसत बुद्धि लब्धि १२५.० थी । इन दो वर्गों के बीच आने वाले व्यक्तियों के बच्चों की औसत बुद्धि लब्धि ६५.८ तथा १२५.० के बीच ही पाई गई ।"[१] गार्डन ने इंगलैण्ड में जिप्सी बच्चे तथा नहर के नाव पर रहने वाले बच्चों का अध्ययन किया । इन दोनों समुदायों के बच्चों की शिक्षा की उचित व्यवस्था नहीं थी । वे प्राय: पाठशाला में अनुपस्थित रहा करते थे । इनके परिवार में अधिकांश व्यक्ति अशिक्षित ही थे और व अपना जीवन घूमने तथा नाव पर ही बिताते थे । अत: इनका घरेलू वातावरण ऐसा था जहां मानसिक विकास उचित क्रम से नहीं हो सकता। इनमें से अधिकांश अल्पायु बच्चों की बुद्धि-लब्धि ६० और १०० के बीच थी । सभी नाविक बच्चों की औसत बुद्धि-लब्धि ७० थी। जिप्सी बच्चों की औसत बुद्धि-लब्धि नाविक बच्चों से कुछ अधिक थी । दोनों समुदायों के बच्चों की बुद्धि -लब्धि में कमी का कारण वातावरण ही है, क्योंकि आरम्भ में प्राय: सामान्य बुद्धि के थे, किन्तु बाद में सामाजिक आर्थिक तथा मां-बाप की व्यावसायिक स्थितियों का प्रभाव उनपर पड़ गया । यथेष्ट शिक्षा की कमी तथा अन्य मानसिक विकास के उपकरण के अभाव में आयु वृद्धि के साथ उनका उचित मानसिक विकास नहीं हो पाया । इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रत्येक मनुष्य पर उसके वर्ग के सामाजिक, आर्थिक तथा व्यावसायिक स्थितियों का प्रभाव पड़ता है । कुछ ऐसे भी चरित्र होते हैं, जिन्हें हम सामान्य कोटि से पृथक् करते हैं । ऐसे चरित्र अन्यत: तो किसी एक वर्ग से सम्बन्धित है, किन्तु संस्कार से उनमें अन्य विशेषताएं दिखाई देती हैं । इस

---

[१] "विकासात्मक मनोविज्ञान", पृ०४८-४९

— एस०पी० जायसवाल

तरह के चरित्रों के अध्ययन में बड़ी सूक्ष्मता और सतर्कता से काम लेना होगा । सामाजिक परिस्थितियों में अनेक परिवर्तनों और परिशोधनों के कारण तथा राजकीय सत्ता के भिन्न-भिन्न सिद्धान्तों को स्वीकार करने के कारण विभिन्न वर्गों के शिशु चरित्रों का एक-दूसरे से प्रभावित होना भी सम्भव है । जातिवाद के खण्डन मनुष्यमात्र की समानता के भाव का प्रचार गणतंत्र शासनसत्ता की स्थापना आदि कुछ ऐसी प्रेरक शक्तियां हैं, जिन्होंने तीनों वर्गों के चरित्रों को अनेक अवसरों पर समान स्तर पर ला खड़ा किया है । शिक्षा को जीवन में उन्नति करने के साधनों की समानता सबको सिद्धान्ततः दे दी गई है । आज एक ही शिक्षण संस्था में सामान्यतः सभी वर्गों से आये व्यक्ति शिक्षा पाते हैं । स्कूल और कालेजों में उनका विकास करीब-करीब समान वातावरण में होता है । राष्ट्र की बड़ी-से-बड़ी ज़िम्मेदारी सम्हालने का उन्हें समान अवसर दिया जाता है । अनेक कारणों से समाज की पिछड़ी और दलित जातियों को अपने पिछले अभावों को दूर कर सब को साथ आगे बढ़ निकलने के लिए अतिरिक्त सुविधाएं दी जाती हैं, ऐसी परिस्थिति में आज विभिन्न वर्गों के संस्कार अनिवार्यतः, एक-दूसरे को प्रभावित करते जा रहे हैं । शिशु -चरित्रों के अध्ययन में इस स्थिति को विशेष रूप से ध्यान में रखना होगा, क्योंकि उनके जीवन की यह अवधि संस्कारों के बनने और निश्चितरूप देने की अवधि है ।

(ख) ग्राम एवं नगर

सामाजिक और आर्थिक स्तर शिशु के मनोविज्ञान पर अपना प्रभाव डालते हैं, साथ-ही-साथ और भी बहुत-सी बातें हैं जो इस क्रिया में अपना योगदान देती हैं । उदाहरण के लिए ग्राम तथा नगर, परिवार का स्तर, परिवार का रूप, संस्कार परम्पराएं, धर्म, समाज व्यक्ति तथा वातावरण । शिशु पात्रों के वैविध्य के अध्ययन में इन सभी पक्षों पर विचार करना आवश्यक है ।

ग्राम -- हमारा भारत गांवों का देश है । भारत के ८०प्रतिशत लोग गांवों में निवास करते हैं । गांव, वह समुदाय है, जहां अपेक्षाकृत अधिक समानता अनौपचारिकता, प्राथमिक समूहों की प्रधानता, जनसंख्या का कम घनत्व तथा

कृषि ही मुख्य व्यवसाय है । गांवों में परिवार का अधिक महत्व होता है और व्यक्ति के जीवन का प्राय: प्रत्येक पक्ष परिवार द्वारा प्रभावित व नियन्त्रित होता है । संयुक्त परिवार की वास्तविक झांकी गांवों में मिलती है । भारतीय ग्रामों में जाति-प्रथा के के आधार पर सामाजिक व्यवस्था०की निर्धारित है । ग्रामीणों की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि खेती ही उनका मुख्य व्यवसाय है । उनका जीवन सादा और सरल है । उनके लिए धर्म, प्रथा व परम्परा का अत्यधिक महत्व होता है । ग्रामवासी व्यक्तिगतरूप से एक-दूसरे को जानते -पहचानते और दूसरों के सुख-दु:खमें हिस्सा बंटाते हैं । `पंच परमेश्वर` की धारणा ग्रामीणों की ही विशेषता है । अशिक्षा, बाल-विवाह, पर्दा प्रथा, विधवा विवाह निषेध आदि के कारण ग्रामीण स्त्रियों की स्थिति एक और तो निम्न होती है ,पर दूसरी और अधिक स्थायी एवं शान्तिपूर्ण पारिवारिक जीवन अपेक्षाकृत ग्रामीणों की विशेषता भी है ।

नगर-- इसके विपरीत नगर,सामाजिक विभिन्नताओं का वह समुदाय है, जहां द्वैतीयक समूहों व नियन्त्रणों,उद्योग व व्यापार घनी आबादी और अवैयक्तिक सम्बन्धों की प्रधानता हो । यहां न केवल असंख्य उद्योग व्यापार व वाणिज्य का एक जाल-सा बिछा होता है,बल्कि विभिन्न धर्म,सम्प्रदाय जाति,वर्ग ,प्रजाति, प्रान्त व देश के लोगों का जमघट होता है । जिसके फलस्वरूप नागरिक समुदाय के विभिन्न भाषा, धर्म,वेशभूषा,रहन-सहन, आदर्श,प्रथा आदि देखने को मिलते हैं । आबादी घनी होती है और नाना प्रकार के द्वैतीयक समूह जैसे कालेज,विश्वविद्यालय,मिल-कारखाना, कोर्ट-कचहरी आदि का बोलबाला होता है । फिजूलखर्ची व बाहरी ठाट-बाट,सामाजिक नियम की शिथिलता, सामाजिक गतिशीलता व परिवर्तन की तेज गति, व्यक्ति-वादी आदर्श,धर्म व परिवार का कम महत्व शिक्षा,ज्ञान व विज्ञान का अधिक प्रसार औद्योगिक उन्नति ,यातायात तथा संचार के उन्नत साधन तथा पारिवारिक जीवन का कम स्थायित्व नागरिक समुदाय की अन्य उल्लेखनीय विशेषताएं हैं ।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि उपर्युक्त

सारी बातों का प्रभाव बालक के कोमल मन पर अवश्य पड़ेगा और उसी के अनुसार उनके चरित्र का विकास भी होगा ।

(ग) पारिवारिक स्तर :

परिवार का रूप

ग्रामीण तथा नागरिक प्रभावों पर विचार कर लेने के बाद यह आवश्यक है कि हम शिशु मनोविज्ञान पर उनके पारिवारिक स्तर के प्रभाव पर भी दृष्टिपात करें । परिवार समाज का आधार है । बिना परिवार के समाज की कल्पना नहीं की जा सकती । समाज के अनेक संगठनों में परिवार मौलिक इकाई कही जा सकता है । इसी में व्यक्ति जन्म लेता, बढ़ता और पलता है तथा इसके द्वारा एक निश्चित सीमा तक उसके जीवन की सीमा निर्धारित होती है । समाज के अन्यसभी संगठनों में परिवार को सबसे अधिक महत्व दिया जाता है । संसार के हर देश में भिन्न-भिन्न प्रकार के पारिवारिक संगठन पाये जाते हैं । हमारे देश में भी हर तरह-तरह के पारिवारिक संगठन हैं ।

संयुक्त परिवार

भारत में प्राचीनकाल से ही हिन्दू समाज में संयुक्त परिवार की प्रणाली चली आ रही है । इस प्रकार के परिवार में केवल पति-पत्नी और बच्चे ही नहीं होते पर चाचा-चाची, भाई-भाभी, दादा-दादी आदि भी । इस प्रकार एक संयुक्त परिवार में चार-चार पीढ़ियां तक पाई जाती हैं । दो-तीन पीढ़ियां तो साधारण बात है ,अतः इतने बड़े परिवार में लोगों के रहन-सहन, आचार-विचार,व्यवहार तथा आदर्श सब का प्रभाव परिवार के प्रत्येक शिशु पर पड़ता है । उनका विकास भी उसी प्रकार होता है । यदि संयुक्त परिवार स्वस्थ और सुदृढ़ रहा तो समाज भी सुखी और सम्पन्न रहता है और राष्ट्र की प्रगति में विकास होता है राष्ट्र के भावी निर्माता परिवार के छोटे-छोटे, नन्हें-मुन्ने शिशु ही हैं ।

प्रेमचन्द का लालन-पालन संयुक्त परिवार में हुआ था। विमाता के क्रूर व्यवहार उन्होंने स्वयं झेले थे, स्त्रियों के कलह उन्होंने अपने परिवार में देखे थे। पति-पत्नी के विद्वेष भाव का अनुभव भी उन्होंने अपनी प्रथम पत्नी के साथ किया था। उनके उपन्यास के कई शिशु पात्रों तथा अनेकानेक कहानियों के शिशु पात्रों को इन्हीं सब कठिनाइयों को झेलते हुए पाते हैं। उदाहरणस्वरूप -- 'चोरी', 'अलग्योझा', 'आत्माराम' 'स्वर्ग की देवी', 'शंखनाद', 'बेटी का धन', 'दूसरी शादी' आदि विमाता तथा संयुक्त परिवार सम्बन्धी कहानियां हैं।

<u>वियुक्त परिवार</u>

पाश्चात्य संस्कृति और शिक्षा के प्रभाव से हमारे परम्परागत रीति-रिवाज और संस्कारों में परिवर्तन होता गया। व्यक्ति परिवार से अधिक महत्व अपने को देने लगा। वह अपनी रुचि, शिक्षा और संस्कार को महत्व देने लगा, अतः संयुक्त परिवार की परम्परागत प्रणाली में अन्तर आने लगा। संयुक्त पारिवारिक व्यवस्था के टूटने के कई कारण हैं-- पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव, औद्योगीकरण, अर्थ का असमान वितरण, स्त्रियों के आपसी द्वेषभाव। संयुक्त परिवार में एक और तो एक व्यक्ति के ऊपर बहुत भार डाल देती थी, दूसरी ओर कुछ लोगों को उत्तरदायित्वविहीन बना कर काम करने से रोकती थी। फलस्वरूप इस व्यवस्था का धीरे-धीरे अन्त हो चला। वियुक्त परिवार से तात्पर्य पति-पत्नी तथा उनके बच्चे से है। जब ये बच्चे बड़े हो जाते हैं तथा विवाह कर लेते हैं तब अलग-अलग परिवार बना लेते हैं और अपने जनकों से अलग हो जाते हैं। इसी को देखकर जर्मन दार्शनिक 'हेगेल' ने कहा है कि कुटुम्ब अपने अन्दर ही अपने नाश का बीज रखता है। भारत भी इस प्रकार की कुटुम्ब-प्रथा से प्रभावित होने लगा है। भारत में इस प्रथा के दुष्परिणाम हैं -- आर्थिक दुरवस्था, सामाजिक विघटन, मानसिक पतन और धार्मिक विघटन। वियुक्त परिवार में घरेलू मामलों में माता-पिता का व्यवहार,

अधिकार और प्रतिष्ठा समानरूप से होनी चाहिए । ऐसे परिवार के शिशुओं का मनोविज्ञान संयुक्त परिवार के शिशुओं के मनोविज्ञान से भिन्न होगा । प्रेमचन्द के हृदय में संयुक्त परिवार के प्रति आस्था थी । अपनी कई कहानियों में शिशु पात्रों के माध्यम से इस व्यवस्था को टूटने से बचाना चाहा है, ऐसे शिशु पात्रों में 'अलग्योझा' कहानी का रग्घु विशेष उल्लेखनीय है ।

संस्कार

मानव-व्यवहार को नियंत्रित करने में विभिन्न संस्कारों का बहुत महत्व होता है । हर परिवार अपनी संस्कृति अर्थात् रीति-रिवाज, परम्परा, विश्वास आदि के अनुकूल अपना जीवन व्यतीत करता है और वह संस्कार रूप में बालकों को प्राप्त होता है । परम्परा वह शक्ति है जो हमारे चरित्र-निर्माण में भारी काम करती है और जिसके द्वारा हमारे विचारों, भावों, व्यवहारों में एकसापन आता है । बिना परम्परा के हमारा सम्बन्ध प्राचीन काल से टूटता है । अतः जिस परिवार की जैसी परम्परा होती है, उस परिवार के शिशु भी वैसे ही होते हैं । ब्राह्मण के बालक का यज्ञोपवीत होना, चौके में बैठकर भोजन करना, मूर्ति-पूजा करना, त्योहार मनाना, शान्ति स्थापन के लिए यज्ञ, हवन, तप करना ये सभी क्रियाएं परम्परा के उदाहरण हैं । परम्परा के सिवाय धर्म, समाज तथा व्यक्ति भी शिशुओं के मनोविज्ञान को बहुत प्रभावित करते हैं ।

धर्म

प्रत्येक परिवार का अपना एक धर्म होता है । धर्म एक विशेष शक्ति पर विश्वास करता है और यह शक्ति मानव-शक्ति से आवश्यक रूप में श्रेष्ठ होती है । उस शक्ति के प्रति श्रद्धा-भक्ति या प्रेम भाव धर्म का एक आवश्यक संवेगात्मक अंग है । उस शक्ति से लाभ उठाने के लिए और उसके कोप से बचने के लिए प्रार्थना, पूजा, आराधना करने की विधियां या संस्कार भी होते हैं । धर्म की विभिन्न क्रियाएं हैं,

जैसे प्रार्थना, समाधि, सामूहिक क्रियाएं (मन्दिरों, मस्जिदों या गिरिजाघरों आदि में अनेक व्यक्ति एकत्रित होकर सामूहिक रूप से पूजा-पाठ कीर्तन, आराधना आदि करते हैं) समुचित आचरण, बलि, तांत्रिक क्रियाएं। बालकों में धार्मिक गुणों का विकास करने के लिए परिवार का बहुत महत्वपूर्ण हाथ है। बालकों को माता-पिता नाना प्रकार के धार्मिक उपदेश देते रहते हैं। परिवार के समस्त सदस्य सामान्य रीति से पूजा-पाठ आदि करते हैं, धार्मिकउत्सव मनाते हैं। इन सब का बालकों पर बहुत प्रभाव पड़ता है। वे भी धर्म के अनुसार चलना आरम्भ कर देते हैं।

समाज

प्रत्येक समाज की अपनी एक निजी संस्कृति होती है, जिसके आधार पर वह दूसरे समाजों से भिन्न समझा जाता है। उस समाज के प्रत्येक व्यक्ति तथा परिवार से यह आशा की जाती है कि वह इस संस्कृति अथवा रीति-रिवाजों, परम्पराओं, विश्वासों आदि के अनुकूल कार्य करते हुए अपना जीवन बिताये। बालक सबसे पहले परिवार में ही अपनी सामाजिक संस्कृति से परिचित होता है। जब वह बड़ा होता है, समाज के साथ उसका सम्पर्क होता है तो उसपर समाज के अन्य लोगों के रहन-सहन, आचार-विचार का प्रभाव पड़ता है। समाज की रूढ़ियां, परम्पराएं विश्वास आदि प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उसके चरित्र पर प्रभाव डालती हैं।

व्यक्ति

समाज में अनेक जाति, धर्म, के लोग होते हैं। एक समाज में होते हुए भी हर व्यक्ति का अपना-अपना व्यक्तित्व होता है। समाज में निवास करने वाले डाक्टर, वकील, शिक्षक, पंडित मौलवी आदि प्रत्येक व्यक्ति के आचरण के प्रभाव से अछूता नहीं रहते। परिवार या समाज के महान त्यागी, देशभक्त, सत्यवादी आदि अनेकानेक गुणों से मंडित व्यक्तियों

का प्रभाव वहां के बालकों पर पड़ता है, इसमें कोई सन्देह नहीं ।

वातावरण

परिवार, कुटुम्ब की परम्पराएं, धर्म, समाज व्यक्ति आदि सब मिलकर एक विशिष्ट वातावरण की सृष्टि करते हैं । बच्चा सर्वप्रथम परिवार में जन्म लेता है । माता-पिता तथा भाई-बहनों से वह कर्तव्य पालन सीखता है । ज्यों-ज्यों बड़ा होता है, परिवार के सदस्य उसके व्यवहारों को सुधारते हैं । परिवार के बाहर जब जाता है तब उपर्युक्त सारी बातें उसके चरित्र-निर्माण में सहायक होती हैं । बिना वातावरण के हम किसी प्राणी के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं कर सकते ।

-o-

अध्याय -- ५

शिशु पात्रों का मनोवैज्ञानिक आधार

अनुवंशिकता का महत्त्व, वातावरण का महत्व, माता-पिता का व्यवहार तथा शिशु का सामाजिक विकास, शिशु का ज्ञानात्मक विकास, श्रव्य संवेदना, तीव्र आकस्मिक उत्तेजना का शिशु प्रभाव, शिशु का क्रियात्मक विकास, शिशु के चलने की तीन अवस्थाएं, हस्त कौशल का विकास, पहनने की क्रिया का विकास, लिखने की क्रिया, सामाजिक व्यवहार का विकास, आश्रितावस्था, अवरोध की अवस्था, सहयोग तथा मैत्री की अवस्था, सामाजिक विकास की अन्तिम अवस्था, सामाजिक व्यवहार के रूप, अनुकरण, प्रतिद्वन्द्विता, प्रतिवादिता, झगड़ना, सहयोग, सहानुभूति। सामाजिक विकास, स्वास्थ्य, पारिवारिक वातावरण, पाठशाला का वातावरण, क्लब, कैम्प तथा दल का प्रभाव , सामाजिक नियम ।

-0-

पंचम अध्याय

-0-

शिशु-पात्रों का मनोवैज्ञानिक आधार

व्यक्ति की विभिन्न शारीरिक और मानसिक शक्तियों का आविर्भाव, प्रस्फुटन और विकास इसी अवस्था में होता है। जीवन-विकास का यह काल भावी जीवन की पृष्ठभूमि तैयार करता है।

पिछले कुछ वर्षों में पाश्चात्य देशों के विद्वानों ने यह बतलाने की कोशिश की है कि व्यक्ति के जीवन की सफलता या असफलता इस बात पर निर्भर है कि उसके बाल-जीवन का निर्माण किस प्रकार हुआ है। बालक की छोटी-मोटी हरकतों में उसके भावी जीवन का अंकुर छिपा रहता है। यह अंकुर किस प्रकार विकसित होगा, यह अनेक दूसरी बातों पर निर्भर है, उदाहरणार्थ-- माता-पिता या बच्चे के सम्पर्क में आने वाले अन्य व्यक्तियों का व्यवहार आदि उसकी शिक्षा-दीक्षा आदि।

बाल-जीवन को शिक्षण-काल कहा गया है। बालक के स्वभाव, कौशल आदत आदि का निर्माण इसी काल में होता है। सीखता वह अलग-अलग घटनाओं और व्यक्तियों से है पर बाद में समन्वित होकर वह व्यवहार संघात(Behaviour Pattern) बन जाता है जिससे जीवनपर्यन्त हम प्रभावित होते हैं, अपने-पराये का और फिर समुदाय तथा समाज का ज्ञान विकसित होता जाता है, और आगे चलकर विश्व-ज्ञान में परिणत हो जाता है। इस तरह बचपन में जो कुछ सीखते हैं, उसी के आधार पर बालक की जीवन-शैली (Style of Life) का निर्माण होता है। प्रसिद्ध मनोविश्लेषक फ्रायड ने जीवन के प्रत्येक सामान्य (Normal)

और असामान्य (Abnormal) व्यवहार की व्याख्या बचपन की अनुभूति के आधार पर की है । फ्रायड ने तो यहां तक माना है कि वयस्क होने पर व्यक्ति कोई नया व्यवहार नहीं करता,बल्कि उसका प्रत्येक व्यवहार बचपन के ही किसी-न-किसी व्यवहार का रूप होता है । मनोवैज्ञानिक वाटसन इस बात में पूर्णतः विश्वास करता है कि किसी बच्चेको आप जैसा चाहें, जो चाहें, बना सकते हैं । इस कथन में सत्यता चाहे जितनी भी हो, लेकिन इतना तो अवश्य है कि बाल-जीवन सबसे अधिक महत्व का है[१] ।

बालक के विकास में आनुवंशिकता तथा वातावरण दोनों का समान रूप से हाथ रहता है । हमारा नित्यप्रति का अनुभव इस बात का साक्षी है कि बच्चे रूप,रंग,चाल,ढाल शरीर-रचना तथा अन्य गुणों में अपने माता-पिता,पितामह आदि के अनुरूप ही होते हैं । किन्तु यह अनुरूपता सभी पहलुओं में नहीं पाई जाती है । कभी-कभी तो एक ही माता-पिता के दो बच्चों के रंग,रूप तथा गुण में इतना अन्तर होता है कि कोई भी इस पर विश्वास करने के लिए तैयार नहीं होता कि वे एक ही माता-पिता अथवा एक ही वंश के हैं । प्रश्न यह है कि शिशुओं में यह अनुरूपता और भिन्नता क्यों? यदि इस प्रश्न का उत्तर निष्पक्षता से दिया जाय तो यही कहा जा सकता है कि अन्तर आनुवंशिकता और वातावरण के फलस्वरूप है । किन्तु सभी मनोवैज्ञानिकों में इस सम्बन्ध में मतैक्य नहीं है । कुछ ने आनुवंशिकता को ही महत्वपूर्ण माना है और कुछ ने वातावरण को ।

<u>आनुवंशिकता का महत्व</u>

'महान जीवविज्ञानवेत्ता 'कांकलिन' का कहना है कि जीवाणु संगठन (Germinal Organisation) के निश्चित बीज-तत्वों (elements) की एक वंश से दूसरे वंश की निरन्तरता (continuity) ही आनुवंशिकता है,अर्थात् जीवाणु संगठन के द्वारा जिन गुणों का निर्धारण होता है, उन्हीं को हम पैतृक (heritage) अथवा वांशिक कहते हैं । इसे दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि आनुवंशिकता जातीय बीज-द्रव (Germ - plasm.) के द्वारा एक वंश से दूसरे

---
१ सीताराम जायसवाल[?] पाण्डेय : 'बालमनोविज्ञान',पृ०२

वंशको प्राप्त होती है।[1]

कुछ मनोवैज्ञानिकों का ऐसा दृष्टिकोण है कि बच्चा शारीरिक रचना और रूप रंग मात्र ही वंशानुक्रम से प्राप्त करता है। अपने मत की पुष्टि के लिए उन्होंने बहुत से प्रयोग किए।

सर्वप्रथम 'गाल्टन' ने प्रतिभा प्रकार (Image) का अध्ययन करके यह बतलाया कि प्रतिभा की योग्यता मनुष्य में आनुवंशिक होती है। जिस परिवार के पूर्व पुरुषों में इसकी योग्यता का अभाव रहता है, उस परिवार के शिशुओं में भी उस योग्यता का पूर्णतः अभाव रहता है। अतः प्रतिभा प्रकार पूर्णतः वंशानुक्रम है। गाल्टन, कार्लपियर्सन, टर्मन, गोडार्ड, डुगडेल तथा विंशिप सभी वंशानुक्रम को महत्वपूर्ण बताते हैं। इन विद्वानों ने परीक्षण कर इस तथ्य की पुष्टि की है।

पारिवारिक इतिहास प्रणाली के अध्ययन द्वारा हमें अपने देश के ही कई गौरवपूर्ण परिवार के उदाहरण मिलते हैं, जिनकी आनुवंशिकता या वंशानुक्रम तथा वातावरण ने उन्हें महान् बनाया है। नेहरू परिवार में पण्डित मोतीलाल नेहरू से लेकर श्रीमती इन्दिरा गांधी तक की उपलब्धियां इस सिद्धान्त की पुष्टि करती हैं।

वातावरण का महत्व

बाल-विकास में वातावरण का क्या हाथ है, इसको व्यक्त करने के लिए वातावरणवादियों ने अकाट्य प्रमाणों को उपस्थित किया है। गर्भस्थ शिशुओं पर आन्तरिक वातावरण के प्रभाव को देखने के लिए छोटे-छोटे जानवरों पर प्रयोग किया है। उन प्रयोगों से यह सिद्ध हुआ है कि माता के खाने-पीने का प्रभाव गर्भस्थ शिशु के विकास पर अधिक पड़ता है। मां अगर यक्ष्मा मधुमेह आदि से पीड़ित है तो उसका प्रभाव शिशु के विकास पर पड़ता है। जन्म के बाद वातावरण में परिवार,

---

1 जगदानन्द पाण्डेय : 'बाल मनोविज्ञान', पृ० २०

समाज, शिक्षालय तथा संस्कृति आदि शिशु के विकास पर प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप में प्रभाव डालते हैं । वातावरण के पक्ष को पुष्ट करते हुए वातावरण-वादी फ्रांस के एक बच्चे का उल्लेख करते हैं जो अपने शैशवकाल में दुर्भाग्य से मनुष्यों के समाज से अलग होकर जंगली जानवरों के समाज में पड़ गया था । जब उसे मनुष्य के समाज में लाया गया तो उसके सभी व्यवहार जंगली जानवरों की ही तरह थे । उसमें बोलने की योग्यता नहीं थी । वह जानवरों की तरह नंगा रहना पसन्द करता था । दौड़ने, कच्चा मांस खाने और अंधेरे में देखने आदि की सभी क्रियाएं जानवरों के समान ही होती थीं । इसीलिए मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि यदि वह सामाजिक वातावरण में पाला-पोसा जाता तो उसमें जानवरों के व्यवहार नहीं मिलते । अतएव यह निर्विवाद है कि वातावरण के अनुरूप ही विभिन्न शक्तियों का विकास होता है । वस्तुत: बाल-विकास के लिए वातावरण उतने ही महत्त्व का है, जितने महत्त्व का वंशानुक्रम । किसी एक के अभाव में बालक का समुचित विकास होना कठिन ही नहीं असम्भव भी है । शिशु के विकास पर उसके परिवार का वातावरण, शिक्षालय, खेल के मैदान और साथी, पुस्तकालय, चलचित्र, संस्कृति आदि सभी का प्रभाव पड़ता है ।

माता-पिता का व्यवहार तथा शिशु का सामाजिक विकास

बच्चे का सर्वप्रथम सामाजिक सम्पर्क अपने मां-बाप या परिवार के अन्य सदस्यों से होता है । यदि माता-पिता का व्यवहार बच्चों के प्रति आनन्ददायक और संतोषप्रद होता है तो उनका सामाजिक तथा मानसिक विकास का संतुलन होता है । अत: वातावरण और वंशानुक्रम इन दोनों का बाल-जीवन के विकास में महत्त्वपूर्ण स्थान है । प्रेमचन्द की बहुत-सी कहानियों में शिशु के विकास का 'सच्चाई का उपहार' में सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है ।

शिशु का ज्ञानात्मक विकास

जीवन के प्रारम्भिक काल से ही व्यक्ति ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से बाहरी वातावरण से प्रभावित होता रहता है । नेत्रेन्द्रिय, श्रवणेन्द्रिय, नासिका, जिह्वा, त्वचा आदि ज्ञानेन्द्रियां ही जीवन में भौतिक जगत के साथ अभियोजन करने में सहायक होती हैं । मनोवैज्ञानिकों ने अध्ययन किया है कि इन ज्ञानेन्द्रियों का विकास जन्म के पहले हो जाता है और जन्म के पश्चात् ही नवजात शिशुओं में प्रकाश के प्रति प्रतिक्रिया देखी जाती है । व्यक्ति की प्रत्येक ज्ञानेन्द्रिय उपयुक्त उत्तेजना के द्वारा उत्तेजित होती है और व्यक्ति उससे प्रभावित होता है तथा ब क्रमश: अपनी क्षमता के अनुसार उस वातावरण से सम्पर्क स्थापित कर लेता है । प्रकाश के प्रति प्रतिक्रियाओं का पर्याप्त अध्ययन किया गया है । देखा गया है कि नवजात शिशु प्रकाश के प्रति कुछ अंशों में संवेदनशील होते हैं । प्रेमचन्द की 'तेंतर' कहानी में तेंतर बालिका में प्रकाश के प्रति संवेदनशीलता पाई जाती है ।

श्रव्य सम्वेदना

शिशुओं की श्रव्य संवेदना और उसकी प्रतिक्रिया के सम्बन्ध में भी मनोवैज्ञानिकों ने बहुत निरीक्षण-परीक्षण किया है । उन्होंने नवजात शिशुओं के पास घंटी बजाई, बाजा तथा भोंपू आदि का प्रयोग किया ।

तीव्र आकस्मिक उत्तेजना का शिशु पर प्रभाव

उपर्युक्त उत्तेजनाओं से शिशुओं के शरीर में गति उत्पन्न हुई, उनकी नींद टूट गई, वे चिल्लाए तथा उनके श्वास की गति में भी परिवर्तन देखे गये । मनोवैज्ञानिकों ने पाया कि तीव्र और आकस्मिक उत्तेजना का प्रभाव शिशु पर अधिक पड़ता है, वे मनुष्य की आवाज की अपेक्षा कोलाहल से अधिक उत्तेजित होते हैं और उसके प्रति प्रतिक्रियाएं प्रकट करते हैं ।

शिशु का क्रियात्मक विकास

प्रारम्भ में शिशु असहाय होता है और वह पूर्णत: अपने माता-पिता पर निर्भर करता है । काल-क्रम से उसकी अवस्था वृद्धि के साथ उसमें तरह-तरह के ज्ञानात्मक तथा क्रियात्मक शक्तियों का आविर्भाव और विकास होता जाता है । यदि उसमें इन क्रियात्मक योग्यताओं का विकास न हो तो वह अपना जीवन सफलता पूर्वक नहीं बिता सकता । क्रियात्मक विकास के द्वारा ही उसमें बौद्धिक तथा सामाजिक विकास भी होते हैं । संसार का ज्ञान उसके विकास पर निर्भर करता है । यदि शिशुओं में क्रियात्मक विकास नहीं होता तो जीवन में वह कुछ भी करने में सफल नहीं होगा और सदा असामाजिक बना रहेगा । अत: बाल-जीवन में क्रियात्मक विकास महत्वपूर्ण है ।

शिशु के क्रियात्मक विकास का एक क्रम और नियम होता है । पहले उसके शरीर के ऊपरी भागों में क्रियात्मक योग्यताओं का विकास होता है,तत्पश्चात् क्रमश: निम्न भागों का। शुरू में बच्चों की क्रियाएं सामान्य स्वरूप की होती हैं और उसके शरीर के सभी के सभी अंग गतिशील रहते हैं । अवस्थावृद्धि के साथ उनकी सामान्य क्रियाओं से ही विशिष्ट प्रतिक्रियाएं प्रस्फुटित होती हैं और उनमें क्रमश: विकास होता है ।

बच्चा जब जन्म लेता है उसमें अपना सिर उठाने की शक्ति नहीं रहती, इसीलिए उसका नियन्त्रण करने में वह पूर्णत: असमर्थ रहता है । किन्तु इसी अवस्था में उसमें इतनी शक्ति आ जाती है कि पेट के बल सुलाने पर वह अपना सिर थोड़ा उठा लेता है ।

शिशु के चलने की तीन अवस्थाएं

चलने-फिरने का महत्व शिशु-जीवन में कितना अधिक है, यह कोई कहने की बात नहीं, चलने की योग्यता में तीन अवस्थाएं होती हैं-- खिसकना, रेंगना, और चलना ।

कुछ बच्चे छ: महीने में ही रेंगने का व्यापार प्रारम्भ करने लगते हैं,किन्तु नौ महीने में अधिकांश शिशु ऐसा करते हैं ।बारह

महीने में सभी सामान्य शिशु ऐसा करने में समर्थ होते हैं । कुछ शिशु नौ महीने में हाथ पकड़कर चलते हैं, एक वर्ष में तो अधिकांश शिशु बिना कुछ पकड़े चलने लगते हैं, अठारह महीने में सभी अच्छी तरह चलते हैं । घिसकने रेंगने तथा उसके बाद चलने का क्रम सभी शिशुओं में होता नहीं है, बहुत से बच्चे घिसकने -रेंगने के पहले ही चलना शुरू कर देते हैं ।

पेड़ पर चढ़ने की क्रिया बहुत से बच्चों में पाठशालीय जीवन के पूर्व आरम्भ हो जाती है,जिसका पूर्ण विकास दस-बारह वर्ष की अवस्था में होता है । यह क्रिया व उन्हीं बच्चों में विकसित होती है, जिन्हें सुअवसर मिलता है । यही कारण है कि ग्रामीण बालक नागरिक बालकों की अपेक्षा अधिक संख्या तथा अधिक निपुणता से पेड़ों पर चढ़ जाते हैं, इसका सुन्दर संकेत प्रेमचन्द के `गुल्ली-डंडा` शीर्षक कहानी में है । कूदने -फांदने की क्रिया का आविर्भाव तो दो ही वर्ष में हो जाता है, किन्तु विकास तीन-चार वर्ष की अवस्था में होता है । पाठशाला में जाने योग्य होने पर बच्चे दौड़ने,कूदने,नाचने आदि क्रियाओं में पूर्ण सफल हो जाते हैं । शिशुओं की इन सभी क्रियाओं में उनकी परिपक्वता,भोजन, स्वास्थ्य तथा वातावरण का भी हाथ रहता है । जिन शिशुओं के स्थूल शरीर होते हैं,उनके निर्बल और पैर उन्हें संभाल सकने में समर्थ नहीं हो सकते । अत: वे बहुत दिनों तक खड़े नहीं होते । अस्वस्थता भी शिशु के इस विकास में बाधक होती है ।

हस्त-कौशल का विकास

शिशुओं में वस्तुओं के समीप हाथ फैलाने तथा उन्हें पकड़ने की गति देखी जाती है । ये गतियां जटिल होती हैं और बड़ी शीघ्रता से होती हैं ।

खाने-पीने की क्रिया के लिए भी हस्त-क्रिया की निपुणता महत्त्वपूर्ण है । `गेसेल` ने अपने अध्ययन में देखा कि अठारह महीने का बच्चा प्याले से पानी पी सकता है, दूसरे यदि उसके हाथों से

प्याला नहीं लेते तो प्याला रखने में असमर्थ होता है । प्याला उसके हाथ से छूटकर गिर पड़ता है । चौबीस महीने में वह गिलास से पानी पी सकता है । बत्तीस महीने में वह घड़े से पानी लेकर पी सकता है । खाने के अध्ययन में उन्होंने देखा कि पन्द्रह महीने का शिशु खाने के लिए चम्मच तो तस्तरी में डाल लेता है, किन्तु चम्मच मुंह में जाने से पहले ही उलट देता है, फलत: बहुत बार खाना नीचे गिर जाता है । अठारह महीने में वह चम्मच भर लेता है और उसे कठिनाई से मुंह में डाल पाता है । छत्तीस महीने में शिशु चम्मच से भोजन बहुत कम अंश में नीचे गिराता है ।

पहनने की क्रिया का विकास

पहिनने की क्रिया शिशु के क्रियात्मक विकास पर भी निर्भर करती है । विभिन्न प्रकार के पोशाक पर भी निर्भर करता है कि शिशु उसे कितनी कम आयु में पहनने में समर्थ हो सकता है । फिर भी तीन वर्ष की आयु के पहले ही बच्चे अपने कपड़े खोलने में दिलचस्पी लेते हैं । चार वर्ष की आयु में वे आसानी से पहनी जाने वाली वस्तु पहिन सकते हैं । बच्चे जूते की अपेक्षा मोजा आसानी से पहिन लेते हैं ।

लिखने की क्रिया

लिखने की क्रिया के लिए शिशुओं के हाथ तथा अंगुलियों का परिपक्व होना आवश्यक है । नवजात को हाथ पर नियंत्रण नहीं रहता । शारीरिक विकास के फलस्वरूप धीरे-धीरे वे परिपक्व होते हैं । और वे किसी वस्तु को पकड़ने में समर्थ होते हैं । इसके बाद उनमें किसी की कुशलता आती है । दो वर्ष की आयु में बच्चा रेखा खींच सकता है । तीन-चार वर्ष की आयु में अक्षर के समान कुछ-कुछ लिखने की चेष्टा करता है जो पढ़ा नहीं जा सकता है । पांच वर्ष की आयु में शिशु को अक्षर-ज्ञान हो जाता है और इसके एक वर्ष बाद वह लिखने भी लगता है । पांच वर्ष में बच्चे पाठशाला जाने लगते हैं ।

सामाजिक व्यवहार का विकास

कोई भी व्यक्ति जन्म से ही सामाजिक नहीं होता। अन्य व्यक्तियों के साथ वह अपने समाज के साथ अभियोजित करना सीखता है। बच्चों के समुचित सामाजिक विकास के लिए माता-पिता तथा अभिभावक का निर्देशन आवश्यक है। शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति माता के द्वारा होती है, अतः यह दूध से माता का सम्बन्ध स्थापित करते हैं। दूध पिलाने वाली परिचारिका से भी उनका माता का ही सम्बन्ध हो जाता है। प्रेमचन्द के 'महातीर्थ' कहानी में रुद्रमणि दाई को माता से अधिक प्यार करता है। शुरू में शिशु अपरिचित व्यक्ति के प्रति भय की क्रिया प्रकट नहीं करता है,लेकिन बाद में परिपक्वता के फलस्वरूप वे परिचित और अपरिचित में अन्तर समझने लगते हैं और अपरिचित व्यक्ति के प्रति भय प्रदर्शित करते हैं।

आश्रितावस्था

दो वर्ष की आयु में बच्चे वयस्कों पर आश्रित रहते हैं, अतः वे उसकी सहायता पर विश्वास करते हैं और निश्चय रूप में उन्हें स्वीकार करते हैं।

अवरोध की अवस्था

ढाई तीन वर्ष की आयु बच्चों के अवरोध की अवस्था है। इस अवस्था को प्रायः 'अस्वीकारात्मक स्थिति' भी कहा गया है,क्योंकि वयस्कों के प्रभाव के प्रति बच्चों का अवरोध पराकाष्ठा तक पहुंच जाता है। प्रत्येक काम को वे स्वयं ही करना चाहते हैं। वे आत्मनिर्भर और स्वतन्त्र होना चाहते हैं। वे अपनी बातों पर दृढ़ता पूर्वक टिके रहते हैं। ऐसे बच्चे को समझाना और अधिकार में लाना कठिन होता है।

सहयोग तथा मैत्री की अवस्था

चार से छः वर्ष तक की आयु में धीरे-धीरे सहयोगिता और मित्रता देखी जाती है। इसी आयु में माता-पिता तथा

अभिभावक को त्राण मिलता है । ये बच्चे वयस्कों की मान्यता को स्वीकार करने लगते हैं और उनसे मैत्री का भाव रखते हैं । धीरे-धीरे उनके शब्द-कोष में वृद्धि होती है और अस्वीकारात्मक स्थिति का अन्त होने लगता है । दो से छ: वर्ष की आयु पूर्व पाठशालीय अवस्था में प्राय: वयस्कों के प्रति बच्चों का विशेष दृष्टिकोण रहता है । वे वयस्कों को सर्वशक्तिमान्,सर्वबुद्धिमान तथा सम्भ्रान्त समझते हैं ।

इसके आगे पांच से ग्यारह वर्ष की अवस्था को लें । पांच वर्ष में बच्चे पाठशाला जाना आरम्भ करते हैं । उनमें शारीरिक विकास और भाषा का विकास होता है, वे खेलों में होड़ लगाने के इच्छुक हो जाते हैं और सभी भावों को व्यक्त करते हैं । सामूहिक खेल और सामूहिक जीवन में उनका समय व्यतीत होता है । वे पाठशालीय वातावरण में अपने को अभियोजित करते हैं । अवस्था के साथ-साथ उनमें समुदाय में रहने का भाव प्रबल होने लगता है । सामूहिक खेल के प्रति उनकी दिलचस्पी अधिक बढ़ जाती है । बच्चों में मैत्री स्थाई रूप धारण करने लगती है,जो इस काल के बाद और भी घनिष्ठ हो जाती है । स्पर्द्धा और प्रतिद्वन्द्विता इस अवस्था की मुख्य विशेषताएं हैं । जाति-चेतना अधिक रहती है,अत: लड़के-लड़कों के झुंड में रहते हैं ।

सामाजिक विकास की अंतिम अवस्था

बालकों में सामाजिक विकास की अन्तिम अवस्था बारह से सत्रह वर्ष की है । ज्यों-ज्यों बच्चों की अवस्था बढ़ती है,त्यों-त्यों समुदाय में रहना पसन्द करते हैं,अत: वे बालचर,राष्ट्रीय विद्यार्थी, सैनिक दल आदि संस्था में भाग लेते हैं । अब उनका सम्बन्ध पारिवारिक वातावरण या ग्राम के वातावरण से नहीं रहता,बल्कि उसका दायरा और भी बढ़ जाता है । बहुत से बच्चे उच्च विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में प्रवेश करते हैं । क्रमश: वे अनेक संस्थाओं और क्लबों के सदस्य बन जाते हैं । चलचित्र,रेडियो आदि की सहायता से उनका सामाजिक सम्बन्ध,परिवार,

गांव,प्रान्त,देश आदि सीमा का अतिक्रमण कर विश्व से हो जाता है । हां तेरह वर्ष से सत्रह वर्ष के बच्चे कभी-कभी एकान्त निवास भी पसन्द करते हैं, किन्तु इससे उनका सामाजिक ज्ञान या सामाजिक विकास की सीमा सीमित नहीं होती,इसका कारण अधिकांशत: संवेगात्मक रहता है,जिसके कई कारण हैं ।

सामाजिक व्यवहार के रूप

शैशावस्था में शिशु-परिवार के अन्य व्यक्तियों पर आश्रित रहता है । उसपर पर्याप्त निगरानी करनी पड़ती है । ये बच्चे आरम्भ में आत्म-केन्द्रित होते हैं, धीरे-धीरे इनमें सामाजिकता आती है । वातावरण से वे अभियोजन प्राप्त करने लगते हैं । वे हमेशा ऐसा व्यवहार करते हैं,जो अन्य व्यक्तियों अथवा समुदाय द्वारा प्रशंसित हो । बच्चों के सामाजिक व्यवहार के भिन्न-अभिन्न रूप हैं ।

अनुकरण

जब बच्चों को किसी कार्य के प्रति आकर्षण या रुचि होती है तो वे उसका अनुकरण करने लगते हैं । बच्चे यह भी सीखने लगते हैं कि बच्चे किस तरह हंसते हैं,रोते हैं, तथा किस संवेगात्मक परिस्थिति में किस प्रकार का व्यवहार करते हैं । बच्चे अपने समुदाय के अनुरूप ही व्यवहार करते हैं तथा उससे एकरूपता स्थापित करने की चेष्टा करते हैं । बच्चों में अपनों से बड़ों के प्रति विशेष दृष्टिकोण रहता है । वे उन्हें सर्वशक्तिमान् तथा सर्वबुद्धिमान मानते हैं,अत: वे उनके कार्यों का अनुकरण भी करते हैं ।

प्रतिद्वन्द्विता

चार वर्ष की आयु के लगभग बच्चों में प्रतिद्वन्द्विता की भावना देखी जाती है । वे सदा दूसरों से आगे बढ़ना चाहते हैं । यह भावना

तीन वर्ष की आयु में भी बच्चों में वर्तमान रहता है, किन्तु इसकी स्पष्ट अभिव्यक्ति विनाशात्मक रूप में होती है। प्राय: दूसरों के उकसाने पर भी यह प्रतिद्वन्द्विता की भावना आती है। पांच वर्ष की आयु में यह मनोवृत्ति अत्यन्त प्रभावपूर्ण (dominant attitude) देखी जाती है। उनकी यह मनोवृत्ति उन्हें कोई भी कार्य में उत्साहित करती है। वयस्क की उपस्थिति में बच्चे बहुधा प्रतिद्वन्द्विता का व्यवहार करते हैं।

प्रतिवादिता

यह मनोवृत्ति बाल्यावस्था में ही प्रकट हो जाती है। विशेषकर जब घर का अनुशासन कड़ा होता है। बाल-सुलभ व्यवहार के प्रति जब घर के लोगों की कुछ ऐसी मनोवृत्ति होती है, जिसे वे नहीं सह सकते तो उसके प्रति अस्वीकारात्मक व्यवहार करते हैं। ऐसे ही वातावरण में शिशु अपने से बड़ों का आग्रह नहीं मानते, खाना नहीं खाते तथा कोई भी नियमित कार्य नहीं करते।

झगड़ना

खेल के सिलसिले में बच्चों को झगड़ते देखा जाता है। सम्भवत: अनुभव की कमी के कारण ही वे ऐसा व्यवहार करते हैं। और वे पूर्ण रूप से खेल में सहयोग नहीं दे सकते। जब ये बच्चे झगड़ते हैं तो दूसरों का खिलौना ले लेते हैं, खेल के सिलसिले में बनाई चीजों को नष्ट कर देते हैं। आपस में मुठभेड़ होने पर वे रोते हैं चिल्लाते उछल-कूद करते तथा दांत भी काट लेते हैं। यद्यपि यह अभिव्यक्ति काफी तीव्र और भयंकर रूप में होती है, प्राय: थोड़ी देर तक ही टिकती है। इसके बाद शीघ्र ही उनकी मित्रता फिर कायम हो जाती है। बच्चों का झगड़ा प्राय: खिलौना या किसी वस्तु के लिए होता है। दो वर्ष के बच्चे की अपेक्षा चार वर्ष के बच्चे अधिक देर तक झगड़ते हैं। लड़कियों की अपेक्षा लड़के अधिक झगड़ते हैं। लड़कियां तर्क का विशेष उपयोग करती हैं और

लड़के शारीरिक शक्ति का । धीरे-धीरे आयु वृद्धि के साथ उनमें इस प्रकार सामाजिक व्यवहार की कमी देखी जाती है ।

सहयोग

छोटे बच्चे आत्म-केन्द्रित स्वभाव के होते हैं तथा तीन-चार वर्ष के लगभग अत्यधिक झगड़ालू होते हैं । अन्य बच्चों के साथ खेलने के सिलसिले में उनमें सहयोग की भावना भी जगती है । चार वर्ष के बच्चों में सहयोग का व्यवहार अधिक देखा जाता है । धीरे-धीरे इस सामाजिक व्यवहार का विकास होता जाता है ।

सहानुभूति

छोटे-छोटे बच्चों में सहानुभूति नहीं देखी जाती । जब कोई उन्हें जख्म या शरीर का कोई विकृत भाग दिखाया जाता है अथवा कोई दु:खद कहानी सुनाई जाती है तो सहानुभूति की कोई प्रतिक्रिया नहीं देखी जाती । तीन वर्ष के लगभग उनमें कभी-कभी यह व्यवहार देखा जाता है । सहानुभूति की प्रतिक्रिया भी एक प्रकार का सामाजिक व्यवहार है । इसमें बच्चे अन्य व्यक्तियों की संवेगात्मक अनुभूति से प्रभावित होते हैं तथा उसी सहानुभूति के प्रभाव से दूसरे के दु:ख तथा भाव को अपना समझने लगते हैं । जब कोई बच्चा या वयस्क गिर पड़ता है तो दूसरे बच्चे उसके प्रति सहानुभूति दिखाते हैं । जब दूसरे बच्चों पर मार पड़ती है या खिलौना छीनने के फलस्वरूप वे रोते हैं तो बच्चे उनपर सहानुभूति प्रकट करते हैं । सहानुभूति के समय बच्चे दूसरों को चूमते, सहायता करते, शरीर सहलाते और चोट लगे स्थान पर फूंक कर दर्द दूर करना चाहते हैं । बच्चे प्राय: अधिकारप्रिय होते हैं । वे दूसरों पर अपना अधिकार रखना चाहते हैं । यह प्रवृत्ति प्राय: सभी बच्चों में प्रबल रूप में देखी जाती है । बच्चे खेलते समय दूसरों का खिलौना ले लेते हैं । अपने खिलौने मिलाकर खास ढंग से खेलने के लिए निर्देश करते हैं । यह सहानुभूति और सहयोग का सुन्दर उदाहरण है ।

सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले तत्व

शारीरिक विकास

यदि किसी बच्चे की शारीरिक बनावट में दोष हो तो उसके विकास में बाधा पहुंचती है । अन्य बच्चे उसके दोष बतलाते रहते हैं और चिढ़ाते हैं । बच्चा अपने दोष के कारण बच्चों से अलग रहना चाहता है,अतः उसके सामाजिक विकास में बाधा पहुंचती है । अन्य बच्चों की तुलना में वह अपने में कमी पाता है । अतः उसमें हीनता की भावना आ जाती है । नाटा या दुबला-पतला बच्चा अन्य बच्चों की कर्कश आलोचनाओं को सुनता है,अतः खेल-कूद में में उसके विकास में बाधा पहुंचती है । खेल-कूद में ~~असमानता~~ असमानताओं के कारण बच्चे अन्तर्मुखी हो जाते हैं तथा अन्य तरह से अपनी कमी की पूर्ति करते हैं । खेल में भाग लेने के बदले अच्छा कपड़ा पहनना चाहते हैं । भाषा-दोष के कारण या अंग दोष के कारण उनका सामाजिक विकास नहीं हो पाता । बालकों में जो नेतृत्व करने की भावना होती है, वह कुंठित हो जाती है ।

स्वास्थ्य

स्वस्थ बच्चा प्रसन्न रहता है और उसका सामाजिक विकास सामान्य ढंग से होता है । वयस्कों के सम्पर्क में ही प्रसन्नता दिखाता है और उनके प्यार से संतोष प्रदान करता है । काफी उत्साह से वह बहुत देर तक खेलता है । उसके स्वास्थ्य का आधार पौष्टिक भोजन और उचित रूप से लालन-पालन है । 'तैंतर' कहानी की बालिका में इस पक्ष की ओर सुन्दर संकेत है । स्वस्थ बच्चे वयस्कों का अनुकरण करते हैं । जिन बच्चों का पालन-पोषण उचित रूप से नहीं होता और जो अस्वस्थ रहते हैं, वे प्रायः स्वभाव से संकोची हो जाते हैं । अस्वस्थ बच्चा को वयस्क पर अधिक आश्रित रहना पड़ता है,अतः वे स्वभाव से जिद्दी,उद्दण्ड, स्वार्थी हो जाते हैं । स्वस्थ बच्चे समुदाय संगठन में काफी उत्साह दिखाते हैं ।

पारिवारिक वातावरण

परिवार प्रथम शिक्षालय है जहां बच्चों का समाजीकरण होता है । पारिवारिक वातावरण में ही उनके सामाजिक विकास का प्रारम्भ होता है । जिन बच्चों के मां-बाप आपस में सुन्दर सामाजिक सम्बन्ध नहीं रख पाते,उनके शिशु का विकास भी वैसा ही होता है । अधिक लाड़-प्यार से बच्चे आश्रित रहना सीख जाते हैं,वे स्वावलम्बी नहीं हो पाते । इसके उदाहरण में प्रेमचन्द द्वारा लिखित 'दूध का दाम' शीर्षक कहानी का शिशु सुरेश है जो अत्यधिक प्यार से आलसी और प्रमादी बन गया है । ऐसे बालकों पर यदि अनियमित रूप से शासन रखा जाता है तो उनके व्यवहार में एकरूपता नहीं रहने पाती । इसी कारण कभी-कभी ऐसा होता है कि जो व्यक्ति उन्हें प्यार करता है ,उससे उनका सम्बन्ध अधिक हो जाता है और वे दूसरों के साथ विरोधी व्यवहार प्रदर्शित करते हैं । 'अल्फ्रेड एडलर' ने बताया कि परिवार में बच्चे के जन्म का क्रम भी सामाजिक विकास के लिए महत्त्वपूर्ण है । सबसे बड़े बच्चे के लिए पारिवारिक वातावरण अनुकूल होता है,उसे बहुत प्यार भी मिलता है । लेकिन सबसे छोटे बच्चे के बीच के बच्चों का विकास सन्तुलित रूप से नहीं हो पाता,क्योंकि बड़ा बच्चा तो परिवार में इकलौता होता है । परिवार के सभी सदस्यों का ध्यान उसकी ओर रहता है । परिवार के सबसे छोटे बच्चे की ओर भी सभी का ध्यान रहता है, उसे अधिक प्यार मिलता है,किन्तु सबसे छोटा होने के कारण छोटा बच्चा अपने को छोटा पाता है और आश्रित बन जाता है । अतः उसका सामान्य रूप से सामाजिक विकास नहीं हो पाता । परिवार के बीच बच्चों की स्थिति भी यही रहती है ।

बच्चों का सामाजिक विकास परिवार की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति पर भी निर्भर करता है,जिस परिवार में खेलने तथा लिखने पढ़ने की सुविधा रहती है,उसका विकास निर्धन बच्चों की अपेक्षा अधिक होता है । गोद लिए हुए बच्चे की सामाजिक स्थिति अपने बच्चे के समान नहीं रहती और उनका सामाजिक विकास भी समान ढंग से नहीं होता ।

पाठशाला का वातावरण

हमारे यहां प्रारम्भिक शिक्षा की उचित व्यवस्था नहीं है, अतः बच्चों का पाठशालीय सामाजिक विकास उचित ढंग से नहीं हो पाता है। अयोग्य अध्यापकों के कारण पाठशालाओं में उचित मनोवैज्ञानिक वातावरण नहीं हो पाता, बच्चों का सावेगिक विकास उचित रूप में नहीं हो पाता। नर्सरी स्कूल में बच्चों का विकास अधिक तेजी से होता है। ये वस्तु के छिन जाने पर उदासीन नहीं होते, काफी वाचाल हो जाते हैं, सहानुभूति से काम करते हैं।

जिन विद्यालयों में योग्य अध्यापक तथा शिक्षण हों, खेल और आनन्द के पर्याप्त साधन हों, तथा बच्चों को अधिकाधिक दिखाने की सुविधा प्राप्त होती हो, वहां के बच्चों का विकास अच्छी तरह हो पाता है। अध्यापक से मिलने में विद्यार्थी का भय तथा संकोच नहीं रहता क्योंकि शिक्षकों का व्यवहार तथा सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण होता है। अतः बच्चे अन्य बच्चों तथा शिक्षकों के साथ समुचित व्यवहार सीखते हैं। उनका सामाजिक अभियोजन अधिक सफलता से हो पाता है।

क्लब, कैम्प तथा दल का प्रभाव

बच्चों के सामाजिक विकास में इनका काफी प्रभाव पड़ता है। क्लब में बच्चों को मिलना पड़ता है, अतः एक दूसरे के व्यवहार का प्रभाव पड़ता है। इन्हें एक-दूसरे की रुचि का आदर करना पड़ता है और सहयोग से खेलना पड़ता है। बच्चे नवीनता के प्रेमी होते हैं, अतः घर से भिन्न जब कैम्पिंग के लिए जाते हैं तो उन्हें बड़ी प्रसन्नता होती है। कैम्प के वातावरण में इनमें आत्मविश्वास बढ़ जाता है, वे अधिक शिष्ट तथा विनीत हो जाते हैं। वे दूसरों के कल्याण तथा सहायता में अधिक सावधानी दिखाते हैं। वे अधिक उत्साही, साहसी और निःस्वार्थ हो जाते हैं, मिलना करना भी सीख जाते हैं। दल का प्रभाव भी इनपर पड़ता है। दल के अनुरूप ही ये काम करते हैं। दल की व्यवस्था तथा

सुरक्षा के लिए ये नेता की आज्ञा मानते हैं । अपने दल को आगे बढ़ाने के लिए सब तरह का त्याग करते हैं । एक दल में एक ही अवस्था के बालक रहते हैं । उनका सबसे बड़ा खतरा यही रहता है कि दल कहीं असामाजिक न हो जाय ।

सामाजिक नियम

सामाजिक नियमों, रूढ़ियों तथा परम्पराओं के अनुसार भी बालकों का सामाजिक विकास होता है, जब बच्चे किसी समुदाय का निर्माण करते हैं तो इस बात पर ध्यान देते हैं कि उसे सामाजिक मान्यता मिल सके । जिन व्यवहारों तथा विचारों पर सामाजिक नियमों का नियन्त्रण रहता है, बच्चे उनको विरोध करते हैं । सामाजिक प्राणी होने के कारण उनकी जीवन-शैली समाज के अनुकूल होती है तथा इसी शैली का प्रभाव उनके खेल तथा अन्य व्यक्तियों पर पड़ता है । शहर और ग्राम के सामाजिक नियम भिन्न होते हैं । अत: बच्चों के व्यवहार में भिन्नता आ जाती है, बच्चों की सामाजिक मनोवृत्ति भी सामाजिक मान्यता के अनुकूल ही विकसित होती है ।

-0-

षष्ठ अध्याय

-0-

चरित्र-चित्रण की सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि के आधार पर प्रेमचन्द के शिशु-पात्र

(१) कथानक के पात्र के रूप में --

(क) कथानक के प्रधान पात्र के रूप में

(ख) गौण पात्र

(ग) वातावरण का स्रष्टा

(घ) कथानक का सूत्रधार

(ङ०)कथानक का अप्रत्यक्ष पात्र ।

(२) वर्णन-प्रणाली के रूप में

(३) कथा के कथोपकथन के रूप में

-0-

षष्ठ अध्याय

-0-

चरित्र-चित्रण की सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि के आधार पर प्रेमचन्द के शिशु-पात्र

कथा-साहित्य के अत्यन्त मुख्य उपादानों में चरित्र एक है । इसके विकास की आरम्भिक अवस्था में घटनाओं को अधिक महत्व दिया गया है । बाद में चरित्र-चित्रण के महत्व को स्वीकार किया गया है । मानव-चरित्र का अध्ययन क्रमशः उद्देश्य बनता गया । मानव-चरित्र के अध्ययन के लिए विविध प्रणालियों का प्रयोग किया जाने लगा । चरित्र-चित्रण की प्राचीन परम्परागत प्रणाली थी -- घटनाएं और उनसे उद्भूत प्रतिक्रियाएं । मनुष्य को जीवन की विविध घटनाओं के मध्य प्रतिष्ठित करके यह देखा जाता था कि उन घटनाओं के सम्पर्क में आकर वह क्या सोचता है, क्या करता है । परिवार, समाज और राष्ट्र के सम्बन्ध में किसी घटना-विशेष को लेकर उसकी क्या प्रतिक्रिया होती है । इस तरह एक पात्र को अनेक परिस्थितियों में रखकर अनेक घटनाओं से सम्पृक्त करके उसके चरित्र के विविध पक्षों को उभारा जाता था । आगे चलकर यह अनुभव किया जाने लगा कि इस प्रकार व्यक्ति का सर्वांगीण चित्रण नहीं हो पा रहा है । व्यक्ति अपने-आप में कुछ नहीं होता, न अच्छा होता है न बुरा । इसी तुलनात्मक अच्छाई या बुराई से समाज में उसका स्थान निरूपित होता है । व्यक्ति का यह मूल्यांकन उसके आकलन के लिए धीरे-धीरे आवश्यक माना जाने लगा । इसको उद्देश्य बनाकर चरित्र-चित्रण की अन्य प्रणालियों का विकास हुआ उनमें सबसे मुख्य प्रणाली थी एक ही व्यक्ति को अनेक परिस्थितियों में रखकर और अनेक व्यक्तियों के को एक ही परिस्थिति में रखकर देखना । एक ही व्यक्ति को अनेक परिस्थितियों के सम्पर्क में रखकर उसके

अध्ययन द्वारा उसके चरित्र के विभिन्न पक्ष सामने आते थे, किन्तु अनेक व्यक्तियों को उसी परिस्थिति में रखकर उनकी प्रतिक्रियाओं को दिखाना और फलत: चरित्रों की तुलनात्मक प्रतिक्रियाओं का चित्रण करना किसी चरित्र का वह मूल्य स्थिर करता था, जो अन्य चरित्रों की अपेक्षा उसे मिलना चाहिए।

कुछ साहित्यिकों ने चेतना के प्रवाह को चरित्र-चित्रण का आधार बनाया। मनुष्य चेतना के अखण्ड प्रवाह से सम्पृक्त है। एक मनुष्य का दूसरे से सम्बन्ध इसी प्रवाह के माध्यम से है। चेतना का यह प्रवाह अखण्डरूप में वर्तमान है। वस्तुत: बाह्य समस्त कार्य-कलापों का उद्गम-स्थल अन्त:चेतना है। ऐसे अनेक स्थूल कार्य होते हैं, जो बाहर से परस्पर विरोधी मालूम होते हैं, किन्तु जिनका मूलत: घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। मनोविज्ञान के आधार पर नहीं, बल्कि इस चेतना के प्रवाह के आधार पर कतिपय कलाकारों ने यह सिद्ध करना चाहा है कि कभी-कभी एक पात्र दूसरे से उदासीन या विरक्त नहीं ह मालूम होता, परन्तु उसके भीतर सच्ची विरक्ति या उदासीनता होती है। यह विरक्ति गहरी सम्पृक्ति का स्थूल प्रकाश हो सकती है। डी०एच० लारेन्स ने अपने उपन्यासों में चेतना के प्रवाह के आधार पर अपने पात्रों का अंकन किया है।

चरित्र-चित्रण की आधुनिकतम प्रणालियों में पात्रों की मानसिक प्रतिक्रियाओं का अध्ययन करके ही अनेक विषयों में अपना मत स्थापित किया जा सकता है। कुछ स्थूल दृष्टि से पात्र जो दिखाई देता है वही उसका सही रूप नहीं होता। प्रत्येक पात्र का जीवन उसकी अवचेतना के द्वारा भी परिचालित होता है। नि:सन्देह फ्रायड के आविष्कारों ने चरित्र-चित्रण की आधुनिक प्रणाली को जन्म दिया है। अपने 'कहानी-कला' निबन्ध में प्रेमचन्द ने लिखा था "वर्तमान आख्यायिका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और जीवन के यथार्थ और स्वाभाविक चित्रण को अपना ध्येय समझती है, उसमें कल्पना की मात्रा कम, अनुभूतियों की मात्रा अधिक होती है। इतना ही नहीं, बल्कि अनुभूतियां ही रचनाशील भावना से अनुरंजित होकर कहानी बन जाती हैं।"[१]

---

१ प्रेमचन्द : 'कुछ विचार', पृ०३१

वस्तुत: प्रेमचन्द ने कहानी के अन्तर्गत जीवन के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण को बहुत बड़ा महत्त्व दिया है । जीवन के यथार्थ और स्वाभाविक चित्रण के लिए मनोविज्ञान की भूमि नितान्त अपेक्षित है । यदि हम वास्तविक जीवन से किसी स्थिति और पात्र को चुनकर यथार्थ चित्रण प्रणाली के द्वारा उसका चित्रण कर दें तो भी उस स्थिति तथा पात्र की स्वाभाविकता तथा विश्वसनीयता के लिए मनोविज्ञान की अपेक्षा होगी । कहानी में कल्पना की अपेक्षा अनुभूतियों की जो महत्ता प्रतिपादित की जाती है, उसका लक्ष्य भी मनोविज्ञान की उपादेयता की ओर ही संकेत करना है । मनोविज्ञान के अभाव में किसी चरित्र का संगठन और उसका विकास समुचित रूप से दिखाया ही नहीं जा सकता । किसी स्थिति अथवा घटना के उपस्थित होने पर पात्र विशेष की जो प्रतिक्रिया होती है और तदुपरान्त वह जिस व्यवहार-व्यापार में प्रवृत्त दिखलाई पड़ता है,उसकी व्याख्या मनोविज्ञान द्वारा ही सम्भव है । मनुष्य के प्रत्येक कृत्य के लिए मनोविज्ञान ही कारण उपस्थित कर सकता है ।

वर्तमानकाल में तो मनोविश्लेषण के प्रभाव-स्वरूप,मनुष्य के अचेतन मन तक के रहस्यों का उद्घाटन होने लगा है । मनो-विश्लेषण पद्धति ने कहानीकार की कलम को बड़ा बल दिया है । यदि उसका समुचित उपयोग किया जाय तो चरित्रांकन में अद्भुत सफलता मिल सकती है,किन्तु ऐसा होता कम ही है । प्राय: कहानीकार कहानी को भुलाकर अपने मनोविश्लेषण ज्ञान के प्रदर्शन में लग जाते हैं और इस प्रकार कहानी न देकर मनोविज्ञान का ज्ञान पाठक पर थोपते हैं । कुशल और सफल कहानी लेखक मनोविज्ञान के साधन द्वारा साध्य की पूर्णता का पूर्ण आभास अपने कृतित्व में दिखाते हैं ।

चरित्र-चित्रण की विभिन्न कलात्मक प्रणालियां जिन्हें कोई लेखक अपनाता है, वे ये हैं—

(१) कार्य-कलाप द्वारा चरित्र-चित्रण ।

(२) लेखक का पात्र के सम्बन्ध में अपनी ओर से टिप्पणी ।

(३) पात्रों की बातचीत से उनके चरित्र का उद्घाटन कराना, कभी-कभी स्वगत भाषण का भी प्रयोग ।

(४) स्वयं पात्र द्वारा अपने चरित्र का चित्रण और विश्लेषण ।

कार्य-कलाप द्वारा चरित्र-चित्रण

कार्य-कलाप दिखाना तथा चेतना के अखण्ड प्रवाह का आकलन चरित्र-चित्रण के आधुनिकतम दृष्टिकोण समझे जा रहे हैं । इनमें पात्र के क्रिया-कलाप ही उसके चरित्र का उद्घाटन करते हैं । पात्रों के कार्यों से उनके चरित्र पर प्रकाश पड़ता है । उनके कार्यों से उनके भावों-विचारों का आभास मिल जाता है । मनुष्य के कार्यों से अधिक विश्वस्त प्रमाण उसके चरित्र के गुणावगुण के पक्ष-विपक्ष में नहीं रखा जा सकता । प्राय: सभी कहानीकार पात्रों के कार्य-कलाप को उनके चरित्रांकन का आधार बनाते हैं । उपेन्द्रनाथ अश्क की 'जुदाई की शाम की प्रीत' (उबाल)[1] के निम्नलिखित उदाहरण से उपर्युक्त दृष्टिकोण का स्पष्टीकरण स्पष्ट है — 'धीरे-धीरे दरी पर पांव रखता हुआ चन्दन बढ़ा और जाकर दरवाजे के साथ पंजों के बल खड़ा हो गया । ऊपर छत में लाल रंग का बल्ब जल रहा था । उसके धीमे प्रकाश में वह आंख फाड़-फाड़ कर देखने लगा किन्तु दूसरे क्षण वापस मुड़ा । उसका शरीर गर्म होने लगा था , अंगों में तनाव आ गया था , कंठ और होंठ सूखने लगे थे और उसकी नसों में जैसे खून उबलने लगा था । उसी तरह पंजों के बल भागता वह बाहर आया । धीरे से उसने दरवाज़ा लगाया और बाहर चांदनी में आ खड़ा हुआ । सामने डेकारेड का तना खड़ा था उसके जी में आया कि अपने जुवा बक्ष की एक ही चोट से उस तने को गिरा दे ।'[1]

प्रेमचन्द की 'सती' शीर्षक कहानी में भी चिन्ता नामक एक वीर बुन्देली कन्या का चरित्र-चित्रण उसके कार्य-कलापों द्वारा ही किया गया है । 'चिन्ता का बाल्यकाल पिता के साथ समर भूमि

---

१ डा० प्रकाश दीक्षित, एम०ए० : 'हिन्दी कहानी', पृ०४१

में कटा । बाप उसे किसी खोह में या वृक्ष की आड़ में छिपाकर मैदान में चला जाता था । चिन्ता निश्शंक भाव से बैठी हुई मिट्टी के किले बनाती और बिगाड़ती । उसके घरौंदे किले ही होते थे, उसकी गुड़िया ओढ़नी न ओढ़ती थी । वह सिपाहियों के गुड्डे बनाती और उन्हें रण-क्षेत्र में खड़ा करती थी । कभी-कभी उसका पिता संध्या समय न लौटता, पर चिन्ता को भय छू तक न गया था । निर्जन स्थान में भूखी-प्यासी रात भर बैठी रह जाती ।[१] इस प्रकार कार्य-व्यवहार के द्वारा चरित्र-चित्रण करना साहित्यकारों का एक विशिष्ट शिल्प समझा जा सकता है ।

लेखक का पात्रों पर अपनी ओर

लेखक का पात्रों पर अपनी ओर से टिप्पणी

इसमें लेखक किसी पात्र पर अपनी ओर से टिप्पणी देता है । इसमें विशेष कौशल की आवश्यकता नहीं है । जो लेखक वर्णन में चतुर है, वह सफलता पूर्वक इस प्रकार के चरित्र-चित्रण में सफल हो सकता है । इसमें लेखक को पात्र के चरित्र की पूर्ण जानकारी होती है । वह पात्र के चरित्र की सजीव कल्पना भी कर सकता है । वह अपनी ओर से कुल शील, रूप-रंग, वेश-भूषा, स्वभाव, विचार-विश्वास, धारणा आदि सभी के विषय सीधे-सीधे कहता है । उसे अन्य किसी की अपेक्षा नहीं होती । पात्र के सम्बन्ध में जितना वह जानता है, उतना अन्य कोई नहीं और वह उस जानकारी को जिस रूप में उपस्थित करता है, उसी रूप में वह स्वीकार्य और पूर्ण होती है । प्रेमचन्द की 'लांछन' प्रसाद की 'गुंडा', अज्ञेय की 'वे दूसरे' आदि कहानियों में इसी प्रकार का चरित्र-चित्रण मिलता है । प्रेमचन्द के 'लांछन' से यह स्पष्ट है -- वह पढ़ी लिखी गरीब बुढ़ी औरत थी, देखने में सरल, बड़ी हंसमुख, लेकिन जैसे चतुर प्रूफ-रीडर की निगाह गलतियों पर ही जा पड़ती है, उसकी आँखें बुराइयों पर ही जा पड़ती थीं । शहर में ऐसी कोई महिला न थी, जिसके विषय में दो-चार छुपी-छिपी बातें उसे न मालूम हों । उसकी चाल में बिल्लियों का संयम था ।

---

१ 'मानसरोवर', भाग ५, पृ० ६६

दबे पैर धीरे-धीरे चलती, पर शिकार की आहट पाते ही जान मारने को तैयार हो जाती थी। उसका कब काम था महिलाओं की सेवा-टहल करना, पर महिलाएं उसकी सूरत से कांपती थीं[१]।

पात्रों के वार्तालाप से चरित्र का उद्घाटन एवं स्वगत भाषण का प्रयोग

लेखक अपने एक पात्र द्वारा भी किसी दूसरे पात्र के चरित्र का विश्लेषण उपस्थित करता है। इस प्रकार विश्लेषण में वह अपने व्यक्तित्व को पृथक रखते हुए उस पात्र को ही सब कुछ कहने देता है। कहानी का यह पात्र दूसरे पात्र से परिचय प्राप्त करता है, उसके चरित्र की विशेषताओं पर प्रकाश डालता है और उसकी आलोचना उपस्थित करता है। लेखक स्वयं अपनी ओर से कुछ नहीं कहता, सब कुछ उस पात्र को ही कहने देता है। इस प्रकार के चरित्र-चित्रण का उत्कृष्टतम उदाहरण प्रेमचन्द की 'गिला' कहानी से उपलब्ध होता है। इसमें एक स्त्री अपने पति के चरित्र का विश्लेषण प्रस्तुत करती है --'महाशय अपने दिल में समझते होंगे, मैं कितना विनीत, कितना परोपकारी हूं। शायद उन्हें इन बातों का गर्व है। मैं इन्हें परोपकारी नहीं समझती, विनीत नहीं समझती हूं। यह जड़ता है,सीधी-सादी निरीहता इसलिए मैं तो इन्हें कृपण कहूंगी,अरसिक कहूंगी, हृदय-शून्य,उदार नहीं कह सकती[२]।

पात्र द्वारा अपने चरित्र का वर्णन एवं विश्लेषण

केवल पात्रों का क्रिया-कलाप,दिखाकर लेखक यदि चुप रह जाय, अपनी ओर से टिप्पणी न दे तो उसका एक बड़ा लाभ यह है कि पाठक उन पात्रों के सम्बन्ध में अपनी राय बनाने में स्वतन्त्र होताहै और मक पाठक को यह सुविधा देना एक बहुत बड़ी कला है। पाठक की राय कम-से-कम अपने लिए अधिक विश्वसनीय होती है। पात्र स्वयं जब वार्तालाप द्वारा अपने

---

१ 'मानसरोवर',भाग १

२ ,, ,,

चरित्र का उद्घाटन करता है, तब वह अपनी ईमानदारी और तटस्थता के साथ कार्य करता है। वह अपना विश्लेषण, अपना चित्रण, अपने शब्दों में करता है। वह अपना परिचय देता है। अपनी इच्छा, आकांक्षा, रुचि, अरुचि, धारणा-विश्वास, विचार आदि के सम्बन्ध में स्वयं ही कुछ बताता है। वह अपने-आप अपना आलोचक होता है। चरित्र-चित्रण की यह पद्धति यद्यपि बड़ी गूढ़ है, किन्तु अत्यन्त स्वाभाविक है, क्योंकि आत्म-विश्लेषणात्मक कहानियों में पाठक जितनी आत्मीयता का अनुभव करता है, उतना अन्य कहानियों में नहीं। राजाराधिका रमण प्रसाद सिंह की 'कानों में कंगना', इलाचन्द्र जोशी की 'अपत्नीक', जैनेन्द्र की 'क्या हो' तथा राजेन्द्र यादव की 'अभिमन्यु की आत्महत्या' इसी तरह की कहानियां हैं। 'अभिमन्यु की आत्महत्या' से इसे उद्धृत कर स्पष्ट किया जा सकता है। 'किसी ने कहा था उस जीवन देने वाले भगवान को कोई हक नहीं है कि हमें तरह-तरह की मानसिक यातनाओं से गुज़रता देख-देख कर बैठा-बैठा मुस्कुराये, हमारी मजबूरियों पर हंसे। मैं अपने आप से लड़ता रहूं, छटपटाता रहूं, जैसे पानी में पड़ी चींटी छटपटाती है और किनारे पर खड़े शैतान बच्चे की तरह मेरी चेष्टाओं पर वह किलकारियां मारता रहे। नहीं मैं उसे यह क्रूर आनन्द न दे पाऊंगा और उसका जीवन उसे लौटा दूंगा। मुझे इन निरर्थक परिस्थितियों के चक्रव्यूह में डालकर तू खिलवाड़ नहीं कर पायेगा कि हल तो तेरी मुट्ठी में बन्द है ही। सही है, कि मां के पेट में ही मैंने सुन लिया था कि चक्रव्यूह तोड़ने का रास्ता क्या है और निकलने का तरीका मैं नहीं जानता था, लेकिन... लेकिन निकल कर ही क्या होगा? किस शिव का धनुष मेरे बिना अब टूटा पड़ा है? किस अर्पणा शक्ति की वरमालाएं मेरे बिना सूख-सूख कर बिखरी जा रही हैं। किस एवरेस्ट की चोटियां मेरे बिना अछूती बिलख रही हैं? -- जब तूने मुझे जीवन दिया है तो 'अहं' भी दिया है, 'मैं हूं' का बोध भी दिया है और मेरे इस 'मैं' को हक है कि वह किसी भी चक्रव्यूह को तोड़कर घुसने और निकलने से इन्कार कर दे... और इस तरह व तेरे इस बर्बर मनोरंजन की शुरुआत ही न होने दे।'[1]

---

1 रा० प्रकाश दीक्षित एम०ए० : 'हिन्दी कहानी', पृ० ३६

इस प्रणाली के सम्बन्ध में हम यह भी कह सकते हैं कि जब पात्र स्वयं बातचीत के द्वारा अपने चरित्र का उद्घाटन कर रहा है तो क्या वह पूरी ईमानदारी और तटस्थता ही बरत रहा है ? इसमें हम सन्देह कर सकते हैं । अपने बारे में किसी भी व्यक्ति की राय अर्ध-सत्य होती है । इसलिए अपने विषय में दूसरों की राय जानना जरूरी है । यदि कोई यह सोचता है कि वह हरदम ठीक कर रहा है तो वह दूसरे की दृष्टि से ठीक नहीं हो सकता है, और दूसरे ही गलत हैं यह कैसे कहा जाय ? `शेखर : एक जीवनी` में शेखर का चरित्र इसलिए कमजोर है कि शेखर अपने बारे में जो जानता है,उसी को ठीक मानता है । दूसरों की राय जानने की वह आवश्यकता ही नहीं समझता । वस्तुत: किसी एक प्रणाली से चरित्र को पूर्णतया चित्रित करना कठिन है । इसलिए बहुधा चरित्र को सभी दृष्टियों से देखने के लिए सभी प्रणालियों का प्रयोग करना पड़ता है । चूंकि कहानी में चरित्र के एक ही पक्ष का उद्घाटन करना रहता है इसीलिए यह आवश्यक नहीं है कि उसमें चरित्र-चित्रण के एक से अधिक प्रणालियों का प्रयोग किया जाय ।

कथोपकथन द्वारा चरित्र-चित्रण

कहानी के अन्य तत्वों में पात्र तथा घटनाओं के बाद कथोपकथन का सर्वाधिक महत्व है । कथोपकथन के द्वारा किसी चरित्र का चित्रण किया जाता है । कथोपकथन के समावेश से कहानी में नाटकीयता आ जाती है । कहानी की रोचकता, मनोरंजकता,सजीवता,प्रभावशीलता आदि की अभिवृद्धि में यह बहुत ही सहायक होता है । कथोपकथन के लिए यह अपेक्षित है कि वह संक्षिप्त ,स्वाभाविक,सजीव और साभिप्राय हो । संक्षिप्तता कथोपकथन का मुख्य गुण है । जब दो-चार व्यक्तियों के बीच वार्तालाप होता है तो एक ही व्यक्ति बहुत अधिक समय तक नहीं बोलता रहता, सभी व्यक्ति थोड़ा-थोड़ा बोलते हैं । यदि उनमें से एक ही व्यक्ति बराबर या बहुत अधिक बोलता रहे तो न तो कथनों में अभिनयात्मकता आयेगी और न स्वाभाविकता और न सजीवता । छोटे-छोटे कथनों में ही साधारणत: व्यक्तियों का वार्तालाप चलता है,तभी उचित भी लगता है। वैसे भी समाज में व्यक्ति ऐसे

जाते हैं जो दूसरे के कान काटकर अपनी जेब के हवाले कर लेते हैं और सुनने वाले मुंह पर हाथ रख लेते हैं । कमी-कमी ऐसी स्थिति मी आ खड़ी होती है, जब एक ही व्यक्ति बोलता जाता है और उसका कथन अस्वामाविक नहीं प्रतीत होता। आवेशपूर्ण स्थितियों में ऐसा ही होता है । अतएव किसी मी वार्तालाप की स्वामाविकता और सजीवता की रक्षा करने के लिए पात्र और परिस्थिति का सम्यक् ज्ञान,स्वामाविक तथा सजीव कथोपकथन योजना के लिए आवश्यक है । इन गुणों के साथ-साथ कथोपकथन में साभिप्रायता का गुण मी होना चाहिए । कथोपकथन का निश्चित अर्थ होना चाहिए और उसका सीधा सम्बन्ध कहानी के प्रतिपाद्य से होना चाहिए । संक्षेप में "कथोपकथन का प्रयोग तो कहानी की घटना की प्रगति एवं पूर्वा पर संगति, चरित्र-चित्रण तथा कहानीगत समस्या की व्याख्या केर लिए होता है[1] ।"

कथोपकथन चरित्र का परिचायक है । कथोपकथन चरित्र का विश्लेषण करने में बड़ा सहायक होता है । प्रत्येक व्यक्ति के बात करने का तरीका अलग होता है । बातचीत करते हुए उसकी मुद्रा,वाणी का उतार-चढ़ाव वाक्यों में विशेष पद्धति का प्रयोग आदि कुछ ऐसी महत्व की बातें हैं कि बातचीत के ढंग से व्यक्ति के बारे में अनेक बातों का पता चल जाता है । अपनी वाणी का व्यवहार वह चाहे बात कहने में करे या उसे छिपाने में दोनों ही स्थितियों में उसके चारित्रिक गुण-दोष का थोड़ा-बहुत प्रकाशन निश्चित रूप से होता है । मनुष्य की बातचीत से उसके विषय में क्या नहीं जाना जा सकता ? उसकी सांस्कृतिक भूमिका,सामाजिक परिवेश,व्यक्तित्व,इच्छा,आकांक्षा, रुचि,अरुचि विचार-विश्वास सभी कुछ जाना जा सकता है ।

प्रेमचन्द ने कथोपकथन द्वारा जिन शिशु पात्रों का चरित्र-चित्रण किया है, वे ये हैं--

बाबबहादुर — नहीं आज मुझे घर पर पाठ याद करने का अवकाश नहीं मिला, यहीं बैठकर पढूंगा ।

---

१ प्रो० लक्ष्मण प्रसाद सिंह : "गवेषणा" ,पृ० ३२

जगत सिंह -- अच्छा, मुंशी जी से तो न कहोगे ?

बाजबहादुर -- मैं स्वयं कुछ न कहूंगा, लेकिन उन्होंने मुझसे पूछा तो ?

जगत सिंह -- कह देना, मुझे नहीं मालूम । अगर तुमने चुगली खाई और हमारे ऊपर मार पड़ी तो हम तुम्हें पीटे बिना न छोड़ेंगे ।

बाजबहादुर -- हमने कह दिया कि चुगली न खाएंगे, लेकिन मुंशी जी ने पूछा तो झूठ भी न बोलेंगे ।

जयराम -- तो हम तुम्हारी हड्डियां भी तोड़ देंगे ।

बाजबहादुर -- इसका तुम्हें अधिकार है ।[१]

(छुट्टी होने के बाद बाजबहादुर घर की तरफ चला । रास्ते में एक अमरूद का बाग था । वहां जगत सिंह और जयराम कई लड़कों के साथ खड़े थे । बाजबहादुर चौंका, समझ गया कि ये लोग मुझे छेड़ने पर उतारू हैं । किन्तु बचने का कोई उपाय न था । कुछ हिचकिचाता हुआ आगे बढ़ा । जगतसिंह बोला -- आओ लाला । बहुत राह दिखाई । आओ सच्चाई का इनाम लेते जाओ ।

बाजबहादुर -- रास्ते से हट जाओ मुझे जाने दो ।

जयराम -- ज़रा सच्चाई का मज़ा तो चखते जाइए ।

बाजबहादुर -- मैंने तुमसे कह दिया था कि जब मेरा नाम लेकर पूछेंगे तो मैं बता दूंगा ।

जयराम -- हमने भी तो कह दिया था कि तुम्हें इस काम का इनाम दिए बिना न छोड़ेंगे ।

मिठाई के लोभ में बालक किस प्रकार सारी बातें सच-सच निष्कपट भाव से बता देता है , इस सिलसिले में झेंकू का चित्रण इस प्रकार कथोपकथन द्वारा हुआ है --

`चिन्तामणि ने पीछे फिर कर यह दृश्य देखा तो रुक गये और झेंकू राम ने पूछा -- क्यों बेटा, कहां नेवता है ?

झेंकू -- बता दें तो हमें मिठाई दोगे न ?

---

१ मानसरोवर भाग,५, पृ०१८

चिन्ता -- हां दूँगी, बताओ ।

फेंकू -- रानी के यहां ।

चिन्ता -- कहां की रानी ।

फेंकू -- यह मैं नहीं जानता, कोई बड़ी रानी हैं ।

+ + + +

रानी ने भण्डारी को बुलाकर कहा -- इन छोटे-छोटे तीनों बच्चों को खिला दो । ये बेचारे क्यों भूखे मरें । क्यों फेंकू राम मिठाई खाओगे ?

फेंकू -- इसीलिए तो आए हैं ।

रानी -- कितनी मिठाई खाओगे ?

फेंकू -- बहुत सी (हाथों से बताकर) इतनी ।

रानी -- अच्छी बात है । जितनी खाओगे उतनी मिलेगी, पर जो बात मैं पूछूं, वह बतानी पड़ेगी । बताओगे न ?

फेंकू -- हां बताऊंगा, पूछिए ।

रानी -- झूठ बोले तो एक मिठाई भी न मिलेगी समझ गये ।

फेंकू -- मत दीजिएगा । मैं झूठ बोलूंगा ही नहीं ।

रानी -- अपने पिता का नाम बताओ ।....

... फेंकूराम ने धीरे से कोई नाम लिया । इसपर पंडित जी उसे इतने जोर से डांटा कि उसकी आधी बात मुंह में रह गई ।[1]

इस प्रकार के कथोपकथन के अनेक स्थल कहानियों में उपलब्ध हो जायेंगे । उनके उपन्यास `गोदान` में भी कथोपकथन के ही माध्यम से किसी-किसी स्थल पर प्रेमचन्द ने गोबर झुनिया आदि का चरित्र चित्रण किया है ।

---

१ मानसरोवर, भाग१, पृ०२८

'कुछ देर बाद अपने विद्रोह दबाये रहने के बाद गोबर बोला -- यह तुम रोज-रोज़ मालिकों की खुशामद करने क्यों जाते हो? बाकी न चुके तो प्यादा आकर गालियां सुनाता है, बेगार देनी ही पड़ती है, नज़र-नज़राना सब तो हमसे भराया जाता है फिर किसी की क्यों सलामी करो ।'

....'बड़े आदमियों की हां-में-हां मिलाने में कुछ न कुछ आनन्द तो मिलता ही है । नहीं लोग मेम्बरी के लिए क्यों खड़े हों?'[1]

होरी -- 'हमलोग समझते हैं, बड़े आदमी बहुत सुखी होंगे, लेकिन सच पूछो, तो वह हमसे भी ज्यादा दुखी हैं । हमें अपने पेट की चिन्ता है, उन्हें हज़ारों चिन्ताएं घेरे रहती हैं ।'[2]

गोबर ने व्यंग्य किया -- तो फिर अपना इलाका हमें क्यों नहीं दे देते ? हम अपने खेत, बैल, हल, कुदाल सब उन्हें देने को तैयार हैं । करेंगे बदला ? यह सब धूर्तता है, निरी मोटमरदी । जिसे दुख होता है वह दरजनों मोटरें नहीं रखता, महलों में नहीं रहता, हलवा-पूरी नहीं खाता और न नाच-रंग में लिप्त रहता है । मज़े से राज का सुख भोग रहे हैं, उसपर दुःखी हैं ।'

होरी ने झुंझलाकर कहा-- अब तुमसे बहस कौन करे भाई । जैजाल किसी से छोड़ी जाती है कि वह छोड़ देंगे । हमीं को खेती में क्या मिलता है ? एक आने नकदी की मजूरी भी तो नहीं पड़ती ..... ।

गोबर ने प्रतिवाद किया -- यह सब कहने की बातें हैं । हम लोग दाने-दाने को मुहताज हैं, देह पर साबित कपड़े नहीं हैं, चोटी का पसीना एड़ी तक आता है, तब भी गुज़र नहीं होता । उन्हें क्या, मज़े से गद्दी-मसनद लगाये बैठे हैं, सैकड़ों नौकर-चाकर हैं, हज़ारों आदमियों पर हुकूमत है । रुपये न जमा होते हों, पर सुख तो सभी तरह का भोगते हैं । धन लेकर आदमी और क्या करता है ?

'तुम्हारी समझ में हम सब बराबर हैं ?'

'भगवान ने तो सबको बराबर ही बनाया है ।'

1 गोदान, पृ० १६ पांचवां संस्करण । 2- गोदान, पृ० १८

'यह बात नहीं है बेटा, छोटे-बड़े भगवान के घर से बनकर आते हैं.......'

' यह सब समझने की बातें हं । भगवान सबको बराबरबनाते हैं । यहां जिसके हाथ में लाठी है,वह गरीबों को कुचल कर बड़ा आदमी बन जाता है ।'

' यह तुम्हारा भरम है । मालिक आज भी चार घण्टे रोज़ भगवान का भजन करते हैं ।'

'किसके बल पर यह भजन-भाव और दान-धर्म होता है ?'

'अपने बल पर ।'

'नहीं किसानों के बल पर और मजदूरों के बल पर । यह पाप का धन पचे कैसे ? इसलिए दान-धर्म करना पड़ता है, भगवान का भजन इसीलिए होता है भूखे-नंगे रहकर भगवान का भजन करें तो हम भी देखें । हमें कोई दोनों जून खाने को दे तो हम आठों पहर भगवान का जप.ही करते रहें । एक दिन खेत में ऊख गोड़ना पड़े तो सारी भक्ति भूल जाय ।'

\+ + +

'झुनिया ने कलसा न दिया । कुएं के जगत पर जाकर मुस्कुराती हुई बोली--तुम हमारे मेहमान हो । कहोगे एक लोटा पानी भी किसी ने न दिया ।'

'मेहमान काहे को हो गया । तुम्हारा पड़ोसी ही तो हूं ।'

'पड़ोसीसाल भर में एक बार भी सूरत न दिखाये तो मेहमान ही है ।'

'रोज-रोज के मरजाद भी तो नहीं रहती ।'

झुनिया हंसकर तिरछी नजरों से देखती हुई बोली -- वही मरजाद तो दे रही हूं । महीने में एक बेर आओगे ठण्डा पानी दूंगी, पन्द्रहवें दिन आओगे, चिलम पाओगे । सातवें दिन आओगे खाली बैठने को माची दूंगी । रोज-रोज आओगे कुछ न पाओगे ।

'दरसन तो दोगी ?'

'दरसन के लिए पूजा करनी पड़ेगी[१] ।'

---

१ गोदान, [illegible]

'निर्मला' उपन्यास के मुंशी तोताराम के मंझले पुत्र जियाराम का चरित्र-चित्रण कथोपकथन द्वारा इस प्रकार दिखाया गया है --

'जियाराम जरा शोख था । बोला -- उनको तो आप कुछ कहते नहीं हमीं को धमकाते हैं । कभी पैसे नहीं देतीं ।'

सियाराम ने इस कथन का अनुमोदन किया,कहती है-- मुझे दिक करोगे तो कान काट लूंगी । कहती हैं कि नहीं जिया ?'[१]

\+ \+ \+

जियाराम ने बिगड़ कर कहा -- दूध बन्द होने से तो आपका महल बन रहा होगा, भोजन भी बन्द कर दीजिए।मुंशि-जी -- दूध पीने का शौक है, आपे

चककर दुहक

मुंशि जी	-- दूध पीने का शौक है तो जाकर दुहा क्यों नहीं लाते ? पानी के पैसे तो मुझसे न दिए जायेंगे ।
जियाराम	-- मैं दूध दुहाने जाऊं, कोई स्कूल का लड़का देख ले तब ?
मुंशी जी	-- तब कुछ नहीं । कह देना, अपने लिए दूध लिए जाता हूं। दूध लाना कोई चोरी नहीं है ।
जियाराम	-- चोरी नहीं है, आपही को कोई दूध लाते देख ले,तो आपको शर्म न आयेगी ।
मुंशी जी	-- बिलकुल नहीं । मैंने इन्हीं हाथों से पानी खींचा है । अनाज की गठरियां लाया हूं । मेरे बाप लखपती नहीं थे ।
जियाराम	-- मेरे बाप तो गरीब नहीं हैं, मैं क्यों दूध दुहाने जाऊं ? आखिर आपने कहारों को क्यों जवाब दे दिया ?
मुंशी जी	-- तुम्हें इतना भी नहीं सूझता कि मेरी आमदनी अब पहली सी नहीं रही, इतने नादान तो नहीं हो ?
जियाराम	-- आखिर आपकी आमदनी क्यों कम हो गई ?
मुंशी जी	-- जब तुम्हें अक्ल ही नहीं है तो क्या समझाऊं ! यहां जिन्दगी से तंग आ गया हूं , मुकदमे कौन ले, और लें

---

१ प्रेमचन्द : 'निर्मला',पृ०४१

मी तो तैयार कौन करे ? वह दिल नहीं रहा । अब तो ज़िन्दगी के दिन पूरे कर रहा हूं । सारे अरमान लल्लू के साथ चले गए ।

जियाराम -- अपने ही हाथों न

मुंशी जी (चीखकर)-- अरे अहमक ! यह ईश्वर की मर्जी थी, अपने हाथों कोई अपना गला काटता है ?

जियाराम -- ईश्वर तो आपका विवाह करने आया था।[१]

(२) कथानक के पात्र के रूप में

कहानी में पात्र का सर्वोपरि महत्व है । कहानी का प्रतिपाद्य चाहे कोई घटना हो, चाहे कोई वातावरण हो, अथवा कोई भाव ही हो, वह पात्र के अभाव में खड़ा ही नहीं हो सकता । कहानी की घटनाओं का संचालन पात्र करते हैं, कहानी के वातावरण में सजीवता पात्रों द्वारा ही आती है, कहानी में भावाभिव्यक्ति का तो एकमात्र आधार ही मनुष्य है यानी पात्र है ।

कहानी के लघु आकार में बहुत अधिक पात्रों के समावेश के लिए अवकाश नहीं होता । उसमें तो न्यूनातिन्यून संख्या पात्रों की होनी चाहिए, क्योंकि अधिक पात्रों के समावेश से न तो पात्रों का चरित्र-चित्रण ही सम्भव हो पाता है और न उनमें व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा ही हो पाती है । चरित्र-चित्रण के लिए तो कहानी की लघुता का बहाना बनाया जा सकता है, किन्तु पात्रों को व्यक्तित्व सम्पन्न तो होना ही चाहिए । अतएव उच्चकोटि की कहानियों में कम-से-कम पात्रों की योजना रहती है । यदि अधिक पात्र होते भी हैं, तो वे मुख्य पात्र अथवा पात्रों को विशेष प्रकाश में लाने के साधनमात्र होते हैं । कहानी के पात्रों की योजना करते समय कहानीकार को कुछ बातों का ध्यान अनिवार्यरूप से रखना पड़ता है । इनमें यदि वह असावधान रहता है तो उसका कृतित्व व्यर्थ हो जाता है ।

---

१ प्रेमचन्द : 'निर्मला', पृ० १२७

कहानी के पात्रों में स्वाभाविकता,सजीवता अथवा व्यक्तित्व सम्पन्नता तथा कहानी के मूल भाव के प्रति अनुकूलता होनी चाहिए । कहानी के पात्रों की स्वाभाविकता से अभिप्राय यह है कि हम जिस प्रकार के प्राणी का चित्रण करने जा रहे हैं, उस पात्र का चित्रण उसी के अनुकूल अथवा निकट हो, उदाहरण के लिए हम एक अर्ध विकसित व्यक्ति का यदि चरित्र-चित्रण उपस्थित करना चाहते हैं तो वह ऐसा होना चाहिए जो अर्ध विकसित व्यक्ति के संबंध में लोगों की खास-खास धारणाओं से मेल खाता हो । उसमें ऐसी विशिष्ट बातें भी हो सकती हैं, जिनकी ओर जनसाधारण का ध्यान नहीं गया या नहीं जाता । किन्तु मोटी-मोटी बातों को छोड़ देना अस्वाभाविकता को जन्म देता है ।

स्वाभाविकता के साथ कहानी तथा उपन्यास के पात्रों में सजीवता अथवा व्यक्तित्वसम्पन्नता भी अत्यन्त आवश्यक है । सजीवता के लिए यह आवश्यक नहीं है कि पात्र हमारे जगत के ही हों, वे कल्पना-लोक के भी हो सकते हैं । आवश्यक केवल इतना ही है कि वे व्यक्तित्वपूर्ण हों । व्यक्तित्वपूर्णता के लिए पात्रों में स्वत: विचार करने की शक्ति और विचार के अनुकूल कार्य-क्षमता अपेक्षित है । वे कहानीकार द्वारा उत्पन्न होकर भी उसके संकेतों पर नहीं चलते, अपना मार्ग अपने-आप बनाते हैं । अभिप्राय यह है कि उनकी दशा कठपुतली जैसी नहीं होती । ऐसे पात्रों का ही प्रभाव पाठक के मन पर अंकित हो सकता है । ऐसे पात्र ही उसके मन में प्रवेश कर स्थायी बन सकते हैं । डा० लक्ष्मीनारायणलाल की निम्नलिखित पंक्तियां इस ओर संकेत करती हैं--

'पात्र अतीत,वर्तमान,भविष्य तथा स्वदेश विदेश कहां के भी हों, उनकी सृष्टि कहानी के क्षेत्र में हो सकती है लेकिन उनकी सृष्टि में केवल एक ही होनी चाहिए, उनकी पार्थिवता और स्वाभाविकता में कहीं किसी प्रकार [illegible] न हो । इसके लिए आवश्यकता इस बात की है कि पात्रों में [illegible],राग,संघर्ष और मानव के शाश्वत प्रश्नों की शृंखला गुँथी हो । [illegible] अपने पात्रों में जीवन की शक्तियां,अन्तर्द्वन्द्व और शाश्वत

प्रश्नों को ~~व्यक्त~~ भरता है, वह अपने पाठकों में चिरस्थायी रूप से स्थान देता है । ये पात्र न केवल घटनाओं के जाल में ही खेलते हैं, किन्तु पाठकों के अन्तर्मन में प्रविष्ट होकर उनमें प्राणशक्ति का संचार भी करते हैं।'

पात्रों की योजना मूलभाव के अनुकूल होनी चाहिए । कहानी का जो भी मूलभाव है, उसकी अभिव्यक्ति किसी भी प्रकार के पात्र द्वारा नहीं हो सकती । अतएव पात्र अथवा पात्रों की योजना इस रूप में हो कि वह इस मूलभाव का वहन करने में समर्थ हों ।

कथानक में चरित्र विभिन्न रूपों में आते हैं-- कथानक के प्रधान पात्र के रूप में, गौण पात्र के रूप में ,वातावरण के स्रष्टा के रूप में,सूत्रधार के रूप में तथा अप्रत्यक्ष पात्र के रूप में ।

(क) कथानक के प्रधान पात्र के रूप में

कथानक में पात्र जब प्रधान रूप से आता है तब कथानक की सारी घटनाएं उसी को केन्द्र बनाकर चक्कर काटती हैं, अन्य दूसरे पात्र उसी की पुष्टि के लिए निर्मित होते हैं । कथानक का उद्देश्य उसी के माध्यम से उपस्थित होता है और कथा के पूरे वातावरण पर उसी के व्यक्तित्व की छाप होती है । प्रधान पात्र के रूप में नियोजित व्यक्ति कथा-प्रवाह का नियंता होता है । इसलिए कथा के आरम्भ,विकास और समाप्ति सब को सूत्रबद्ध करने का दायित्व उसी पर होता है । ऐसी कहानियां जिनमें कोई एक प्रधान पात्र होता है, बहुधा चरित्र-प्रधान कहानियां होती हैं । चरित्र का यह प्रस्फुटन स्थूल घटना के माध्यम से, वस्तुत: उस प्रधान पात्र के चरित्र को दृष्टि में रखकर ही कहानी के अन्य सारे तत्व सजाये या संवारे जा सकते हैं । प्रधान पात्र आवश्यक नहीं है कि गतानुगतिक रूढ़ियों द्वारा स्थापित पात्र हो, वह कलाकार की नई सृष्टि का परिचायक भी हो सकता है । किसी भी भाषा का कहानी-साहित्य इस मत की पुष्टि करता है । सामंतवादी समाज के कथा-साहित्य के कथानक के प्रधान पात्र राजवंश के या शासक वर्ग के व्यक्ति रहा करते थे । तब जीवन का सब कुछ मुख्य महत्व और ज्ञातव्य नहीं

उन्हीं के माध्यम से प्रस्तुत होता था । सामन्तवादी व्यवस्था के नष्ट होने के बाद पूंजीवादी व्यवस्था की जड़ जमाने की प्रक्रिया में व्यक्ति का महत्व क्रमश: बढ़ता गया तब कथा-साहित्य के लिए यह आवश्यक नहीं रह गया कि कथा के नायक या प्रधान पात्र के रूप में किसी राजवंशी या रूढ़ि स्थापित व्यक्ति को ही स्वीकार करता । इसलिए कहानियां घुरी चमार को नायक बनाकर लिखी जाने लगी । नुक्कड़ की दुकान पर आसीन पान वाला कहानीकार का प्रधान पात्र बन गया । घर में प्रसव-वेदना से छटपटा कर दम तोड़ देने वाली स्त्री के निकम्मे, कामचोर और समाज के निम्नवर्ग से आने वाले पति और श्वसुर कहानीकार की आंखों में पर चढ़े और इस तरह सैकड़ों हजारों इस तरह की कहानियां लिखी गईं । घटनाओं का सम्बन्ध समाज के तथाकथित प्रतिष्ठित व्यक्तियों से एकदम नहीं रहा ।

प्रेमचन्द ने अपनी कहानियों में कथानक के पात्र के रूप में अपने शिशु-चरित्रों को विभिन्न रूपों में रखा है । उनकी `मानसरोवर` कहानियों में रग्घू,हामिद,प्रकाश,सुभागी,मंगल, कृष्ण चन्द्र,नथुआ, जियावन, पिसनहारी का कुआं की एक बालिका, साधो,बाजबहादुर,मगन सिंह, बड़े भाई साहब और `गुल्ली डंडा` के `मैं` सर्वनाम से दो पात्र, कैलास कुमारी सेंतर, रेवती, सूर्यप्रकाश, बिन्नी, चिन्ता, मैं और हलधर कजा की का में सर्वनाम से शिशु पात्र, जगत सिंह, थान तिलोत्तमा , सत्यप्रकाश में (प्रेमचन्द) `कुआं` की एक बालिका आदि अट्ठाइस शिशु प्रधान पात्र के रूप में आये हैं । `गुप्तधन` में ११ शिशु पात्र प्रधान पात्र के रूप में आए हैं -- रोहिणी,मगनदास हीरामण,मसऊद, मुन्नी, बच्चा तुलिया, शान्ता,रामसरूप केशव और श्यामा `मैं` सर्वनाम से शिशुपात्र हैं । कथानक की सारी घटना इन पात्रों को अपना केन्द्र बनाकर उसके चारों ओर चक्कर काटती है । `अलग्योझा` कहानी में रग्घू ही कथा का केन्द्र है । रग्घू के चरित्र के माध्यम से सम्मिलित परिवार में अलग्योझा के दुष्परिणाम का चित्र उपस्थित है । `ईदगाह` कहानी में हामिद कथानक के प्रधान पात्र के रूप में नियोजित है । वह कथा-प्रवाह का नियंता है, कथा के आरम्भ, विकास और समाप्ति सबको वह सूत्रबद्ध करता है । कथा के आरम्भ में ही लेखक ने इसी शिशुपात्र से हमारा परिचय कराया

है और सबसे ज्यादा प्रसन्न है हामिद ।` वह चार-पांच साल का गरीब सूरत दुबला-पतला लड़का, जिसका बाप गत वर्ष हैजे की भेंट हो गया और मां न जाने क्यों पीली होते होते मर गई....[1] ।`कहानी के मध्य में जब सभी बच्चे ईदगाह जाते हैं तब हामिद मुख्य भूमिका निभाता है । हामिद के चरित्र से उसके सभी बाल साथी अभिभूत हैं । कथा के अन्त में पाठक हामिद के चरित्र से अत्यधिक प्रभावित होता है ।`और अब एक बड़ी विचित्र बात हुई । हामिद के इस चिमटे से भी विचित्र । बच्चे हामिद ने बूढ़े हामिद का पार्ट खेला था । बुढ़िया अमीना बालिका अमीना बन गई । वह रोने लगी । दामन फैलाकर हामिद को दुआएं देती जाती थी और आंसू की बड़ी-बड़ी बूंदें गिराती जाती थी । हामिद इसका क्या रहस्य समझता ।`[2]

सम्पूर्ण कहानी की घटनाएं हामिद के ही इर्द-गिर्द हैं । हामिद के बाल मित्रों में इसका चरित्र विशिष्ट है । वह अपने सभी मित्रों को पराजित कर उनका नेता बन जाता है ।

`माँ` शीर्षक कहानी का मुख्य पात्र प्रकाश है । इसमें प्रकाश का चरित्र प्रधान है । उनके चरित्र में माता-पिता के गुणों का सर्वथा अभाव है । माता-पिता के आदर्शों के विपरीत उसका चारित्रिक विकास होता है । कहानी की सारी घटनाएं प्रकाश के इर्द-गिर्द चक्कर काटती हैं । कहानी की सारी घटनाएं-भिखारिन का आना, रात्रि में माता का रोना, सिन्ध की बाढ़, उड़ीसा का अकाल आदि प्रकाश के चरित्र पर प्रभाव डालती हैं ।

`सुभागी` शीर्षक कहानी में सुभागी के माध्यम से बाल मनोविज्ञान का सुन्दर चित्र उपस्थित हुआ है । साथ-ही-साथ

---

१ मानसरोवर, भाग१, नवां संस्करण, पृ०३६

२ ,, ,, ,, पृ०४६

समाज की रूढ़ि और अन्धविश्वास की ओर संकेत किया गया है । सुभागी बाल-विधवा हो जाती है,किन्तु उसका उसे खेद नहीं होता,क्योंकि उसमें उतनी समझ नहीं है । इसी कथानक को लेकर `नैराश्य लीला` कहानी लिखी गई है,जिसमें कैलाश कुमारी प्रधान पात्र के रूप में आई है । कलास कुमारी की भी वही मनोदशा है जो सुभागी की थी । सुभागी और कैलाश कुमारी अपनी-अपनी कहानी की नियन्ता है । कथाकार के उद्देश्य की पूर्ति इन्हीं के माध्यम से होती है ।

प्रेमचन्द की कहानियों में `मैं` सर्वनाम से पांच शिशुपात्र आये हैं । ये कहानियां `बड़े भाई साहब` `गुल्ली डंडा` `गये में और हलधर`,`कजाकी` और `होली की छुट्टी` हैं । ये पांचों प्रधान पात्र के रूप में चित्रित हुए हैं । ये पांचों पात्र अपने बचपन की घटना की चर्चा करते-करते मानों इसमें विस्मृत हो जाते हैं । बचपन की याद आने पर उनकी विशेष घटना आंखों के सामने सजीव हो उठती है और उनका हृदय स्नेह-विह्वल और गद्गद् हो जाता है । इन पांचों कहानियों में`मैं` के साथ जो`बड़े भाई साहब`गुल्ली डंडा का `गया`, हलधर और कजाकी पात्र आये हैं, वे सब उनके चरित्र के विकास के लिए `मैं` पात्र ही कथा के आरम्भ विकास और समाप्ति सबको एकसूत्र में बांधते हैं ।अतः ये सभी अप्रधान पात्र हैं।

नथुवा और मंगल`सौभाग्य के कोड़े`और`दूध का दाम` कहानियों के प्रधान पात्र हैं । ये दोनों कथानक की सारी घटनाओं के केन्द्र हैं । कथाकार का उद्देश्य है अनाथ तथा दरिद्र बालकों की सामाजिक तथा मानसिक स्थिति का दिग्दर्शन कराना । नथुवा और मंगल दोनों इस उद्देश्य को पूर्ण कराने में सफल हुए हैं । ये दोनों गतानुगतिक रूढ़ियों द्वारा स्थापित पात्र नहीं हैं-- इनमें कलाकार की नवीन दृष्टि का परिचय मिलता है । निम्नवर्ग तथा निम्नजाति,आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टि से हीन पात्रों को मुख्य पात्रों का स्थान देकर प्रेमचन्द ने अपनी परम्परागत रूढ़ि के प्रति विद्रोह का भाव प्रदर्शित किया है, यह नवयुग की नवचेतना का परिचायक है ।

`खून सफेद` और `भूत` इन दोनों कहानियों में साधो और बिन्नी प्रधान पात्र के रूप में चित्रित हुए हैं । साधो मजदूर का लड़का है । उसे भर पेट खाना तक नहीं मिलता । अत: एक ईसाई पादरी से मिठाई और केला पाने पर उसकी ओर अत्यधिक आकर्षित होता है । उसका बाल-मन केले और मिठाई की ओर आकर्षित होता है और वह पादरी के साथ माता-पिता को त्याग कर चला जाता है । बिन्नी के माता-पिता गरीब हैं । उसकी सौतेली बहन उसे अपने यहां लाती है । यहां उसे मिठाई फल आदि मुंह मांगी चीजें मिलती हैं,अत: वह माता-पिता के पास रहना नहीं चाहती । साधो बड़ाहोकर घर लौटता है तो पिता उसे अपने यहां रखने से डरता है,क्योंकि उसपर जाति बिरादरी वाले हमला करेंगे कि उसने अपने घर से ईसाई को क्यों आश्रय दिया है । बिन्नी जब बड़ी होती है तब उसकी दीदी की मृत्यु हो जाती है । उसके जीजा बिन्नी से विवाह करते हैं और उन्हें लगता है कि पत्नी की आत्मा भूत बनकर उसपर आक्रमण कर रही है । कथा के प्रारम्भ से अंत तक की सारी घटनाएं साधो और बिन्नी के चारों ओर फैली है । इन दोनों कहानियों से यदि इन दोनों पात्रों को निकाल दिया जाय तो कहानी का अस्तित्व ही न रह जायगा ।

`तेंतर` और `मृतक भोज` कहानियों में तेंतर बालिका का जन्म और मृतक भोज इन दोनों के माध्यम से समाज का अंध-विश्वास तथा रूढ़िगत परम्परा पर कठोर व्यंग्य है । तेंतर बालिका के रूप में जन्म लेने से `तेंतर` बालिका पर और पिता के मृतक भोज के कारण रेवती बालिका पर कितने अत्याचार होते हैं,इसका दिग्दर्शन कराया गया है । ये दोनों पात्र अपनी-अपनी कथा में प्रधान हैं ।

`एक बालिका`,`मिलनवारी का कुआं` और चिन्ता,`सती` कहानियों में प्रधान पात्र बनकर आई हैं । इन दोनों बालिकाओं के खेल में दुख और लगन का मार्मिक चित्रण हुआ है । इन बालिकाओं के खेल के माध्यम से प्रेमचन्द ने उनका मनोविश्लेषण प्रस्तुत

किया है । मानों इन दोनों के खेल में किसी दूसरे जन्म का संस्कार है । बालिका माता-पिता की चिन्ता से ग्रसित भावना को संस्कार रूप में पाती है । कुंआ खोदने का कर्तव्य उसकी अवचेतना में शैशव से है । इस उद्देश्य में ही उसके जीवन की सार्थकता है ।`चिन्ता` वीर बुन्देले की वीर कन्या है । अत: पिता का संस्कार उसमें भी है और वह वीरता के ही मनोराज्य में रहती है । करीब करीब इसी पद्धति पर कृष्णचन्द्र भी 'डामुल का कैदी' कहानी में प्रधान पात्र के रूप में अवतरित हुआ है । उसके जन्म से पहले उसके पिता ने मजदूर नेता नवयुवक गोपी की हत्या की थी । उसके मन में घोर पश्चाताप होता है । यह इसी चिन्ता से ग्रसित रहता है और मानो वही संस्कार लेकर कृष्णचन्द्र का जन्म होता है । गोपी के परिवार की सहायता करने के लिए उसका अवचेतन मन प्रेरित करता है । यही उसका उद्देश्य बन जाता ह । `मंदिर` शीर्षक कहानी में जियावन का चित्र उपस्थित करके प्रेमचन्द ने विधवा माता के एकमात्र आधार उसके शिशु के प्रति मनोभावों को उपस्थित किया है तथा पुजारी के अहंकार को दिखाया ह । जियावन इस कहानी का केन्द्र है । जियावन के बिना न तो सुखिया के मातृ-हृदय का परिचय मिल सकता है न मंदिर सम्बन्धी अन्य घटनाएं उपस्थित की जा सकती हैं । `सच्चाई का उपहार` शीर्षक कहानी में लेखक ने ह एक ग्राम की मिडिल कक्षा के कुछ बालकों को उपस्थित किया है । बाजबहादुर इन बालकों का नायक है । अन्य दूसरे लड़के उसी के चरित्र, उसकी सच्चाई और सच्चरित्रता की पुष्टि करने के लिए आये हैं । यद्यपि बाजबहादुर कक्षा के अन्य लड़कों में सबसे निर्धन और गरीब है ब पर उसके उच्च चरित्र का प्रभाव अन्य लड़कों के ऊपर रहे बिना नहीं रह पाता ।`गुप्तधन` कहानी में मगन सिंह प्रधान पात्र है । वह सम्पूर्ण कथा-प्रवाह का नियंता है । इसी प्रकार`सूर्य प्रकाश प्रेरणा का विनोदकुमार,सत्यप्रकाश में(प्रेमचन्द) एक बालिका`व सुरेखा के ये सभी मुख्य पात्र हैं कथा के पूरे वातावरण पर ह उन्हीं के व्यक्तित्व की छाप है ।

प्रेमचन्द की अन्य ५६ कहानियाँ जो `गुप्तधन' के दो भागों में प्रकाशित की गई हैं, उनमें भी १८ कहानियों में शिशु पात्र आये हैं। `अनाथ लड़की' शीर्षक कहानी (गुप्तधन, भाग१)में `रोहिणी एक अनाथ बालिका है। वह सरस्वती पाठशाला पूना में पढ़ती है। एक साल पूर्व इसके पिता का देहावसान हो गया, इसकी मां कपड़े सीती हैं और बड़ी मुश्किल से गुजर होती है। सेठ पुरुषोत्तमदास जी स्कूल के मुआयना के लिए आते हैं और यह बालिका दौड़कर उनका दामन पकड़ लेती है। सेठ जी प्यार भरी दृष्टि से देख कर उससे उसका नाम पूछते और बातचीत करते हुए प्यार से उसे उठा लेते हैं। रोहिणी प्यार से उनकी गर्दन में हाथ डालकर उनसे कहती है `जहां तुम जाओगे वहीं मैं भी चलूंगी। मैं तुम्हारी बेटी हूंगी।'[1]

इसप्रकार पितृ-स्नेह से वंचित यह शिशु अपने भोलेपन से सेठ जी को मुग्ध कर लेती है। सेठ जी उसे अपनी कार पर बैठा कर बाजार ले गये तथा बहुत सारी चीजें, खिलौने, कपड़े, मिठाइयां खरीद दिए। जब वे उसे पहुंचाने गए तो रोहिणी अपनी माता की गोद में झूमक कर सारी घटना का वर्णन कर दी। फिर उसकी गोद से उतर कर सेठ जी के पास गई और अपनी मां को यकीन दिलाने के लिए भोलेपन से बोली--क्यों तुम मेरे बाप हो न ?

सेठ जी ने उसेस्प्यार से कहा --`हां तुम मेरी प्यारी बेटी हो।'

रोहिणी ने उनके मुख की तरफ याचनाभरी आंखों से देखकर कहा -- अब तुम रोज यहीं रहा करोगे ?

सेठ जी ने उसके बाल सुलझा कर जवाब दिया-- मैं यहां रहूंगा तो काम कौन करेगा ? मैं कभी-कभी तुम्हें देखने आया करूंगा, लेकिन वहां से तुम्हारे लिए अच्छी-अच्छी चीजें भेजूंगा।'[2]

इस कहानी की यह प्रधान पात्रा है जो अपने भोलेपन तथा विश्वास से सेठ पुरुषोत्तमदास को अपना `संरक्षक' पिता

---

१ गुप्तधन : प्रेमचन्द स्मृति विशेष, प्रथम संस्करण, १९६२ई०, पृ० १६८

२ ,, ,, ,, पृ० १६८-१६९

बना लेती है । यह अनाथ बालिका इस कहानी की आधारशिला है ।

'त्रिया-चरित्र' कहानी में मगनदास पांच-छ: वर्ष का होनहार अनाथ बालक है । उसे सेठ लगनदास गोद ले लेते हैं । यह बालक पांच माताओं के बीच में पलता है । औरतें सब कुछ कर सकती हैं पर दूसरे के बच्चे को अपना नहीं समझ सकतीं । यदि एक व उसे प्यार करती तो बाकी चार औरतों का फर्ज था कि उससे नफ़रत करें । सेठ जी उसे अपने लड़के के समान प्यार करते हैं । अत: मगनदास ऐसी विषम परिस्थितियों में पड़कर अपने को संभाल लेता है । वह पढ़ता-लिखता, घुड़सवारी करता तथा गाने के शौक जगने पर गाना भी सीखता है । इस प्रकार एक रईस परिवार में पलकर सचमुच रईस तथा शौकीन नवयुवक बनता है । आगे चलकर जीवन के विषम से विषम परिस्थितियों से भी नहीं घबराता । मगनदास कहानी का केन्द्रबिन्दु है । सारी घटनाएं इसके चारों ओर चक्कर काटती हैं । इन दोनों कहानियों में प्रेमचन्द ने यह दिखाया है कि एक अनाथ बालक और एक अनाथ बालिका अच्छी परिस्थितियों में आकर बदल जाते हैं और पूरी योग्यता तथा कुशलता प्राप्त कर लेते हैं ।

'भैंती' शीर्षक कथा में हीरामन ७ वर्ष का बालक है । कथा के मुख्य पात्र होने के साथ ही साथ यह कथानक का सूत्रधार भी है । इसकी इस आयु में घटने वाली एक घटना इस प्रकार है— गुड़िया के मेले में गुड़िया पीटते समय कीरत सागर की सीढ़ियों पर पैर फिसलने के कारण डूब जाना तथा एक गुमनाम व्यक्ति का उसे बचाकर गायब हो जाना— मानों इसी कहानी का केन्द्र है । इस घटना के माध्यम से जीवन में होने वाली अलौकिक रहस्यमय घटनाओं तथा स्वप्नों की ओर एक मनोवैज्ञानिक तथ्य का उद्घाटन है ।

'ढेलमपुर' शीर्षक कहानी में महरूप इस कहानी का मुख्य पात्र है । यह शाह बाबूराव और बस्ती के सरदार की पुत्री रिन्धा का पुत्र है । आयु ७ वर्ष की है । इसकी माता नहीं जानती कि उसका पति

शाहबामुराद है और न यह बालक ही । किन्तु राजा का पुत्र शाही गुणों से परिपूर्ण है । अक्ल और जहानत में हिम्मत और ताकत में वह अपनी दुगुनी उमर में बच्चों से बढ़कर है । अपने पिता की शिक्षा तथा शाही क़ायदों को ऐसे चाव से सुनता है मानों उसके अपने वंश का हाल मालूम है । गांव के एक-एक लड़के उसके हुक्म के फ़रमाबरदार हैं । मां उसपर गर्व करती है,बाप फूले न समाते पर गांव के लोग समझते हैं कि यह शाह साहब के जप-तप का फल है । इस प्रकार यह बालक कहानी का केन्द्र है ।

'गुप्तधन' भाग२ में 'मुन्नी' शीर्षक कहानी में 'मुन्नी' नाम की एक पंचवर्षीय बालिका दिलदारनगर में वृक्ष के नीचे पाई जाती है । वह बिलकुल अकेली है । उसके माता-पिता मर गये या कहीं परदेश चले गये,उसे बिलकुल मालूम नहीं । पूछने पर कहती कि कभी उसे एक देवी खिलाया करती थी और देव उसे कंधे पर लेकर खेतों की ब सैर कराया करता था । पर इन सारी बातों का जिक्र वह इस प्रकार किया करती मानों कोई स्वप्न देख रही हो, या कोई सच्ची घटना हो,जिसका उसे ज्ञान न था । मुन्नी के माध्यम से लेखक ने बब बाल मनोविज्ञान का सुन्दर चित्र उपस्थित किया है । जब उससे कोई पूछता— तेरे मां-बाप कहां गए ? तो वह कभी रोने लगती,कभी हाथ उठाकर कहती -- ऊपर । इस अभागी अनाथ को जो कोई कुछ बुला कर दे देता,खा लेती, किसी गरीब के घर टाट के टूटे टुकड़े पर सो रहती ।

'बन्द दरवाजा' एक दो वर्षीय शिशु की क्रिया पर आधारित मनोवैज्ञानिक कहानी है । दो वर्षीय शिशु सूर्योदय के साथ पालने से निकलता, जिज्ञासापूर्वक घोंसले से निकली चिड़िया के बच्चे को पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाता,गर्म हलवे की आवाज सुन लेखक की ओर याचना भरी दृष्टि से देखता पर फाउण्टेनपेन पाकर फुसल जाता है । किन्तु हवा के झोंके से दरवाजा बन्द होने पर दरवाजे की ओर भागता है,क्योंकि दरवाजा बन्द हो गया ।

तुलिया 'देवी' शीर्षक कहानी की पंचवर्षीया बालिका ह । इसका विवाह अठारह वर्षीय बलिष्ठ युवक के साथ हो जाता है । यह युवक विवाह करके,तुलिया को अपने घर में रखकर पूरब कमाने जाता हर महीने खर्च भेजता,पर कभी वहां से लौट कर घर नहीं आता । तुलिया अपने स्मरण से अपने बाल- जीवन की घटनाओं का सजीव तथा मनोवैज्ञानिक चित्रण अपने पड़ोसियों से किया करती है । व्यक्ति के प्रति बाल्यकाल में उत्पन्न हुई उसकी निष्ठा सदा कायम रहती । गांव का कोई मनचला युवक उसकी निष्ठा और सतीत्व को विचलित नहीं कर सकता ।

'प्रेमसूत्र' कहानी में शान्ता एक ३-४ वर्ष की बालिका अपने चंचल मन वाले पिता पशुपति को परिवार के प्रेमसूत्र में बांधने के लिए केन्द्रबिन्दु बनी रहती है । आगे चलकर जब माता-पिता अलग हो जाते हैं । पिता दूसरा विवाह करता है । वह दूसरी स्त्री उसे धोखा देकर भाग जाती है । शान्ता प्रेम का एक सूत्र मानों अपने हाथ में रखे हुए है और माता-पिता को मिला देती है ।

'दूसरी शादी' में रामस्वरूप चार वर्षीय बालक है । नई माता के आने पर उसके चेहरे पर विषाद की गहरी छाप आ जाती है । अपने सूखे और रंजीदा आंखों से पिता की ओर घूरता रहता है । यह दृश्य उसके पिता के हृदय में आत्मवेदना और टीस उत्पन्न करता है । रह-रहकर पत्नी की करुण मृत्यु-शय्या, उसकी दूसरी शादी और अपनी बेकसी और मजबूरियां मानों उसे रुलाये डालती है ।

'नादान दोस्त' में केशव और श्यामा दो भाई-बहन जिनकी अवस्था ६-८ वर्ष के लगभग होगी पर आधारित यह कहानी है । उनके मन में कार्निस पर पड़ी चिड़िया का घोंसला, अण्डे तथा बच्चे के विषय में अत्यधिक जिज्ञासा है । इस जिज्ञासा को वे गर्मी की दोपहरी में मां के सो जाने पर शान्त करना चाहते हैं। दोनों इस कहानी के मुख्य पात्र हैं ।

'होली की छुट्टी' कहानी में 'मैं' सर्वनाम से कहानी लिखी गई है,जिसमें स्वयं लेखक ने 'होली की छुट्टी में अपने बचपन में

घटने वाली घटना का चित्रण बड़े ही मार्मिक ढंग से किया है । अपने स्मरण से लेखक ने गुड़ की चोरी की घटना का जो वर्णन किया है, वह बड़ा मनोवैज्ञानिक और मर्मस्पर्शी है ।

प्रेमचन्द की कहानियों में चरित्र का प्रस्फुटन स्थूल घटना के माध्यम से हुआ है इनके माध्यम से प्रेमचन्द ने अपने युग की समस्याओं को सजीव रूप में उपस्थित किया है, क्योंकि साहित्य-निर्माता के विषय में प्रेमचन्द की धारणा यह थी -- जिस साहित्य में हमारे जीवन की समस्याएं हों, हमारी आत्मा को स्पर्श करने की शक्ति हो, जो केवल जिन्सी भावों में गुदगुदी पैदा करने के लिए या भाषा-चातुर्य दिखाने के लिए रचा गया हो, वह निर्जीव साहित्य है, सत्यहीन, प्राणहीन साहित्य में हमारी आत्माओं को जगाने की, हमारी आत्माओं को सचेत करने की, हमारी रसिकता को तृप्त करने की शक्ति चाहिए ।[1] 'कुचा' शीर्षक कहानी में बालिका के मन में वातावरण से प्राप्त अनुचित बातों की जानकारी देख कर एक समाज की आत्मा जाग उठती है । उसकी मानवता सचेत हो जाती है । वह उस बालिका से कहता है कि नहीं सभी देश-सेवी शराबी, जुआरी और घूसखोर नहीं होते । तुम्हारी यह धारणा ठीक नहीं । इसी प्रकार कृष्णचन्द्र के चरित्र से भी हमारी मानवता जगती है और बस आत्मा को एक स्फूर्ति दायिनी शक्ति का आभास होता है ।

प्रेमचन्द के उपन्यासों में भी शिशु पात्र मुख्य पात्र के रूप में आये हैं । उनके उपन्यास का नायक या नायिका शैशव से ही हमारे समक्ष आते हैं और उनके विकास के साथ-ही-साथ कथा का विकास होता चलता है ।

'वरदान' उपन्यास में प्रतापचन्द्र तथा बृजरानी दोनों का बाल्य-काल प्रस्तुत है । प्रतापचन्द्र सुवामा और मुंशी शालिग्राम का पुत्र है । उसकी आयु ८। वर्ष है । वह अत्यन्त प्रभावशाली और रूपवान्

---

1 प्रेमचन्द : 'कुछ विचार', पृ० ८८

शिशु है । जैसा नाम वैसा गुण । उसका भव्य ललाट दमक-दमक करता है । बातें ऐसी करता कि लोग सुनकर मुग्ध हो जाते । यदि वह अचानक किसी अपरिचित व्यक्ति के सामने खड़ा हो जाता तो लोग विस्मय से ताकने लगते ।

ऐसा होनहार शिशु के प्रथम छः वर्षों की झांकी इस प्रकार मिलती है,किन्तु सातवें वर्ष के प्रारम्भ में ही दुर्दिन का पहाड़ परिवार पर टूट पड़ता है । मुंशी शालिग्राम अपनी पत्नी सुवामा और बालक प्रतापको छोड़कर कुम्भ का मेला देखने जाते हैं और फिर लौट कर नहीं आते । यह शिशु पितृ-छत्र विहीन हो जाता है और अब माता का एकमात्र आधार है । ७ वर्ष की अवस्था में गरीबी से अनभिज्ञ अपने लकड़ी के घोड़े दौड़ाने में मग्न है । सुवामा अपने इलाके तथा घर के सारे फालतू सामान बेचकर मुंशी शालिग्राम के छोड़े हुए कर्ज़ को चुकाती है । घर को दो हिस्से में करके, एक हिस्से को मुंशी संजीवनलाल नामक एक सम्भ्रान्त पुरुष को कि किराये पर दे देती है । मुंशी संजीवन लाल की पुत्री वृजरानी इस समय ६वर्ष की है । यहां दोनों बालकों का परिचय होता है तथा उनकी बाल-सुलभ मैत्री बढ़ती है । इस उपन्यास में दोनों शिशुओं की स्नेह-कथा साथ-साथ चलती है । दोनों का स्थान उपन्यास में मुख्य है । उपन्यास की सारी घटनाएं इन्हीं दोनों को लेकर हैं,इन्हीं पर आधारित हैं । इन दोनों पात्रों के माध्यम से उनकी पारिवारिक स्थिति, तथा दोनों की माताओं तथा मुंशी संजीवनलाल के स्नेह-सिंचित हृदय पर प्रकाश पड़ता है । दोनों के बाल-सुलभ स्निग्ध मैत्री, बचपन का चंचलपन,सीखने के प्रति रुचि ,नई बातों को जानने की जिज्ञासा, कल्पना,सेवा-भाव तथा प्रतिस्पर्धा के भाव का दिग्दर्शन होता है । साथ ही बचपन की निर्मल तथा पवित्र प्रेम की झांकी मिलती है ।

'प्रेमाश्रम' उपन्यास में मायाशंकर मुख्य शिशु पात्र हैं । यह इस कथा का केन्द्रबिन्दु है । इसकी ३-४ से १४ वर्ष तक की अवस्था अर्थात् उसका बाल्यकाल मेरे अध्ययन का विषय है । बचपन से ही यह सरल, विनयशील और सौम्य बालक है । इसके गुणों पर रीझकर बड़ी विधवा मौसी

गायत्री देवी गोद ले लेती हैं और अपना उत्तराधिकारी बना लेती हैं । यह बालक अपने खर्च के रुपए से गरीब बालकों को छात्रवृत्ति दिलाता है और स्वयं एक साधारण परिवार के बालक की तरह रहता है । वह नकलू रईस बनकर अपनी हंसी कराना नहीं चाहता । वह व्यसनों में नहीं पड़ना चाहता, अपनी दीन प्रजा के दुःख-दर्द में शामिल होना चाहता है । उसका चरित्र बड़ा ही उज्ज्वल और पवित्र है । उसके चाचा प्रेमशंकर उसकी बातों तथा आदर्शों से पुलकित हो उठते थे उससे कहते हैं कि वह देवात्मा है, उसमें देव-दुर्लभ त्याग है, उसके पवित्र भाव सुदृढ़ हैं ।

'निर्मला' उपन्यास में निर्मला कथानक की मुख्य शिशु-पात्रा है । मुंशी उदयभानु लाल और कल्याणी की सबसे बड़ी पुत्री है । अवस्था पन्द्रह वर्ष, किन्तु मानसिक अवस्था में वह शिशु सा सरल और निश्छल है । छोटी बहन कृष्णा के साथ खेल में मग्न रहती, माता की आवाज सुनकर भी अनसुनी कर देती है । सैर-तमाशे में खुश रहती है । घटना-विशेष में गम्भीर और कल्पनाशील बन जाती है । भविष्य की चिन्ताएं और शंकाएं उसे शंकित कर देती हैं ।

'निर्मला' उपन्यास निर्मला की दुःखभरी जीवनगाथा है, जिसके माध्यम से प्रेमचन्द ने समाज में होने वाली बुराइयों की ओर संकेत किया है--जैसे अनमेल विवाह, दहेज प्रथा इत्यादि । इस उपन्यास से निर्मला के शैशव को निकाल दिया जाय तो यह निर्मला एक अधूरी तथा निरुद्देश्य कृति सी प्रतीत होगी । अतः प्रेमचन्द ने अपने इस उपन्यास की नायिका का शैशव वर्णन इस प्रकार किया है --' निर्मला का पन्द्रहवां साल था, कृष्णा का दसवां । दोनों लड़कियों का कुसमय से ब्याह करती थीं, सदा काम से जी चुराती थीं । मां पुकारती रहती थी पर दोनों कोठे पर छिपी बैठी रहती थीं कि न जाने किस काम के लिए बुलाती हैं । दोनों भाइयों से लड़ती थीं नौकरों को डांटती थीं और बाजे की आवाज सुनते ही द्वार पर आकर खड़ी हो जाती थीं, पर आज एकाएक ऐसी बात हो गई जिसने बड़ी को बड़ी और और छोटी को छोटी बना दिया है । कृष्णा वही है पर निर्मला गंभीर

एकान्त प्रिय और लज्जाशील हो गई है[1]।

'कायाकल्प' उपन्यास में एक बालिका उपन्यास की मुख्य पात्र है। त्रिवेणी के घाट पर यात्रियों की भीड़ है। इस भीड़ में एक चार वर्षीय बालिका खो गई है। नाली से कुछ दूर पर पड़ी यह बालिका रो रही है। इसके रोने की आवाज सेवा समिति के लड़कों के कानों में पहुंचती है। ये लड़के उसे कैम्प में ले जाते हैं तथा उसके माता-पिता का पता लगाने की चेष्टा करते हैं, अखबारों में नोटिस छपवाते हैं, किन्तु पता नहीं चलता तब उसे वहीं अनाथालय में रखते हैं। इसी बालिका के ऊपर सम्पूर्ण उपन्यास लिखा गया है।

'गबन' उपन्यास में जालपा मुख्य पात्रा है। यह दीनदयाल और मानकी की पुत्री है। तीन-तीन भाइयों की मृत्यु के पश्चात् यह अकेली बच गई है। अतः यह परिवार की लाडली है। इसकी सारी इच्छाएं पूरी की जाती हैं। 'दीनदयाल जब कभी प्रयाग जाते तो जालपा के लिए कोई न कोई आभूषण अवश्य लाते। उनकी व्यावहारिक बुद्धि में यह विचार ही न आता था कि जालपा किसी और चीज से अधिक प्रसन्न हो सकती है। गुड़िया और खिलौना वे व्यर्थ समझते, इसलिए जालपा आभूषणों से ही खेलती थी, यही उसके खिलौने थे[2]।'

माता हमारी प्रथम शिक्षिका है और परिवार प्रथम पाठशाला। जालपा के जीवन में यह सत्य है। 'आभूषण मंडित संसार में पली हुई जालपा के लिए यह आभूषण प्रेम स्वाभाविक ही था[3]।' शैशव हमारे जीवन का सबसे मुख्य समय है, इसमें शिक्षा की जैसी नींव पड़ती है मनुष्य का विकास उसी प्रकार होता है। जालपा के जीवन के संघर्ष तथा चढ़ाव-उतार का कारण आभूषण प्रेम ही है जिसकी नींव शैशव में पड़ी थी। जालपा इस कथा की प्रधान पात्रा है।

---

१ प्रेमचन्द : 'निर्मला', परिच्छेद १, पृ० १
२ ,, : 'गबन', पृ० २
३ ,, : ,, पृ० २५-२७

(ख) गौण पात्र

प्रधान पात्र के अतिरिक्त प्रत्येक कहानी तथा उपन्यास में कुछ ऐसे पात्र होते हैं, जिन्हें हम गौण पात्र की श्रेणी में रख सकते हैं, कहानी तथा उपन्यास की योजना के लिए गौण पात्र उतने ही आवश्यक हैं, जितने मुख्य पात्र, क्योंकि बिना गौण पात्रों के न तो कथा-साहित्य के मुख्य पात्रों का विकास किया जा सकता है और न कथा के सूक्ष्म विवरणों को ही सम्हाला जा सकता है । सच पूछिए तो गौण पात्रों के निर्माण और विकास में कला की अत्यन्त सूक्ष्म और कुशल पकड़ की आवश्यकता होती है । गौण पात्र जहां एक ओर कथा की अन्विति को चरम सफलता से प्रस्तुत कर सकते हैं, वहां वे कथा के शिल्प को बेतरतीब, बेढंगा, ढीला-ढाला और विशृंखल भी बना दे सकते हैं । प्रत्येक गौण पात्र के निर्माण में एक विशिष्ट प्रेरणा और एक विशेष उद्देश्य होता है । कहानीकार को यह देखना होता है कि किसी भी गौण पात्र के निर्माण की तीव्रता कितनी है और उसकी आवश्यकता की सिद्धि के लिए पात्रों के निर्माण में कौन-कौन से तत्व अनिवार्य हैं । सूक्ष्म पकड़ और वैज्ञानिक विश्लेषण के बाद कोई कथाकार अपने गौण पात्र को सही सन्दर्भ में उपस्थित करने में सफल होता है । फिर भी कथाकार को इस बात को ध्यान में रखना होता है कि गौण पात्र मात्र कथाकार के इशारे पर चलने वाले यंत्र चालित साधारण पुर्जे नहीं बनें । उनमें अपनी जिन्दगी हो, उनमें अपनी प्राणवत्ता हो, अपने पृथक् व्यक्तित्व की उनमें कहीं झलक मिले, इत्यादि । इसलिए गौण पात्रों का निर्माण मुख्य पात्रों की अपेक्षा कष्टसाध्य और कला-सापेक्ष प्रयत्न है । साधारणतया गौण पात्र कथा साहित्य की मूल भावना के वाहक नहीं होते, कहानी के वातावरण निर्माता नहीं होते, कहानी की घटनाओं के आधार नहीं होते, कहानी की चेतना के सूत्रधार नहीं होते, कहानी की आत्मा की प्रतिध्वनि उनमें नहीं होती, किन्तु वे कहानी की भावना के वाहक, वातावरण, घटना, चेतना, आत्मा की सृष्टि के अनिवार्य अंग होते हैं ।

प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियों में बत्तीस शिशु-चरित्र गौण पात्र के रूप में आये हैं । `अलग्योझा` कहानी में केदार और

लक्ष्मन,रग्घू के चरित्र विकास के सहायक के रूप में आये हैं । ये गौण पात्र हैं, किन्तु यह नहीं कि कथा में इनका स्थान अनावश्यक है ।इन गौण पात्रों का निर्माण और विकास कला की अत्यन्त सूक्ष्म और कुशल पकड़ के द्वारा हुआ है। ये दोनों पात्र अल्पयोषिता सम्बन्धी समस्याओं को सही रूप में प्रस्तुत करने में बड़े सहायक हुए हैं । यद्यपि ये दोनों शिशु पात्र गौण हैं तथा इनके माध्यम से लेखक ने बड़ी कुशलता से बाल-मनोविज्ञान तथा नारी-मनोविज्ञान का सुन्दर दर्शन कराया है और भारत के निम्नवर्गीय किसान परिवार के अल्पयोषिता के प्रश्न को उपस्थित किया है ।

`ईदगाह` कहानी के मोहसिन नूरे,सम्मी आदि को मैंने गौण पात्रों की श्रेणी में रखा है । इन बालकों में जो वाद-विवाद होता है, उसके माध्यम से हामिद की तीव्र बुद्धि और विवेक का परिचय मिलता है । हामिद इस कहानी का मुख्य पात्र है । इन बालकों के बीच हामिद का चरित्र और भी उभर आता है । सम्भवत: इस कहानी का कलाकार अकेले हामिद को प्रस्तुत करके इसके विशिष्ट चरित्र को इस प्रकार उपस्थित नहीं कर सकता । इन बालकों के खिलौने के माध्यम से वकील,वैद्य और सिपाही पर व्यंग्य भी किया है । ये गौण पात्र हैं,किन्तु ये पात्र मात्र कहानीकार के इशारे पर चालित साधारण यंत्र की भांति नहीं है । इनमें अपनी जिन्दगी है, अपनी प्राणवत्ता ।

`ज्योति` कहानी में सोहन और मैना` `दुर्गा का मन्दिर` कहानी में मन्नू और श्यामा` ,`बूढ़ी काकी` कहानी में `लाडली और बाल वृन्द` , `बालक` `झांकी` के `दो शिशु` आदि युगल रूप में प्रस्तुत हैं । सोहन और मैना जैसे दो गौण शिशु पात्र के सम्पर्क में उनके बड़े भाई मोहन का चरित्र अधिक निखर पड़ा है । मोहन अपनी माता पर विजय प्राप्त करने के लिए इन दोनों शिशुओं को ही आधार बनाता है । सोहन को बोली बाजा करने के लिए कम्पनी बाजुन लाने के लिए देता है और मैना को गुड़िया के ब्याह के लिए दो पैसे । इन दोनों के हृदय जीतने के बाद माता के हृदय को जीतने ~~के अपने अपने के हृदय को~~ के लिए कदम बढ़ाता है या यों

कहें कि इन दो शिशुओं के प्रति प्रेम का प्रदर्शन माता के मन में एक परिवर्तन ला देता है । माता के कठोर हृदय में भी अपने लिए स्नेह की ज्योति उसकाता है ।मैना और सोहन की उपस्थितियों से उस परिवार के वातावरण में सजीवता आ जाती है । गौण पात्र होने पर भी ये सभी सन्दर्भ में उपस्थित हुए हैं और इनके पृथक् व्यक्तित्व की झलक हमें मिल ही जाती है । इसी प्रकार दो शिशु 'झांकी' कहानी में दोनों भाई-बहन हैं । पूरा परिवार कलह से भरा हुआ है । झगड़ा सास-बहू का है,किन्तु ये दोनों बच्चे वातावरण से सबसे अधिक पीड़ित हैं । ऐसी स्थिति में उनका मनोविज्ञान बदल गया है । दोनों भाई-बहन अजाब उदास हैं और उनका मन उड़ा-उड़ा है । इन दोनों पात्रों के माध्यम से ही कथाकार ने अपनी कहानी का श्रीगणेश किया है । ये दोनों शिशु मानों कथा के द्वार पर रक्षक के सदृश हैं जो पाठक के सम्मुख कथा का स्वर्णिम द्वार खोल देते हैं और कथा-मनोरंजकता का रसपान कराते हैं ।'दुर्गा का मन्दिर' कहानी के मन्नू और श्यामा दो भाई-बहन हैं । माता-पिता की व्यस्तता के कारण ये आपस में लड़ते हैं और उनका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करना चाहते हैं । यद्यपि ये पात्र गौण हैं,किन्तु इनके कारण कथा का रसास्वादन और भी बढ़ जाता है । परिवार के विशेष अवसर पर इन्होंने पारिवारिक तथा शिशु के मनोविज्ञान को बड़ी सजीवता से उपस्थित किया है और यही कथाकार का अभीष्ट भी है ।

लाडली और बाल समुदाय भी अपनी कहानी में गौण रूप से ही आये हैं । बाल समुदाय के व्यवहार के माध्यम से एक अनाथ विधवा के प्रति होने वाले दुर्व्यवहार और अत्याचार पर प्रकाश डाला गया है । लाडली के माध्यम से बाल-मनोविज्ञान की मार्मिकता का दिग्दर्शन कराया है । उसके माध्यम से उसके माता-पिता के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है । इन तीनों कहानियों के गौण पात्र अपनी तीव्रता के साथ कहानी में उपस्थित हुए हैं ।

'सुरेश और रत्ना' इन दो शिशु पात्रों के सन्दर्भ में दो कहानियों में दो मुख्य पात्रों के चरित्र का विकास दिखाया गया है । सुरेश और रत्ना अपनी-अपनी कहानियों के गौण पात्र हैं । सुरेश

`दूध का दाम' कहानी में मंगल का चरित्र दिखाने में प्रमुख रूप से सहायक है और `सौभाग्य के कोड़े' में रत्ना द्वारा नथुआ पर विशेष प्रकाश पड़ता है। सुरेश रत्ना के भोग-विलास तथा ऐश्वर्यपूर्ण जीवन के सजीव वर्णन से मंगल और नथुआ की दीनता, हीनता और भी हृदयस्पर्शी और मार्मिक बन जाती है। सुरेश और रत्ना उच्चवर्गीय परिवार के शिशु हैं और उन्हीं के सन्दर्भ में दीन-हीन अनाथ और बेबस उनके घरों के जूठन पर पलने वाले मंगल और नथुआ हैं। सम्भवत: लेखक का एक ही वातावरण में पलने वाले दो शिशुओं का दो भिन्न ढंग से मनोविकास दिखाना ही लक्ष्य है। सुरेश बेवकूफ और भोंदू है, रत्ना, सुशील, चरित्रवान्, कुशाग्रबुद्धि वाली और नम्र है। अत: ये दोनों पात्र गौण होते हुए भी लेखक के उद्देश्य की पूर्ति में यथावत् सहायक हैं। इन दोनों पात्रों ने कथा की अन्विति को बड़ी सफलता क से प्रस्तुत किया है। इन दोनों के बिना कहानी के मुख्य पात्रों का विकास सम्भव नहीं था।

एक शिशु से सम्बन्धित दो गौण शिशु पात्रों को मैंने कथा में उनके स्थान के आधार पर एक साथ लिया है। `बासी भात में खुदा का साझा' और `तथ्य' कहानियों में एक-एक शिशु पात्र के सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के रूप में उपस्थित हुए हैं। `बासी भात में खुदा का साझा' में शिशु के बीमार पड़ने पर पिता के मन में अत्यधिक मानसिक संघर्ष होता है। वह इस बीमारी को दैवी मानता है, अपने पाप का प्रकोप मानता है। यह श शिशु कथा में गौण पत्र है, किन्तु पिता के आचार, धार्मिक मान्यता तथा नैतिकता का मानदण्ड उपस्थित करता है। उसकी सबलताओं और दुर्बलताओं का मनोवैज्ञानिक आधार प्रस्तुत करता है। दूसरी कहानी `तथ्य' में शिशु के माध्यम से उसकी माता के साथी की अतृप्त भावना का रेचन है। पूर्णिमा और अमृत के बीच शिशु जीवन और भावना के अन्तर को स्पष्ट कर देता है। अमृत जान जाता है कि उसके स्वार्थपूर्ण हृदय और पूर्णिमा के सुकुमार हृदय के बीच बड़ा अन्तर है। पूर्णिमा शिशु के बहुत बचपन की याद दिलाकर दोनों के बीच की दूरी को हटाती है।

'दो शिशु' से सम्बोधित दो शिशु एक साथ 'स्वर्ग की देवी' और 'शिकार' शीर्षक कहानी में आये हैं । 'स्वर्ग की देवी' कहानी के शिशुओं से एक विशृंखल परिवार की व्यवस्था की झांकी मिलती है । परिवार में शिशुओं पर माता-पिता का उतना अधिकार और शासन नहीं, जितना दादा दादी का । अतः इन बच्चों पर न संयम है और न नियम । 'शिकार' के दो शिशुओं के माध्यम से माता के हृदय पर प्रकाश पड़ता है । प्रेमचन्द ने बड़ी सूक्ष्म और कुशल पकड़ द्वारा इन पात्रों का निर्माण किया और ये गौण पात्र के रूप में हो कला के निर्माण और विकास में सहायक हैं ।इनके अभाव में कथा के शिल्प बेतरतीब और विशृंखल हो जायेंगे ।

'एक बालक', 'एक लड़का', 'एक बालिका' तथा 'बालक' के क्रमशः 'विश्वास', 'बोड़म', 'जुर्माना' तथा 'मांगे की घड़ी' कहानियों के गौण पात्र हैं । एक बालक के माध्यम से मिस्टर आपटे, एक लड़का के माध्यम से बोड़म तथा उस लड़के के पिता, एक बालिका के माध्यम से जमादार तथा बालक के माध्यम से उसके पिता के मित्र के चरित्र-विकास पर प्रकाश पड़ताहै । ये प्रत्येक पात्र अपनी-अपनी कहानी के लिए आवश्यक हैं ।

रुक्मणि महातीर्थ का गौण पात्र है । यह अपनी दाई कैलासी की देख रेख में पलता है । कैलासी को माता से भी अधिक प्यार करता और उसे अम्मा कहता है । रुक्मणि की माता अम्मा से किसी कारण वश गुस्सा होकर उसे निकाल द देती है । रुक्मणि अम्मा के लिए आसमान सिर पर उठा लेता है । कुछ महीनों के बाद अम्मा तीर्थ करने को सोचती है,क्योंकि रुक्मणि के बिना उसका जीवन सूना-सूना सा है और उसके मन में वैराग्य की भावना उठती है । रुक्मणि के पिता उससे व कह कहकर चर जाते हैं कि कैलाशी को रुक्मणि के पास जाना ही तुम्हारा महातीर्थ होगा । तुम्हारे शोक में वह इतना कातर और विह्वल है कि अब उसके बचने की कोई आशा नहीं । कहानी की इस छोटी सी संक्षिप्तता में ही हम रुक्मणि को स्थान देखते हैं पर वह गौण ही रूप में है । उसके

बिना न तो उसकी माता के मनोभावों पर प्रकाश पड़ सकता है और न कैलासी के मातृ-हृदय की झांकी ही मिल सकती है । स्नेह वंचित शिशु के हृदय का चित्रण करने की प्रेरणा से लेखक ने रुक्मणि को इस स्थिति में चित्रित किया है । स्नेह को सबल दिखाने के लिए कैलासी से यह महातीर्थ कराया है । इस महातीर्थ का आधार एक शिशु देवता है यह सर्वथा लेखक की मौलिक सूझ है ।

`गया` शिवगौरी दोनों का चित्रण गौण पात्र के रूप में यथायुक्त हुआ है ।`गया` के खेल तथा चपलता द्वारा इस कहानी के मुख्य पात्र `मैं` के चरित्र को अधिक सफलता से उभारा जा सकता है । `शिवगौरी`,`खून सफेद` की गौण पात्री है । इसकी चर्चा कहानी में बहुत कम है,किन्तु फिर भी उसकी वैयक्तिकता का परिचय हमको मिलता है । गया के माध्यम से कथा का सन्तुलित विस्तार सम्भव हो पाया है । शिवगौरी ही कहानी की आत्मा बन गई है ।

इस प्रकार `बैर का अन्त` कहानी के तीन लड़के जेल का साधु,`शंखनाद` का बाल समुदाय ,`गृहदाह` का ज्ञान प्रकाश और सच्चाई का उपहार के वली महमूद भी गौण पात्र हैं । ये सभी गौण पात्र अपनी-अपनी कहानियों में सही सन्दर्भ में उपस्थित हुए हैं । साधारणतया ये सभी कहानी की मूल भावना के वाहक नहीं हैं,फिर भी इनका महत्व कहानी में कम नहीं । इनमें अपना व्यक्तित्व है, अपना जीवन है और अपनी प्राणवत्ता है,जिसके माध्यम से अपनी कहानी के मुख्य पात्र के उद्देश्य की पूर्ति में सहायक हैं ।

`गुप्तधन` भाग १ के `मिलाप` शीर्षक कहानी में कमला और एक शिशु गौण सब पात्र हैं । कमला,नानकचन्द और ललिता की बारह पुत्री है । इसके सन्दर्भ में माता-पिता दोनों के चरित्रों पर प्रकाश पड़ता है । नानकचन्द शहर के सबसे बड़े रईस लाला ज्ञानचन्द का बिगड़ा हुआ पुत्र है । वह पड़ोस की एक विधवा, ललिता को भगाकर कलकत्ता ले जाता है । जहां तीन वर्षों बाद कमला को जन्म देकर उसे पिता बनने का सौभाग्य प्राप्त होता है । उसके जीवन में सुधार होता है । यहां तीन वर्ष की उच्छली हुई जिन्दगी उसके दिल से छीछोरेपन और नशेबाजी के स्वाद को बहुत

कुछ दूर कर देती है । किन्तु इसी बीच उनके पिता लाला ज्ञानचन्द की मृत्यु हो जाती है । वह उनके धन और उत्तराधिकार के प्रलोभन के कारण कमला तथा ललिता को धोखा देकर बनारस भाग जाता है । कमला इस असहायावस्था में अपनी दीन-हीन माता के स्नेह का केन्द्र बनी रहती है । कमला नानकचन्द की ही बेटी है, किन्तु उसका कानूनी औलाद नहीं और न ललिता उसकी ब्याहता स्त्री । बनारस जाकर एक रईस की बेटी से विवाह कर समाज में उठने-बैठने का सम्बन्ध स्थापित कर लेता है और तीन वर्षपूर्व किए गए कुकर्म पर पर्दा डालता है । इसके शोहदेपन और नशेबाजी से दो पत्नियां घुल-घुल कर मर जाती हैं । तीसरी पत्नी रूपवती और सुशीला के अलंकारों से सुसज्जित है । एक पुत्र उत्पन्न होता है और फिर नानकचन्द के जीवन में परिवर्तन होता है, वह होश सम्हालता तथा गार्हस्थ्य जीवन में आनन्द लेने लगता है । तीन वर्ष के बाद प्लेग के प्रकोप से पत्नी और यह तीन वर्षीय एक शिशु उससे छिन जाते हैं । यह (शिशु) उनके दिल पर ऐसा दाग छोड़ जाता है, जिसका कोई मरहम नहीं । उसकी उच्छृंखलता और ऐयाशी सभी गायब हो जाती है, दिल पर सदा उदासी छायी रहती है, मन संसार से विरक्त हो जाता है ।

इस कथा में कमला और एक शिशु दोनों गौणपात्र हैं । ये जन्म लेकर अपने पिता को गार्हस्थ्य जीवन की ओर आकृष्ट करते और उसके जीवन में सुधार लाते हैं ।

इस तीन वर्षीय शिशु के मृत्यु के पश्चात् प्यारे मुखड़े वाली कमला अपने सौतेले भाई के साथ नानकचन्द की तरफ दौड़ती हुई दिखाई देती है और नानक चन्द और ललिता का पुनर्मिलन होता है । इन दोनों बालकों के अभाव में कथा का उद्देश्य पूरा नहीं हो पाता ।

'दुनिया का सबसे अनमोल रतन' में एक लड़का जिसकी आयु ५-६ वर्ष के लगभग होगी, अपनी छड़ी पर घोड़े की सवारी करता हुआ ऐसे स्थल पर पहुंचता है जहां बदनसीब काला चोर फांसी के तख्ते पर झूलने जा रहा है । यह एक मैदान है जहां हजारों लोग गोल बांधे खड़े हैं । कई लोग नंगी तलवारें लिए काला चोर को घेरे हुए हैं । इसी भीड़ में

यह भोला-भाला खूबसूरत बालक एक छड़ी पर सवार, अपने पैरों को उछालता फर्जी घोड़ा दौड़ाता, अपनी सादगी में इतना मगन मानों सचमुच अरबी घोड़े का शहसवार है, आता है । उसे देखकर बदनसीब काला चोर अपने मरने से पहले अपनी अन्तिम इच्छा पूरी करने को चिल्लाता है । जल्लाद उसे छोड़ देते हैं । वह फांसी के तख्ते से उतर कर उस शिशु को प्यार करता है और उसकी आंखों से आंसू का एक कतरा टपक पड़ता है । इस बालक के माध्यम से काला चोर के हृदय के कोमल-पक्ष पर प्रकाश पड़ता है ।

दिलफिगार जो दुनिया का सबसे अनमोल रत्न की खोज में निकला था यहां आकर ठिठक गया और उस आंसू के कतरे को अपने हाथ में लेकर कहा यही दुनिया की सबसे अनमोल रतन है । इस स्थल पर इस बालक की झलक मात्र से ही कथा का यह भाग सम्पूर्ण होना सम्भव हो सका है ।

'वरदान' उपन्यास में बालकों का समूह गौणपात्र के रूप में हमारे सम्मुख आते हैं । यह बालकों का समूह मुंशी शालिग्राम के पड़ोस का है । मुंशीशालिग्राम के घर से निकलते ही ये बालक उनके पीछे हो लेते हैं । बालक प्रेम-वारि से अभिसिंचित हृदय वाले मुंशी जी को अच्छी तरह पहचानते हैं । पंडित जी के अदृश्य होने पर ये बालक अत्यधिक दुःखी हैं । वे बराबर उनके पास जाने के लिए रोते तथा हठ करते हैं । व उन्हें यह न मालूम था कि उनकी प्रमोद सभा सदा के लिए भंग हो गई है। उनके हृदय की छिपी हुई वेदना कैसे व्यक्त होती है ? अपने शिशुओं को विह्वल देख माताएं मुंह ढांप ढांप कर रोतीं । उपन्यास के आरम्भ में ही इन बालकों के समूह द्वारा मुंशी जी के वात्सल्य-स्नेह सिंचित हृदय पर प्रकाश डाला गया है ।

'प्रेमाश्रम' उपन्यास में मुन्नी गौण शिशु पात्रा है । वह ज्ञानेश्वर और विद्या की पुत्री है, आयु लगभग दो या तीन वर्ष की है । जिस समय उसकी माता की मृत्यु हो जाती है तो मुन्नी भी माता के लिए हुड़क-हुड़क कर बीमार पड़ती है । सब प्रकार की चेष्टाएं की जाती हैं, पर उसका मन नहीं बहलता । चौथे दिन ज्वर आता है और तीन दिन के बाद वह मातृ-हृदय की दुखी बालिका चल बसती है ।

निर्मला

'निर्मला' उपन्यास में कृष्णा बाबू उदयमानु लाल और कल्याणी की पुत्री है । अवस्था उसकी १० वर्ष है । स्वभाव की चंचल, खिलाड़िन और सैर-तमाशे पर जाने देने वाली काम से जी चुराने वाली है । बहुत सी बातों से अनभिज्ञ है, अत: अपने बड़ों से तरह-तरह के प्रश्न करती है । अत्यन्त जिज्ञासु, सरल और अबोध बालिका है । उपन्यास के प्रारम्भ में यह सुन्दर वातावरण की सृष्टा है, जिसके माध्यम से उपन्यास की कथा आगे बढ़ती है ।

चन्दर या चन्द्रमानु भी इस उपन्यास का गौण पात्र है । यह निर्मला का छोटा भाई है । इसकी अवस्था बारह वर्ष की है । अवस्थानुकूल अपनी बहनों से लड़ने वाला उन्हें बात-बात में चिढ़ाने वाला है । बहनों के सामने अपनी विद्वता प्रदर्शित करता है । उनके सामने डींग हांककर अपना बड़प्पन दिखाने वाला है ।

जियाराम नामक शिशु पात्र इस उपन्यास में मुंशी तोताराम का मंझला पुत्र है । इसकी अवस्था बारह वर्ष की है । इस अवस्था में उसकी विमाता निर्मला का आगमन होता है । यह शिशु स्वभाव से शोख, पिता से विमाता की शिकायत करने वाला है । इसका कोमल मन वातावरण से अत्यधिक प्रभावित होने वाला है । बड़े भाई मंसाराम की बीमारी और विमाता के शोक से प्रभावित होने से उसके स्वभाव में विनम्रता उत्पन्न होती है । भाई के देहान्त, सौतेली बहन के जन्म तथा पिता को अपनी ओर से उदासीन देख उसमें उद्दण्डता का आविर्भाव होता है । पड़ोस की स्त्रियां जियाराम से उसकी विमाता की शिकायत करती हैं । जिया की उद्दण्डता बढ़ती जाती है, वह विमाता का गहना चुराता और सदा के लिए गायब हो जाता है । यथोचित वातावरण न पाने के कारण वह बाल-अपराधी बन जाता है ।

सियाराम मुंशी तोताराम का सबसे छोटा पुत्र है, जिसकी अवस्था पांच वर्ष की है । विमाता का आगमन होता है । परिवार में बूढ़ी विधवा बुआ और विमाता के कारण बालक की अवस्था में

परिवर्तन होता है । मातृ-स्नेह से वंचित करुण हृदया विमाता निर्मला से स्नेह मिलने पर भी उसके वंचित हृदय को सन्तोष प्राप्त नहीं होता ।

यह सरल स्वभाव का सीधा-सादा शिशु है । उसके शैशव में ही परिवार में कई अशुभ घटनाएं घटती हैं-- बड़े भाई मंसाराम का देहान्त मंझले भाई जियाराम का घर से चोरी कर निकल भागना तथा पिता के मकान की नीलामी ।

आर्थिक अवस्था दयनीय होने के कारण उसकी विमाता निर्मला सदा खिन्न रहती है । इसका बहुत कुछ प्रभाव जियाराम के कोमल हृदय पर पड़ता है । जियाराम बाजार दौड़ते-दौड़ते परेशान है, एक दिन एक साधु से उसकी भेंट होती है । साधु की बातों से वह आकृष्ट होकर अपने पारिवारिक वातावरण से ऊबकर साधु के साथ चला जाता है । सियाराम भी इस कहानी का गौण पात्र है ।

आशा -- `निर्मला` उपन्यास में आशा गौण पात्रा है । यह मुंशी तोताराम और निर्मला की पुत्री है । इसका जन्म दो सौतेले भाइयों के बीच पिता की वृद्धावस्था तथा परिवार की आर्थिक स्थिति बिगड़ने के समय होता है । इसका जन्म माता के लिए महान् घटना है, क्योंकि उसने प्रथम शिशु का जन्म दिया है, मुंशी जी के लिए हृदयविदारक घटना है,क्योंकि वृद्धावस्था की दीन-हीन अवस्था में बालिका को जन्म देना सामाजिक अपराध-सा है । बालिका का भविष्य विराट् रूप धारण करके जटिल समस्या के रूप में उनके सामने है । आशा अपने भाई मंसाराम की तरह देखने में सुन्दर है `बिल्कुल वही बड़ी-बड़ी आँखें और लाल-लाल ओंठ हैं ।.... वही माथा है, वही मुंह है, वही हाथ पांव ।`[1] मुंशी जी कहते हैं[2] ` ईश्वर ने मेरा मंसाराम दे दिया.... ईश्वर तुम्हारी लीला अपार है ।

---

१ प्रेमचन्द : `निर्मला` ,पृ० १२१

२ ,, : ,, पृ० १२१

जन्म से दो ढाई वर्ष की आयु तक हम आशा को इस उपन्यास के कई स्थलों पर देखते हैं । इसके माध्यम से उपन्यास के ये स्थल बड़े ही सजीव होकर हमारे सामने उपस्थित होते हैं तथा उपन्यास के कई पात्रों जैसे उसके माता-पिता, दोनों सौतेले भाई सियाराम तथा जियाराम फुआ रुक्मिणी ,मौसी कृष्णा तथा निर्मला की सखी सुधा आदि के चरित्रों पर प्रकाश पड़ता है ।

निर्मला अपनी छोटी बहन कृष्णा के विवाह के अवसर पर मैके जाती है । एक दिन रात को दो बजे आशा के रोने की आवाज सुनकर निर्मला जाग जाती है ।वह देखती है कि सारा घर सो रहा है कृष्णा अपने कमरे में बैठी बड़ी तन्मयता से चर्खा चला रही है ।निर्मला उसे देखकर दंग रह जाती है ।

कृष्णा बहुत बारीक सूत काढ़ रही थी और उसे साफा बनाकर अपने भावी पति को उपहार स्वरूप देना चाहती थी । कृष्णा की उत्सुकता और उमंग देखकर उसका हृदय किसी अलक्षित आकांक्षा से आन्दोलित हो उठा । उसे अपने विवाह की याद आई । जिस दिन तिलक गया था ,उसकी सारी चंचलता, सारी सजीवता विदा हो गई थी ।.... अपराधी जैसे दण्ड की प्रतीक्षा करता है,उसी भांति वह विवाह की प्रतीक्षा करती थी, उस विवाह की,जिसमें उसके जीवन की सारी अभिलाषाएं विलीन हो जायंगी । जब मण्डप के नीचे बने हुए हवन-कुण्ड में उसकी आशाएं जलकर भस्म हो जायेंगी ।[1]

इस स्थल पर अर्द्धरात्रि के समय आशा का रुदन ही सम्पूर्ण वातावरण को सजीव एवं मार्मिक बना देता है तथा निर्मला और कृष्णा दोनों बहनों के मन में उठने वाले भावों पर प्रकाश पड़ता है । कृष्णा के विवाह के बाद काफी दिनों तक निर्मला मैके में रहकर घर जाती है । आशा मैके अपने पिता को पहचानती ही नहीं, पिता को देखकर भाग जाती है बुलाने पर रोने लगती तथा माता से लिपट जाती है । मुंशी जी

---

१ प्रेमचन्द : 'निर्मला',पृ०१३०

मिठाई देकर बालिका को अपने पास परचाना चाहते हैं । जियाराम से दो आने की मिठाई लाने को कहते हं । आशा के लिए दो आने की मिठाई को लेकर पूरे परिवार में कलह उत्पन्न होता है । जियाराम मिठाई लेने नहीं जाता । मुंशी जी स्वयं मिठाई लाते हैं । इस स्थल पर जियाराम की उद्दण्डता पराकाष्ठा पर पहुंच जाती है । मुंशी जी जब जिया और सिया को मिठाई देते तो जिया स्वयं मिठाई तो नहीं लेता और सिया से कहता है-- खबरदार सिया यदि तुमने मिठाईली तो हाथ तोड़ दूंगा । इसके बाद अपने पिता का हाथ पकड़ कर धकेल देता है । इस स्थल पर जिया है के हृदय में पिता के प्रति घृणा और आक्रोश के भाव आशा की मिठाई के कारण उभर पड़ते हैं ।

अपनी माता की कृपणता का शिकार आशा विशेष रूप से होती है । गहने की चोरी और जियाराम के लापता हो जाने के कारण निर्मला पैसों को दांत से पकड़ती है । आशा का भविष्य विराट् रूप धारण करके उसके विचार क्षेत्र में मंडराता रहता है । सियाराम के लिए जूते नहीं खरीदे जाते कि वह पहन कर मदरसे जाय और आशा के लिए तो दूध तक नहीं आता । सियाराम साधु के साथ घर से लापता हो जाता है । "मुंशी जी बाहर बेजान से पड़े रहते हैं अन्दर निर्मला । आशा कभी भीतर जाती कभी बाहर । उससे बोलने वाला कोई नहीं था । बार-बार सियाराम के कमरे के द्वार पर जाकर खड़ी होती और 'भैया-भैया' पुकारती, पर 'भैया' कोई जवाब न देता था ।"[1]

इस छोटी-सी बालिका के लिए परिवार का यह वातावरण बड़ा ही क्रूर और घातक है । परिवार के सभी सदस्य सिया के गुम होने वाली हृदय-विदारक घटना से पीड़ित हैं, उसकी गंभीरता से परिचित हैं, किन्तु इस नन्हीं सी बच्ची के कोमल तथा संवेदनशील हृदय पर क्या बीत रहा है, इसे कौन बता सकता है ?

---

१ प्रेमचन्द : 'निर्मला', पृ० [illegible]

माता-पिता के बीच मनमुटाव होने पर शिशु क ही दोनों के बीच मध्यस्थ का काम करता है । मुंशी तोताराम सिया को ढूंढ़ने निकलते हैं । निर्मला को हिम्मत नहीं होती कि वह उन्हें जाने से रोके, उसे लगता है कि सिया अब हाथ न आवेगा । अतः वह बच्ची को सिखाती है कि [illegible] देख तेरे बाबू कहां जा रहे हैं ?

अबोध बालिका अपने पिता के द्वार पर झांक कर पूछती ह--'बाबू जी, तहां दाते हो ?'

मुंशी जी -- बड़ी दूर जाता हूं बेटी, तुम्हारे भैया को खोजने जाता हूं ।

बच्ची ने वहीं से खड़े-खड़े कहा -- 'अम बी तलेंगे ।'

मुंशी जी -- बड़ी दूर जाते हैं बच्ची । तुम्हारे वास्ते चीजें लायेंगे । यहां क्यों नहीं आती ?

बच्ची मुस्कराकर छिप गई और एक क्षण में फिर किवाड़ से सिर निकाल कर बोली -- अम बी तलेंगे ।

मुंशी जी ने उसी स्वर में कहा --'तुमको नई ले तलेंगे ।

बच्ची -- हमको क्यों नई ले तलोगे ।

मुंशी जी -- तुम तो हमारे पास आती नहीं हो ।

लड़की ठुमकती हुई आकर पिता की गोदमें बैठ गई । थोड़ी देर के लिए मुंशी जी उसकी बाल क्रीड़ा में अपनी अन्तर्वेदना भूल गये ।[1]

इस स्थल को भी यह बालिका सजीव और मार्मिक बना देती है ।

मुंशी जी के चले जाने के बाद निर्मला को सदा यही चिन्ता बनी रहती है कि यदि वे लौटकर न आवें तब क्या होगा ? उसे उनकी चिन्ता न होती कि उनपर क्या बीत रही होगी, वह कहां मारे-मारे फिरते होंगे, स्वास्थ्य कैसा होगा? उसे केवल अपनी और उससे भी बढ़कर [illegible] की चिन्ता थी । उसने कतर-ब्योंत करके जो रुपये

---

१ प्रेमचन्द : 'निर्मला', पृ० [illegible]

रखे थे, उसमें कुछ-न-कुछ रोज ही कमी होती जाती थी । एक-एक पैसा निकालते उसे इतनी अखर होती मानों कोई उसकी देह से रक्त निकाल रहा हो । इस परिस्थिति में आशा ही अपनी माता के क्रोध का शिकार बनती है । लेखक के ही शब्दों में -- 'लड़की किसी चीज़ के लिए रोती तो उसे अभागिन कलमुंही कहकर झल्लाती ।.... जिस बच्ची को वह प्राणों से भी अधिक प्यार करती थी, उसकी सूरत से भी घृणा हो गई । बात-बात पर झुंझ पड़ती, कभी -कभी मार बैठती । रुक्मिणी रोती हुई बालिका को गोद में बैठा लेतीं और चुमकार-दुलार कर चुप करती । उस अनाथ के लिए अब यही एक आश्रय रह गया था ।'[1]

निर्मला अपने साथ बच्ची को कहीं नहीं ले जाती । पहले जब बच्ची को अपने घर साने की चीजें मिलती तो वह हंसती खेलती थी । किन्तु अब उसे बाहर जाकर भूख लगती थी । निर्मला उसे घूर-घूर कर देखती और मुट्ठियां बांधकर धमकाती पर वह भूख की रट लगाना छोड़ती न थी । मरने से पहले निर्मला के मन में सबसे अधिक चिन्ता उस बच्ची आशा की है । जिन सामाजिक कुरीतियों के कारण निर्मला का जीवन नष्ट हो गया उसे भय है कि उसका शिकार यह बालिका न बने । वह रुक्मिणी से प्रार्थना करती है कि भले ही इस बालिका को विष देकर मार डाले पर किसी कुपात्र के गले न मढ़े ।

यही है इस छोटी बालिका आशा का छोटा-सा व्यक्तित्व, जिसे हम उपन्यास के कई स्थलों पर पाते हैं । आशा इस उपन्यास की गौणपात्र है पर इसके माध्यम से कथा का विकास होता है । आशा हर स्थल को सजीव और मार्मिक बना देती है । आशा के ही माध्यम से वृद्ध-विवाह, दहेज प्रथा, विधवा-विवाह आदि समस्याओं की जटिलता मुखर हो उठी है ।

सोहन -- सोहन डा० सिन्हा तथा सुधा का शिशु है, जिसकी आयु एक वर्ष से कम ही है । इसी अल्पायु में वह अशिक्षा तथा अंध-विश्वास का शिकार बनता है और उसका प्राणान्त हो

---

1 प्रेमचन्द : 'निर्मला', पृ० [illegible]

हो जाता है । इस उपन्यास में वह गौण पात्र है । सुधा मुंशी तोताराम की दयनीय स्थिति पर तरस खाकर अपनी सखी निर्मला को बुलाने उसके मैके जाती है । सोहन का दर्शन उसी स्थल पर होता है । सोहन अपनी माता सुधा के जीवन का आधार है । उसी के नींद सोता और उसी की नींद जगता है । चिन्ता से व्याकुलहृदया निर्मला को नींद नहीं आती । अर्द्धरात्रि में सुधा की नींद कहीं खुलती है तो सोहन भी जाग पड़ता है । सुधा कहती है -- `हां बहिन इसकी अजीब आदत है-- मेरे साथ सोता है। और मेरे ही साथ जागता है । उस जन्म का कोई तपस्वी है । देखो, माथे पर तिलक का कैसा निशान है । बाहों पर भी ऐसे ही निशान हैं । जरूर कोई तपस्वी है ।'

`निर्मला तपस्वी लोग तो चन्दन तिलक नहीं लगाते । उस जन्म का कोई धूर्त पुजारी होगा । क्यों रे, तू कहां पुजारी था ? बता ।'

सुधा -- इसका ब्याह मैं बच्ची से करूंगी ।

निर्मला -- चलो बहिन, गाली देती हो । बहिन से भी भाई का ब्याह होता है ?'[1]

शिशु दाम्पत्य जीवन के सुखों का आधार होता है । उसके भविष्य की सुखद कल्पना बड़ों के लिए आनन्ददायिनी होती है । यह शिशु भी सुधा के जीवन का आधार है । सुधा उसके भविष्य की सुखद कल्पना करके मन-ही-मन प्रसन्न होती है । उसी रात उस बालक को सर्दी लग जाती है, उसकी आंखें चढ़ जाती हैं । निर्मला की बूढ़ी मां कहती है कि यह कुछ नहीं किसी की डीठ है । बुढ़िया महरी पड़ौस की पंडिताइन इसका अनुमोदन करती है मंत्र सरकण्डे के पांच टुकड़े से झाड़ता है । दूसरे दिन महरी सोहन को चादर में लपेट कर मौलवी साहब के पास मसजिद ले जाती किन्तु आधी रात जाते-जाते सोहन की जीवन-लीला समाप्त हो जाती है ।

---

१ प्रेमचन्द : `निर्मला', पृ० १३८

निर्मला रात भर इस शिशु की सेवा करती है । सुधा की आंखें बीच-बीच में लग भी जाती हैं पर निर्मला एक मिनट के लिए भी झपकी नहीं लेती । निर्मला का सेवा-भाव सोहन के माध्यम से ही प्रकट होता है ।

डा० सिन्हा शिशु का मुंह भी नहीं देख पाये वे मन-ही-मन कुढ़ते हैं अगर ईश्वर को इतनी जल्दी यह पदार्थ देकर छीन लेना था तो दिया ही क्यों था ? उन्होंने तो कभी संतान के लिए ईश्वर से प्रार्थना न की थी । वह आजन्म निःसन्तान रह सकते थे, पर सन्तान पाकर उससे वंचित हो जाना उन्हें असह्य जान पड़ता था ।[1]

इसी बीच जब इनकी प्राणप्रिया पत्नी सुधा आती है तो उसके अश्रुसिंचित कपोलों को दोनों हाथों में लेकर कहते हैं-- 'सुधा तुम इतना छोटा दिल क्यों करती हो ? सोहन अपने जीवन में जो कुछ करने आया था, वह कर चुका था, फिर वह क्यों बैठा रहता । जैसे कोई वृक्ष जल और प्रकाश से बढ़ता है, लेकिन पवन के प्रबल झोंको से सुदृढ़ होता है, उसी भांति प्रणय भी दुख के आघातों से विकास पाता है ।.... जिन प्रेमियों को साथ रोना नसीब हुआ वे मुहब्बत के मजे क्या जाने ? सोहन की मृत्यु ने आज हमारे द्वैत को बिल्कुल मिटा दिया । आज ही हमने एक-दूसरे का सच्चा स्वरूप देखा है ।'[2]

इस स्थल पर डा० सिन्हा के संयत संवेग तथा आदर्श विचार की झांकी कराने वाला सोहन ही है । यह गौण पात्र है किन्तु इसके अभाव में डा० सिन्हा और सुधा के दाम्पत्य जीवन की परि-कल्पना नहीं की जा सकती और न सुधा निर्मला या सखियों की कथा का स्नेहयुक्त बन्धन की झांकी ही मिल सकती है । सोहन अल्पायु में ही मो

---

१ प्रेमचन्द : 'निर्मला', पृ० १८२

२ ,, : ,, पृ० १८३

परिवारों के सच्चे चित्र को पाठक के सामने रखकर अपना कर्तव्य पूरा करता है। उसके ज्ञानी और शिक्षित पिता डा० सिन्हा के ही शब्दों में--'सोहन अपने जीवन में जो कुछ करने आया था, वह कर चुका था, फिर वह क्यों बैठा रहता'।[१]

'रंगभूमि' में मिठुआ, घीसू ,साबिरअली नसीमा, जाहिरअली, बालकों का समूह गौण पात्र है । मिठुआ सूरदास के भाई का लड़का है । इसके माँ-बाप दोनों प्लेग में मर चुके हैं । इसीलिए तीन वर्ष की आयु से ही सूरदास के संरक्षण में है । सूरदास इसकी सारी इच्छाओं को पूरा करता है अतः यह बिना दूध और गुड़ के रोटी नहीं खा सकता । अब यह १२-१३ वर्ष का हो चुका है, सुन्दर हंसमुख और सुडौल । इसके माध्यम से सूरदास के वात्सल्य पूर्ण हृदय की झांकी मिलती है । घीसू भी इसी वय का है और मिठुआ का दोस्त है । यह बजरंगी और जमुनी का लड़का है । स्वभाव से दुष्ट है, सूरदास को छेड़ने के लिए घड़ी रात रहते उठ पड़ता है । उसकी लाठी छीनने में उसे विशेष आनन्द आता है । इसके शरारत के माध्यम से इसकी माता की उच्छृंखलता, पिता के संयम तथा दृढ़ता तथा सूरे की दीनता पर प्रकाश पड़ता है । जब मिठुआ और घीसू व दोनों साथ हो जाते हैं तो इनकी शरारत की मात्रा और भी बढ़ जाती है । जगधर को देखकर वे चिढ़ाते --

> लालू का लाल मुंह, जगधर का काला,
> जगधर तो हो गया, लालू का साला ।

भैरो को भी नहीं छोड़ते--

> भैरो, भैरो, ताड़ी बेच,
> या बीबी की साड़ी बेच ।

वे दोनों शरारत के कुकर्मों के माध्यम से उनके गांव के अन्य अनेक व्यक्तियों जैसे सुभागी बजरंगी, जमुनी, जगधर आदि के स्वभाव पर प्रकाश पड़ता है ।

इस उपन्यास में जाहिरअली तथा साबिरअली, साबिर तथा नसीमा अन्य गौण पात्र अन्य स्थल पर आये हैं ।

---

१ प्रेमचन्द : 'निर्मला', पृ० १८२

इन शिशुओं के माध्यम से ताहिरअली के परिवार की वास्तविक स्थिति का पता लगता है। ये बच्चे किस प्रकार अपनी-अपनी स्थितियों के शिकार बने हुए हैं। जाहिर और जाबिर ताहिरअली के सौतेले भाई हैं। इनकी मातायें चालाक और व्यवहार कुशल हैं। अत:इन दोनों शिशुओं की स्थिति एक परिवार में रहने पर भी साबिर और नसीमा से अच्छी है। इनकी इच्छाएं पूरी हो जाती हैं। खाना-पीना समय पर मिल जाता है। मिठाइयां भी इन्हें मिलती हैं पर साबिर और नसीमा के पिता अपनी विमाताओं का त्रिया-चरित्र से अनभिज्ञ हैं। वे धर्म-भीरु स्वभाव के हैं। जिसके पिता की सरलता तथा धर्मभीरुता के शिकार ये दोनों बच्चे बने हुए हैं। बाजरे की रोटी को बहुत बड़ी नियामत समझकर आंगन में उछल-उछल कर खाते हैं। मिठाइयां तो इन्हें कभी मयस्सर ही नहीं।

मिठुवा और घीसू की शरारत यहां तक पहुंचती है। सूरदास के जमीन पर अधिकार जमाने वाले जानसेवक के मुंशी ताहिरअली को ही समझते हैं। अत:ये उनके बच्चों पर अपना क्रोध उभाड़ते तथा उनसे प्रतिशोध लेते हैं। मौका पाकर उन बच्चों पर पिल पड़ते हैं। जाहिर को घीसू दबाता है। मिठुवा जाबिर को चुटकियां काटने लगता है + और वहां एक हंगामा खड़ा होता है।बालकों की लड़ाई, बड़े और बूढ़ों की लड़ाई बन जाती है।

'कायाकल्प' उपन्यास में शंखधर अहल्या और चक्रधर का पुत्र है। स्वभाव का सरल और सच बोलने वाला। वह अपनी माता से अधिक अपनी अम्मा लौंगी को प्यार करता है। परिवार की लघु से लघु घटना उसके कोमल मस्तिष्क को प्रभावित करती है। बाल्यकाल में ही उसमें मानसिक द्वन्द्व होता है। स्वभाव का कोमल और भावुक है। बाल्यकाल में ही एक ऐसी घटना घटती है,जो उसके कोमल मन को बहुत बड़ा आघात पहुंचाती है-- उसे अपने पिता के सन्यासी होने की बात मालूम होती है। वह चिन्तित है और अपने पिता को ढूंढ कर लाना चाहता है। दादी की पूजा करते देख एकान्त स्थान में जाकर तुलसी की परिक्रमा करता और फूल चढ़ाता है। यह शिशु इस उपन्यास का मौन पात्र है। इसके माध्यम से अहल्या,मनोरमा

आदि के चरित्रों पर प्रकाश पड़ता है ।

'गबन' उपन्यास में गोपी और विश्वम्भर दोनों भाई गौण पात्र के रूप में आते हैं । ये दोनों दयानाथ के तथा जागेश्वरी के पुत्र हैं और रमानाथ के छोटे भाई । गोपी की आयु लगभग तेरह वर्ष की है और विश्वम्भर ६ वर्ष का है । दोनों भाई बड़े भाई रमानाथ से थर-थर कांपते हैं । एक बार दोनों ताश खेलते हैं-- रमानाथ अन्दर आता है दोनों भाई ताश को टाट के नीचे छिपाकर सिर झुका लेते हैं और प्रतीक्षा में है कि कब उनपर झपट पड़े । उन्हें कनकौवे उड़ाते देख पिता की बाल-प्रकृति सजग हो जाती और वे एक-दो-चार पेच लड़ा देते । बच्चों के साथ गुल्ली डंडा भी खेल लेते हैं ।

रमानाथ के गायब होने पर रतन जालपा के साथ गोपी के जाने का प्रस्ताव रखती है । कलकत्ते की सैर का ऐसा अवसर पाकर बहुत खुश होता है, किन्तु विश्वम्भर दिल में ऐंठकर रह जाता है । अपने मन में सोचता है कि विधाता ने उसे छोटा न बनाया होता तो यह बात नहीं होती । सोचता है, गोपी ऐसे कौन से होशियार है, जहां जाते कोई-न-कोई चीज खो आते हैं । यही बात है मुझसे बड़े हैं , यह दैवी विधान है कि मजबूर हूं । जब जालपा गोपी के साथ जाने लगती है तो सास-ससुर के चरणों पर सिर झुका कर आशीर्वाद लेती है तो विश्वम्भर रोने लगता है ।

गोपी कलकत्ता जाने के प्रस्ताव से बहुत प्रसन्न है । यात्रा के समय अपनी सारी निपुणता प्रदर्शित करता है । उसके मन में जात-पांत और ऊंच-नीच का संस्कार है । खटिक के घर जाने पर जालपा से कहता है — भैया इसी खटिक के यहां रहते थे ? खटिक कड़ी तो मालूम होते हैं । जालपा ने फटकार कर कहा — खटिक हो या चमार हो लेकिन हमसे और तुमसे तो सौगुने अच्छे हैं । एक परदेशी को छः महीने तक अपने घर में ठहराया खिलाया, पिलाया ...

गोपी मुंह हाथ धो चुका था मिठाई खाता हुआ बोला — किसी को ठहरा लेने से कोई ऊंचा नहीं हो जाता । चमार

कितना ही दान-पुण्य करे, पर रहेगा चमार ही।'[1]

गोपी कलकत्ता सैर कर चुकने के बाद वहां से ऊब जाता है और घर जाने की रट लगाता है। छिप-छिप कर घर जाने के लिए रोता भी है।

इन दोनों गौण शिशुपात्रों के माध्यम से दयानाथ, रमानाथ, जालपा आदि के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है और वह स्थल सजीव हो उठता है।

'शिशु' यह रमानाथ और जालपा का नवजात शिशु है जो इन दोनों के नये विस्थापित जीवन की ओर संकेत करता है।' सहसा रामेश्वरी एक छोटे से शिशु को गोद में लिये हुए बोली-- भैया, जरा चलकर रतन को देखो, जाने कैसे हुई जाती है। जोहरा और बहू दोनों रो रही हैं।'[2]

नैना -- नैना लाला समरकान्त की बेटी तथा अमरकान्त की सौतेली बहन है। इस उपन्यास की यह गौणपात्रा है। अमरनाथ के दु:खमय जीवन को स्नेह से सिंचित करती है। नैना की आयु बारह वर्ष की है। अपने सौतेले भाई अमर से आठ वर्ष की छोटी है। अमरनाथ अपने पिता की कृपणता तथा विमाता के क्रूर व्यवहारों का शिकार बनता रहता है और यह बालिका सदा अपने भाई को बचाने के लिए ढाल का काम करती है। यह सरल और चतुर है। अमर के लिए इसे ठगना सहज है, किन्तु उससे अपनी चिन्ताओं को छिपाना कठिन। अमर की फीस के लिए पिता की क्रोधाग्नि जब प्रज्वलित होती है, तो नैना के हृदय पर सबसे बड़ा आघात पहुंचता है। वह सिसक-सिसककर रोती है। नैना भाई के लिए पिता से भी लड़ती है तथा भाभी सुखदा से भी अनुमोदन करती रहती है।

अमरकान्त और सुखदा जब घर छोड़कर चले जाते हैं तो नैना भी उनके साथ जाती है। लल्लू उसके प्राणों का आधार है। उसकी सेवा-शुश्रूषा का भार नैना पर ही है। इस उपन्यास के प्रारम्भ में हम नैना को बारह वर्षीय बालिका के रूप में देखते हैं। इसमें बाल-सुलभ कोमलता

---

१ प्रेमचन्द : 'गबन', पृ० २३८ अध्याय ३६
२ ,, : ,, पृ० ३२४ अध्याय ५२

संवेदनशीलता, स्नेह, त्याग आदि गुण कूट-कूट कर भरे हैं । वह अपने परिवार की केन्द्रबिन्दु है-- अमरकान्त की प्राणों से भी प्यारी बहन, मामी सुखदा की लाड़ली, पिता की प्यारी बेटी तथा भाई के शिशु लल्लू की जीवनाधार है । अपने सुकोमल स्वभाव से डा० शान्तिकुमार, रेणुका देवी, मुंशी भाई आदि सब के हृदय में एक विशिष्ट स्थान रखने वाली सबको सम्मोहित करने वाली बालिका है । नैना के परिवार में सभी उससे बड़े हैं । देश में जागृति का आन्दोलन है, ग्रामोद्धार, वर्ग संघ, अछूतोद्धार विदेशी माल का बहिष्कार आदि अनेकानेक क्रान्तियों की ज्वाला भड़क रही है । नैना का घर स्वयं संग्राम क्षेत्र बना हुआ है, जिसमें दोनों दलों के लोग हैं । इन दोनों विचार-लहरों के बीच नैना है, जो दोनों लहरों के थपेड़े खाती है और उसमें डूबती-उतराती रहती है । दो विपरीत आदर्शों के बीच रहते हुए भी नैना अपना मार्ग स्वयं निर्धारित करती है, यह मार्ग है सेवा और त्याग का मार्ग । यह आदर्श उसे प्राप्त हुआ है, अपने भाई अमरकान्त से । उसके पश्चात् वह डा०शान्तिकुमार सरीखे मनस्वी कर्मशील, महत्वाकांक्षी निस्वार्थी सेवी और त्यागी पुरुष के व्यक्तित्व से प्रभावित है । इन्हीं आदर्शों के लिए वह बालिका अपने जीवन को उत्सर्ग कर देती है । इस उपन्यास में यह बालिका गौण पात्रा के रूप में है, किन्तु उसके अभाव में लाला समरकान्त के परिवार की कथा, अमरनाथ की कथा, कर्मभूमि की कथा, प्राणहीन और निर्जीव हो जायगी ।

एक बालक -- अमरकान्त घूमते-घामते चमारों की बस्ती में जाकर बूढ़ी सलोनी काकी के यहां रात्रि के समय शरण लेता है । इस स्थल पर एक बालक का दर्शन होता है जो गौण पात्र है । अमरकान्त छिप करके पानी लेने कुएं पर जाता है । वहां मुन्नी पानी भरते हुए दिखाई देती है । यह वही मुन्नी है जो खून के मुकदमे में बरी हो गई थी । जिसके सतीत्व का अपहरण गोरों ने किया था और उसने प्रतिशोध स्वरूप उनका खून किया था । अमरकान्त का कलेजा धक् से हो जाता है पर मुन्नी उसे नहीं पहचानती । नगर का सुकुमार युवक धूप और लू वर्षा और आंधी भूख और प्यास सहने से तपस्वी-सा प्रतीत होता है अतः ये ग्रामीण स्त्रियां उसपर स्नेह और सद्भाव रखती हैं । मुन्नी एक लड़के के द्वारा लालटेन और दरी अमरकान्त के लिए भेजती है । जब बालक आता है तो अमर उससे बातें करने लगता है । इस बालक के माध्यम से उसके परिवार तथा सम्पूर्ण ग्रामीण वातावरण

का पता चलता है । यह बालक इस सन्दर्भ में गौण पात्र है,फिर भी इसका अपना महत्व है । इसके अभाव में यह स्थल इतना मार्मिक और सजीव नहीं हो सकता था और न अमरकान्त के हृदय को अनुप्राणित करने वाली वह प्रेरणा ही मिल सकती थी,जिसको लेकर वह दूसरे ही दिन गूदड़ चौधरी के यहां जाकर शान्ति का आन्दोलन शुरू कर सके ।

उदाहरण स्वरूप -- `एक बालक लालटेन लिए कंधे पर एक दरी रखे आया और दोनों चीज़ें उसके पास रखकर बैठ गया । अमर ने पूछा -- दरी कहां से लाए?
`काकी ने तुम्हारे लिए भेजी है । वही काकी जो अभी आई थी ।`
अमर ने प्यार से उसके सिर पर हाथ फेर कर कहा -- अच्छा, तुम उनके भतीजे हो ? तुम्हारी काकी तुम्हें मारती तो नहीं ।
बालक सिर हिलाकर बोला -- कभी नहीं । वह तो हमें खेलाती हैं । दुरजन को नहीं खेलातीं, वह बड़ा बदमाश है ।
अमर ने मुस्कराकर पूछा -- कहां पढ़ने जाते हो ?
बालक ने नीचेका ओंठ सिकोड़कर कहा -- कहां जायं,हमें कौन पढ़ाये । मदरसे में कोई जाने तो देता नहीं । एक दिन दादा हम दोनों को लेकर गये थे । पंडित ने नाम लिख लिया, पर हमें सबसे अलग बैठाते थे । सब लड़के हमें `चमार-चमार` कहकर चिढ़ाते थे । दादा ने नाम कटा दिया ।
अमरको इच्छा हुई,चौधरी से जाकर मिले । कोई स्वाभिमानी आदमी मालूम होता है । पूछा-- तुम्हारे दादा क्या कररहे हैं ?
बालक ने लालटेन से खेलते हुए कहा --बोतल लिए बैठे हैं । पीते हैं । बस अभी बक-झक करेंगे,खूब चिल्लाएंगे,किसी को मारेंगे, किसी को गालियां देंगे । दिन-भर कुछ नहीं बोलते । जहां बोतल चढ़ायी कि बक चले ।`[1]

उपर्युक्त वार्तालाप के माध्यम से इस बालक की निष्कपटता प्रकट होती है । वह बिना झिझक के अपने दादा के शराबीहोने की अवस्था को एक अपरिचित ,अनजान व्यक्ति से कहने लगता है ।

---

1 प्रेमचन्द : `कर्मभूमि`,पृ० १५८-१५९

अमर के पाठशाला के बच्चे --

अमरकान्त के पाठशाला में पन्द्रह-बीस लड़के हैं । ये गौण पात्र हैं, किन्तु इनके माध्यम से अमर की सफलता तथा ग्राम को जागृति पर प्रकाश पड़ता है ।

'अमर की झोंपड़ी में एक लालटैन जल रही है । पाठशाला खुली हुई है । पन्द्रह बीस लड़के खड़े अभिमन्यु को कथा सुन रहे हैं । अमर खड़ा वह कथा कह रहा है । सभी लड़के कितने प्रसन्न हैं । उनके पीले चेहरे चमक रहे हैं, आँखें जगमगा रही हैं । शायद वे भी अभिमन्यु जैसे वीर, वैसे ही कर्तव्यपरायण होने का स्वप्न देख रहे हैं । उन्हें क्या मालूम, एक दिन उन्हें दुर्योधनों और जरासन्धों के सामने घुटने टेकने पड़ेंगे, माथे रगड़ने पड़ेंगे, कितनी बार वे चक्रव्यूहों से भागने की चेष्टा करेंगे, और भाग न सकेंगे ।'

इन भोले ग्रामीण बालकों में पढ़ने की कितनी तीव्र उत्कण्ठा है । कुछ दिनों के बाद इस पाठशाला में ग्रामीण लड़कियां भी शामिल होने लगती हैं ।

निम्न जाति वाले लोगों के इस गांव के लोगों की मनोवृत्ति तथा शिक्षा का प्रचार आदि पक्षों को इस नये पाठशाला के बालकों के माध्यम से कुशल कलाकार ने साक्षात्कार कराया है, अतः इस स्थल के ये बालक गौण होते हुए भी अपने में पूर्ण हैं ।

इससे दो महीने पहले जिस दिन अमरकान्त इस गांव में आता है, उसी रात ये बालक उसे घेर लेते हैं । दो तीन लड़कों के सिवा किसी की देह पर साबित कपड़े भी नहीं है । अमरकान्त कुतूहल से उठ बैठता है, मानों कोई तमाशा होने वाला है । उस स्थल का वर्णन इस प्रकार है--

'जो बालक अभी दरी लेकर आया था, आगे बढ़कर बोला-- इतने लड़के हैं हमारे गांव में । दो-तीन लड़के नहीं आये, कहते थे वे काम काट देंगे ।

अमरकान्त ने उठकर उन सभी को एक कतार में खड़ा किया और एक-एक का नाम पूछा । फिर बोले-- तुममें जो रोज हाथ मुंह धोता है, अपना हाथ उठावे ।

१--प्रेमचन्द : 'कर्मभूमि', पृ० २५६

किसी लड़के ने हाथ न उठाया । यह प्रश्न किसी की समझ में न आया ।

अमर ने आश्चर्य से कहा --`ऐं । तुममें से कोई रोज हाथ-मुंह नहीं धोता ? सबों ने एक-दूसरे की ओर देखा । दूर वाले लड़के ने हाथ उठा दिया । उसे देखते ही दूसरों ने भी हाथ उठा दिए ।

अमर ने फिर पूछा -- तुममें से कौन-कौन लड़के रोज नहाते हैं? हाथ उठायें ।

पहले किसी ने हाथ न उठाया । फिर एक-एक करके सबों ने हाथ उठा दिए । इसलिए नहीं कि रोज नहाते थे,बल्कि इसलिए कि वह दूसरों के पीछे नहीं रहें ।

सलोनी खड़ी थी । बोली -- तू तो महीने भर में भी नहीं नहाता रे जंगलिया । तू क्यों हाथ उठाये हुए है ?

जंगलिया ने अपमानित होकर कहा -- तो गूदड़ ही कौन रोज नहाता है । मुलई पुन्नू,घसीटे कोई भी तो नहीं नहाता ।

सभी एक-दूसरे की कलई खोलने लगे ।

अमर ने डांटा -- अच्छा आपस में लड़ो मत । मैं एक बात पूछता हूं,उसका जवाब दो । रोज मुंह हाथ धोना अच्छी बात है या नहीं ।`

सबों ने कहा -- अच्छी बात है ।

`और नहाना ?`

`सबों ने कहा -- अच्छी बात है ।`

`मुंह से कहते हो या दिल से ?`

`दिल से ।`

`बस जाओ । `मैं दस-पांच दिन में फिर आऊंगा और देखूंगा कि किन लड़कों ने झूठा वादा किया था, किसने सच्चा ।`

इन बालकों के साथ प्रथम परिचय में ही अमरनाथ का स्नेह और सद्भाव उन्हें अपनी ओर आकर्षित करता है । यही

---

१ प्रेमचन्द : `कर्मभूमि`,पृ० १५०--१५१

कारण है कि दो महीने के बाद ही इन बालकों की तन्मयता से पाठशाला का वातावरण चमक उठता है । इस परिच्छेद में इन बालकों की बाल-सुलभ प्रवृत्ति का बड़ा ही मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है । अमरनाथ के ग्रामसुधार वाली कथा से इन शिशुओं को हटा दिया जाय तो वह नीरस और बेजान हो जायगा ।
दो शिशु -- 'कर्मभूमि' उपन्यास में मुन्नी की कथा में दो शिशु पात्र आये हैं ।

ये गौण पात्र के रूप में हैं, किन्तु इन्हीं के माध्यम से मुन्नी के चरित्र और हृदय में उठने वाली भावनाओं के तरंगों का पता चलता है । मुन्नी जब अमरकान्त से अपनी आत्मकथा कहती तो उसमें सबसे प्रमुख उसका जीवनाधार उसके सुख-दुःख, आशा-निराशा का केन्द्र उसका छोटा-सा पुत्र ही है । अपनी कथा कहते-कहते उस शिशु में ही जैसे वह आत्मविस्मृत हो जाती है । वह काशी से चल पड़ी, किन्तु उस बालक की स्मृति, उसके एक-एक क्रिया-कलाप उसकी नसों में समाये थे । लखनऊ स्टेशन पर वह गाड़ी से उतर पड़ी, अब वह काशी लौट जाना चाहती है । शिशु का मोह बड़े वेग से उसे अपनी ओर खींच रहा है ।

मुन्नी विक्षिप्तावस्था में है । वह निर्णय नहीं कर पाती कि काशी लौटे या नहीं, अतः मुसाफिरखाने में चली जाती है। वहां एक दम्पति है, जिनके पास भी एक-एक साल का बच्चा है । इस शिशु को देखते ही मुन्नी का सारा दब ममत्वउमर पड़ता है । वह स्वयं बालक का वर्णन इस प्रकार करती है । ऐसा सुन्दरबालक गुलाबी रंग, ऐसी कटोरे सी आंखें ऐसी मक्खन-सी देह । मैं तन्मय होकर देखने लगी और अपने पराये की सुधि भूल गई । ऐसा मालूम हुआ, यह मेरा है । बालक मां की गोद से उतर कर, धीरे-धीरे रेंगता हुआ मेरी ओर आया । मैं पीछे हट गई । बालक फिर मेरी तरफ चला। मैं दूसरी ओर चली गयी । बालक ने समझा, मैं उसका अनादर कर रही हूं । रोने लगा । फिर भी मैं उसके पास न आयी । उसकी माता ने मेरी ओर रोष-भरी आंखों से देखकर बालक को दौड़कर उठा लिया, पर बालक मचलने लगा और बार-बार मेरी ओर हाथ बढ़ाने लगा । पर मैं दूर खड़ी रही । ऐसा जान पड़ता है था, मेरे हाथ कट गयें हैं। जैसे मेरे हाथ लगते ही बालक को कुछ हो जायगा । उसमें से कुछ निकल जायगा । स्त्री ने कहा -- लड़के को जरा उठा लो बेटी, तुम तो ऐसे भाग रही हो । जो दुलार करते हैं, उनके पास तो अभागा

जाता नहीं, जो मुंह फेर लेते हैं, उनकी ओर दौड़ता है ।[1] ...... मैंने समीप आकर बालक की ओर स्नेहभरी आंखों से देखा और डरते-डरते उसे उठाने के लिए हाथ बढ़ाया । सहसा बालक चिल्लाकर मां की तरफ भागा । मानों उसने कोई भयानक रूप देख लिया ।अब सोचती हूं, व तो समझ में आता है -- बालकों का यही स्वभाव है, पर उस समय मुझे ऐसा मालूम हुआ कि सचमुच मेरा रूप पिशाचिनी का-सा हो गया[2] ।

इन पंक्तियों में लेखक ने मुन्नी के माध्यम से शिशु का चरित्र का सच्चा तथा मनोवैज्ञानिक चित्र उपस्थित किया है । अपरिचित के प्रति बालकों की यही प्रतिक्रिया होती है । वे उनकी ओर जाना तो चाहते हैं,पर फिर दूसरे ही क्षण मुंह फेर लेते हैं ।

मुन्नी इस शिशु की दाई बन जाती है और हरिद्वार तक जाती है और एक धर्मशाला में ठहरती है । बच्चे का मल-मुत्र साफ करना,खिलाना-पिलाना आदि उसकी सेवा में मग्न रहती है ।

इस स्थल पर फिर मुन्नी के अपने शिशु का सुन्दर मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है,जिसके अभाव में मुन्नी की कथा का क्रम आगे बढ़ना सम्भव नहीं । इस चित्र के माध्यम से शिशु का मनोवैज्ञानिक चित्र तो उपस्थित ~~xxxxx~~ होता ही है,साथ ही साथ मुन्नी के हृदय में उठने वाले भावनाओं के आरोह-अवरोह पर भी दृष्टि पड़ती है । मुन्नी का स्वामी से ढूंढ़ता हुआ हरिद्वार के उसी धर्मशाला में पहुंचता ह । अभिमानिनी मुन्नी व उसे देखकर किवाड़ बन्द कर लेती है, वह कलंकिनी बनकर शिशु को स्पर्श करना नहीं चाहती है । वह किवाड़ के पीछे खड़ी हो जाती है।

बच्चे ने किवाड़ को अपनी नन्हीं-नन्हीं हथेलियों से पीछे ढकेलने में जोर लगाकर कहा -- तेवाड़ खोलो ।' यह तोतले बोल कितने मीठे थे,किन्तु मुन्नी अपने सारे ममत्व को झकझोर कर पति की

---

१ प्रेमचन्द : 'कर्मभूमि', पृ० १८०
२ ,, : ,, पृ० १८०-१८१

भर्त्सना की कि क्यों वे इस कलंकिनी,पापिनी स्त्री के पीछे पड़े हैं ।

बालक पिता के साथ एक वृक्ष के नीचे चला जाता है । उसके पति कम्बल बिछाये बैठे हैं और बालक लोटे की गाड़ी बनाकर डोर खींच रहा है । बार-बार गिरता और बार-बार उठकर खींचता है । मुन्नी के हृदय में फिर दुविधा होती है-- क्या वह पति का साथ दे या न? उसका मातृत्व उसे शिशु और पति की ओर खींच रहा है , पर उसका सतीत्व तथा नारी-सुलभ अभिमान कहीं और ढकेले जा रहा है (पति का साथ देने पर वह एक बड़ा-सा प्रश्नचिन्ह उसके सामने उपस्थित होता है--समाज, परिवार,परिवार के अन्य सदस्य ? क्या उसे वह स्थान मिल सकेगा जो उसके पास पहले था? सारा बल लगा कर उसने मोह तोड़ दिया और आवेश में जाकर गंगा में कूद पड़ती है । इस शिशु का यहीं अन्त होता है ।)वह गंगा नदी में कूद पड़ती है, मुन्नी की जीवन-धारा दूसरा मोड़ ले लेती है पर वह मातृवंचित बालक सदा के लिए संसार से विदा हो जाता है ।

मुन्नी का यह नन्हा-सा बालक मुन्नी के विचारों में कई बार तूफान लाता है, मुन्नी सदा उन तूफानों का शिकार बनी रहती है । इस शिशु के माध्यम से मुन्नी के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है कि उसका सतीत्व उसके मातृत्व से प्रबल है तथा उसमें जाति गौरव है कि वह राजपूत है । गौण होते हुए भी इस शिशु का विशिष्ट स्थान है ।

लल्लू -- यह शिशु अमर और सुखदा का है , वह इस उपन्यास का गौण पात्र है । इसके जन्म से बाबा समरकान्त के की सारी कृपणता गायब हो गई है । वह उनके वृद्धावस्था में अमर विभूति स्वरूप है । अमरकान्त के लिए वह नवजातशिशु जैसे स्वर्ग से आशा और अमरता का आशीर्वाद लेकर आया है । लेडी डाक्टर ऊपर प्रतीक्षा-भरी आंखों से ताकते हुए समरकान्त से बड़े इनाम की मांग करती है । उन्हें खुशखबरी सुनाती है कि बालक खूब स्वस्थ है,बहुत सुन्दर है,गुलाब के फूल-सा और वह सौर-गृह के अन्दर चली जाती है ।

सौर-गृह के बाहर मुहल्ले की पचासों स्त्रियां संयुक्त स्वर में गीत गाती हैं । सिल्लो दाई अमरकान्त से कंठी लेने

को ठानती है । वह कहती है--"बिलकुल तुमको पड़ा है । रंग बहूजी का है । मैं कण्ठी ही लूंगी, कहे देती हूं ।"[1]

शिशु तीन महीने का हो चला है, उसे ज्वर आ रहा है। बुढ़िया पठानिन उसे नजर का फसाद बताती और एक ताबीज देती है । सुखदा मातृत्व-जनित नम्रता से इसे ग्रहण करती है । इस शिशु ने जन्म लेकर माता-पिता क दोनों को ही विनम्र बना दिया है ।

लल्लू अपनी दादा की गोद में जाकर उसकी मूंछें पकड़कर खींच लेता है । और पिता की गोद में जाकर उनका नाक निगलने की चेष्टा करता है, जैसे हनुमान सूर्य को निगल रहे हों । सुखदा कहती है-- तुम पहले अपनी नाक बचाओ तब बाप की मूंछ बचाना । इस प्रकार हम देखते हैं कि यह शिशुजन्म लेकर परिवार के सम्पूर्ण वातावरणमें एक स्वर्गिक आनन्द का संचार करता है ।

अमरकान्त नैना और सुखदा के चले जाने पर समरकान्त की स्थिति दयनीय हो जाती है । सुखदा नैना और बालक को लेकर उन्हें देखने जाती है । वह बालक को ससुर की चारपाई पर सुला कर पंखा झलने लगती है । इस समय फिर यह बालक बड़ी बड़ी आंखों से बूढ़े दादा की मूंछें खींचता है । लाला जी सी-सी तो करते हैं पर बालक का हाथ नहीं छुड़ाते । हनुमान ने भी इतनी निर्दयता से लंका के उद्यानों का विध्वंस नहीं किया होगा । उन्होंने फिर भी हाथ नहीं छुड़ाया । उनकी कामनाएं जो पड़ी एड़ियां रगड़ रही थीं, इस स्पर्श से जैसे मानों संजीवनी पा गई । अपने पौत्र इस शिशु के स्पर्श में कोई ऐसा प्रसाद, कोई ऐसी विभूति थी । उनके रोम-रोम में समाया हुआ शिशु मथित होकर नवनीत की भांति प्रत्यक्ष हो गया हो । यहां यह शिशु फिर से अपने दादा के मनोमालिन्य को दूर करता है । और सम्पूर्ण परिवार को स्नेह सूत्र में बांधता है ।

---

1 प्रेमचन्द : 'कर्मभूमि, पृ०७०

लल्लू के बाल-सुलभ हरकतों से डा०शान्तिकुमार जैसे ब्रह्मचारी और तपस्वी के हृदय में पितृत्व के भाव जागृत होते हैं । लल्लू ने कुरसी पर चढ़कर मेज़ पर से दावात उठा ली थी और अपने मुंह में कालिमा पोत-पोत कर खुश हो रहा था । नैना ने दौड़कर उसके हाथ से दावात छीन ली और धौल जमा दिया । शान्तिकुमार ने उठने की असफल चेष्टा करके कहा--क्यों मारती हो, नैना, देखो तो कितना महान् पुरुष है, जो अपने मुंह में कालिमा पोतकर भी प्रसन्न होता है, नहीं तो हम अपनी कालिमाओं को सात परदों के अन्दर छिपाते हैं । नैना ने बालक को उनकी गोद में देते हुए कहा -- तो लीजिए इस महान् पुरुष को आप ही । इसके मारे चैन से बैठना मुश्किल है ।

शान्तिकुमार ने बालक को छाती से लगा लिया । गर्म और गुदगुदे स्पर्श में उनकी आत्मा ने जिस परितृप्ति और माधुर्य का अनुभव किया, वह उनके जीवन में बिलकुल नया था । अमरकान्त से उन्हें जितना स्नेह था, वह जैसे इस छोटे-से रूप में सिमट कर ठोस और भारी हो गया था । अमर को याद करके उनकी आंखें सजल हो गईं । अमर ने अपने को कितने अतुल आनन्द से वंचित कर रखा है, इसका अनुमान करके वह जैसे दब गये । आज उन्हें स्वयं अपने जीवन में एक अभाव का, एक रिक्तता का आभास हुआ । जिन कामनाओं का वह अपने विचार में सम्पूर्णत: दमन कर चुके थे, वह राख में छिपी हुई चिनगारियों की भांति सजीव हो गईं ।

लल्लू ने हाथों की स्याही शान्तिकुमार के मुंह में पोतकर नीचे उतरने के लिए आग्रह किया, मानों इसीलिए वह उनकी गोद में गया था । नैना ने हंस कर कहा-- ज़रा अपना मुंह तो देखिए डाक्टर साहब । इस महान पुरुष ने आपके साथ होली खेल डाली । बड़ा बदमाश है ।

सुखदा हंसी रोक न सकी । शान्तिकुमार ने शीशे में मुंह देखा, तो वह भी ज़ोर से हंसे । वह कलंक का टीका उन्हें इस समय यश के तिलक से भी कहीं अधिक उल्लासमय जान पड़ा ।[१]

यह इसउपन्यास का गौण पात्र है, किन्तु कथा में जिस स्थल पर आया है, उसे सजीव और मार्मिक बना दिया है । विवाह

---

१ प्रेमचन्द : 'कर्मभूमि', पृ०२२२

के पश्चात् नैना सावन में मैके आती है । वर्षा की भाड़ी लगी है । नैना कागज़ के नाव बनाकर भाभी से निवेदन करती है,नाव-नाव खेलने को । इतने में लल्लू आकर दोनों नावें छीन लेता है और उन्हें पानी में डालकर तालियां बजाने लगता है । नैना उसे चुम्बन लेकर कहती है कि मैं रोज इसे दो-एक बार याद करके रोती थी ।

जेल जाने से पूर्व लल्लू को याद कर विह्वल हो जाती है वह उसे हृदय से लगाकर कमरे में जाती और आभूषण उतारने लगती है । माता के जेल जाने के समय इसे माता का विछोह मालूम होता है उस समय उसकी प्रतिक्रिया --

'नैना ने लल्लू को मां की गोद से उतार कर प्यार करना चाहा, पर वह न उतरा । नैना से बहुत हिला था, पर आज वह अबोध आंखों से देख रहा था-- माता कहीं जा रही है । उसकी गोद से कैसे उतरे । उसे छोड़कर वह चली जाय तो बेचारा क्या कर लेगा ?

नैना ने उसका चुम्बन लेकर कहा-- बालक बड़े निर्दयी होते हैं ।

सुखदा ने मुस्करा कर कहा -- लड़का किसका है । द्वार पर पहुंचकर फिर दोनों गले मिलीं । समरकान्त भी ड्योढ़ी पर खड़े थे । सुखदा ने उनके चरणों पर सिर झुकाया । उन्होंने कांपते हुए हाथों से उसे उठाकर आशीर्वाद दिया । फिर लल्लू को कलेजे से लगाकर फूट-फूट कर रोने लगे । यह सारे घर को रोने का सिगनल था । आंसू तो पहले ही से निकल रहे थे। वह मूक रुदन अब जैसे बन्धनों से मुक्त हो गया ।शान्त, धीर,गंभीर बुढ़ापा जब विह्वल हो जाता है, तो मानों पिंजरे के द्वार खुल जाते हैं और पक्षियों को रोकना असम्भव हो जाता है । जब सत्तर वर्ष तक संसार के समर में जमा रहने वाला नायक हथियार डाल दे,रंगरूटों को कौन रोक सकता है[1]।'

---

1 प्रेमचन्द : 'कर्मभूमि',पृ० २७७-२७८

लल्लू इसस्थल पर आकर सम्पूर्ण वातावरण को मार्मिक बना देता है । इसका वियोग सत्तर वर्षीय वृद्ध दादा को मर्मान्तक पीड़ा पहुंचाता है । वृद्ध दादा बालक के वियोग में बालक-सा फूट-फूट कर रो पड़ते हैं ।

'गोदान' में चुन्नू, लल्लू और नवजात शिशु गोबर तथा झुनिया के शिशु गौण पात्र हैं । चुन्नू इनका जारज पुत्र है । पिता द्वारा लाई गई वस्तुओं की ओर लपकता है, गोबर की गोद में जाने को भयभीत होता है । जन्म लेकर दादी को स्नेह से अभिभूत कर लेना और उसके मन में अपराधयुक्तगोबर को क्षमा करने का भाव उत्पन्न करता है । घर से दूर चले जाने पर दादी का अत्यधिक स्नेह विह्वल बना देता है । लल्लू भी गोबर झुनिया का दूसरा शिशु है । इसकी आयु २ वर्ष की है । उसकी शैशवावस्था में बीमारी के कारण झुनिया अत्यधिक दुर्बल और चिड़चिड़ी हो गई है, क्रोध में आकर इसे बाहर निकाल देती है । लल्लू बहुत रोता है । माता का दूध उसे प्राप्त नहीं होता, बरसात में उसे दस्त आता है और एक ही सप्ताह की बीमारी में उसका देहान्त हो जाता है । लल्लू की स्मृति माता के सामने सदा सजीव बना रहती है । झुनिया को अब लल्लू की स्मृति लल्लू से भी कहीं ज्यादा प्रिय हो गई । जब लल्लू सामने था वह उससे जितना सुख पाती थी उससे कहीं ज्यादा कष्ट पाती थी । अब लल्लू उसके मन में आ बैठा था, शान्त, स्थिर सुशील और सुहास । उसकी कल्पना में अब वेदना मय आनन्द था, जिसमें प्रत्यक्ष की काली छाया न थी । जीते जी जो इस जीवन का भार था मर कर उसके प्राणों में समा गया था । उसकी सारी ममता अन्दर आकर बाहर से उदासीन हो गई ।

'नवजात शिशु' यह नवजात शिशु 'गोदान' में गोबर और झुनिया का है । यह गौण पात्र है । जन्म लेकर अप्रत्यक्ष रूप से में अपने पिता गोबर के चरित्र में परिवर्तन लाता है । इस शिशु के जन्म के समय झुनिया के प्रसव-वेदना की कराह सुनकर पड़ोस की चुहिया नामक स्त्री आती है और उसकी यथेष्ट सहायता करती है । झुनिया का पति से मनमुटाव है । वह मृत शिशु लल्लू के लिए अत्यधिक व्याकुल है । उच्छृंखल स्वभाव

स्वभाव का गोबर गलत मार्ग पर है । बुढ़िया उसे समझाती रहती है, फलस्वरूप गोबर अपने को ठीक मार्ग पर लाने की चेष्टा करता है । यह शिशु जन्म लेकर बुढ़िया से परिचित कराकर अपने पिता को गलत मार्ग से हटाता तथा उसके जीवन में परिवर्त लाता है ।

ये सभी गौण पात्र अपनी-अपनी कथा में सही सन्दर्भ में उपस्थित हुए हैं । साधारणत: ये सभी शिशु पात्र कहानी की मूल भावना के वाहक नहीं हैं फिर भी इनका महत्त्व कहानी तथा उपन्यासमें कम नहीं । इनमें अपना व्यक्तित्व है, अपना जीवन है और अपनी प्राणवत्ता है, जिसके माध्यम से कथा के मुख्य पात्र के उद्देश्य में सहायक हैं ।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि प्रेमचन्द के सभी शिशु पात्र जो गौण होकर अपनी-अपनी कहानियों में आये हैं, कलाकार की सूक्ष्म पकड़ तथा मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के परिचायक हैं । सम्भव था कि ये गौण पात्र कथा के शिल्प को बेतरतीब ,बेढंगा, ढीला-ढाला और विशृंखल बना देते, किन्तु यहां ये कहानी को एक सफल रूप देते हैं । यह प्रेमचन्द के चरित्र-चित्रण की बहुत बड़ी खूबी है कि उन्होंने गौण से गौण पात्र को भी यथायुक्त स्थान दिया है । इनके माध्यम से बहुत से स्थलों में बाह्य सत्य और आत्म-सत्य का सामंजस्य होता है ।

(ग) वातावरण के स्रष्टा .

कथा-साहित्य की स्वाभाविकता और सजीवता के लिए वातावरण का चित्रण नितान्त आवश्यक होता है । घटनाएं किसी वातावरण में ही घटती हैं । पात्र जन्म से लेकर किसी वातावरणमें ही पलते हैं और बाद में किसी वातावरण में [illegible] की सृष्टि में योग देते हैं । इस प्रकार घटनाओं और पात्रों की कल्पना किसी वातावरण में ही की जा सकती है । वातावरण के अभाव में घटनाओं और पात्रोंकी कल्पना यदि सम्भव भी हो तो न तो उनसे हमारा तादात्म्य ही हो सकेगा और न हम उन्हें विश्वास की ही दृष्टि से देख सकेंगे ।

वातावरण के अर्थ में एक दूसरा शब्द देशकाल भी व्यवहार में आता है । देश का अर्थ स्थान है और काल का अर्थ समय । इसी देश-काल की सीमाओं में बंधकर परिस्थितियां वातावरण के सृजन में सहायक होती हैं । इस सम्बन्ध में डाक्टरलक्ष्मीनारायणलाल [1] के निम्नलिखित शब्द पर्याप्त प्रकाश डालते हैं-- "कहानी-कला का मेरुदण्ड वास्तविक जीवन है,काल्पनिक लोक नहीं । वास्तविक जीवन देश काल और जीवन की विभिन्न सत्-असत् परिस्थितियों से निर्मित होता है । अतएव इन तत्वों का एक स्थान पर संचयन और चित्रण करना कहानी में वातावरण उपस्थित करना है । कहानी की कथावस्तु और उसके संचालक-पात्रों का सीधा सम्बन्ध उक्त परिस्थितियों से होता है अर्थात् उनका उद्गम सूत्र और सम्बन्ध किसी देश में होगा या किसी विशिष्ट स्थान अथवा प्रदेश से होगा । इनका भी सम्बन्ध किसी काल विशेष से होगा । वर्तमान, भूत अथवा भविष्य किसी कला प्रकार से फिर इनमें भी विभेद हो सकते हैं । इसके उपरान्त इन दोनों का सापेक्षित संबंध जीवन की किन्हीं परिस्थितियों से होगा । इन परिस्थितियों की सीमा में समस्त मानवीय राग,द्वेष,अनुभूतियाँ और हर प्रकार के संघर्ष आ सकते हैं । वस्तुत: इन सब के अलग-अलग चित्रण से कहानी में विभिन्न परिपार्श्व प्रस्तुत होते हैं और इन सब के सामूहिक संकलन और प्रभाव से कहानी के वातावरण की सृष्टि होती है [1]।"

---

[1] डा० प्रकाश दीक्षित : "हिन्दी कहानी"

स्पष्ट ही कहानी के अन्तर्गत देश-काल कौ मूर्त करने के लिए तथा कहानी के कार्य से परिस्थितियों की अनुकूलता व्यंजित करने के लिए वातावरण का चित्रण प्राय: अनिवार्य हौता है । वातावरण के चित्रण से कहानी की सौन्दर्य-गरिमा में भी अभिवृद्धि हौती है । इस दृष्टि से नाटक में जौ महत्व रंगमंच के विविध विधानों अर्थात् पर्दा,सजावट,वेश-भूषा,साजौसामान आदि का है वह कहानी की सीमा में वातावरण का है। कहानीकार कौ कहानी की स्वाभाविकता और सजीवता की रदाा के लिए स्थान-स्थान पर देश-काल का चित्रण करना पड़ता है । वातावरण का बड़ा गहरा सम्बन्ध कथा की परिस्थितियों,घटनाओं और पात्रों से हौता है । यदि वातावरण का सम्बन्ध मूल सम्वेदना से न हौ तौ कहानी की प्रभावान्विति असम्भव हौ जाती है ।

कहानी के अन्तराल में निर्मित वातावरण दौ प्रकार का हौ सकता है-- एक भौतिक दूसरा मानसिक । भौतिक वातावरण वाह्य चित्र उपस्थित करता है और मानसिक भाव का चित्र । वास्तव में भौतिक और मानसिक वातावरण कौ एकदम अलग नहीं किया जा सकता । ये दौनों परस्पर निकट सम्बन्ध रखते हैं । भौतिक वातावरण तथा मानसिक वातावरण के समन्वय में ही कहानी की चारुता छिपी रहती है । भौतिक वातावरण भी मानसिक वातावरण की पीठिका उपस्थित करता है । वस्तुत: कहानी में जो वाह्य वातावरण का चित्रण रहता है, उसी के अनुकूल मानसिक वातावरण भी बन जाता है । भौतिक वातावरण का उदाहरण प्रसाद के पुरस्कार में मिलता है -- 'आर्द्रा नदात्र, आकाश में काले-काले बादलों की घुमड़,जिसमें देव-दुन्दुभी का गम्भीर घोष । प्राची के एक निरभ्र कौने से स्वर्ण पुरुष फांकने लगा था -- देखने लगा महाराज की सवारी । शैल-माला के अंचल में समतल उर्वरा-भूमि से सौंधी बास उठ रही थी । नगर तौरण में जयघोष हुआ, भीड़ में गजराज चामरधारी शुण्ड उन्नत दिखाई पड़ा वह हर्ष और उत्साह का समुद्र हिलौरें मारता हुआ आगे बढ़ने लगा ।'

'प्रभात की हेम-किरणों से अनुरंजित नन्हीं-नन्हीं बूंदों का एक फौंका स्वर्ण मल्लिका के समान बरस पड़ा । मंगल सूचना

से जनता ने हर्ष ध्वनि की ।'मानसिक वातावरण का उदाहरण 'अज्ञेय' जी के 'वे दूसरे' शीर्षक कहानी से -- 'हेमन्त कई क्षण तक चुपचाप बालू की ओर देखता रहा यह नहीं कि उसके मन में शून्य था, यह भी नहीं कि मन की बात कहने को शब्द बिल्कुल नहीं थे केवल , यही कि बालू पर उसके पैरों की जो छाप हुई थी, गीली बालू चिकनी मिट्टी की तरह होती है । उसमें उसके लिए आकर्षण था , जिसमें निरा कुतूहल नहीं जिज्ञासा की एक तीखी तत्कालिकता थी । हलिया उसके पास तक आकर लौट जाती थी, क्या कोई लहर आकर उस छाप में वह लहर मिट जायेगी न कि केवल हल्की पड़ जायेगी।मिटने के लिए कई लहरों का आना होगा, जिन लहरों को पैदा करने के लिए ,समुद्र की, पृथ्वी की आन्तरिक हलचल की, चन्द्र,सूर्य,तारागण के आकर्षण भी एक अन्योन्य सम्बन्ध स्थिति को बार-बार आना होगा .... क्या उसका एक-एक अनैच्छिक पद-चिन्ह मिटाने के लिए सारे विश्व चक्र के लिए एक विशेष आवर्तन की आवश्यकता है ।'

वातावरण के सम्बन्ध में एक बात ध्यान में रखने की है कि कहानी में उसके विस्तृत चित्रण का अवकाश नहीं होता । संक्षेप में और संकेत रूप में ही उनका चित्रण वांछनीय है । वातावरण की कुछ चुनी हुई रेखाओं को खींचकर कहानीकार उसे उसकी सम्पूर्णता में मूर्त करने का पक्षपाती होता है । यदि वातावरण को पात्र और घटना का ध्यान भुलाकर अनावश्यक विस्तार दिया जाय तो कहानी के कहानीपन में व्याघात उपस्थित हो जायगा और कहानी की चारुता नष्ट हो सकती है । अतएव प्रतिभाशाली और कुशल कहानी-लेखक वातावरण के चित्रण में लाघव से काम लेते हैं ।

जिन कहानियों में वातावरण ही प्रधान होता है,उनमें एक अनुभूति एक भावना से अनुप्राणित वातावरण की सृष्टि की जाती है । प्रधान कहानी में बाह्य वातावरण अथवा परिपार्श्व की प्रधानता नहीं होती । प्रधानता किसी मुख्यभावना की हुआ करती है । वातावरण अथवा परिपार्श्व की सृष्टि तो इसी मुख्य भावना को उभार देने के निमित्त हुआ करती है । सम्पूर्ण कथानक का विकास इसी मुख्य भावना के आधार

से होता है । इसी मुख्य भावना को चित्रित करने के लिए वातावरण की प्रधानता कहानी में मान्य भी है । कहानी की मूल-भावना पूर्णतः मुखरित हो सके इसके लिए वातावरण और परिपार्श्व का उचित सामंजस्य आवश्यक है । अन्य कहानियों की अपेक्षा ऐसी कहानियों की रचना समर्थ होती है । समर्थ कहानी-लेखक अपनी कहानी-कला-कुशलता का प्रदर्शन भी इसी प्रकार की कहानियों में विशेषतः करते हैं । उन्हें कला-सृष्टि का पूरा-पूरा मौका यहां मिलता है । वे चाहें तो कवित्वमय वातावरण की सृष्टि कर सकते हैं अथवा यथार्थवादी वातावरण भी उपस्थित कर सकते हैं, किन्तु कला का प्रभाव-प्राधान्य सभी स्थानों पर रहता है ।

हिन्दी में वातावरण प्रधान कहानियों का प्रभाव नहीं है । अनेक लेखक आदर्श अथवा यथार्थ में सिद्धहस्त हैं । जयशंकर प्रसाद, प्रेमचन्द, सुदर्शन, गोविन्दवल्लभपन्त, अज्ञेय, जैनेन्द्र कुमार आदि लेखकों ने वातावरण प्रधान सुन्दर कहानियां लिखी हैं -- 'आकाश दीप', 'विसाती' 'प्रतिध्वनि', 'समुद्र संतरण', 'स्वर्ग के खंडहर', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'पूस की रात', 'अलग्योझा', 'गुल्ली डंडा', 'हार की जीत', 'झूठा आम' । उपर्युक्त कहानियां वातावरण प्रधान कहानियों के उत्कृष्टतम उदाहरण हैं । वातावरण प्रधान कहानी लिखने में 'प्रसाद' सर्वश्रेष्ठ हैं ।

कुछ ऐसी कहानियां भी होती हैं, जिनका मर्म एक विशेष वातावरण में ही उद्घाटित किया जा सकता है । ऐसी कहानियों में वातावरण का वही महत्व होता है, जो अन्य कहानियों में प्रधान पात्र का होता है । उदाहरण के लिए 'एडगर एलेन पो' की 'The Black Cat' कहानी । उस पूरी कहानी में काली बिल्ली एक विशिष्ट वातावरण की सृष्टि करती है और वह वातावरण ही उस कहानी के मर्म का मुख्य आधार है । काली बिल्ली द्वारा निर्मित वातावरण को यदि उस कहानी से हटा दिया जाय तो उसका सम्पूर्ण भाव-विन्यास ही समाप्त हो जायगा । इस तरह की कहानियों में वातावरण का द्रष्टा पात्र अपना एक विशेष महत्व रखता है ।

वातावरण के स्रष्टा के रूप में शिशु-पात्र

जुन्नी, मुनिया और दो शिशु `अलग्योझा` शीर्षक कहानी में सुन्दर वातावरण की सृष्टि करते हैं। पात्र जन्म से लेकर किसी वातावरण में पलता है और बाद में किसी नये वातावरण की सृष्टि करता है। ये पात्र भी अपने बड़े भाई रग्घू के साथ एक ऐसे वातावरण की सृष्टि करते हैं कि विमाता का मलिन हृदय रग्घू की ओर से साफ हो जाता है। जुन्नू कहता है--`अब हमारे यहां गाय भी आ जायगी काकी। रग्घू दादा ने गिरधारीसे कहा है कि हमें एक गाय ला दो। गिरधारी बोला कल लाऊंगा।` जुन्नू के वाक्य कथा को नया मोड़ देते हैं। लगता है जैसे रग्घू के स्नेह से परिवार का वातावरण, उसकी आर्थिक स्थिति अब बदलने को है। मुनिया भाई द्वारा बनाए गए लकड़ी के यान की सफर कर चुकने पर तालियों और नाच द्वारा अपने आनन्द को अभिव्यंजित करती है। उसके आनन्द से जैसे उस वंचित वातावरण में स्नेह और सद्भाव का आलोक फैल जाता है। दो शिशु के माध्यम से एक विधवा आधार हीन और विपन्न नारी की स्थिति का वातावरण उपस्थित होता है। कहानी की स्वाभाविकता के लिए ये पात्र आये हैं, जिसके द्वारा उपस्थित वातावरण का गहरा सम्बन्धकहानी की परि - स्थितियों से है। कहानी के अन्तराल में निर्मित भौतिक और मानसिक दोनों वातावरण इन पात्रों के माध्यम से उपस्थित होता है।

वातावरण के स्रष्टा के रूप में बालकों का समुदाय तीन कहानियों में उपस्थित हुआ है। ये कहानियां हैं--`स्वामिनी`, `आत्माराम` और `दो बैलों की कथा`। `स्वामिनी` के बाल समुदाय भौतिक वातावरण का चित्रण तो करतेही हैं साथ ही रामप्यारी के विदग्ध हृदय का चित्र उपस्थित करने में सहायक हैं। वह बच्चों को गोद में लेकर प्यार करना तथा दुलारना चाहती है, पर बच्चे हाथ छुड़ाकर भाग जाते हैं। वह सोचती है क्या ऐसे अवसर पर बच्चे भी निष्ठुर हो जाते हैं। बाबा के वातावरण का चित्रण प्रेमचन्द के शब्दों में इस प्रकार है--`बच्चे नये-नये कुरते पहने नवाब बने घूम रहे थे.....

दस बजते-बजते[1] द्वार पर बैलगाड़ी आ गई । लड़के पहले ही से उस पर जा बैठे ।'आत्माराम का बाल समुदाय बूढ़ों के प्रति बालकों की प्रतिक्रिया के उदाहरण के रूप में आया है । पता नहीं इन बूढ़ों और बालकों में कब का बैर है । आत्माराम को अपने परिवार के दर्जनों नाती-पोतों के चुलबुलेपन से नफरत है और गांव के बच्चों की आत्माराम के जर्जर शरीर,पोपले मुंह और झुकी कमर के प्रति जिज्ञासा या कुतूहल की भावना है । उनकी दृष्टि में आत्माराम मज़ाक का पात्र है । आत्माराम के तोते के उड़ने पर आत्माराम का बा-बा, सच गुरुदत्त, शिवदत्त दाता कहकर एक हाथ में पिंजड़ा लिए मेढकों की तरह उचक कर चलना और बच्चों का तालियां बजा-बजाकर सुग्गे को उड़ा देना एक विनोदमय वातावरण उपस्थित करता है । 'दो बैलों की कथा' का बाल समुदाय हीरा-मोती नामक दो बैलों के स्वागत में खड़ा है । कोई अपने घर से चोकर लाता है,कोई भूसी कोई गुड़, कोई रोटी । ये सभी इन बैलों की सूझ पर अपने-अपने विचार प्रकट करते हैं । ये बाल-समुदाय कहानी के कार्य से परिस्थितियों की अनुकूलता व्यंजित करने के लिए वातावरण का चित्र उपस्थित करते हैं । वातावरण के चित्रण से कहानी की सौन्दर्य गरिमा में निश्चय ही अभिवृद्धि हुई है ।

'कुन्नी','नवजात शिशु' तथा 'एक बालिका क्रमशः 'लाटरी','मिस पद्मा तथा 'दो बैलों की कथा' कहानियों में वातावरण के सृष्टा के रूप में आये हैं । किसी भी कहानी में वातावरण का बड़ा सम्बन्ध कहानी की परिस्थिति और पात्रों से होता है । साथ ही उस कहानी की मूल भावना अथवा प्रतिपाद्य या संवेदना से भी उसका सम्बन्ध होता है । 'लाटरी' में कहानी की मूल संवेदना लाटरी खरीदने के बाद हवाई किले बनाने का मनोवैज्ञानिक पक्ष उपस्थित करता है । कुन्नी एक ऐसा वातावरण उपस्थित करती है कि उसका भाई गुप्त रूप से खरीदी लाटरी का भेद भी कुन्नी को बता देता है । और कुन्नी इस बात को नये समाचार की भांति

---

1 प्रेमचन्द : 'मानसरोवर',भाग १--वां संस्करण,पृ०१३६

घर में सब को सुना देती है और इस प्रकार कथा आगे बढ़ती है । यदि कुन्ती यहां न होती तो कथा की प्रभावान्विति में बाधा उपस्थित होती । मिस पद्मा ने जब अपने नवजात शिशु को देखा तो उसका कलेजा फूल उठा पर पति को सम्मुख न पाकर उसने शिशु की ओर से मुंह फेर लिया जैसे मीठे फल में कीड़े पड़ गये हों । इस कहानी में शिशु मौन है वह न तो बोलता है और न किसी तरह की चेष्टाएं करता है, किन्तु उसकी उपस्थिति मात्र से मिस पद्मा के जीवन में एक परिवर्तन हो जाता है । शिशु के माध्यम से ही उसकी सारी मनो-भावनाओं का आरोह-अवरोह होता है । शिशु का फूल-सा मुखड़ा देख-कर उसके हृदय में आनन्द का संचार होता है, किन्तु दूसरे ही क्षण शिशु के माध्यम से पति की स्मृति, उसका कपट व्यवहार और उच्छृंखलता का स्मरण हो जाता है और उसका आनन्द वेदना में परिणत हो जाता है । कभी उसे बालक पर दया आती है, कभी प्यार आता है, कभी घृणा होती ह । अत: इस नवजात शिशु के द्वारा मिस पद्मा के मानसिक वातावरण का चित्र उपस्थित होता है । जब मिस पद्मा एक यूरोपियन दम्पति को शिशु को लिए टहलते देखती है तो उसकी वेदना और भी हृदय विदारक हो जाती है, आंखें उसकी सजल हो उठती हैं । यहां भौतिक तथा मानसिक वातावरण के समन्वय में कहानी की चारुता छिपी है । यही भौतिक तथा मानसिक वातावरण की अभिव्यंजना `दो बैलों की कथा` की एक बालिका के द्वारा हुई है । बालिका की विमाता उसे मारती और सताती है इसलिए उसमें हीरा-मोती नामक दो बैलों के प्रति सद्भावना उत्पन्न होती है । रात्रि को उठकर अपनी रोटी में से उन्हें खिलाती है । लगता है बालिका को पशु मनोविज्ञान का ज्ञान है, अत: वह उनकी सारी वेदना समझती है । वह सोचती है कि इनको यहां अच्छा नहीं लगता, यहां से दोनों बैल कैदी की भांति है, अत: वह उनकी रस्सी खोल देती है । इस कहानी में यह बालिका एक ऐसे सुन्दर वातावरण की सृष्टि करती है जिसके अभाव में कहानी में चारुता सम्भव नहीं होती और न कथाकार का उद्देश्य ही स्पष्ट हो पाता है । इन कहानियों में संक्षेप ही में संकेत रूप में वातावरण का चित्रण है, किन्तु इतने ही में उसकी सम्पूर्णता

मूर्त होने में सफल हुई है । प्रेमचन्द एक प्रतिभाशाली तथा कुशल कहानी-लेखक हैं, अत: वे वातावरण के लघु चित्रण द्वारा ही अपनी कहानियों को उत्कृष्टता प्रदान करने में सफल हुए हैं ।

'चुन्नी', 'रामगुलाम' और 'जयराम', 'इस्तीफा' 'गरीब की हाय' और 'सच्चाई का उपहार' की कहानियों में वातावरण के सृष्टा हैं । दफ्तर से आने के बाद चुन्नी पिता के सम्मुख खड़ी हो जाती है । पिता अपने नाश्ते से थोड़ा सा चुन्नी को देना ही चाहता है कि माता उसे डांट देती है और चुन्नी वहां से भाग जाती है । पिता जलपान द्वारा थकान मिटाने के पहले शिशु को स्नेह प्रतिदान द्वारा ही अपनी दिन भर की थकावट को भुलना चाहता है ।रामगुलाम मुंशी रामसेवक का लड़का है जो अनुपयुक्त शासन के कारण बिगड़ जाता है । रामगुलाम के चित्रण के माध्यम से उसके परिवार तथा गांव का वातावरण उपस्थित हो जाता है । इसी प्रकार जयराम भी अपनी कक्षा के बालकों के बीच एक वातावरण की सृष्टि करता है । वह बाजबहादुर को धमकी देता है कि यदि उसने वाटिका उजाड़ने की चुगली की तो वह उसकी हड्डियां तोड़ देगा । कहानी के परिपार्श्व में उचित सामंजस्य के साथ ही इन पात्रों द्वारा एक वातावरण प्रस्तुत किया गया है । इन वातावरण की उपस्थिति के कारण कहानियां अधिक समर्थ हो पाई हैं । तीनों स्थलों पर यथार्थवादी चित्र उपस्थित किए गए हैं ।

'गुप्तधन' संग्रह के 'सिर्फ एक आवाज़' शीर्षक कहानी में 'बालकों का समूह' वातावरण के सृष्टा के रूप में आये हैं । इनके माध्यम से परिवार में होने वाले किसी त्यौहार या किसी आने-जाने के समय होने वाले हंगामे का वातावरण प्रस्तुत किया गया है । ठाकुर दर्शन सिंह और ठकुराइन के चन्द्रग्रहण जाने से पहले पूरे परिवार का वातावरण उतारा गया है कि किस प्रकार ये बालक चन्द्रग्रहण जाने के लिए हंगामा मचाए हुए हैं ।

'गुप्तधन' भाग २ में 'प्रतिशोध' शीर्षक कहानी में तिलोत्तमा वातावरण की सृष्टा है । इसके पिता अत्यन्त प्रतिष्ठित

बैरिस्टर राजनीतिक मुकदमे की पैरवी के लिए लाहौर जाते हैं तो तिलोत्तमा पिता के पास से आने के तार से बहुत प्रसन्न है । माता के साथ-साथ पिता की प्रतीक्षा कर रही है । अच्छी-अच्छी गुड़िया पाने की आशा बंधी है । माता के साथ शाहजहांपुर जाती है । वहां नौकर के न आने पर दौड़-दौड़ कर बड़े जोश से काम करती है । उसे कोई फिक्र नहीं कामों को करके अपने को उपयोगी सिद्ध करना चाहती है । इन दोनों स्थलों पर तिलोत्तमा वातावरण की स्वाभाविकता तथा मार्मिकता की सृष्टि करती है ।

'गुप्तधन' भाग २ के 'सौत' शीर्षक कहानी में जोखू नामक बालक की जन्म से लेकर ७ वर्ष की आयु तक की झांकी मिलती है । यह रामू और दसिया का पुत्र है । रामू की पहली पत्नी रजिया है । इसके दो-तीन बच्चे होकर मर गये और उम्र ढल चली तो रामू का प्रेम उससे कम होने लगा और दूसरी शादी की धुन सवार हुई । आये दिन रजिया से झकझक होने लगी और अन्त में चम्पई रंग , बड़ी-बड़ी आंखों वाली, जवानी की उम्र, पीली कृशांगी नवयौवना स्त्री दसिया को ले ही आया । इसके आगे रजिया की कुछ भी न चली ।वह अपने स्वामित्व को, जितने दिन हो सके अपने अधिकार में रखना चाहती थी । गिरते हुए छप्पर को थूनियों के सहारे संभालने की चेष्टा कर रही थी,किन्तु जब असह्य हो गया, घर छोड़ कर चली ... गई । उसके जाने के पश्चात् जोखू का जन्म होता है । घर की दशा सोचनीय हो जाती है । रामू बीमार है,दसिया से मेहनत नहीं हो सकती । अत: ऐसी दीन-हीन अवस्था में जोखू दुर्बल हो जाता है । जोखू का दर्शन इसी स्थल पर होता है । जोखू उस परिवार की वास्तविक स्थिति, सम्पूर्ण वातावरण को प्रकाश में लाता है । वह दोनों माताओं के चरित्र पर प्रकाश डालता है । उसके बिना कथा अधूरी थी । अपनी दुर्बलता से रजिया के हृदय में छिपी हुई मातृ-भावना को बाहर लाता है । रजिया के विशाल हृदय का दर्शन जोखू के ही माध्यम से होता है,जो अपनी पूरी गृहस्थी उठा कर दे जाती है । ७ वर्ष की आयु में जोखू की सगाई होती है और रजिया अपने सारे गहने उसे दे देती है ।

'देवी' शीर्षक कहानी में तीनवर्षीय शिशु गौण पात्र है जो वातावरण में एक विशेषता पैदा करता है । यह शिशु बंसीसिंह और ठकुराइन का है । बंसीसिंह दुलिया की प्रताड़ना पाकर आत्महत्या कर लेता है, इसका छोटा भाई विधवा भाभी की जमीन पर कब्जा कर लेता है, तब बंसीसिंह की स्त्री इस तीन वर्ष के बालक को लेकर घर से निकलती है और दुलिया की शरण में आती है । इस शिशु के माध्यम से इस स्थल पर दुलिया के अन्दर होने वाली दया, ममता, स्नेह और त्याग पर प्रकाश पड़ता है । दुलिया स्वयं नीचे सोती है, पर ठकुराइन तथा उस बालक के लिए खटिया दे देती है । इस बालक के माध्यम से इस स्थल का सजीव और यथार्थ चित्रण हमारे सामने उपस्थित होता है । दुलिया तन, मन, धन से उस शिशु की सेवा करती है, मानों किसी देवी की उपासना कर रही हो ।

'सैलानी बन्दर' कहानी में 'बालकों का समूह वातावरण के सृष्टा के रूप में आया है । जीवनदास और बुधिया मुन्नू नामक बन्दर को नचाकर अपनी जीविका चलाते हैं । बन्दर का नाच समाप्त होने पर ये बाल-वृन्द घर से पैसा, रोटी, मिठाई आदि लाकर बन्दर के सामने फेंकते हैं । इन बालकों के समूह के बिना मदारी द्वारा बन्दर के नाच का स्थल कितना सूना, और निर्जीव हो सकता है ।

दूसरे स्थल पर जब मुन्नू अपना बन्धन तोड़ कर बाग की सैर के लिए लपकता, उछलता चल पड़ता है । बालकों का समूह ऐसे अवसर पर चुप कैसे रह सकता । सभी चिढ़ाते हैं— औ बन्दरवा लोय, लोय, बाल उखाड़ूं टेंय टाप ।। औ बन्दरवा तेरा मुंह है लाल, पिचके पिचके तेरे गाल ।

इससे भी इनका मन नहीं भरता तो उसका पीछा करते हुए चिढ़ाते हैं—

मर गई नानी बन्दर की,
टूटी टांग मुछन्दर की ।

बालकों के इस बीच से मन्नू को मजा आता है और आधे फल खा-खाकर नीचे गिराता है । लड़के लपक-लपक कर फल चुन लेते और तालियां बजा-

बजाकर चिढ़ाते हैं--

बन्दर मामु और
कहां तुम्हारा ठौर ।

मन्नु के शोक में बुधिया पागल हो जाती है । बालकों का समूह इस पगली के पीछे पड़ जाता है । उसे चिढ़ाने लगते हैं-- पगली नानी, पगली नानी । उससे तरह-तरह के प्रश्न पूछते, तु कपड़े क्यों नहीं पहनती, तुम्हें शर्म क्यों नहीं आती, तु पैसे हाथ से क्यों फेंक देती है । अत: इस समूह में बालक समूह की भावना से प्रेरित होकर प्रत्येक स्थल पर सजीव वातावरण की सृष्टि करते हैं । प्रेमचन्द के उपन्यासों में भी शिशु पात्र वातावरण के स्रष्टा के रूप में आये हैं ।

`प्रतिज्ञा` उपन्यास के अन्तिम परिच्छेद में `वनिता-भवन में इन तीन बालिकाओं के दर्शन होते हैं । ये गौण पात्र हैं जो इस स्थल पर उपस्थित होकर एक विशिष्ट वातावरण कीसृष्टि करती हैं । इन बालिकाओं के माध्यम से `वनिता-भवन` का सुचारुरूप से संचालन, पूर्णा की भक्ति-भावना पर प्रकाश पड़ता है । यद्यपि ये पात्रायें गौण हैं, फिर भी इनका अपना महत्व है । ये बालिकाएं बाल-सुलभ जिज्ञासा की भावना से प्रेरित होकर, अमृतराय और दाननाथ को पूर्णा से बातचीत करते देख वहां पहुंच जाती है । पूर्णा गुलदस्ता बनाती रहती है, उसे संकोचवश बेंच पर रख देती है । बालिकाएं इस रहस्य का उद्घाटन करती हैं कि देवी जी ने एक मन्दिर बनाया है और प्रतिदिन मन्दिर में गुलदस्ता चढ़ाया करती हैं, ठाकुर जी को कब चढ़ाती हैं । बालिकाओं के इस रहस्योद्घाटन से अमृतराय को `वनिता-भवन` मन्दिर बनाने की आवश्यकता महसूस होती है ।

`सेवासदन` उपन्यास में जाह्नवी की दो लड़कियां आकर एक स्थल पर सुमन और शान्ता की दयनीय दशा का दिग्दर्शन तो कराती ही हैं, साथ ही इस परिवार में अनचाहे मेहमान के आने पर वातावरण का अच्छा चित्र उपस्थित करती हैं । कृष्णचन्द्र के जेल जाने पर उनकी स्त्री अपनी दो लड़कियों के साथ अपने भाई उमानाथ के यहां चली जाती हैं । इस स्थल पर लेखक ने सिर्फ इतना लिखा है--`उसके दो लड़कियां थीं । वह भी

सुमन और शान्ता से दूर-दूर रहतीं ।' इन दो वाक्यों में कितनी मार्मिक अभिव्यंजना छिपी है-- परिवार के वातावरण का कितना यथार्थ चित्र सामने खींचा गया है ।

'निर्मला' उपन्यास में कृष्णा वातावरण की सृष्टा के रूप में है । यह बाबू उदयभानु लाल और कल्याणी की पुत्री है । आयु इसकी १० वर्ष की है । स्वभाव की चंचल और खिलाड़िन है, सैर-तमाशे पर जान देने वाली, अत्यन्त जिज्ञासु, सरल और अबोध । 'निर्मला' उपन्यास के आरम्भ में ही आकर इस उपन्यास की सजीवता तथा स्वाभाविकता में एक विशिष्ट वातावरण की सृष्टि करती है ।

'रंगभूमि' उपन्यास में मिठुआ और घीसू के गांव के बालकों का समूह के दिग्दर्शन होते हैं, जो उस स्थल के वातावरण की सृष्टि कर उसे सजीव बनाते हैं । पहली बार उनके दर्शन तब होते हैं, जब सूरे के के फ़ोपड़े में आग लग जाती है और उस भस्म स्तूप के चारों ओर बीसों लड़के जमा हो जाते हैं । वे सूरदास को मारे प्रश्न के परेशान कर देते हैं । सूरदास को राख फेंकते देखकर उनको मानों खेल हाथ आया । राख की वर्षा होने लगी और दम के दम में सारी राख बिखर गई । भूमि पर केवल काला दाग रह गया । जब वहां चुटकी भर भी राख न रही तो सब लड़के दूसरे खेल की तलाश में दौड़े ।

दूसरी बार उन बालकों के समूह का दर्शन होता है । जब प्रभुसेवक उस गांव में जाता है । घीसू हांक लगाता है-- पादड़ी आया । पादड़ी आया । दोनों घीसू और मिठुआ अपने हमजोलियों को यह खुशखबरी सुनाने दौड़े , पादड़ी गायेगा, किताबें दिखायेगा, मिठाइयां और पैसे बांटेगा । गांव के बीसों लड़के इस लूट का माल बांटने के लिए वहां जमा हो गये । इन दोनों स्थलों में आये हुए बालकों का समूह गौण पात्र हैं और उस स्थल को सजीवता तथा यथार्थता प्रदान करते हैं ।

'गबन' उपन्यास में विश्वम्भर दयानाथ और रामेश्वरी का सबसे छोटा पुत्र है । आयु इसकी ६ वर्ष की है । जालपा

तथा रमानाथ की कथा में विश्वम्भर एक विशिष्ट वातावरण की सृष्टि करता है । यह बड़े भाई रमानाथ से बहुत डरता है । ताश खेलते समय जब रमानाथ आ जाता तो झट ताश को टाट के नीचे छिपा देता है और पढ़ने लगता है । सिर नीचा कर लेता और भाई के चपत की प्रतीक्षा करता है । इसको खेलते, कनकौवे उड़ाते देखकर पिता की बाल-प्रवृत्ति सजग हो उठती है और दो-चार पेंच पतंग लड़ा लेते हैं और गुल्ली डंडा भी खेलते हैं । गोपी और जालपा बिदाई के समय विश्वम्भर रो-रोकर उस स्थल को बड़ा ही करुण और मार्मिक बना देता है ।

बच्चों का समुदाय रतन के बगीचे में बालकों का भी समूह उपस्थित है । उस बगीचे में आम के वृक्ष में एक झूला डाला हुवा है । बच्चों का एक जमघट है । बच्चे झूल रहे हैं, रतन झुला रही है । इसी समय रमाकान्त आता है, रतन उसे भी खेल में शामिल करती है । बालकों का समुदाय इस नवागन्तुक को देखकर उतावला हो उठता है । सब के सब हु-हल्ला मचाते हैं । सब अपनी -अपनी बारी के लिए उतावले हो उठते हैं । दो उतरते तो चार चढ़ते हैं । इन गौण पात्रों के माध्यम से रतन के चरित्र की झांकी मिलती है । रतन किस प्रकार आस पास के बच्चों को बटोर कर अपना दिल बहलाती और किस प्रकार यह बालकों का समुदाय उस बाग में उपस्थित होकर रतन के बाल-विहीन गृह को गुलज़ार करते हैं ।

'दो शिशु-- ये दोनों बच्चे दिनेश के हैं जिसे पुलिस वाले झूठी गवाही के आधार पर फांसी की सजा दिलवाते हैं । रमानाथ पुलिस के हथकंडों का शिकार है और वह झूठी गवाही देता है । जालपा इस पूरी कथा का पता लगाती है । और रमानाथ के पापों के प्रायश्चित के हेतु दिनेश के परिवार की सेवा के लिए अपने को उत्सर्ग कर देती है । इन दोनों शिशुओं को लेकर जालपा पार्क में जाती है जहां पड़ोस के बच्चे आकर खेलते हैं । जोहरा वहां जाकर जालपा से बातचीत करके दिनेश के परिवार की वास्तविक स्थिति का पता लगाना चाहती है । वह इन दोनों बच्चों की दादी को मिठाई देती है । दादी एक-एक मिठाई

बच्चों को देता है, बच्चे प्रसन्न होकर कूद-कूद कर खाते हैं । शिशु के माध्यम से न जाने कितने उलझे काम सुलझ जाते हैं । बहुधा परिवार के शिशुओं से स्नेह-सम्बन्ध स्थापित कर बड़ों के हृदय पर अधिकार कर लिया जाता है । `काबुली वाला` कहानी में काबुली वाला मीना से व स्नेह-सम्बन्ध स्थापित कर उसके पिता से परिचय प्राप्त करता है । जोहरा मिठाई देकर बच्चों को उसमें उलझा देती है, ताकि जालपा के साथ बातचीत ~~कम~~ करने का मौका मिले । अत: ये दोनों शिशु एक क्षण के लिए उपस्थित होकर कथानक की गति में सहयोग देते हैं ।

`गोदान` में कई स्थलों पर शिशु पात्र उपस्थित होकर एक विशिष्ट वातावरण की सृष्टि करते हैं, जैसे सोना और रूपा, रामू मीष्म तथा बच्चों का एक समूह ।

सोना और रूपा होरी और धनिया की पुत्रियां हैं । सोना १२ वर्ष की, स्वभाव की लज्जाशील,सांवली,सुडौल,प्रसन्न और चपल । कुछ बातों में चतुर, कुछ बातों में अल्हड़ कि शिशुओं से भी पीछे । इसे अपने परिवार से अत्यधिक स्नेह है तथा यह माता-पिता के दु:खों में समभागिनी है । जीवन के प्रति दूरदर्शी दृष्टिकोण तथा तर्क में परास्त करने वाली है । रूपा उससे छोटी, आयु ६ वर्ष, मैली, सिर पर बालों का एक घोंसला-सा बना हुआ, एक लँगोटी कमर में बांधे, बहुत ही ढीठ और रोनी स्वभाव वाली बालिका है । काम करने में सोना से प्रतिस्पर्द्धा रखने वाली,अपने विवाह के लिए स्वयं आग्रह करने वाली, अपने मोलेपन से सबको मुग्ध करने वाली, घर-भर की मौसी है । दोनों बहनें,पिता तथा भाई गोबर से अपने नाम सोना और रूपा की महानता तथा उपयोगिता पर तर्क करता है । इनके विवाह में पिता होरी की बाल-सुलभ प्रवृत्ति सजग हो उठती है । गोबर भी इस विनोद में शामिल होता है--

`होरी ने सोना को बनावटी रोष से देखकर कहा-- तू इसे क्यों चिढ़ाती है सोनिया ? सोना तो पहनने को है । निवाह तो रुपए से होता है । रूपा न हो तो रुपये कहां से बने, बता ।

सोना ने अपने पक्ष का समर्थन किया--सोना

न हो तो मोहन कैसे बने, नथुनियाँ कहां से आयें, कण्ठा कैसे बने ?

गोबर क भी इस विनोदमय विवाद में शरीक हो गया । रूपा से बोला -- तू कह दे कि सोना तो सूखी पत्ती की तरह पीला होता है । रूपा तो उजला होता है,जैसे सूरज ।

सोना बोली -- शादी ब्याह में पीली साड़ी पहनी जाती है,उजली साड़ी कोई नहीं पहनता ।

रूपा इस दलील से परास्त हो गई ।गोबर और होरी की कोई दलील इसके सामने न ठहरी ।[1]

इस विवाद से इन शिशु-पात्रों के बाह्य वातावरण की स्नेहिल,स्निग्ध पवित्र भावनाओं की झांकी मिलती है ।गोबर के परिवार का सम्पूर्ण वातावरण हमारे सामने आ जाता है साथ ही इन शिशुओं के अन्तर्मन की झांकी भी मिलती है-- सोना अपने वय के अनुसार सोना के उदाहरण में शादी की साड़ी,नथुनियाँ मोहन,कण्ठा आदि का उदाहरण प्रस्तुत करती है । रूपा उसका उत्तर माई पिता से सिखाये जाने पर ही देती ।

`रूपा ने[2] उंगली मटका कर कहा-- ए राम, सोना चमार, ए राम सोना चमार ।`

और फिर रूपा ~~बोलकर~~ राधा सोना चमार कहकर उछल-उछल कर उसे चिढ़ाती है । यही उसकी अपनी ओर से चिढ़ाने के वाक्य हैं ।

`बच्चों का समूह` इस उपन्यास में ग्रामीण वातावरण के द्रष्टा के रूप में आया है । मेहता, मालती,रायसाहब और मिस्टर खन्ना दोनों अलग-अलग दल में शिकार खेलने चलते हैं । जंगल मिर्जा साहब ने एक हरिण का शिकार किया,किन्तु हरिण को देखते ही करुणार्द्र हो उठे । हरिण बहुत भारी था अतः समीप का एक लकड़हारा ढोने में

---

१ प्रेमचन्द : `गोदान`,परि० ४,पृ०१७
२ ,, : ,, अंतिम परिच्छेद,पृ०३४

सहायता करता है । लकड़हारा मिर्जा साहब और राय साहब के साथ अपने गांवकी ओर चल पड़ता है । गांव में एक इमली के पेड़ के नीचे शिकार रखता है । इसी समय गांव के बच्चे इकट्ठे होते हैं । लकड़हारे के भी चार बच्चे इकट्ठे होते हैं । वे दौड़कर आकर उस हरिण पर अपना अधिकार दिखाते हैं,चुंकि हरिण उनके पिता द्वारा लाया गया है । यहां ये सभी ग्रामीण शिशु अपनी,जिज्ञासा,कौतूहल तथा आपसी बातचीत द्वारा एक विशिष्ट वातावरण उपस्थित करते हैं तथा उस स्थल को सजीव बनाते हैं ।

'भीष्म' नामक शिशु 'गोदान' उपन्यास में गौण पात्र के रूप में पारिवारिक शान्ति स्थापित करने के लिए वातावरण के सृष्टा के रूप में आता है । यह शिशु गोविन्दी और मिस्टर खन्ना का सबसे छोटा पुत्र है, जन्म से ही अत्यन्त दुर्बल है । अवस्था दस महीने की है, किन्तु देखने में पांच-छ: महीने का ही लगता है । खन्ना की धारणा हो गई थी कि बच्चा बचेगा नहीं,इसलिए उसकी ओर से उदासीन रहते थे,पर गोविन्दी इसी कारण उसे सब बच्चों से अधिक चाहती थी । खन्ना और गोविन्दी में दाम्पत्य प्रेम का अभाव था । मिस मालती को लेकर परिवार में कलह थी । भीष्म का स्नेह ही गोविन्दी को इस परिवार के मोह-बंधन में जकड़े हुए था । पारिवारिक कलह से ऊब कर, एक दिन ,भीष्म के ज्वर उतरने पर, उसे लिए हुए गोविन्दी पार्क में चली जाती है । वहां मिस्टर मेहता से भेंट होती है । भीष्म को गोद में लेकर मेहता का हृदय वात्सल्य स्नेह से गद्गद् हो उठता है । गोविन्दी अत्यधिक भावुक हो उठती है । वह मेहता के सामने मिसमालती से विवाह करने का प्रस्ताव रखती है और मायाविनी व मालती से अपने परिवार को बर्बाद होने से बचा देने के लिए आग्रह करती है । गोविन्दी घर लौटती है, बच्चे अम्मां, अम्मां करके दौड़ पड़ते हैं । भीष्म इस स्थान में एक ऐसे वातावरण की सृष्टिकरता है, जिसके माध्यम से मेहता का हृदय शिशु-स्नेह से सिंचित हो उठता है और मालती के प्रति उसके हृदय से मलिनता समाप्त हो जाती है ।

'रामू' सिलिया चमारिन और मातादीन ब्राह्मण का जारज पुत्र है । जिसकी अवस्था दो वर्ष है । सारे गांव में दौड़ लगाने

वाला, चंचल और वाचाल शिशु है । अपनी तुतली भाषा तथा कुत्ते, बिल्ली आदि के बोलियों की नकल कर सब को अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। दो वर्ष की अवस्था में ही इस शिशु की मृत्यु हो जाती है । वह मर कर सिलिया के जीवन का केन्द्र बन जाता है । सिलिया और मातादीन के कथानक में एक विशिष्ट वातावरण का स्रष्टा है ।

मंगल, गोबर और झुनिया का शिशु है । गोबर मिस मालती के यहां माली है । मंगल एक बार जोर से बीमार पड़ता है, मालती उसकी सेवा-सुश्रुषा में दिन-रात लगी रहती है । वह झुनिया को बालक से अलग कर देती है । स्वयं बालक की ही नींद सोती और बालक नींद जगती है । मेहता मालती के इस अटूट वात्सल्य और अदम्य मातृ-भाव को देखकर चकित हो जाते हैं तथा अपने को उनके चरणों में अर्पित करते हैं । मंगल मेहता-मालती कथा में एक विशिष्ट वातावरण का स्रष्टा है तथा उनके पारस्परिक प्रेम को चर्मोत्कर्ष तक पहुंचाने वाला अप्रत्यक्ष पात्र है ।

(घ) सूत्रधार

कभी-कभी ऐसी कहानियां होती हैं, जिनमें लगता है कहानी का सब कुछ दृष्टि ओझल किसी शक्ति द्वारा परिचालित होता है ठीक जैसे नाटक में नाटक का सूत्रधार कभी रंगमंच पर उपस्थित नहीं होता, किन्तु वह समस्त नाटक की अन्विति का एकमात्र नियंता होता है । वैसे ही कहानी में भी एक सूत्रधार होता है, जो प्रत्यक्ष रूप से सामने नहीं आता, किन्तु कहानी का वही परिचालन करता है । उदाहरण के लिए प्रेमचन्द की कहानी 'बालक' का नवजात शिशु है जो गौण पात्र होते हुए भी इस कहानी में सूत्रधार जैसा है । वह शिशु गोमती का है । गोमती विधवाश्रम की एक कुलटा स्त्री है । विधवाश्रम वालों ने गोमती का विवाह तीन बार कर दिया है, किन्तु गोमती किसी के यहां नहीं टिकती । गंगू गोमती से प्रेम करता है, उसकी सारी बुराइयों से विज्ञ होने तथा मालिक के बार-बार मना करने पर भी उससे विवाह करता है । गोमती कुछ महीनों के बाद अचानक एक दिन

रात को घर से गायब हो जाती है । अस्पताल में वह एक शिशु को जन्म देती है । गंगू उसका पता लगाता है और उसे सारी स्थिति का ज्ञान होता है, किन्तु फिर भी उसका हृदय गोमती के दुराचार से किंचित मलिन नहीं होता। उसका शिशु-स्नेह उमड़ पड़ता है । गंगू के शिशु-स्नेह से उसके आस पास के लोग प्रभावित होते हैं । यह शिशु सूत्रधार रूप में है,जो गोमती गंगू तथा कहानी के अन्य चरित्रों पर प्रकाश डालता है ।

कथानक के सूत्रधार के रूप में शिशु-पात्र

प्रेमचन्द की कहानियों में जो शिशु-पात्र कथानक के सूत्रधार के रूप में आये हैं, उनकी संख्या पन्द्रह है ।

`नवजात शिशु`,`बालक` ,`बड़े भाई साहब`, बड़े भाई साहब वासुदेव`आधार` ,फेंकू `निमंत्रण`, शारदा `लांछना`, गंगाजली `बेटी का धन`, मुन्नू `विमाता`,परमानन्द ` एक आंच की कसर`, एक शिशु` माता का हृदय, जगतसिंह `सच्चाई का उपहार` । फेंकू और परमानन्द दो ऐसे शिशु पात्र हैं । व्यवहार से उनके पिता के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है । कथा में इन दोनों शिशु-पात्रों की चर्चा बहुत विस्तार से नहीं है, किन्तु वे एक ही स्थान से सम्पूर्ण कहानी का संचालन करते हैं । एक ही स्थल से वे अपने पिता का सम्पूर्ण मनोवैज्ञानिक चित्रण उपस्थित करते हैं । वासुदेव भी आधार बनकर अपनी भाभी की लाज रख लेता है । तथा माता-पिता के सम्मुख भाभी को रख लेने का साधन प्रस्तुत करता है । अपनी भाभी की गोद में बैठकर पूछता है--` हमसे ब्याह करोगी ?` बस उसके इसी स्नेहपूर्ण बात से अनूपा की आंखें डबडबा आती हैं और वह अपना विचार बदल देती है ।

मुन्नू स्नेह वंचित तथा स्नेह प्राप्त शिशु के मनोभावों को उपस्थित करने के लिए `विमाता` शीर्षक कहानी में सूत्रधार के रूप में आया है । उसके प्रत्येक व्यवहार तथा भावना से यह कहानी परिचालित होती है । उसकी एक-एक क्रिया उसके छोटे भाई में प्रतिक्रिया उत्पन्न करती है । इन्हीं दोनों की क्रिया-प्रतिक्रिया के माध्यम से कहानी आगे बढ़ती है ।

`लांछना` कहानी में शारदा सूत्रधार के रूप में

जाई है । रजा मियां घर का सारा भेद लेकर अपने स्नेह के माध्यम से शारदा की मां से सम्बन्ध रखना चाहता है । शारदा को खिलौने मिठाई देने से उसकी मां तो खुश होती है, पर उसके पिता के मन में सन्देह होता है और परिवार के सुन्दर वातावरण पर घोर तिमिर छा जाता है । इसी प्रकार जगतसिंह एक शिशु और गंगाजली के द्वारा कहानी संचालित होती है । 'बालक' कहानी का शिशु तो बिलकुल ही दृष्टि से ओझल है ।

'गुप्तधन' भाग १ में 'विक्रमादित्य का तेगा' कहानी में 'राजा' नामक शिशु कथानक के सूत्रधार के रूप में है । यह शिशु घर के अन्दर है और घर में आग लग जाती है । प्रेम सिंह नाम का बूढ़ा जाट अग्नि की लपटों के अन्दर से इस शिशु को निकालता है । शिशु को देखकर इतने दिनों से सोये हुए पितृ-स्नेह जाग पड़ता है । यह अर्धरात्रि के समय कमर में तलवार लगाये चौंक-चौंक कर कदम रखता बरगद के पेड़ के नीचे इसी बालक के लिए सांप की मणि लाने जाता है । इसकी माता वृन्दा के जीवन में कितने ही उत्थान-पतन होते हैं, किन्तु इस शिशु राजा का स्नेह सूत्र उसे एक क्षण के लिए लाता है । राजा से लिपट कर माता का विह्वल हृदय करुणार्द्र हो उठता, आंखों से आंसुओं की धारा बहती रहती, किन्तु दूसरे ही क्षण उसका सतीत्व जाग उठता है । वह अपने पुत्र को छोड़कर चलीजाती है प्रतिकार लेने । महाराणा रणजीत सिंह से प्रतिकार लेने जिनके सैनिकों ने उसकी मधुर रागिनी को सुनकर अर्धरात्रि-बेला में उसका अपहरण किया था और उसका सतीत्व छीन लिया था । राजा को देख कर वृन्दा का सतीत्व उसके वह मातृत्व के ऊपर उठता है, उसपर विजय पाता है । यह गौण पात्र पूरी कथा का सूत्र अपने हाथ में लिए हुए भी वृन्दा के आदर्श को चरमोत्कर्ष पर पहुंचाताहै ।

'नवजात शिशु', 'त्रिया चरित्र' शीर्षक कहानी में कथानक के सूत्रधार के रूप में है । यह मगनदास का भाई है । अपने पिता द्वारा पालित पुत्र मगनदास के जीवन का सूत्रधार अप्रत्यक्ष रूप में है । जन्म लेकर मगनदास की सारी ऊंची आकांक्षाओं तथा अभिलाषाओं को धराशायी बना देता है । जब मगनदास सैर करने के लिए जापान गया है उसी समय उसे भाई के जन्म लेने का तार मिलता है । तार उसके हाथ से छूटकर गिर पड़ता है । फिर

वह लौट कर घर नहीं आता । दर-दर की ठोकरें खाता है । यह नवजात शिशु एक ही वर्ष में स्वर्गवासी हो जाता है, फिर मगनदास के जीवन में परिवर्तन आता है, उसका भाग्य जाग उठता है, घर लौटता और आनन्द से जीवनयापन करता है ।

`नेकी` शीर्षक कहानी में हीरामन नामक बालक कथानक का सूत्रधार है-- इस बालक के जीवन की एक घटना अर्थात् सात वर्ष का आयु में गुड़िया के मेला के दिन किरात सागर में डूब जाना-- कथा को एक सूत्र में बांधे हुए है । एक अनजान व्यक्ति इस बालक को बचाता है । उस बालक के जन्म-दिवस पर प्रत्येक वर्ष उस अनजान व्यक्ति के नाम पर मिठाइयां और बताशे बांटे जाते हैं । उस गुमनाम की स्मृति में शिवाला तथा कुआं बनाया जाता है । किन्तु जिस समय उस गांव का सबसे आत्मस्वाभिमानी व्यक्ति तखत सिंह का देहान्त होता है हीरामन की माता रेवती स्वप्न में देखती है-- वही, आज से तीस वर्ष पहले की घटना उसकी आंखों के सामने आती है, हीरामन डूब गया है, वह छाती पीट-पीट कर रो रही है, एक अनजान व्यक्ति आकर इस बालक को कीरत सागर से निकालता और फिर आंखों से ओझल हो जाता है । यह तखत सिंह है ।

`गुप्तधन` भाग २ में रामसरूप शिशुपात्र है । `दूसरी शादी` शीर्षक कहानी में यह चार वर्षीय बालक है, जिसके पिता ने अपने सिद्धान्त को तोड़कर अपने मन को बहुत समझा-बुझा कर दूसरी शादी कर ली है । उसका सुर्ख और रंगीला चेहरा पिता के जीवन में पश्चाताप और आत्मवेदना बन गया है । उसके चेहरे का विषाद, उसके भोलेपन और आकर्षण का गायब होना ही पिता के भाव, तथा मर्मान्तक वेदना को बढ़ा रहे हैं ।

`प्रेम सूत्र` कहानी में शान्ता प्रभा और पशुपति की ३-४ वर्ष की कन्या है । यह अपने माता-पिता को प्रेम-सूत्र में बांधती है ।इसके स्नेह-सूत्र में आबद्ध माता पति पशुपति से प्रतिशोध नहीं लेती ।भारतीय शाश्वत नारी की भांति --

सारी यातनाओं को मौन होकर सहती है । इसी बालिका का स्नेह-सूत्र पिता को सही मार्ग पर लाता तथा दोनों को सुखी पारिवारिक बन्धन में बांध देता है ।

उपन्यासों में भी सूत्रधार अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं । प्रेमचन्द ने इस विशिष्ट कला का प्रयोग अपने उपन्यासों में भी किया है, किन्तु शिशु-पात्र कथानक के सूत्रधार के रूप में नहीं है ।

(ड०) कथानक का अप्रत्यक्ष पात्र

कहानियों में कुछ ऐसे पात्र होते हैं जो इतने प्रबल तो नहीं होते जो कहानियों के नियामक हों या सूत्रधार हों, किन्तु उनका यह महत्व तो अवश्य होता है कि वे अप्रत्यक्ष रहकर भी उनकी घटना, उद्देश्य और भाव-धारा को प्रभावित करते हैं । ऐसे पात्रों को अप्रत्यक्ष पात्र कहते हैं । इस प्रकार के पात्रों की चर्चा पिछले परिच्छेद में की जा चुकी है । उन पात्रों से इन पात्रों का केवल डिग्री का अन्तर होता है । प्रेमचन्द की कहानी `आखिरी हीला` में एक शिशु अप्रत्यक्ष रूप से इस कहानी को प्रभावित करता है । एक व्यक्ति वैवाहिक जीवन के दोनों पक्षों की चर्चा करता है, पहला पक्ष जितना ही मोहक और आकर्षक है, दूसरा उतना ही हृदय-विदारक । हृदय विदारक बनाने में शिशु का कितना हाथ है, इसका सुन्दर चित्रण है । परिवार में बालक के आगमन पर पिता को कितनी परेशानियां और मुसीबतें उठानी पड़ती हैं, इसकी कल्पना से वह अधीर हो उठता है । बालकों का रोना, मचलना, बीमार पड़ना आदि सारी हरकतें चलचित्र की भांति उसके सामने आने लगती हैं और वह इन्हीं कल्पनाओं के आधार पर बाल-जीवन का चित्रण करता है । यहां कोई बालक किसी नाम से प्रत्यक्ष रूप से कहानी में नहीं आता । फलत: कहानी के पात्र को `बालक` शब्द से ही सम्बोधित किया है । इसमें सामान्य शिशुओं की चर्चा और चित्रण है ।

वर्णन प्रणाली के रूप में

पात्रों के चित्रण की एक प्रणाली यह भी हो सकती है, जिसमें कथाकार अपनी ओर से पात्रों का वर्णन मात्र करे। घटनाओं के माध्यम से नहीं, अन्य पात्रों के कथोपकथन के माध्यम से नहीं, कथाकार जब अपने माध्यम से पात्र का परिचय उपस्थित करता है, तब वर्णन प्रणाली का जन्म होता है। वस्तुत: कथाकार अपनी दृष्टि से पात्र या घटनाओं को जिस रूप में देखता है उसी रूपमें उपस्थित करता है। प्रत्येक वर्णन में वर्णन करने वाले का दृष्टिकोण छिपा रहता है और प्रत्येक वर्णन, वर्णन करने वाले की क्षमता का परिचायक होता है। यह प्रणाली आजकी कहानियों में धीरे-धीरे कम होती जा रही है, किन्तु उसका महत्व घट गया हो, ऐसा मानना नहीं चाहिए। अत्यन्त उच्च कोटि की कहानियों में आज भी अत्यन्त उच्चकोटि का वर्णन दिखायी देता है। कर्तव्य और 'अस्थि पंजर' ऐसी ही कहानियां हैं।

उदाहरण के लिए ... 'अठारह-उन्नीस वर्ष का वय, गौर वर्ण और सुगठित शरीर। देखने वाले कहते हैं, हां, है कनक में सौन्दर्य, किन्तु इस शारीरिक सौन्दर्य से कहीं अधिक सौन्दर्य कनक के हृदय में था। यद्यपि कनक के हार्दिक सौन्दर्य का परिचय बहुत कम लोगों को होता था किन्तु जिसे होता था, वह कण्ठ खोलकर उसकी प्रशंसा कि किए बिना न रहता था।'[१]

इसी प्रकार—

'वह लड़की थी, पढ़ती थी, बहुत होशियार थी परीक्षाओं के प्रशंसापत्र उसके पास हैं, पर अब उसमें न वह गर्व रह गया है और न वह पढ़ने की उमंग। लड़ाई के तमगों की भांति प्रमाण पत्र किस कोने में पड़े हैं और कविता एक पराजिता क्षीण - काय योद्धा की भांति कभी उधर को और देख भर लेती है।'[२]

---

१ विवाह की कहानियां : 'कर्तव्य का मूल्य', पृ० २२६, भार्गव पुस्तकालय, गायघाट बनारस सिटी।

२ 'अस्थिपंजर' - 'झांकी', पृ० १०५

प्रेमचन्द की 'मां' शीर्षक कहानी में प्रकाश का चरित्र-चित्रण वर्णन प्रणाली द्वारा इस प्रकार किया गया है--'लेकिन प्रकाश के कर्म और वचन में मेल न था और दोनों के साथ उसके चरित्र का यह अंग प्रत्यक्ष होता जाता था। ज़हीन था ही, विश्वविद्यालय से उसे वज़ीफ़े मिलते थे, करुणा भी उसे यथेष्ठ सहायता करती थी, फिर भी उसका खर्च पूरा न पड़ता था। वह मितव्ययिता और सरल जीवन पर विद्वता से भरे हुए व्याख्यान दे सकता था, पर उसका रहन-सहन फैशन के अन्ध भक्तों से जौ भर घट कर न था। प्रदर्शन की धुन हमेशा सवार रहती थी। उसके मन और बुद्धि में निरन्तर द्वन्द्व होता रहता था।'[1]

'जगत सिंह को स्कूल जाना कुनैन खाने या मछली का तेल पीने से कम अप्रिय न था। वह सैलानी, आवारा, घुमक्कड़ युवक था। कभी अमरूदों के बागों की ओर निकल जाता, और अमरूदों के साथ माली की गालियां बड़े शौक से खाता। दरिया की सैर करता और मल्लाहों की डोंगियों में बैठकर उस पार के देहातों में निकल जाता। गालियां खाने में उसे बड़ा मज़ा आता था। गालियां खाने का कोई अवसर वह हाथ से नहीं जाने देता था। सवार घोड़े के पीछे तालियां बजाना, इक्कों को पीछे से पकड़ कर अपनी ओर खींचना, बुड्ढों की चाल की नकल करना, उसके मनोरंजन के विषय थे। आलसी काम तो नहीं करता पर दुर्व्यसनों का दास होता है और दुर्व्यसन धन के बिना पूरे नहीं होते। जगतसिंह को जब अवसर मिलता घर से रुपये उड़ा ले जाता। नगद न मिले तो बर्तन और कपड़े उठा ले जाने में भी उसे संकोच न होता था। घर में जितनी शीशियां और बोतलें थीं, वह सब उसने एक-एक करके गुदड़ी बाज़ार में पहुंचा दीं। पुराने दिनों की कितनी चीज़ें घर में पड़ी थीं, उसके मारे एक भी न बचीं। इस कला में ऐसा दक्ष और निपुण था कि उसकी चतुराई और पटुता पर आश्चर्य होता था। एक बार वह बाहर-ही-बाहर केवल कार्निसों के सहारे, अपने दोमंजिले मकान की छत पर चढ़ गया और ऊपर ही से पीतल की एक बड़ी थाली लेकर उतर आया। घर वालों को आहट न मिली।'[2]

----

1 'मानसरोवर' भाग १ : 'मां' शीर्षक कहानी।

2 'मानसरोवर' भाग ५

'लांछन' कहानी में शारदा का चित्रण--

श्यामकिशोर के आते ही शारदा अपने खिलौने उठाकर भाग गयी थी कि कहीं बाबू जी तोड़ न डालें। नीचे जाकर वह सोचने लगी कि इसे कहां छिपाकर रखूं। वह इसी सोच में थी कि उसकी एक सहेली आंगन में आ गई। शारदा उसे अपने खिलौने दिखाने के लिए आतुर हो गई। इस प्रलोभन को वह किसी तरह न रोक सकी। अभी तो बाबू जी ऊपर हैं, कौन इतने जल्दी आये जाते हैं। तब तक क्यों न सहेली को अपने खिलौने दिखा दूं। उसने सहेली को बुला लिया और दोनों नये खिलौने देखने में मग्न हो गई कि बाबू श्यामकिशोर खिलौने देखते ही झपट कर शारदा के पास जा पहुंचे और पूछा... तूने यह खिलौना कहां पाए?

शारदा की घिग्घी बांध गई। मारे भय के थर-थर कांपने लगी उसके मुंह से एक शब्द भी न निकला।[1]

'शंखनाद' कहानी में बच्चों का चित्रण

मंगल का शुभ दिन था। बच्चे बड़ी बेचैनी से अपने दरवाजों पर खड़े गुरदीन की राह देख रहे थे। कई उत्साही लड़के पेड़ों पर चढ़ गये और कोई-कोई अनुराग से विवश होकर गांव से बाहर निकल गये थे। सूर्य भगवान अपना सुनहला थाल लिए पूरब से पश्चिम जा पहुंचे थे। इतने ही में गुरदीन आता हुआ दिखायी दिया। लड़कों ने दौड़कर उसका दामन पकड़ा और आपस में खींचा-तानी होने लगी। कोई कहता था, मेरे घर चलो, कोई अपने घर का न्योता देता था। सबसे पहले भानु चौधरी का मकान पड़ा। गुरदीन ने अपना खोंचा उतार दिया। मिठाइयों की लूट शुरू हो गई। बालकों और बालिकाओं का ठट्ठ लग गया। हर्ष और विषाद, सन्तोष और लोभ, ईर्ष्या और क्षोभ, द्वेष और जलन की नाट्य-शाला सज गई। कानूनदां वितान की पत्नी अपने तीनों लड़कों के साथ उपस्थित हुई। गुरदीन ने मीठी-मीठी बातें करनी शुरू की। पैसे कोठी में रखे धेले की मिठाई दी और धेले का

---

1 प्रेमचन्द : 'मानसरोवर', भाग1, पृ0 122

आशीर्वाद । लड़के दौने के लिए उछलते-कूदते घर में दाखिल हुए ।'[1]

'महातीर्थ' कहानी में रुद्रमणि का चित्रण

रुद्र को अन्ना की रट लगाने और रोने के सिवा और कोई काम न था । वह शान्त प्रकृति का कुत्ता जो उसकी गोद से एक क्षण के लिए भी न उतरता था, वह मौन व्रतधारी बिल्ली जिसे देखकर फूला न समाता था, वह पंखहीन चिड़िया जिसपर वह जान देता था, सब उसके चित्त से उतर गये । वह उनकी तरफ आंख उठाकर भी न देखता था । अन्ना जैसी जीती-जागती प्यार करने वाली, गोद में लेकर घुमाने वाली थपक-थपक कर सुलाने वाली, गा-गा कर खुश करने वाली चीज का स्थान उन निर्जीव चीजों से पूरा न हो सकता था । वह सोते-सोते अक्सर चौंक पड़ता था और अन्ना अन्ना कह पुकार कर हाथों से इशारा करता । उसे आशा होती कि अन्ना यहां आती होगी । इस कोठरी का दरवाजा खुलते सुनता तो अन्ना-अन्ना कहकर दौड़ता । समझता कि अन्ना आ गई । उसका मरा हुआ शरीर घुल गया । गुलाब जैसा चेहरा सूख गया । मां और बाप उसकी मोहिनी हंसी के लिए तरस कर रह जाते थे । यदि वह बहुत गुदगुदाने या छेड़ने से हंसता भी तो ऐसा जान पड़ता था कि दिल से नहीं हंसता, केवल दिल रखने के लिए हंस रहा है । उसे अब दूध से प्रेम नहीं था, न मिश्री से, न मेवे से, न मीठे बिस्कुट से, न इमरती से ।'[2]

'गुप्तधन' भाग १ में मसऊद का चित्रण

'बच्चा बढ़ने लगा । अक्ल और जहानत में, हिम्मत और ताकत में वह अपनी दुगुनी उमर के बच्चे से बढ़कर था । सुबह होते ही गरीब रिन्दा बच्चे का बनाव-सिंगार करके और उसे नाश्ता खिलाकर अपने काम-धन्धों में लग जाती थी और शाह साहब बच्चे की उंगली

---

१ प्रेमचन्द : 'मानसरोवर', भाग ७, पृ० १८४
२ ,, : ,, ,, पृ० २४३

पकड़ कर उसे आबादी से दूर चट्टान पर ले जाते । वहां कभी उसे पढ़ाते, कभी हथियार चलाने की मश्क कराते और कभी उसे शाही कायदे समझाते । बच्चा था तो कमसिन, मगर इन बातों में ऐसा जी लगाता और ऐसे चाव से लगा रहता गोया उसे अपने वंश का हाल मालूम है । मिज़ाज में बादशाहों जैसा था। गांव का एक-एक लड़का उसके हुक्म का फरमाबरदार था । मां उसपर गर्व करती बाप फूला न समाता और सारे गांव के लोग समझते कि यह शाह साहब के जप-तप का असर है ।[१]

`दुनिया का सबसे अनमोल रतन` में एक लड़का का चित्रण --` इसी भीड़ में एक खूबसूरत भोला-भाला लड़का एक छड़ी पर सवार होकर अपने पैरों पर उछल-उछल फर्जी घोड़ा दौड़ा रहा था, और अपनी सादगी की दुनियां में ऐसा मगन था कि जैसे वह उस वक्त सचमुच अरबी घोड़े का शहसवार है । उसका चेहरा उससच्ची खुशी से कमल की तरह खिला हुआ था, जो चन्ददिनों के लिए बचपन ही में हासिल होती है और जिसकी याद हमको मरते दम तक नहीं भूलती । उसका दिल अभी पाप की गर्द और धूल से अछूता था और मासूमियत उसे अपनी गोद में खिला रही थी[२]।`

`बूढ़ी` शीर्षक कहानी में मुन्नी का चरित्र-चित्रण --` मुन्नी जिस वक्त विलयारनगर में आई, उसकी उम्र पांच साल से ज्यादा न थी । वह बिलकुल अकेली थी, मां-बाप दोनों न मालूम मर गये या कहीं परदेश चले गये थे । मुन्नी सिर्फ इतना जानती थी कि कभी एक देवी उसे खिलाया करती थी और एक देवता उसे कंधे पर लेकर खेतों की सैर कराया करता था । पर वह इन बातों का जिक्र कुछ इस तरह करती कि जैसे उसने सपना देखा हो । सपना सच्चा था या सच्ची घटना, इसका उसे ज्ञान न था । जब कोई पूछता तेरे मां-बाप कहां गए ? तो वह बेचारी कोई जवाब

१

२ प्रेमचन्द : `गुप्तधन` भाग १,पृ०२ --`दुनिया का सबसे अनमोल रतन`

देने के बजाय रोने लगती और यों ही उन सवालों को टालने के लिए एक तरफ हाथ उठाकर कहती -- ऊपर । कभी आसमान की तरफ देखकर कहती वहां । इस ऊपर और वहां से क्या मतलब था यह किसी को मालूम न होता ।...बस एक दिन लोगों ने उसे एक पेड़ के नीचे खेलते देखा और इससे ज्यादा उसकी बाबत किसी को कुछ पता न था ।

लड़की की सूरत बहुत प्यारी थी । जो उसे देखता, मोह जाता । उसे खाने-पीने की कुछ फिक्र न रहती थी । जो कोई बुलाकर कुछ दे देता, वही खा लेती और फिर खेलने लगती । शक्ल-सूरत से वह किसी अच्छे घर की लड़की मालूम होती थी । गरीब से गरीब घर में भी उसके खाने को दो कौर और सोने को एक टाट के टुकड़े की कमी न थी । वह सब की थी, उसका कोई न था ।[1]

'दूसरी शादी' कहानी में रामसरूप का चरित्र-चित्रण

'जब मैं अपने चार साल के लड़के रामसरूप को गौर से देखता हूं तब ऐसा मालूम देता है कि उसमें वह भोलापन और आकर्षण नहीं रहा जो दो साल पहले था । वह मुझे अपने सुर्ख और रंजीदा आंखों से घूरता हुआ नज़र आता है । उसकी इस हालत को देखकर मेरा कलेजा कांप उठता है । और मुझे वह वादा याद आ जाता है जो मैंने दो साल हुए उसकी मां के साथ जब वह मृत्यु-शय्या पर थी किया था ।'[2] बन्द

'गुप्तधन' भाग २ में 'दरवाजा' शीर्षक कहानी में मात्र वर्णन द्वारा ही एक बच्चे का सुन्दर चित्र उपस्थित किया गया है --

'सूरज क्षितिज की गोद से निकला, बच्चा पालने से-- वही स्निग्धता, वही लाली वही खुमार, वही रोशनी ।

----

१ 'गुप्तधन' भाग२, पृ०६३
२ ,, ,, पृ०२२५

मैं बरामदे में बैठा था । बच्चे ने दरवाजे से झांका । मैंने मुस्कुराकर पुकारा । वह मेरी गोद में आकर बैठ गया ।

उसकी शरारतें शुरू हो गईं । कभी कलम पर हाथ बढ़ाया, कभी कागज़ पर । मैंने गोद से उतार दिया । वह मेज का पाया पकड़े खड़ा रहा । घर में न गया दरवाजा खुला हुआ था ।

एक चिड़िया फुदकती हुई आई और सामने के सहन में बैठ गई । बच्चे के लिए मनोरंजन का यह नया सामान था । वह उसकी तरफ लपका । चिड़िया ज़रा भी न डरी । बच्चा समझा अबयह परदार खिलौना हाथ आ गया । बैठ कर दोनों हाथों से चिड़िया को बुलाने लगा । चिड़िया उड़ गई, निराश हो बच्चा रोने लगा । मगर अन्दर के दरवाजे की तरफ ताका भी नहीं । दरवाजा खुला हुआ था ।

गरम हलवे वाले की मीठी पुकार आई । बच्चे का चेहरा चाव से खिल उठा । खोंचे वाला सामने से गुजरा । बच्चे ने मेरी तरफ़ याचना की आंखों से देखा । ज्यों-ज्यों खोंचे वाला दूर होता गया, याचना की आंखें रोष में परिवर्तित होती गईं । यहां तक कि जब मोड़ आ गया और खोंचे वाला आंख से ओझल हो गया तो रोष ने पुरजोर फरियाद की सूरत अख्तियार की । मगर मैं बाजार की चीज़ें बच्चों को नहीं खाने देता । बच्चे की फरियाद ने मुझ पर कोई असर न किया, मैं आगे की बात सोचकर और भी तन गया । कह नहीं सकता, बच्चे ने अपनी मां की अदालत में अपील करने की ज़रूरत समझी या नहीं । आम तौर पर बच्चे ऐसी हालतों में मां से अपील करते हैं । उसने शायद कुछ देर के लिए अपील मुल्तवी कर दी हो । उसने दरवाजे की तरफ रुख न किया । दरवाजा खुला हुआ था ।

मैंने आंसू पोंछने के ख़्याल से अपना फाउण्टेनपेन उसके हाथ में रख दिया । बच्चे को जैसे सारे ज़माने की दौलत मिल गई । उसकी सारी इन्द्रियां इस नई समस्या को हल करने में लग गईं । एकाएक दरवाजा हवा से खुद-ब-खुद बन्द हो गया । पट की आवाज बच्चे के कानों में आई । उसने दरवाजे की तरफ देखा । उसकी वह व्यस्तता तत्क्षण लुप्त हो गई । उसने फाउण्टेनपेन को फेंक दिया और रोता हुआ दरवाजे की तरफ चला ,क्योंकि

दरवाज़ा बन्द हो गया[1]।'

'वरदान' उपन्यास में बालकों के समूह का चित्रा --

'जिन गलियों से वे बालकों का झुण्ड लेकर निकलते थे, वहां अब धूल उड़ रही थी। बच्चे बराबर उनके पास आने के लिए रोते और हठ करते थे। उन बेचारों को यह सुध कहां रहती थी कि अब वह प्रमोद-सभा भंग हो गई है। उनकी माताएं आंचल से मुख ढांप-ढांप कर रोतीं मानों उनका सगा प्रेमी मर गया है[2]।

'वरदान में प्रतापचन्द्र और वृजरानी का चरित्र-चित्रण --

प्रतापचन्द्र और वृजरानी में पहले ही दिन से मैत्री आरम्भ हो गई। आध घण्टे में दोनों चिड़ियों की भांति चहकने लगे। विरजन ने अपनी गुड़िया, खिलौने और बाजे दिखाये, प्रतापचन्द्र ने अपनी किताबें, लेखनी और चित्र दिखाये। विरजन की माता सुशीला ने प्रतापचन्द्र को गोद में ले लिया और प्यार किया। उसदिन से वह नित्य सन्ध्या को आता और दोनों साथ-साथ खेलते। ऐसा प्रतीत होता था कि दोनों भाई-बहिन हैं। सुशीला दोनों बालकों को गोद में बैठाती और प्यार करती। घण्टों टकटकी लगाये दोनों बच्चों को देखा करती, विरजन भी कभी-कभी प्रताप के घर जाती। विपत्ति की मारी सुवामा उसे देखकर अपना दुःख भूल जाती। छाती से लगा लेती और इनकी भोली-भाली बातें सुनकर अपना मन बहलाती।'

'एक दिन मुंशी संजीवनलाल बाहर से आये तो क्या देखते हैं कि प्रताप और विरजन दोनों दफ्तर में कुर्सियों पर बैठे हैं। प्रताप कोई पुस्तक पढ़ रहा है और विरजन ध्यान लगाये सुन रही है। दोनों ने ज्योंही मुंशी जी को देखा, उठ खड़े हुए। विरजन तो दौड़कर पिता की गोद में आ बैठी और प्रताप सिर नीचा करके एक ओर खड़ा हो गया। कैसा गुणवान

---

१ प्रेमचन्द : 'गुप्तधन', भाग २, पृ०११२, ११३

२ ,, : 'वरदान', पृ०१०, परिच्छेद २

३ ,, : ,, पृ०१६ ,, २

बालक था । आयु अभी आठ वर्ष से अधिक न थी, परन्तु लक्षण से भावी प्रतिमा झलक रही थी । दिव्य मुखमण्डल, पतले-पतले लाल अधर, तीव्र चितवन, काले-काले भ्रमर के समान बाल, उसपर स्वच्छ कपड़े । मुंशी जी ने कहा -- यहां आओ प्रताप ।`[1]

`सेवासदन` में जाह्नवी की दो लड़कियों का चित्रण --

`गंगाजली आने को तो मैके आई पर अपनी भूल पर पछताया करती थी । यह वह मैका न था, जहां उसने अपने बालपन की गुड़िया खेली थी, मिट्टी के घरौंदे बनाये थे, माता-पिता की गोद में पली थी । माता-पिता का स्वर्गवास हो चुका था, गांव में वह आदमी न दिखाई देते थे, यहां तक कि पेड़ों की जगह खेत और खेतों की जगह पेड़ लगे हुए थे । वह अपना घर भी मुश्किल से पहचान सकी और सबसे दुःख की बात यह थी कि वहां उसका प्रेम या आदर न था । उसकी भावज जाह्नवी उससे मुंह फेलाये रहती । जाह्नवी अब अपने घर बहुत कम रहती । पड़ोसियों के यहां बैठी हुई गंगाजली का दुखड़ा रोया करतीं । उसकी दो लड़कियां थीं । वह भी सुमन और शान्ता से दूर-दूर रहतीं ।`[2]

`गबन` में शिशुओं के समुदाय का चरित्र-चित्रण वर्णन प्रणाली में ही किया गया है :-

`एक आम के वृक्ष में झूला पड़ा था, बिजली की बत्तियां जल रही थीं, बच्चे झूला झूल रहे थे और रतन खड़ी झुला रही थी । हू-हक मचा हुआ था ।`[3]

`गोदान` में पांच ऐसे शिशु पात्र आये हैं, जिनका चरित्र-चित्रण वर्णन प्रणाली द्वारा प्रस्तुत हुआ है । जिनमें चार शिशु तो गोबर के ही हैं, जिनकी आयु दो वर्ष से अधिक नहीं है । `मुन्नू` गोबर धनिया का प्रथम बालक पुत्र है, उसका चित्रण इस प्रकार है --

होरी ने पूछा-- बच्चा किसको पड़ा है ?
धनिया ने प्रसन्न प्रसन्न मुख होकर बता दिया -- बिल्कुल गोबर को पड़ा है । सच ।`

----

१ प्रेमचन्द : `वरदान`, पृ० १६, परिच्छेद २
२ ,, : `सेवासदन`, पृ० १७
३ ,, : `गबन`, पृ० १०२

'रिस्ट-पुष्ट तो है ?'
'हां, अच्छा है'[1]

\+ \+ \+

'इधर सोना और रूपा भीतर गोबर का सामान खोलकर चीजों का बंटवारा करने में लगी हुई थी .... बच्चा उन चीजों की ओर लपक रहा था और चाहता था सब का सब एक साथ मुंह में डाल के ले, पर झुनिया उसे गोद से उतरने न देती थी।[2]

\+ \+ \+

'इधर सोना चुन्नू को उसका फ्राक और टोप और जूता पहना कर राजा बना रही थी, बालक इन चीजों को पहनने से ज्यादा हाथ में लेकर खेलना पसन्द करता था।'[3]

'गोबर ने शिशु को गोद में लिया' बच्चा उसकी गोदम में[4] जरा मुस्कुराया, फिर जोर से चीख उठा जैसे- कोई डरावनी चीज देख ली हो।'

मंगल गोबर का शिशु है। उस समय गोबर मालती के यहां माली का काम करता है। इस शिशु से मिस मालती को अत्यधिक स्नेह हो गया है। वह दिन-रात एक करके उस बालक की सेवा करती है। मिस्टर मेहता भी इसे प्यार करने लगे हैं।' मिस्टर मेहता को भी बालक से स्नेह हो गया था। एक दिन मालती ने उसे गोदमें लेकर उनकी मूंछ उलझा दी थी। दुष्ट ने मूंछों को ऐसा पकड़ा था कि[5] समूल ही उखाड़ लेगा। मेहता की आंखों में आंसू भर आये थे।'

---

१ प्रेमचन्द : 'गोदान', पृ० १३०
२ ,, : ,, पृ० २०६
३ ,, : ,, पृ० २०७
४ ,, : ,, पृ०३३६
५ ,, : ,, पृ०३३६

'मंगल को उनकी मूंछें उखाड़ने में कोई खास मज़ा आया था । वह खूब खिलखिला कर हंसा था और मूंछों को और ज़ोर से खींचा था ।'[1]

\+ \+ \+

'मालती बाग में आती तो उसे झुनिया का बालक धूल-मिट्टी में खेलता मिलता । एक दिन मालती ने उसे एक मिठाई दे दी । बच्चा उस दिन से परच गया । उसे देखते ही उसके पीछे लग जाता और जब तक मिठाई न लेता, उसका पीछा न छोड़ता ।'[2]

एक दिन मालती बाग में आयी तो बालक न दिखायी दिया । अतः मालती उस बीमार शिशु के पास गई । वह ज्वर से पीड़ित था ।

'सहसा बालक ने आंखें खोल दीं और मालती को खड़ी पाकर करुण नेत्रों से उसकी ओर देखा और उसका गोद के लिए हाथ फैलाये ।...... बालक मालती का गोद में आकर जैसे किसी सुख का अनुभव करने लगा । अपनी जलती हुई अंगुलियों से उसके गले की मोतियों की माला पकड़ कर अपनी ओर खींचने लगा । मालती ने नेकलेस उतार कर उसके गले में डाल दी । बालक की स्वार्थी प्रकृति इस दशा में भी सजग थी। नेकलेस पाकर अब उसे मालती की गोद में रहने की कोई जरूरत नहीं रही । यहां उसके छिन जाने का भय था झुनिया की गोद इस समय ज्यादा सुरक्षित थी ।

....

मंगल ने उस स्वर्ग को कुतूहल भरी आंखों से देखा, छत में पंखा था, रंगीन बल्ब थे, दीवारों पर तस्वीरें थीं । देर तक उन चीजों की टकटकी लगाये देखता रहा । मालती ने बड़े प्यार से पुकारा -- मंगल ।

मंगल ने मुस्कराकर उसकी ओर देखा, जैसे कह

---

१ प्रेमचन्द : 'गोदान', पृ० ३२६

२ ,, : ,, पृ० ३३३

रहा हो -- आज तो हंसा नहीं जाता मेम साहब । क्या करूं। आपसे कुछ हो सके तो कीजिए ।'[1]

लल्लू भी गोबर तथा झुनिया का शिशु है । उसके शैशवावस्था में झुनिया बीमार रहती है,अत: चिढ़कर उसे घर से बाहर निकाल देती है । बरसात में लल्लू को दस्त आता है और एक सप्ताह की बीमारी में उसका देहान्त हो जाता है ।

'बालक से भी उसेको चिढ़ होती थी । कभी-कभी वह उसे मार कर बाहर निकाल देती और अन्दर किवाड़ बन्द कर लेती । बालक रोते-रोते बेदम हो जाता ।'[2]

'मोन्ना' गोविन्दी और मिस्टर खन्ना के सबसे छोटे पुत्र का चित्रण वर्णन प्रणाली द्वारा -- 'मोन्ना उनका सबसे छोटा लड़का था और जन्म से ही दुर्बल होने के कारण उसे रोज़ एक-न-एक शिकायत बनी रहती थी । आज खांसी है तो कल बुखार, कभी पसली चल रही है,कभी हरे-पीले दस्त आ रहे हैं । दस महीने का हो गयाथा पर लगता था पांच छ: महीने का । खन्ना की धारणा हो गई थी कि यह लड़का बचेगा नहीं, इसलिए उसकी ओर से उदासीन रहते थे, पर गोविन्दी इसी कारण उसे और सब बच्चों से अधिक चाहती थी ।'[3]

उद्यान में -- 'एक आम के वृक्ष में झूला पड़ा था, बिजली की बत्तियां जल रही थीं, बच्चे झूला झूल रहे थे और रतन खड़ी झुला रही थी । हू-हक मचा हुआ था ।'[4]

\+ + +

'बच्चों ने ज्यों आदमी देखा तो सब के सब अपनी बारी के लिए उतावले होने लगे । दो उतरते चार झूले पर बैठ जाते ।'[5]

---

१ प्रेमचन्द : 'गोदान',पृ०३३४
२ ,, : ,, पृ०२०४
३ ,, : ,, पृ०[illegible]
४ ,, : 'गबन', पृ०१०२
५ ,, : ,, पृ०१०४

वर्णन द्वारा चरित्र के विकास की ओर प्रेमचन्द का ध्यान रहा है । अपने कथा-साहित्य में इस पद्धति को अपना कर अपने चरित्रों के मानसिक और भावात्मक विकास को चित्रित करने में उन्होंने सफलता पाई है । उपर्युक्त कहानियां उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत की गई हैं ।

कथोपकथन तथा वर्णन प्रणाली के रूप में

अपने पात्रों के चरित्र-चित्रण के लिए प्रेमचन्द ने कथोपकथन तथा वर्णन दोनों का सहारा लिया है । अधिकतर कहानियों में कथोपकथन तथा वर्णन दोनों ही मिले जुले हैं अतः उनके कुछ उदाहरण द्वारा ही उन्हें स्पष्ट किया जा सकता है । 'ईदगाह' शीर्षक कहानी में बालकों के चरित्र का वर्णन -- " गांव में कितनी हलचल है। ईदगाह जाने की तैयारियां हो रही हैं । किसी के कुरते में बटन नहीं है । पड़ोस के घर में सुई-तागा लेने दौड़ा जा रहा है । किसी के जूते कड़े हो गये हैं उनमें तेल डालने के लिए तेली के घर भागा जाता है । जल्दी-जल्दी बैलों को सानी पानी दे दें । ईदगाह से लौटते-लौटते दोपहर हो जायगी । तीन कोस का पैदल रास्ता फिर सैकड़ों आदमियों से मिलना,भेंटना,दोपहर के पहले लौटना असम्भव है । लड़के सबसे ज्यादा प्रसन्न हैं । किसी ने एक रोजा रखा है वह भी दोपहर तक किसी ने वह भी नहीं, लेकिन ईदगाह जाने की खुशी उनके हिस्से की चीज है । रोजे बड़े बूढ़ों के लिए होंगे । इनके लिए तो ईद है । रोज ईद का नाम रटते थे । आज वह भी आ गई । अब जल्दी पड़ी है कि लोग ईदगाह क्यों नहीं चलते । इन्हें गृहस्थी की चिन्ताओं से क्या प्रयोजन ? सेवैयों के लिए दूध और शक्कर घर में है या नहीं उनकी बला से । ये तो सेवई खायेंगे । वह क्या जाने कि अब्बा जान क्यों बदहवास चौधरी कयामत अली के घर दौड़े जा रहे हैं । उन्हें क्या खबर कि चौधरी आज आंखें बदल लें तो यह सारी ईद मुहर्रम हो जाय । उनकी अपनी जेबों में तो कुबेर का धन भरा हुआ है । बार-बार जेब से अपना खजाना निकाल कर गिनते हैं और खुश होकर फिर रख लेते हैं । महमूद गिनता है-- एक, दो, दस बारह । उसके पास बारह पैसे हैं,मोहसिन के पास एक ,दो ,तीन,आठ नौ ,पन्द्रह पैसे हैं । इन्हीं अनगिनती पैसों से अनगिनती चीजें लायेंगे --

खिलौने, मिठाइयां, बिगुल, गेंद और जाने क्या -क्या और सबसे ज्यादा प्रसन्न है हामिद। वह चार-पांच साल का गरीब सूरत दुबला-पतला लड़का। जिसका बाप गत वर्ष हैजे की भेंट हो गया और मां न जाने क्यों पीली होती होती एक दिन मर गई। किसी को पता भी न चला कि क्या बीमारी है? कहती भी तो कौन सुनने वाला था। दिल पर जो कुछ बीतती, वह दिल में ही सहती थी और जब न सहा गया तो संसार से विदा हो गई। अब हामिद अपनी बूढ़ी दादी अमीना की गोद में सोता है और उतना ही प्रसन्न है। उसके अब्बाजान रुपया कमाने गये हैं। बहुत-सी थैलियां लेकर आयेंगे। अम्मीजान अल्लामियां के घर से उसके लिए बड़ी अच्छी-अच्छी चीजें लाने गई हैं, इसलिए हामिद प्रसन्न है। आशा तो बड़ी चीज़ है, और फिर बच्चों की आशा। उसकी कल्पना तो राई का पर्वत बना लेती है। हामिद के पांव में जूते नहीं हैं। सिर पर एक पुरानी धुरानी टोपी है जिसका गोटा काला पड़ गया है, फिर भी वह प्रसन्न है। जब उसके अब्बाजान थैलियां और अम्मी जान नियामतें लेकर आयेंगी तो वह दिल के अरमान निकाल लेगा। तब देखेगा महमूद मोहसिन, नूरे और सम्मी कहां से उतने पैसे निकालेंगे। अभागिन अमीना अपनी कोठरी में बैठी रो रही है। आज आबिद होता तो क्या इसी तरह ईद आती और चली जाती। इस अन्धकार और निराशा में वह डूबी जा रही थी। किसने बुलाया था इस निगोड़ी ईद को। इस घर में इसका काम नहीं, लेकिन हामिद। उसे किसी के मरने-जीने से क्या मतलब? उसके अन्दर प्रकाश है बाहर आशा। विपत्ति सारा दल बल ले कर आये हामिद की आनन्द भरी चितवन उसका विध्वंस कर देगी।[1]

इन पंक्तियों में लेखक ने बड़े ही कौशल से वर्णन द्वारा हामिद का चित्र उतारा है। वर्णन बड़े सजीव और प्रभावोत्पादक हैं। अब मैं कथोपकथन द्वारा हामिद तथा उसके साथियों के चरित्र की विशिष्टताओं का परिचय देने का प्रयत्न करूंगी --

मोहसिन कहता है-- मेरा भिश्ती रोज पानी दे जायगा। सांझ सवेरे।
महमूद -- और मेरा सिपाही घर का पहरा देगा कोई चोर आयेगा तो फौरन बन्दूक फेर कर देगा।

---
1 प्रेमचन्द : 'मानसरोवर', भाग 1, पृ० 35

नूरे -- और मेरा वकील खूब मुकदमा लड़ेगा ।

सम्मी -- और मेरी धोबिन रोज़ कपड़े धोएगी ।

हामिद खिलौने की निन्दा करता है--

मिट्टी के तो हैं, गिरें तो चकनाचूर, लेकिन ललचाई हुई आंखों से खिलौनों को देख रहा है और चाहता है कि जरा देर के लिए हाथ में ले सकता । . . .

मोहसिन कहता है-- 'हामिद, रेवड़ी ले जा कितनी खुशबूदार है ।

हामिद को सन्देह हुआ, यह केवल क्रूर विनोद है । मोहसिन इतना उदार नहीं है । लेकिन यह जानकर भी उसके पास जाता है .....

मोहसिन -- अच्छा अब की ज़रूर देंगे हामिद, अल्ला कसम ले जा ।

हामिद -- रखे रहो क्या मेरे पास पैसे नहीं हैं ?

सम्मी -- तीन ही पैसे तो हैं । तीन पैसे में क्या-क्या लेंगे ।

महमूद -- हमसे गुलाबजामुन ले जा हामिद । मोहसिन बड़ा बदमाश है ।

हामिद -- मिठाई कौन बड़ी नेमत है । किताब में इसकी बुराइयां लिखी हैं ।

मोहसिन -- लेकिन दिल में कह रहे होंगे कि मिले तो खा लें । अपने पैसे खर्च हो जायेंगे तो ललचा-ललचा कर खायेगा ।'[1]

एक दूसरे स्थल पर वर्णन तथा कथोपकथन द्वारा इन शिशुओं का चित्रण इसप्रकार है --

'अब बालकों के दो दल हो गये हैं । मोहसिन महमूद, सम्मी और नूरे एक तरफ हैं, हामिद अकेला व दूसरी तरफ । शास्त्रार्थ हो रहा है । सम्मी तो विधर्मी हो गया । दूसरे पक्ष में जा मिला, लेकिन मोहसिन, महमूद और नूरे भी हामिद से एक-एक, दो-दो साल बड़े होने पर हामिद के आघातों से आतंकित हो उठे हैं । उसके पास न्याय का बल है और नीति की शक्ति । एक ओर मिट्टी है दूसरी ओर लोहा । जो इस वक्त अपने

----

१ प्रेमचन्द : 'मानसरोवर भाग १', पृ०४२९

को फौलाद कह रहा है वह अजेय है,घातक है । अगर कोई शेर आ जाए तो मियां भिश्ती के छक्के छूट जाएं, मियां सिपाही मिट्टी की बन्दूक छोड़कर भागें वकील साहब की नानी मर जाए चोगे में मुंह छिपाकर जमीन में लेट जाए । मगर यह चिमटा यह बहादुर , यह रुस्तमें हिन्द लपक कर शेर की गर्दन पर सवार हो जायेगा और उसकी आँखें निकाल लेगा ।

हामिद ने आखिरी जोर लगाकर कहा -- भिश्ती को एक डांट बतायेगा तो दौड़ा हुआ पानी लाकर उसके द्वार पर छिड़कने लगेगा ।

मोहसिन परास्त हो गया पर महमूद ने कुमुक पहुंचाई-- अगर बच्चा पकड़ जाए तो अदालत में बंधे-बंधे फिरेंगे । तब तो वकील साहब के ही पैरों पड़ेंगे ।

हामिद इस प्रबल तर्क का जवाब न दे सका । उसने पूछा हमें पकड़ने कौन आयेगा ?

नूरे ने अकड़ कर कहा-- यह सिपाही बन्दूक वाला ।

हामिद ने मुंह चिढ़ाकर कहा-- यह बेचारे इस बहादुर रुस्तमें हिन्द को पकड़ेंगे । अच्छा लाओ, अभी ज़रा कुश्ती हो जाए । इ इसकी सूरत देखकर दूर से भागेंगे । पकड़ेंगे क्या बेचारे ।

मोहसिन को एक नई चोट सूझ गई-- तुम्हारे चिमटे का मुंह रोज आग में जलेगा ।

उसने समझा था कि हामिद ला जवाब हो जाएगा, लेकिन यह बात न हुई । हामिद ने तुरन्त जवाब दिया--आग में बहादुर ही कूदते हैं जनाब, तुम्हारे यह वकील, सिपाही और भिश्ती लौंडियों की तरह घर में घुस जायेंगे । आग में कूदना वह काम है जो यह रुस्तमें हिन्द ही कर सकता है ।

'सच्चाई का उपहार' शीर्षक कहानी में बाबूबहादुर तथा उसके साथियों का चित्रण इस प्रकार है :--

दस मिनट में हरा-भरा बाग नष्ट हो

गया । तब यह लड़के शीघ्रता से निकले, लेकिन दरवाजे तक आये थे कि उन्हें अपने सहपाठी की सूरत दिखाई दी । यह एक दुबला-पतला दरिद्र और चतुर लड़का था । उसका नाम बाजबहादुर था । बड़ा गम्भीर और शान्त लड़का था । उधम पार्टी के लड़के उससे जलते थे उसे देखते ही उनका खून सूख गया ।....

जगत सिंह उनका मुखिया था । आगे बढ़ कर बोला -- बाजबहादुर सवेरे कैसे आ गए ? हमने तो आज तुम लोगों के गले की फांसी छुड़ा दी । ....

बाजबहादुर -- नहीं, आज मुझे घर पर पाठ याद करने का अवकाश नहीं मिला । यहीं बैठकर पढ़ूंगा ।

जगत सिंह -- अच्छा मुंशी जी से तो न कहोगे ?

बाजबहादुर-- मैं स्वयं कुछ न कहूंगा, लेकिन उन्होंने मुझसे पूछा तो ?

जगत सिंह -- कह देना मुझे नहीं मालूम । अगर तुमने चुगली खाई और हमारे ऊपर मार पड़ी तो हम तुम्हें पीटे बिना न छोड़ेंगे ।

बाजबहादुर -- हमने कह दिया कि ब चुगली न खायेंगे, लेकिन मुंशी जी ने पूछा तो झूठ भी न बोलेंगे ।

जयराम -- तो हम तुम्हारी हड्डियां भी तोड़ देंगे ।

बाजबहादुर -- इसका तुम्हें अधिकार है ।[1]

छुट्टी होने के बाद बाजबहादुर घर की तरफ चला । रास्ते में एक अमरूद का बाग था । वहां जगत सिंह और जयराम कई लड़कों के साथ खड़े थे । बाजबहादुर चौंका, समझ गया कि ये लोग मुझे छेड़ने पर उतारू हैं । किन्तु बचने का कोई उपाय न था । कुछ झिझकता हुआ आगे बढ़ा । जगत सिंह बोला -- आओ-लाला बहुत राह दिखाई आओ सफ़ाई का

---

१ प्रेमचन्द : 'मानसरोवर'.भाग १.पृ०४५-४६.नवां संस्करण

इनाम लेते जावो ।

बाज बहादुर -- रास्ते से हट जाओ मुझे जाने दो ।

जयराम -- ज़रा सच्चाई का मजा तो चखते जाइए ।

बाजबहादुर -- मैंने तुमसे कह दिया था कि जब मेरा नाम लेकर पूछेंगे तो मैं बता दूंगा ।

जयराम -- हमने भी तो कह दिया था कि तुम्हें इस काम का इनाम दिए बिना न छोड़ेंगे ।[१]

मिठाई के लोभ में बालक किस प्रकार सारी बातें सच-सच निष्कपट भाव से बतादेता है, इस सिलसिले में फेंकू का चित्रण इस प्रकार कथोपकथन द्वारा हुआ है --

'चिन्तामणि ने पीछे फिर कर यह दृश्य देखा तो रुक गये और फेंकूराम से पूछा -- क्यों बेटा, कहां नेवता है ?

फेंकू -- बता दें, तो हमें मिठाई दोगे न ?

चिन्ता० -- हां दूंगा, बतावो ।

फेंकू -- रानी के यहां ?

चिन्ता० -- कहां की रानी ?

फेंकू -- यह मैं नहीं जानता कोई बड़ी रानी है ।

....

रानी ने भण्डारी को बुलाकर कहा -- इन छोटे-छोटे तीनों बच्चों को खिला दो । ये बेचारे क्यों भूखे मरें । क्यों फेंकूराम , मिठाई खावोगे ?

फेंकू -- इसीलिए तो आए हैं ।

रानी -- कितनी मिठाई खावोगे ?

फेंकू -- बहुत सी (हाथों से बताकर) इतनी ।

रानी -- अच्छी बात है । जितनी खावोगे उतनी मिलेगी, पर जो बात मैं पूछूं, वह बतानी पड़ेगी । बतावोगे न ?

फेंकू -- हां बताऊंगा, पूछिए ।

---

१ प्रेमचन्द : 'मानसरोवर' ,भाग ५,पृ० ९८

रानी -- झूठ बोले तो एक मिठाई भी न मिलेगी । समझ गये ।

फेंकू -- मत दीजिएगा । मैं झूठ बोलूंगा ही नहीं ।

रानी -- अपने पिता का नाम बताओ ....

फेंकू ने धीरे से कोई नाम लिया इसपर[१] पंडित जी ने उसे इतनी ज़ोर से डांटा कि उसकी आधी बात मुंह में रह गई ।

'गुप्तधन' भाग १ में 'अनाथ लड़की' शीर्षक कहानी में रोहिणी बालिका का चरित्र-चित्रण कथोपकथन तथा वर्णन दोनों में हुआ है --

'सेठ पुरुषोत्तमदास पूना की सरस्वती पाठशाला का मुआयना करने के बाद बाहर निकले तो एक लड़की ने दौड़ कर उनका दामन पकड़ लिया । सेठ जी रुक गये और मुहब्बत से उसकी तरफ देखकर पूछा -- तुम्हारा क्या नाम है ?

लड़की ने जवाब दिया -- रोहिणी ।

सेठ जी ने उसे गोद में उठा लिया और बोले -- तुम्हें कुछ इनाम मिला ?

लड़की ने उनकी तरफ बच्चों जैसी गम्भीरता से देखकर कहा-- तुम चले जाते हो, मुझे रोना आता है, मुझे भी साथ लेते चलो ।

सेठ जी ने हंसकर कहा-- मुझे बड़ी दूर जाना है, तुम कैसे चलोगी ?

रोहिणी ने प्यार से अब उनकी गर्दन में हाथ डाल दिए और बोली --' जहां तुम जाओगे वहीं मैं भी चलूंगी ।' मैं तुम्हारी बेटी हूंगी ।

मदरसे के अफसर ने आगे बढ़कर कहा-- इसका बाप साल भर हुआ नहीं रहा । मां कपड़े सीती है, बड़ी मुश्किल से गुज़र होती है ।

---

१ प्रेमचन्द : 'मानसरोवर', भाग ५, पृ० ८८

सेठ जी के स्वभाव में करुणा बहुत थी । यह सुनकर उनकी आंखें भर आईं । उस भोली प्रार्थना में वह दर्द था जो पत्थर से दिल को पिघला सकता है । बेकसी और यतीमी को इससे ज्यादा दर्दनाक ढंग से ज़ाहिर करना नामुमकिन था । उन्होंने सोचा -- इस नन्हें से दिल में न जाने क्या-क्या अरमान होंगे । और लड़कियां अपने खिलौने दिखाकर कहती होंगी, यह मेरे बाप ने दिया है । वह अपने बाप के साथ मदरसे आती होंगी, उसके साथ मेलों में जाती होंगी और उनकी दिलचस्पियों का ज़िक्र करती होंगी । यह सब सब बातें सुन-सुनकर इस भोली लड़की को भी ख्वाहिश होती होगी मेरे बाप होता।मां की मुहब्बत में गहराई और आत्मीयता होती है, जिसे बच्चे समझ नहीं सकते । बाप की मुहब्बत में खुशी और चाव होता है,जिसे बच्चे खूब समझते हैं ।

सेठ जी ने रोहिणी को प्यार से गले लगा लिया और बोले --`अच्छा मैं तुम्हें अपनी बेटी बनाऊंगा । लेकिन खूब जी लगाकर पढ़ना । अब छुट्टी का वक्त आ गया है, मेरे साथ आओ,तुम्हारे घर पहुंचा दूं ।

यहकहकर उन्होंने रोहणी को अपनी मोटर कार में बिठा लिया । रोहिणी ने बड़े इत्मीनान और बड़े गर्व से अपनी सहेलियों की तरफ देखा । उसकी बड़ी-बड़ी आंखें खुशी से चमक रही थीं और चेहरा चांदनी की रात की तरह खिला हुआ था ।[१]

\+ \+ \+

`मगर रोहिणी को जब उसने उठाकर प्यार से चूमा तो ज़रा देर के लिए उसकी आंखों में उम्मीद और ज़िन्दगी की झलक दिखाई दी । मुरझाया हुआ फूल खिल गया । बोली --आज तू इतनी देर तक कहां रही, मैं तुझे ढूंढने पाठशाला गई थी ।

रोहिणी ने हुमक कर कहा -- मैं मोटर कार पर बैठकर बाजार गई थी । वहां से बहुत अच्छी-अच्छी चीजें लाई हूं । यह देखो कौन खड़ा है ?

---

१ प्रेमचन्द : `गुप्तधन` भाग १,पृ०१४७-१४८

माँ ने सेठ जी की तरफ ताका और लजाकर सिर झुका लिया ।

बरामदे में पहुंचते ही रोहिणी मां की गोद से उतर कर सेठ जी के पास गई और अपनी मां को यकीन दिलाने के लिए भोलेपन से बोली-- क्यों तुम मेरे बाप हो न ?

सेठ जी ने उसे प्यार करके कहा-- हां, तुम मेरी प्यारी बेटी हो ।

रोहिणी ने उनके मुंह की तरफ याचना भरी आंखों से देखकर कहा -- अब तुम रोज यहीं रहा करोगे ?

सेठ जी ने उसके बाल सुलझा कर जवाब दिया --मैं यहां रहूंगा तो काम कौन करेगा ? मैं कभी-कभी तुम्हें देखने आया करूंगा, लेकिन वहां से तुम्हारे लिए अच्छी-अच्छी चीजें भेजूंगा ।`[1]

`गुप्तधन` भाग २ में `नादान दोस्त` सम्पूर्ण कथा केशव और श्यामा के बाल सुलभ जिज्ञासा और कौतूहल को लेकर है । सम्पूर्ण कहानी में कथोपकथन और वर्णन द्वारा ही इन दोनों शिशु का चित्रण है ।

केशव-श्यामा का चरित्र-चित्रण, कथोपकथन तथा वर्णन प्रणाली में--

"केशव के घर में कार्निस के ऊपर एक चिड़िया ने अण्डे दिए थे । केशव और उसकी बहन श्यामा दोनों बड़े ध्यान से चिड़िया को वहां आते-जाते देखा करते । सवेरे दोनों आंखें मलते कार्निस के सामने पहुंच जाते और चिड़ा और चिड़िया दोनों को वहां बैठा पाते । उनको देखने में दोनों बच्चों को न मालूम क्या मज़ा मिलता, दूध और जलेबी की सुध भी न रहती थी । दोनों के दिल में तरह - तरह के सवाल उठते । अण्डे कितने बड़े होंगे, किस रंग के होंगे ? कितने होंगे ? क्या खाते होंगे ? उनमें बच्चे किस तरह निकल आयेंगे बच्चों के पर कैसे निकलेंगे ? घोंसला कैसा है?

---

१ प्रेमचन्द : `गुप्तधन`, भाग १, पृ०१९८-१९९

लेकिन इन बातों का जवाब देने वाला कोई नहीं था । न अम्मां को घर के काम-धन्धों से फ़ुर्सत थी न बाबू जी को पढ़ने-लिखने से । दोनों बच्चे आपस ही में सवाल-जवाब करके अपने दिल को तसल्ली दे लिया करते थे ।

श्यामा-- क्यों भय्या, बच्चे निकल कर फुर्र से उड़ जायगे ?

केशव (विद्वानों जैसे गर्व से) -- नहीं री,पगली, पहले पर निकलेंगे । बग़ैर परों के बेचारे कैसे उड़ेंगे ?

श्यामा -- बच्चों को क्या खिलायेगी ० बेचारी ?

केशव इस पेचीदा सवाल का जवाब कुछ न दे सकता था ।

इस तरह तीन-चार दिन गुजर गये । दोनों बच्चों की जिज्ञासा दिन-दिन बढ़ती जाती थी । अण्डों को देखने के लिए वे अधीर हो उठते थे । उन्होंने अनुमान लगाया कि अब ज़रूर बच्चे निकल आये होंगे । बच्चों के चारे का सवाल उनके सामने आ खड़ा हुआ । चिड़िया बेचारी इतना दाना कहां पायेगी कि सारे बच्चों का पेट भरे । गरीब बच्चे भूख के मारे चूं-चूं करके मर जायगे ।

इसी मुसीबत का अन्दाजा करके दोनों घबरा उठे । दोनों ने फैसला किया कि कार्निस पर थोड़ा सा दाना रख दिया जाय । श्यामा खुश होकर बोली-- 'तब तो चिड़ियों को चारे के लिए कहीं उड़कर न जाना पड़ेगा न ?

केशव -- नहीं, तब क्यों जायेंगी ?

श्यामा -- क्यों,भय्या, बच्चों को धूप न लगती होगी ?

केशव का ध्यान इस तकलीफ़ की तरफ़ न गया था । बोला-- ज़रूर तकलीफ़ हो रही होगी । बेचारे प्यास के मारे तड़पते होंगे । ऊपर छाया भी तो नहीं ।

आखिर यही फैसला हुआ कि घोंसले के ऊपर कपड़े की छत बना देनी चाहिए । पानी की प्याली और थोड़े से चावल रख देने का प्रस्ताव भी स्वीकृत हो गया ।

दोनों बच्चे बड़े चाव से काम करने लगे । श्यामा मां की आंख बचाकर मटके से चावल निकाल लाई । केशव ने पत्थर की

प्याली का तेल चुपके से जमीन पर गिरा दिया और उसे खूब साफ करके उसमें पानी भरा ।

अब चांदनी के लिए कपड़ा कहां से आये ? फिर ऊपर बगैर छड़ियों के कपड़ा ठहरेगा कैसे और छड़ियां खड़ी होंगी कैसे ?

केशव बड़ी देर तक इसी उधेड़-बुन में रहा आखिरकार उसने यह मुश्किल भी हल कर दी । श्यामा से बोला -- जाकर कूड़ा फेंकने वाली टोकरी उठा लाओ अम्मां जी को मत दिखाना ।

श्यामा -- वह तो बीच से फटी हुई है, उसमें से धूप न आयेगी ?

केशव ने झुंझलाकर कहा -- तू टोकरी तो ला, मैं उसका सूराख बन्द करने की कोई हिकमत निकालूंगा ।

श्यामा दौड़कर टोकरी उठा लाई ।

केशव ने उसके सूराख में थोड़ा-सा कागज ठूंस दिया और तब टोकरी को एक टहनी से टिका कर बोला -- देख, ऐसे ही घोंसले पर उसकी आड़ कर दूंगा । तब कैसे धूप जायेगी ।

श्यामा ने दिल में सोचा , भइया कितने चालाक हैं ।

(२)

गर्मी के दिन थे । बाबू जी दफ्तर गए हुए थे । अम्मां दोनों बच्चों को कमरे में सुलाकर खुद सो गई थीं । लेकिन बच्चों की आंखों में नींद कहां? अम्मां जी को बहलाने के लिए दोनों दम रोके, आँखें बन्द किए मौके का इन्तजार कर रहे थे । ज्योंही मालूम हुआ कि अम्मां जी अच्छी तरह से सो गई, दोनों चुपके से उठे और बहुत धीरे-धीरे दरवाजे की सिटकनी खोलकर बाहर निकल आये । अण्डों की हिफाजत की तैयारियां होने लगीं । केशव कमरे से एक स्टूल उठा लाया, लेकिन जब उससे काम न चला तो नहाने की चौकी लाकर स्टूल के नीचे रखी और डरते-डरते स्टूल पर चढ़ा ।

श्यामा दोनों हाथों से स्टूल पकड़े हुए थी। स्टूल की चारों टांगें बराबर न होने के कारण जिस तरफ ज्यादा दबाव पाता था, जरा-सा हिल जाता था, उस वक्त केशव को कितनी तकलीफ उठानी पड़ती थी, यह उसी का दिल जानता था। दोनों हाथों से कार्निस पकड़ लेता और श्यामा को दबी आवाज से डांटता-- अच्छी तरह पकड़, वर्ना उतर कर बहुत मारूंगा। बेचारी श्यामा का दिल तो ऊपर कार्निस पर था। बार-बार उसका ध्यान उधर चला जाता और हाथ ढीले पड़ जाते।

केशव ने ज्योंही कार्निस पर हाथ रखा, दोनों चिड़ियां उड़ गईं। केशव ने देखा, कार्निस पर थोड़े तिनके बिछे हुए हैं और ऊपर तीन अण्डे पड़े हैं। जैसे घौंसले उसने पेड़ पर देखे थे वैसा कोई घौंसला नहीं है। श्यामा ने नीचे से पूछा-- के बच्चे हैं भइया ?

केशव -- तीन अण्डे हैं, अभी बच्चे नहीं निकले।

श्यामा -- जरा हमें दिखा दो भइया, कितने बड़े हैं?

केशव -- दिखा दूंगा, पहले जरा चिथड़े ले आ, नीचे बिछा दूं। बेचारे अण्डे तिनकों पर पड़े हैं।

श्यामा दौड़कर अपनी पुरानी धोती फाड़कर एक टुकड़ा लाई। केशव ने झुककर कपड़ा ले लिया, उसके कई तह कर उसने एक गद्दी बनाई और तिनकों पर बिछाकर तीनों अण्डे धीरे से उस पर रख दिए।

श्यामा ने फिर कहा-- हमको भी दिखा दो भइया।

केशव -- दिखा दूंगा, पहले जरा वह टोकरी तो दे दो, ऊपर छाया कर दूं।

श्यामा ने टोकरी के नीचे से थमा दी और बोली -- अब तुम उतर आओ, मैं भी तो देखूं।

केशव ने टोकरी को एक टहनी से टिका कर कहा -- जा, दाना और पानी की प्याली ले आ, मैं उतर आऊं तो तुझे दिखा दूंगा।

श्यामा प्याली और चावल भी लाई ।

केशव ने टोकरी के नीचे दोनों चीजें रख दी और आहिस्ता से उतर आया ।

श्यामा ने गिड़गिड़ाकर कहा -- अब हमको भी चढ़ा दो भइया ।

केशव-- तू गिर पड़ेगी ।

श्यामा-- न गिरूंगी भइया, तुम नीचे से पकड़े रहना ।

केशव -- न भइया, कहीं तू गिर-गिरा पड़े तो अम्मां जी मेरी चटनी ही कर डालेंगी । कहेंगी कि तूने ही चढ़ाया था । क्या करेगी देख कर? अब अण्डे बड़े आराम से हैं । जब बच्चे निकलेंगे, तो उनको पालेंगे ।

दोनों चिड़ियां बार-बार कार्निस पर आती थीं और बगैर बैठे ही उड़ जाती थीं । केशव ने सोचा, हम लोगों के डर से नहीं बैठतीं । स्टूल उठाकर कमरे में रख आया, चौकी जहां की थी वहां रख दी ।

श्यामा ने आंखों में आंसू भर कर कहा -- तुमने मुझे नहीं दिखाया, मैं अम्मां जी से कह दूंगी ।

केशव -- अम्मां जी से कहेगी तो बहुत मारूंगा, कहे देता हूं ।

श्यामा -- तो तुमने मुझे दिखाया क्यों नहीं ?

केशव -- और गिर पड़ती तो चार सर न हो जाते ।

श्यामा -- हो जाते, हो जाते । देख लेना कह दूंगी ।

इतने में कोठरी का दरवाजा खुला और मां ने धूप से आंखों को बचाते हुए कहा -- तुम दोनों बाहर कब निकल आए? मैंने कहा न था कि दोपहर को न निकलना ? किसने किवाड़ खोला ?

किवाड़ केशव ने खोला था, लेकिन श्यामा ने मां से यह बात नहीं कही । उसे डर लगा कि भइया पिट जायेंगे,। केशव दिल में कांप रहा था कि श्यामा कहीं कह न दे । अण्डे न दिखाये थे, इससे अब उसको श्यामा पर विश्वास न था । श्यामा सिर्फ मुहब्बत के मारे चुप थी या इस कसूर में हिस्सेदार होने की वजह से, इसका फैसला नहीं किया जा सकता ।

शायद दोनों ही बातें थीं ।

मां ने दोनों को डांट-डपट कर फिर कमरे में बन्द कर दिया आप धीरे-धीरे उन्हें पंखा झलने लगीं । अभी सिर्फ दो बजे थे । बाहर तेज लू चल रही थी । अब दोनों बच्चों को नींद आ गई थी ।

(३)

चार बजे यकायक श्यामा की नींद खुली । किवाड़ खुले हुए थे । वह दौड़ी हुई कार्निस के पास आई और ऊपर की तरफ ताकने लगी । टोकरी का पता न था । संयोग से उसकी नजर नीचे गई और वह उल्टे पांव दौड़ती हुई कमरे में जाकर जोर से बोली -- भइया अण्डे तो नीचे पड़े हैं ,बच्चे उड़ गये ।

केशव घबराकर उठा और दौड़ा हुआ बाहर आया तो क्या देखता है कि तीनों अण्डे नीचे टूटे पड़े हैं और उनसे कोई चूने की-सी चीज बाहर निकल आई है । पानी की प्याली भी एक तरफ टूटी पड़ी है ।

उसके चेहरे का रंग उड़ गया । सहमी हुई आंखों से जमीन की तरफ देखने लगा ।

केशव ने करुण स्वर में कहा-- अण्डे तो फूट गये ।

'और बच्चे कहां गए ?'

केशव -- तेरे सर में । देखती नहीं है अण्डों में से उजला-उजला पानी निकल आया है । वही तो दो चार दिन में बच्चे बन जाते ।

मां ने सोटी हाथ में लिए हुए पूछा-- तुम दोनों वहां धूप में क्या कर रहे हो ?

श्यामा ने कहा -- अम्मां जी, चिड़िया के अण्डे टूटे पड़े हैं ।

मां ने आकर टूटे हुए अण्डों को देखा और गुस्से में बोली-- तुम लोगों ने अण्डों को छुआ होगा ।

अब तो श्यामा को भइया पर ज़रा भी तरस न आया । उसी ने शायद अण्डों को इस तरह रख दिया कि वह नीचे गिर पड़े । इसकी उसे सजा मिलनी चाहिए । बोली-- इन्होंने अण्डों को छेड़ा था अम्मां जी ।

मां ने केशव से पूछा-- क्यों रे ?

केशव भीगी-बिल्ली बना खड़ा रहा ।

मां -- और क्या करती । केशव के सिर पर इसका पाप पड़ेगा । हाय, हाय, तीन जानें ले लीं दुष्ट ने ।

केशव रोनी सूरत बनाकर बोला -- मैंने तो सिर्फ अण्डों को गद्दी पर रख दिया था, अम्मां जी ।

मां को हंसी आ गई । मगर केशव को कई दिनों तक अपनी गलती पर अफसोस होता रहा । अण्डों की हिफाज़त करने के जोश में उसने उसका सत्यानाश कर डाला । इसे याद करके वह कभी-कभी रो पड़ता था ।

दोनों चिड़ियां वहां फिर न दिखाई दीं[1]।

'गुप्तधन' भाग २ में भी 'खोनी बन्दर' शीर्षक कहानी में 'बालकों के समूह' का चित्रण कथोपकथन तथा वर्णन द्वारा हुआ है--'तमाशा ख़तम हो जाने पर वह सबको सलाम करता था, लोगों के पैर पकड़ कर पैसे वसूल करता था । मन्नू का कटोरा पैसों से भर जाता था । इसके उपरान्त कोई मन्नू को एक अमरूद खिला देता, कोई उसके सामने मिठाई फेंक देता । लड़कों का तो उसे देखने से जी ही

---

१ प्रेमचन्द : 'गुप्तधन' । भाग २,पृ०४३-४८

न मरता था । वे अपने-अपने घर से दौड़-दौड़ कर रोटियां लाते और उसे खिलाते थे । मुहल्ले के लोगों के लिए मन्नू मनोरंजन की एक सामग्री था ।[1]

'यह कौतुक देखकर मुहल्ले के बालक जमा हो गये, और शोर मचाने लगे --

औ बन्दरवा लोय लाय, बाल उखाड़ूं टोय टाय
औ बन्दरवा तेरा मुंह है लाल, पिचके पिचके तेरे गाल ।

मर गई नानी बंदर की ,
टूटी टांग मुछन्दर की ।

मन्नू को इस शोर-गुल में बड़ा आनन्द आ रहा था । वह आधे फल खा-खा कर नीचे गिराता था और लड़के लपक- लपक कर चुन लेते और तालियां बजा बजाकर कहते थे --

बन्दर मामू और
कहां तुम्हारा ठौर ।[2]

\+ + +

अब नटखट लड़कों को बारी आई । कुछ घर के और कुछ बाहर के लड़के जमा हो गये । कोई मन्नू को मुंह चिढ़ाता कोई उसपर पत्थर फेंकता और कोई उसको मिठाई खिलाकर ललचाता था।[3]

\+ + +

इस प्रकार कई महीने बीत गये । एक दिन मन्नू गली में बैठा हुआ था, इतने में लड़कों का शोर सुनाई दिया । उसने देखा एक बुढ़िया नंगे सिर, नंगे बदन, एक चिथड़ा कमर में लपेटे, सिर के बाल छिटकाये भुतनियों की तरह चली आ रही है, और कई लड़के उसके पीछे पत्थर फेंकते, 'पगली नानी ! पगली नानी ! की हांक लगाते तालियाँ बजाते चले

---

१ प्रेमचन्द : 'गुप्तधन',भाग२,(मिठाई बन्दर) ,पृ०१३८,परिच्छेद १,अध्याय १
२ ,, : ,, ,, पृ०१३६
३ ,, : ,, ,, पृ०१४१

आ रहे हैं। वह रह-रहकर रुक जाती और लड़कों से कहती है--` मैं पगली नहीं हूं, मुझे पगली क्यों कहते हो ?`

आखिर बुढ़िया जमीन पर बैठ गई और बोली-- बताओ मुझे पगली क्यों कहते हो ? ....

एक लड़के ने कहा -- तू कपड़े क्यों नहीं पहनती? तू पागल नहीं तो और क्या है ?

बुढ़िया -- कपड़े जाड़े में सर्दी से बचाने के लिए पहने जाते हैं। आजकल तो गर्मी है।

लड़का -- तुझे शर्म नहीं आती?

बुढ़िया -- शर्म किसे कहते हैं बेटा, इतने साधु-सन्यासी नंगे रहते हैं उनको पत्थर से क्यों नहीं मारते ?

लड़का -- वे तो मर्द हैं।

बुढ़िया -- क्या शर्म औरतों ही के लिए है, मर्दों को शर्म नहीं आनी चाहिए ?

लड़का -- तुझे जो कोई कुछ दे देता है, उसे तू खा लेती है। तू पागल नहीं तो और क्या है ?

बुढ़िया -- इसमें पागलपन की क्या बात है बेटा ? भूख लगती है, पेट भर लेती हूं।

लड़का -- तुझे कुछ विचार नहीं है किसी के हाथ की चीज खाते घिन नहीं आती ?

बुढ़िया -- घिन किसे कहते हैं बेटा, मैं भूल गई।

लड़का -- सभी को घिन आती है, क्या बता दूं, घिन किसे कहते हैं।

बुढ़िया ने चौंक कर मन्नू को देखा, पहचान गई। उसने उसे छाती से लगा लिया।[१]`

+ + +

---

१ प्रेमचन्द : `गुप्तधन भाग २`, पृ० १९४-१९६

मन्नू को गोद में लेते ही बुधिया को अनुभव हुआ कि मैं नग्न हूं । मारे शर्म के वह खड़ी न रह सकी । बैठकर एक लड़के से बोली -- बेटा, मुझे कुछ पहनने को दोगेन

लड़का -- तुझे तो लाज ही नहीं आती न ?

बुढ़िया -- नहीं बेटा, अब तो आ रही है । मुझे न जाने क्या हो गयाथा ।

लड़कों ने फिर `पगली पगली` का शोर मचाया तो उसने पत्थर फेंककर लड़कों को मारना शुरू किया । उनके पीछे दौड़ी ।

एक लड़के ने पूछा -- अभी तो तुझे क्रोध नहीं आता था । अब क्यों आ रहा है ,

बुढ़िया -- क्या जाने क्यों अब क्रोध आ रहा है । फिर किसी ने पगली कहा तो बन्दर से कटवा दूंगी ।

एक लड़का दौड़कर फटा हुआ कपड़ा ले आया। बुढ़िया ने कपड़ा पहन लिया, बाल समेट लिया । दूसरा लड़का-- तू पैसे क्यों हाथ से फेंक देती है? कोई कपड़े देता है तो क्यों छोड़कर चल देती है ? पागल नहीं तो और क्या है ?

बुढ़िया -- पैसे कपड़े लेकर क्या करूं बेटा ?

लड़का -- और लोग क्या करते हैं ? पैसे रुपये का लालच सभी को होता है ।

बुढ़िया -- लालच किसे कहते हैं बेटा, मैं भूल गई ।

लड़का -- इसी से तो तुझे पगली नानी कहतेहैं । तुझे न लोभ है, न घिन है, न विचार है न लाज है । ऐसों ही को पागल कहते हैं ।

बुढ़िया -- तो यही कहो मैं पगली हूं ।

लड़का -- तुझे क्रोध क्यों नहीं आता ?

बुढ़िया -- क्या जाने बेटा, मुझे तो क्रोध नहीं आता । क्या किसी को क्रोध भी आता है ? मैं तो भूल गई ।

कई लड़कों ने इस पर `पगली` पगली शोर मचाया और बुढ़िया उसी तरह शान्त भाव से आगे चली । जब वह निकट आई तो मन्नू उसे पहचान गया । यह तो मेरी बुधिया है । वह दौड़ कर उसके पैरों

से लिपट गया[१]।

इस प्रकार के कथोपकथन तथा वर्णन प्रणाली द्वारा वस शिशु पात्रों के चरित्र-चित्रण उनके उपन्यासों में भी उपलब्ध हो जायेंगे। निम्नलिखित उदाहरण द्रष्टव्य हैं--

'निर्मला' उपन्यास में चन्दर या चन्द्रभानु का चरित्र-चित्रण कथोपकथन तथा वर्णन दोनों प्रणालियों में है।

'सहसा चन्दर धम-धम करता छत पर आ पहुंचा और निर्मला को देखकर बोला -- अच्छा! आप यहां बैठी हैं। ओहो! अब तो बाजे बजेंगे, दीदी दुल्हन बनेंगी, पालकी पर चढ़ेंगी, ओहो! ओहो!

निर्मला -- चन्दर, मुझे चिढ़ाओगे तो अभी जाकर अम्मां से कह दूंगी।

चन्दर -- तो चिढ़ती क्यों हो? तुम भी बाजे सुनना। ओहो! हो! अब आप दुल्हन बनेंगी। किशनी तू बाजे सुनेंगी न? वैसे बाजे तूने कभी न सुने होंगे।

कृष्णा -- क्या बैण्ड से भी अच्छे होंगे?

चन्दर -- हां, हां बैण्ड से भी अच्छे, लाख गुने अच्छे बाजे। तुम जानो क्या? एक बैण्ड सुन लिया तो समझने लगीं कि उससे अच्छे बाजे नहीं होते। बाजे बजाने वाले लाल-लाल वर्दियां और काली-काली टोपियां पहने होंगे। ऐसे खूबसूरत मालूम होंगे कि तुमसे क्या कहूं। आतिशबाजियां भी होंगी, हवाइयां आसमान में उड़ जायेंगी और वह तारों में लगेंगी, तो लाल, पीले और हरे या नीले व तारे टूट-टूट कर गिरेंगे। बड़ा मजा आयेगा।

कृष्णा -- और क्या होगा, चन्दर, बता मेरे भैया?

चन्दर -- मेरे साथ तुमने चल,तो रास्ते में सारी बातें बता दूं। ऐसे-ऐसे तमाशे होंगे कि देखकर तेरी आंखें खुल जायंगी। हवा में उड़ती हुई परियां होंगी, सचमुच की परियां।

---

१ प्रेमचन्द : 'गुप्त धन', भाग २, पृ० १५६

कृष्णा का चरित्र-चित्रण भी इसी प्रकार से हैं--

"निर्मला का पन्द्रहवां साल था, कृष्णा का दसवां फिर भी उनके स्वभाव में कोई अन्तर न था। दोनों चंचल, खिलाड़िन और सैर तमाशे पर जान देती थी, दोनों गुड़ियों का धूमधाम से ब्याह करतीं, सदा काम से जी चुराती थीं। मां पुकारती रहती थीं पर दोनों कोठे पर छिपी बैठी रहती थीं। नौकरों को डांटती थीं और बाजे की आवाज सुनते ही द्वार पर आकर खड़ी हो जाती थीं।"[1]

...." कृष्णा उसे खोजती फिरती थी। जब कहीं न पाया, छत पर आई और उसे देखते ही हंस कर बोली -- तुम यहां आकर छिपी बैठी हो और मैं तुम्हें ढूंढती फिरती हूं। चलो, बग्घी तैयार करा आई हूं।

निर्मला ने उदासीन भाव से कहा -- तू जा, मैं न जाऊंगी।

कृष्णा -- नहीं मेरी अच्छी दीदी, आज, जरूर चलो। देखो कैसी ठण्ढी ठण्ढी हवा चल रही है।

निर्मला -- मेरा मन नहीं चाहता, तू चली जा। कृष्णा की आंखें डबडबा आईं। कांपती हुई आवाज से बोली-- आज तुम क्यों नहीं चलतीं? मुझसे क्यों नहीं बोलतीं? क्यों इधर-उधर छिपी फिरती हो? मेरा जी अकेले बैठे-बैठे घबराता है। तुम न चलोगी तो मैं भी न जाऊंगी। यहीं तुम्हारे पास बैठी रहूंगी।

निर्मला -- और जब मैं चली जाऊंगी तब क्या करेगी? तब किसके साथ खेलेगी किसके साथ घूमने जायेगी, बता?

कृष्णा --मैं भी तुम्हारे साथ चलूंगी, अकेले मुझसे यहां न रहा जायेगा।

निर्मला (मुस्कराकर)-- तुझे अम्मां न जाने देंगी।

कृष्णा -- तो मैं भी तुम्हें न जाने दूंगी। तुम अम्मां से कह क्यों नहीं देती कि मैं न जाऊंगी?

---

1 प्रेमचन्द : "निर्मला", पृ० 1

निर्मला -- कह तो रही हूं, कोई सुनता है ?

कृष्णा -- तो क्या यह तुम्हारा घर नहीं है ?

निर्मला -- नहीं, मेरा घर होता तो कोई जबर्दस्ती निकाल देता ?

कृष्णा -- इसी तरह किसी दिन मैं भी निकाल दी जाऊंगी ?

निर्मला -- और नहीं क्या तू बैठी रहेगी? हम लड़कियां हैं, हमारा घर कहीं नहीं होता ।

कृष्णा -- चन्दर भी निकाल दिया जायेगा ?

निर्मला -- चन्दर तो लड़का है उसे कौन निकालेगा ?

कृष्णा -- तो लड़कियां बहुत खराब होती होंगी ।

निर्मला -- खराब न होतीं तो घर से भगाई क्यों जातीं ?[1]

'निर्मला' में निर्मला का भी चरित्र-चित्रण कथोपकथन तथा वर्णन प्रणाली द्वारा बड़ी ही कुशलता के साथ किया गया है--

'निर्मला का पन्द्रहवां साल था, कृष्णा का दसवां फिर भी स्वभाव में कोई विशेष अन्तर न था । दोनों चंचल, खिलाड़िन और सैर तमाशे पर जान देती थीं, दोनों गुड़ियों का धूमधाम से ब्याह करती थीं, सदा काम से जी चुराती थीं । मां पुकारती रहती थी पर दोनों कोठे पर छिपी बैठी रहती थीं कि न जाने किस काम के लिए बुलाती हैं । दोनों भाइयों से लड़ती थीं, नौकरों को डांटती थीं और बाजे की आवाज़ सुनते ही द्वार पर आकर खड़ी हो जाती थीं, पर आज एकाएक ऐसी बात हो गई, जिसने बड़ी को बड़ी और छोटी को छोटी बना दिया है । कृष्णा वही है पर निर्मला गम्भीर, एकान्तप्रिय और लज्जाशील हो गई है ।'[2]

+ + +

इसी कृष्णा ने अज्ञात बालिका को मुंह ढांप कर एक कोने में बिठा रखा है । उसके हृदय में विचित्र शंका समा गई है, रोम-रोम

---

१ प्रेमचन्द : 'निर्मला', पृ०२

२ ,, : ,, पृ०१

में एक अज्ञात भय का संचार हो गया है-- न जाने क्या होगा ? उसके मन में उमंगें नहीं हैं, जो युवतियों की आंखों में तिरछी चितवन बनकर, ओठों पर मधुर हास्य बनकर और अंगों में आलस्य बनकर प्रकट होती है । नहीं वहां अभिलाषाएं नहीं ,वहां केवल शंकाएं, चिन्ताएं और भीरु कल्पनाएं हैं । यौवन का अभी तक पूरा प्रकाश नहीं हुआ है ।[1]

\+ \+ \+

"चन्द्रभानु और कृष्णा चले, पर निर्मला अकेली बैठी रह गई । कृष्णा के चले जाने से इस समय उसे बड़ा क्षोभ हुआ । कृष्णा जिसे वह प्राणों से भी अधिक प्यार करती थी, आज इतना निठुर हो गई । अकेली छोड़कर चली गई ? बात कोई न थी । लेकिन दुखी हृदय दुखती हुई आंखें है,जिसमें हवा से भी पीड़ा होती है । निर्मला बड़ी देर तक बैठी रोती रही । भाई-बहन,माता-पिता सभी इस भांति भूल जायंगे । सब की आंखें फिर जायेंगी । फिर शायद इन्हें देखने को भी तरस जाऊं । +

\+ \+ + निर्मला इन्हीं शोकमय विचारों में पड़ी पड़ी सो गई और आंख लगते ही उसका मन स्वप्न देश विचरने लगा । क्या देखती है कि सामने एक नदी लहरें मार रही है और वह नदी के किनारे नाव की बाट देख रही है । संध्या का समय है । अंधेरा किसी भयंकर जन्तु की भांति बढ़ता चला आता है । वह घोर चिन्ता में पड़ी हुई है कि कैसे नदी पार होगी, कैसे घर पहुंचेगी । रो रही है कि रात न हो जाय, नहीं तो मैं अकेले यहां कैसे रहूंगी । एकाएक उसे एक सुन्दर नौका घाट की ओर आती दिखाई देती है । वह खुशी से उछल पड़ती है और ज्योंही नाव घाट पर आती है, वह उसपर चढ़ने के लिए बढ़ती है और ज्यों ही नावके पटरे पर पैर रखना चाहती है, उसका मल्लाह बोल उठता है-- तेरे लिए यहां जगह नहीं है । वह मल्लाह की खुशामद करती है, उसके पैर पकड़ती है, रोती है, लेकिन वह यह कहे जाता है -- तेरे लिए यहां जगह नहीं है । एक क्षण में

---

१ प्रेमचन्द : 'निर्मला',पृ०१

नाव खुल जाती है । वह चिल्ला-चिल्ला कर रोने लगती है । नदी के निर्जीव तट पर रात भर अकेले रहेगी, यह सोच, वह नदी में कूद कर उस नाव को पकड़ना चाहती है कि इतने में कहीं से आवाज आती है -- ठहरो,ठहरो, नदी गहरी है, डूब जाओगी यह नाव तुम्हारे लिए नहीं है, मैं आता हूं । मेरी नाव पर बैठ जाओ मैं उस पार पहुंचा दूंगा । वह भयभीत होकर इधर-उधर देखती है कि यह आवाज कहां से आई । थोड़ी देर के बाद एक छोटी सी डोंगी आती दिखाई देती है । उसमें न पाल है न पतवार, न मस्तूल । पेंदा फटा हुआ है । तख्ते टूटे हुए नाव में पानी भरा हुआ है, और एक आदमी उसमें से पानी उलीच रहा है । वह उससे कहती है, यह कैसे पार लगेगी? मल्लाह कहता है-- तुम्हारे लिए यही भेजी गई है, आकर बैठ जाओ । वह एक क्षण सोचती है-- इसमें बैठूं? अन्त में वह यह निश्चय करती है, बैठ जाऊं। यहां अकेली पड़ी रहने से नाव में बैठ जाना फिर भी अच्छा है । किसी भयंकर जन्तु के पेट में न जाने से तो यही अच्छा है कि नदी में डूब जाऊं । कौन जाने,नाव पार पहुंच ही जाय , यह सोचकर वह प्राणों को मुट्ठी में लिए हुए नाव पर बैठ जाती है । कुछ देर तक नाव डगमगाती हुई चलती है, लेकिन प्रतिक्षण उसमें पानी भरता ह जाता है । वह भी मल्लाह के साथ दोनों हाथों से पानी उलीचने लगती है यहां तक कि उसके हाथ रह जाते हैं और पानी बढ़ता ही जाता है ।आखिर नाव चक्कर खाने लगती है, मालूम होता है अब डूबी अब डूबी । तब वह किसी अदृश्य सहारे के लिए दोनों हाथ फैलाती है, नाव नीचे खिसक जाती है और उसके पैर उखड़ जाते हैं । वह जोर से चिल्लाती है और चिल्लाते ही उसकी आंखें खुल गईं ।[1]

इस उपन्यास में जियाराम तथा सियाराम दोनों शिशु-पात्रों का चरित्र-चित्रण,कथोपकथन तथा वर्णन प्रणाली द्वारा हुआ है ।

पिता के सम्मुख जियाराम की धृष्टता का पता चलता है --"जियाराम बड़ा शोख था । बोला -- उनको तो आप कुछ

---

१ प्रेमचन्द : 'निर्मला',पृ०४

कहते नहीं, हमीं को धमकाते हैं। कभी पैसे नहीं देती।' सियाराम ने इस कथन का अनुमोदन किया -- कहती ह मुझे कि व करोगे तो कान काट लूंगी। कहती हैं कि नहीं जिया ?'[1]

जियाराम का पिता से उद्दण्डता प्रकट करने की बात पृष्ठसंख्या १३७ में है और इसी प्रकार १३६-१५७ में प्रेमचन्द ने इस प्रणाली द्वारा जियाराम के मानसिक दशा भाव तथा पूरे चरित्र का वर्णन किया है। पिता से उसकी उद्दण्डता, जिया की उद्दण्डता का अतिक्रमण, डाक्टर सिन्हा से बातचीत, उनसे अपने पिता पर दोषारोपण, डाक्टर सिन्हा के उपदेश से उसके हृदय में कोमल भावों का प्रादुर्भाव तथा मन परिवर्तन किन्तु देर से घर लौटने पर पिता द्वारा डाट-फटकार पर धीरे धीरे जियाराम की नम्रता का लोप हो जाना आदि बातों पर प्रकाश डाला गया है। डाक्टर सिन्हा के बातचीत के पश्चात् जियाराम के पिता के उपदेश का प्रभाव उसके ऊपर बहुत बुरा पड़ता है। उसके हृदय में मिस्टर सिन्हा द्वारा जलाया हुआ दीपक व्यंग्य के एक झोंके से बुझ गया। अड़ा हुआ घोड़ा चुमकारने से और मारने लगा था, पर चाबुक पड़ते ही फिर अड़ गया और गाड़ी को पीछे ढकेलने लगा। पृष्ठ संख्या १४४ में उसके हृदय में सौतेली बहन सुधा की प्रतिक्रिया पृष्ठ संख्या १४६ में पिता के साथ उद्दण्डता का व्यवहार पृष्ठ १४८ में उसके जीवन का नया मोड़ अर्थात् माता के गहने चुराना पृष्ठ संख्या १५१ में विमाता से चोरी के सम्बन्ध में बातचीत पृष्ठ संख्या १५४ में पुलिस में रिपोर्ट होने पर जिया की मानसिक दशा और अन्त में पृष्ठ संख्या १५७ में अत्यधिक मानसिक वेदना के कारण निराश होकर घर से लापता हो जाना आदि का बड़े ही मनोवैज्ञानिक ढंग से चित्रण हुआ है।

इसी प्रकार पिता से मार खाने पर जियाराम की मानसिक अवस्था का चित्रण पृष्ठसंख्या ४२ के अन्तिम परिच्छेद में मिलता है। निर्मला जिया को रोते देखकर विह्वल हो उठती है उसे छाती से लगाती है, और गोद में लिए हुए अपने कमरे में लाकर चुमकारने लगती है। लेकिन बालक और भी सिसक-सिसक कर रोने लगा। उसका अबोध हृदय इस प्यार में मातृ-स्नेह

---

1 प्रेमचन्द : 'निर्मला', पृ०५१

न पाता था, जिससे दैव ने उसे वंचित कर दिया था । वह वात्सल्य न था केवल दया थी । यह वह वस्तु थी जिसपर उसका कोई अधिकार न था, जो भिक्षा के रूप में उसे दी जा रही थी । पिता ने पहले भी दो-एक बार मारा था, जब उसकी मां उसे छाती से लगाकर रोती न थी, वह अप्रसन्न होकर उससे बोलना छोड़ देती थी, यहां तक कि स्वयं थोड़ी देर बाद सब कुछ भूलकर फिर माता के पास दौड़ा जाता था । शरारत के लिए सजा पाना तो उसकी समझ में आता था, लेकिन मार खाने पर पुचकारा जाना उसकी समझ में न आता था । मातृ-प्रेम में कठोरता होती थी, लेकिन मृदुलता से मिली हुई । इस प्रेम में करुणा थी, पर वह कठोरता न थी जो आत्मीयता का गुप्त संदेश है।[1]

पृष्ठसंख्या १५४ में जिया से सहयोग प्राप्त करने पर पिता से उद्दण्डता, पृष्ठसंख्या १६० में निर्मला से घी को लौटाने की बात को लेकर वाद-विवाद तथा पृष्ठ संख्या १६१ व के प्रथम परिच्छेद में इस मातृ-स्नेह हीन बालक की मानसिक दशा, बनिये की दुकान पर जटाधारी साधु से मुलाकात, बनिया द्वारा उसकी माता के बार-बार सौदा लौटाने की आदत पर आक्षेप, साधु के निवेदन करने पर बनिया का घी लौटा कर दूसरा घी देना तथा पृष्ठ संख्या १६४ प्रथम परिच्छेद में इस मातृ-स्नेह से वंचित बाल बालक के मन में सहानुभूति और सम्वेदना प्रकट करने वाले अनजान साधु के प्रति आकर्षण उत्पन्न होना आदि सारी बातें हैं ।

फिर पृष्ठ संख्या १६६ परिच्छेद २२ में एक ठौर पर आश्रय पा जाने पर सिया के मन में निर्भीकता तथा उसके व्यवहार में परिवर्तन, पृष्ठ संख्या १६७ के प्रथम परिच्छेद में विमाता के दुर्व्यवहार से ऊब कर वह स्कूल नहीं गया, क्योंकि वहां भी सबक न जानने पर झिड़कियां ही मिलतीं । उसका मन उस बाबा जी के दर्शन के लिए व्याकुल हो उठा । उन्हीं की प्रतीक्षा में रहा और देर से लौटा । निर्मला के प्रश्न पूछने पर कि कहां था, आज बाजार नहीं गया, अत: खाना नहीं बना, सिया झल्ला कर उत्तर देता है कि वह नौकर नहीं है कि दिन-रात भी बाजार दौड़ता फिरे ।

---

१ प्रेमचन्द : 'निर्मला', पृ०४२

आखिर रोटियां ही तो देती हैं और क्या ? ऐसी रोटियां जहां मिहनत करेंगा वहीं मिल जायेंगी । निर्मला उसकी बातों को सुनकर अवाक् रह जाती है । आज यह बालक स्वभाव का इतना कृपण कैसे हो गया । उसने सिया के साथ बड़े ही स्नेह तथा विवेक पूर्ण ढंग से बातचीत की जिसका प्रभाव उसपर क्षणिक ही पड़ा, क्योंकि उसका वंचित मन आश्रय की खोज में था ।

पृष्ठ संख्या १६६ परिच्छेद १ में सियाराम के घर से चले जाने की मनोदशा का वर्णन कथोपकथन और वर्णन द्वारा हुआ है । रुक्मिणी को याद करते ही सियाराम घर की ओर चल पड़ा । वह अगर कुछ न कर सकती थीं तो कम-से-कम उसे गोद में चिपटा कर रोती तो थीं । उसके बाहर से आने पर हाथ मुंह धोने के लिए पानी रख तो रख देती थीं । संसार में सभी बालक दूध की कुल्लियां नहीं करते, सभी सोने के कौर नहीं खाते कितनों को पेट भर भोजन नहीं मिलता पर घर से विरक्त वही होते हैं, जो मातृ-स्नेह से वंचित हैं ।

सियाराम घर की ओर चला ही था कि सहसा बाबा परमानन्द एक गली से आते दिखाई दिए । सियाराम ने जाकर उनका हाथ पकड़ लिया । परमानन्द ने चौंक कर पूछा -- बच्चा, तुम यहां कहां ?` .... और अन्त में वह बाबा परमानन्द के साथ हो लेता है ।

`दाने पर मंडराता हुआ पक्षी अन्त में दाने पर गिर पड़ा । उसके जीवन का अन्त पिंजरे में होगा या व्याधा की छुरी के तले-- यह कौन जानता है?` इस प्रकार सियाराम भी अपने को उस कष्टपूर्ण वातावरण से मुक्त करता है ।

इसी प्रणाली द्वारा कृष्णा का भी चरित्र चित्रण किया गया है जिसे हम `निर्मला` पृष्ठ १,परिच्छेद १,पृष्ठ २ परिच्छेद २ तथा पृष्ठ ४१ चौथे परिच्छेद में देख सकते हैं ।

`गोदान` उपन्यास में भी होरी और धनिया की बेटियां सोना और रूपा का चरित्र-चित्रण कथोपकथन और वर्णन प्रणाली द्वारा हुआ है । सोना का चरित्र `गोदान` पृष्ठ १६,परिच्छेद ३,

पृष्ठ संख्या ३५,परिच्छेद २, पृष्ठ ९७ परिच्छेद ४,पृष्ठ संख्या २०५ परिच्छेद ५, पृष्ठ २२०, २६० परिच्छेद १,पृष्ठ संख्या २५७ अन्तिम परिच्छेद में देखा जा सकता है । रूपा का पृष्ठ १६ परिच्छेद ३, पृष्ठ३४ अन्तिम परिच्छेद पृष्ठ संख्या ३६ परिच्छेद ७, पृष्ठ २२० अन्तिम परिच्छेद, पृष्ठ २०६ परिच्छेद ३, पृष्ठ ३४२ परिच्छेद ३४, पृष्ठ ३४३ परिच्छेद ३ पृष्ठ ३५६ अन्तिम परिच्छेद में चरित्र-चित्रण कथोपकथन और वर्णन द्वारा पाते हैं ।

झुनिया का गोदान पृष्ठ २५ परिच्छेद ३ पृष्ठ ४५ परिच्छेद ५,पृष्ठ १३० परिच्छेद १२ में पाते हैं । `गोदान' में रामू का चरित्र चित्रण भी इसी प्रणाली द्वारा हुआ है । रामू शिलिया चमारिन और मातादीन ब्राह्मण का जारज पुत्र है । आयु २ वर्ष की है । सिलिया का बालक अब दो साल का हो रहा था और सारे गांव में दौड़ लगाता था । अपने साथ एक विचित्र भाषा लाया था और उसी में बोलता था, चाहे कोई समझे या न समझे । उसकी भाषा में ठ, ल और ध की कसरत थी और स, र आदि वर्ण गायब थे । उस भाषा में रोटी का नाम था `ओटी', दूध का `तुत' और साग का `हाग' और कौड़ी का `तौली' । जानवरों की बोलियों की ऐसी नकल करता है कि हंसते-हंसते लोगों के पेट में बल पड़ जाता है । किसी ने पूछा रामू कुत्ता कैसे बोलता है? रामू गम्भीर भाव से कहता --`भों भौ, और काटने को दौड़ता । बिल्ली कैसे बोले ? और रामू म्यांवम्यांव करके आंखें निकाल कर ताकता और पंजों से नोचता । बड़ा मस्त लड़का था । जब देखो खेलने में मगन रहता न खाने की सुधि थी न पीने की । गोद से उसे चिढ़ थी । उसके सबसे सुखी क्षण वह होते जब वह द्वार पर नीम के नीचे मनों धूल बटोर कर उसमें लोटता, सिर पर चढ़ाता, उसकी ढेरियां लगा, घरौंदे बनाता, अपनी उम्र के लड़कों से इससे एक क्षण न पटती । शायद उन्हें अपने साथ खेलने के योग्य ही नहीं समझता था[1]।

रामू के शैशवावस्था में `रूपा' द्वारा उसका चित्रण --`मातादीन ने रूपा से पूछा कि क्या उसने सिलिया के बालक

---

१ प्रेमचन्द : `गोदान',पृ०३४२,परिच्छेद ३४

को देखा है तो रूपा ने कहा -- क्यों नहीं देखा है लाल लाल है, खूब मोटा है, बड़ी-बड़ी आंखें हैं, सिर में भबराले बाल हैं, टुकुर-टुकुर ताकता है।

\+ \+ \+

कोई पूछता -- तुम्हारा क्या नाम है ?

चटपट कहता -- रामू ।

तुम्हारे बाप का क्या नाम है ?

मातादीन ।

और तुम्हारी मां का ?

सिलिया

और मातादीन कौन है ?

वह कमाता खाता है ।

न जाने किसने मातादीन से उसका यह नाता बता दिया था ।

\+ \+ \+

'गोदान' में बच्चों के एक समूह का चित्रण भी कथोपकथन तथा वर्णनप्रणाली द्वारा हुआ है । एक नाला मिला जिसमें बहुत थोड़ा पानी था । नाले के उस पर टीले पर एक छोटा-सा पांच छः घरों का एक पुरवा था और कई लड़के इमली के पेड़ के नीचे खेलरहे थे । लकड़हारे को देखते ही सबों ने दौड़ कर उसका स्वागत किया और लगे पूछने -- किसने मारा बापू ? कैसे मारा, कहां मारा, कैसे गोली लगी, इसी को क्यों लगी और हिरनों को क्यों नहीं लगी ? लकड़हारा हूं-हां हूं हां करता इमली के नीचे पहुंचा और हिरण को उतार कर पास की झोपड़ी से दोनों महानुभावों के लिए खाट लाने को दौड़ा । उसके चारों लड़कों और लड़कियों ने शिकार को अपने चार्ज में लिया और अन्य लड़कों को भगाने की चेष्टा करने लगे ।

सबसे छोटे बालक ने कहा -- यह हमारा है । उसकी बड़ी बहन ने जो चौदह-पन्द्रह साल की थी मेहमानों की ओर देख कर छोटे भाई को डांटा-- चुप, नहीं सिपाही पकड़ ले जायेगा,

---

१ प्रेमचन्द : 'गोदान', पृ०३४३

मिर्जा ने लड़के को छेड़ा -- `तुम्हारा नहीं हमारा है ।

बालक ने हिरन पर बैठकर अपना कब्जा सिद्ध कर दिया और बोला -- बापू तो लाये हैं ।
बहन ने सिखाया -- कह दे भैया तुम्हारा है ।`[1]

+ + +

`ग़बन` उपन्यास में जालपा के शैशव का चित्रण --

`इसी समय एक बिसाती आकर झूले के पास खड़ा हो गया । उसे देखते ही झूला बन्द हो गया । छोटी-बड़ी सबों ने आकर उसे घेर लिया । बिसाती ने अपना सन्दूक खोला और चमकती -चमकती चीजें निकाल कर दिखाने लगा । कच्चे मोतियों के गहने थे, कच्चे लैस और गोटे, रंगीन मोजे, खूबसूरत गुड़ियां और गुड़ियों के गहने , बच्चों के लट्टू और झुन-झुने । किसी ने कोई चीज... ली और किसी ने कोई चीज । एक बड़ी बड़ी आंखों वाली बालिका ने वह चीज पसन्द की, जो उन चमकती हुई चीजों में सबसे सुन्दर थी । वह किसी फिरोजी रंग का एक चन्द्रहार था । मां से बोली -- अम्मा मैं यह हार लूंगी । + +

+ + + +

माता ने कहा वह तो बड़ा मंहगा है । चार दिनों में इसकी चमक-दमक जाती रहेगी ।

बिसाती ने मार्मिक भाव से सिर हिला कर कहा -- बहू जी , चार दिनों में तो बिटिया को असली चन्द्रहार मिल जायेगा ।

माता के हृदय पर इन सहृदयता से भरे हुए शब्दों ने चोट की । हार ले लिया गया ।

बालिका के आनन्द की सीमा न थी । शायद हीरों के हार से भी उसे इतना आनन्द न होता । उसे पहन कर वह गांवमें नाचती फिरी । उसके पास जो बाल सम्पत्ति थी,उसमें सबसे मूल्यवान् सबसे

---

1 प्रेमचन्द : `गोदान`,पृ० ३००, पन्द्रहवां संस्करण,१९५८

प्रिय यही बिल्लौर का हार था[१]।` ...... जालपा के आभूषणों से ही खेलती थी यही उसके खिलौने थे । वह बिल्लौर का हार, जो उसने बिसाती से लिया था, अब उसका सबसे प्यारा खिलौना था । असली हार की अभिलाषा अभी उसके मन में उदय ही नहीं हुई थी । गांव में कोई उत्सव होता या कोई त्योहार पड़ता, तो वह उसी हार को पहनती । कोई दूसरा गहना उसकी आंखों में जंचता ही न था । ...... जालपा को अब अपना हार अच्छा न लगता । पिता से बोली -- बाबू जी मुझे भी ऐसा हार ला दीजिए । दीनदयाल ने मुस्करा कर कहा -- ला दूंगा, बेटी ।

`कब ला दीजिएगा ।`

`बहुत जल्द ।`

`बाप के शब्दों से जालपा का मन न भरा । उसने माता से जाकर कहा -- अम्मा जी, मुझे भी अम्मा-सा हार बनवा दो ।

मां-- वह तो कुछ बहुत रुपयों में बनेगा बेटी ।

जालपा -- तुमने अपने लिए बनवाया है, मेरे लिए क्यों नहीं बनवाती ?

मां ने मुस्करा कर कहा -- तेरे लिए तेरी ससुराल से आयेगा ।`

....

`जालपा लजाकर भाग गई, पर यह शब्द उसके हृदय में अंकित हो गये । ससुराल उसके लिए अब इतनी भयंकर न थी । ससुराल से चन्द्रहार आयेगा, वहां के लोग उसे माता-पिता से अधिक प्यार करेंगे । तभी तो जो चीज ये लोग नहीं बनवा सकते, वह वहां से आयेगी[२]।`

\+ \+ \+

`जब वह तीन वर्ष की अबोध बालिका थी, उस वक्त उसके लिए सोने के चूड़े बनवाये गये थे । दादी जब उसे गोदमें खिलाने लगतीं, गहनों की चर्चा ब करतीं । तेरा दूल्हा तेरे लिए बड़े सुन्दर गहने लावेगा । ठुमक-ठुमक कर चलेगी । xxxxxx जालपा पूछती-- चांदी के होंगे या सोने के दादी जी ।

दादी कहतीं -- सोने के होंगे बेटी, चांदी के क्यों लावेगा ? चांदी लावे तो तुम उठाकर उसके मुंह पर फेंक देना ।

१ प्रेमचन्द : `गबन`, पृ०१ । २ प्रेमचन्द : `गबन`, पृ०२

मानकी छेड़कर कहती -- चांदी के तो लावेगा ही । सोने के उसे कहां मिल सकते हैं? जाते हैं ।`

जालपा रोने लगती[1]।`

अत: इस प्रणाली द्वारा प्रेमचन्द ने शिशु जालपा का बड़े ही मनोवैज्ञानिक ढंग से चरित्र-चित्रण किया है और बताया है कि शैशव में ही किसी के भावी जीवन का आभास मिल जाता है और इस काल में शिशु के संवेग आदि का उचित मार्ग नहीं मिलता तो सारा जीवन विनाश के गर्त में पड़ जाता है ।

\+ \+ \+

`कायाकल्प` उपन्यास में शंखधर का चरित्र-चित्रण कथोपकथन तथा वर्णन द्वारा इस प्रकार किया गया है --

`चक्रधर तो इस विचार में पड़े हुए थे और अहिल्या अपने सजे हुए शयनागार में मखमली गद्दों पर लेटी अंगड़ाइयां ले रही थी । चारपाई के सामने ही दीवार में एक बड़ा सा आईना लगा हुआ था। वह उस आईने में अपना स्वरूप देख-देख कर मुग्ध हो रही थी । सहसा शंखधर एक रेशमी कुरता पहने ठुमकता हुआ आकर उसके पास खड़ा हो गया । अहल्या ने हाथ फैलाकर कहा--बेटा ज़रा मेरी गोद में आ जाओ । शंखधर अपना खोया हुआ घोड़ा ढूंढ़ रहा था । बोला -- अम नई ....

अहिल्या-- देखो मैं तुम्हारी अम्मां हूं न ?

शंखधर -- तुम अम्मां नई । अम्मा लानी है ।

अहल्या -- क्या मैं रानी नहीं हूं?

शंखधर ने उसे कुतूहल से देखकर कहा-- तुम लानी नईं । अम्मां लानी है ।

अहिल्या ने चाहा कि बालक को पकड़ ले पर वह `तुम लानी नईं, तुम लानी नईं कहता हुआ कमरे से निकल गया ..[2] ।`

---

1 प्रेमचन्द : `गबन`,पृ० २४,परिच्छेद १

2 ,, : `कायाकल्प` ,पृ० २५६

....

मनोरमा -- क्यों लल्लू ! यह कौन है ?

शंखधर ने शर्माते हुए कहा -- बाबू जी ।

मनोरमा -- इनके साथ जायेगा ?

बालक ने आंचल में मुंह छिपा कर कहा -- लानी अम्मां साथ ?

चक्रधर हंसकर बोले -- मतलब की बात समझता है । [1]रानी अम्मां को छोड़कर किसी के साथ न जायगा ।`

\+ \+ \+

शंखधर -- तुमको मालेंगे ।

राजा -- क्यों भाई, मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ?

शंखधर -- अम्मां लानी लोती है, तुमने उनको क्यों मालाहै ?

राजा -- लो साहब यह नया अपराध मढ़ा जा रहा है । चलो , जरा देखूं तो तुम्हारी लानी अम्मां को किसने मारा है । क्या सचमुच रोती है ?

शंखधर -- बली देल से लोती है ।

\+ \+ \+

जब वह जल चढ़ाकर आई तो शंखधर ने पूछा -- दादी जी तुम पूजा क्यों करती हो? निर्मला ने शंखधर को गोद में लेकर कहा --

`बेटा, भगवान से मनाती हूं कि मेरी मनोकामना पूरी करें ।

शंखधर -- भगवान् सब के मन की बात जानते हैं ?

निर्मला -- हां बेटा, भगवान सब कुछ जानते हैं ।

शंखधर -- दादी जी तुम्हारी क्या मनोकामना है ?

निर्मला -- यही बेटा कि तुम्हारे बाबू जी आ जायं और तुम जल्दी से बड़े हो जाओ ।

शंखधर बाहर मुंशी जी के पास चला गया

---

१ `प्रेमचन्द : `कायाकल्प` पृ० २५८

और उनके पास बैठकर सितार की गतें सुनता रहा ।

दूसरे दिन प्रातःकाल शंखधर ने स्नान किया, लेकिन स्नान करके वह जलपान करने न आया । गुरु सेवक सिंह के पास पढ़ने भी न गया । न जाने कहां चला गया । अहल्या इधर-उधर देखने लगी, कहां चला गया । मनोरमा के पास आकर देखा, वहां मौन था । अपने कमरे में भी न था । छत पर भी नहीं । दोनों रमणियाँ घबराईं कि स्नान करके कहां चला गया । लौंडियों से पूछा तो उन सबों ने भी कहा, हमने तो उन्हें नहाकर जाते देखा । फिर कहां चले गये, यह हमें नहीं मालूम । चारों ओर तलाश होने लगी । दोनों बगीचे की ओर दौड़ गयीं । वहां भी वह दिखाई न दिया । सहसा बगीचे के पल्ले सिरे पर जहां दिन को सन्नाटा रहता था, उसकी झलक दिखाई दी । दोनों चुपके-चुपके वहां तक गईं और एक पेड़ की आड़ में खड़ी होकर देखने लगी । शंखधर तुलसी के चबूतरे के सामने आसन मारे, आंखें बन्द किए ध्यान-सा लगाये बैठा था । उसके सामने कुछ फूल पड़े हुए थे । एक क्षण के बाद उसने आंखें खोलीं, कई बार चबूतरे की परिक्रमा और तुलसी की वन्दना करके धीरे से उठा । दोनों महिलाएं आड़ से निकल कर उसके सामने खड़ी हो गयीं । शंखधर उन्हें देखकर कुछ लज्जित हो गया और बिना कुछ बोले आगे बढ़ा ।

मनोरमा -- वहां क्या करते थे बेटा ?

शंखधर -- कुछ तो नहीं । ऐसे ही घूमता था ।

मनोरमा -- नहीं कुछ तो कर रहे थे ।

शंखधर -- जाइए, आपसे क्या मतलब ।

अहल्या -- तुम्हें न बतावेगे । मैं इसकी अम्मां हूं मुझे बता देगा । मेरा लाल मेरी कोई बात नहीं टालता । हां बेटे, बताओ क्या कर रहे थे ? मेरे कान में कह दो, मैं किसी से न कहूंगी ।

शंखधर ने आंखों में आंसू भर कर कहा -- कुछ नहीं, मैं बाबू जी के जल्दी से लौट आने की प्रार्थना कर रहा था । भगवान सुना करते है कि मन की मनोकामना पूरी करते हैं ।[1]

---

1 प्रेमचन्द : 'कायाकल्प', पृ० २००-२०१

\+ \+ \+

'गबन' उपन्यास में गोपी नामक शिशु पात्र का चरित्र -चित्रण वर्णन तथा कथोपकथन में हुआ है । यह जालपा के साथ रमा की खोज में जाता है । यह जालपा का देवर है ।

सब ने गोपी से कहा होशियार रहना ।

'गोपी इधर कई महीनों से कसरत करता था । चलता तो मोंढे और छाती देखा करता । देखने वालों को तो ज्यों-का-त्यों मालूम होता पर अपनी नजर में वह कुछ और हो गया था । शायद उसे आश्चर्य होता था कि उसे आते देखकर क्यों लोग रास्ते से नहीं हट जाते, क्यों उसके डील-डौल से भयभीत नहीं हो जाते । अकड़कर बोला-- किसी ने ज़रा भी चीं-चपड़ की तो हड्डी तोड़ दूंगा ।

रतन मुस्कुरायी और बोली यह तो मुझे मालूम है । सो मत जाना ।

गोपी -- पलक तक तो झपकेगी नहीं । मजाल है, नींद आ जाय ।

गाड़ी आ गई। गोपीने एक डिब्बे में घुसकर कब्जा जमाया ।'[1]

\+ \+ \+

'जालपा ने गोपी को बुलाया । वह छज्जे पर खड़ा सड़क का तमाशा देख रहा था । ऐसा शरमा रहा था मानों ससुराल आया हो, धीरे-धीरे आकर खड़ा हो गया ।

जालपा ने कहा -- मुंह-हाथ धोकर कुछ खा क्यों नहीं लेते । यही तो मुझे बहुत अच्छा लगता है ।

गोपीखाकर फिर बाहर चला गया ।'[2]

\+ \+ \+

---

१ 'गबन', पृ० २३२

२ ,, पृ० २४०

दोनों नीचे चले गए तो गोपा ने आकर कहा --` भैया इन्हीं खटिक के यहां रहते थे क्या ? खटिक ही तो मालूम होते हैं ।

जालपा ने फटकार कर कहा-- खटिक हों या चमार हों लेकिन हमसे तुमसे सो गुने अच्छे हैं । एक परदेशी को छ: महीने तक अपने घर में ठहराया, खिलाया -पिलाया ।

गोपी मुंह -हाथ धो चुका था । मिठाई खाता हुआ बोला --` किसी को ठहरा लेने से कोई ऊंचा नहीं हो जाता । चमार कितना ही दान-पुण्य करे, पर रहेगा तो चमार ही ।`[१]

+ + +

एक महीनागुज़र गया । गोपीनाथ पहले तो कई दिन कलकत्ते की सैर करता रहा । मगर चार-पांच दिन में ही यहां से उसका जी ऐसा उचाट हुआ कि घर की रट लगाना शुरू की । आखिर जालपा ने उसे लौटा देना ही अच्छा समझा । यहां तो वह छिप-छिप कर रोया करता था ।`[२]

+ + +

`कायाकल्प` उपन्यास की एक बालिका जो त्रिवेणी के घाट पर यात्रियों की भीड़ में खो गई है उसका चरित्र-चित्रण भी कथोपकथन तथा वर्णन प्रणाली द्वारा किया गया है --` दोनों ने उधर जाकर देखा, तो एक बालिका नाली में पड़ी रो रही है । गोरा रंग था, भरा हुआ शरीर, बड़ी-बड़ी आंखें ,गोरा मुखड़ा , सिर से पांव तक गहनों से लदी हुई । किसी अच्छे घर की लड़की थी । रोते-रोते उसकी आंखें लाल हो गई थीं । इन दोनों युवकों को देखकर वह उसी ओर चिल्ला कर रो पड़ी । यशोदा ने उसे गोद में उठा लिया और प्यार करके बोली-- बेटी, रो मत, हम तुझे तेरी अम्मां के घर पहुंचा देंगे । तुम्ही को खोज रहे थे । तेरे बाप का क्या नाम है ?

---

१ प्रेमचन्द : `गबन`,पृ०२३८

२ ,, : ,, पृ०२४२ परिच्छेद ३७

लड़की चुप तो हो गई , पर संशय की दृष्टि से देख सिसक-सिसक कर रो रही थी । इस प्रश्न का कोई उत्तर न दे सकी ।

यशोदा ने फिर चुमकार कर पूछा-- बेटी, तेरा घर कहां है ?

लड़की ने कोई ~~कोई~~ जवाब न दिया ।

....

.... महमूद क्यों बिटिया, तुम्हारे बाबू जी का क्या नाम है? लड़की ने धीरे से कहा-- बाबू जी ।

महमूद -- तुम्हारा घर इसी शहर में है या कि कहीं और ?

लड़की -- मैं तो बाबू जी के साथ रेल पर आयी थी ।

महमूद -- तुम्हारे बाबूजी क्या करते हैं ?

लड़की -- कुछ नहीं करते ।[1]

\+ \+ \+

लड़की ने साहस कर कहा -- तुम हमें घर पहुंचा दोगे ? बाबू जी तुमको पैसा देंगे ।[2]

इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रेमचन्द ने कथोपकथन तथा वर्णन प्रणाली के द्वारा अपने अनेकानिक शिशु पात्रों का चरित्र-चित्रण, की सुन्दर और मनोवैज्ञानिक ढंग से किया है । यदि इस प्रकार के प्रत्येक सभी उदाहरण प्रस्तुत किये जायं तो प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में अनावश्यक विस्तार होगा ।

----

१ प्रेमचन्द : 'गबन', पृ०६

२ ,, : ,, पृ० ७

अध्याय -- ७

प्रेमचन्द के शिशु-चरित्र

(प) वर्गगत --

(क) समूह परक शिशु-चरित्र --

(अ) स्नेह पाने वाला शिशु-पात्र -- (ब) स्नेह वंचित शिशु-पात्र-- (स) समूह की भावना को प्रबल मानने वाला शिशु वर्ग--(द) सामाजिक आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा शिशु वर्ग --(य) दुर्लालित शिशु वर्ग (र) बाल-विधवा शिशु वर्ग ।

(ख) विशिष्ट व्यक्ति परक शिशु-चरित्र

(ग) विपक्षीय शिशु-पात्र

(घ) स्थिर चरित्र

(ङ) चल-चरित्र

(च) उच्चवर्ग के शिशु-पात्र

(छ) मध्यवर्ग के शिशु-पात्र

(ज) निम्नवर्ग के शिशु-पात्रों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन

(फ) मनोगत --

विविध आयु वर्ग का मनोवैज्ञानिक अध्ययन

१- जन्म से दो वर्षों तक के शिशु-पात्रों का अध्ययन (क्रियात्मक विकास, भावात्मक, क्रियात्मक तथा भाषा-विकास के क्रम में दो वर्ष के शिशु का उपक्रम, स्नेह-दात्री से अलग होने के समय दो वर्ष के शिशु का भाव और प्रतिक्रियाएं, नवीन चीजों की ओर आकर्षण का भाव, शिशु में अनुकरण करने की प्रवृत्ति)

२- दो से चार वर्षों तक के शिशु पात्रों का अध्ययन

३- चार से छः वर्षों तक के शिशु पात्रों का अध्ययन

४- छः से आठ वर्षों तक के शिशु पात्रों का अध्ययन

५- आठ से दस वर्षों तक के शिशु पात्रों का अध्ययन

६- दस से बारह वर्षों तक के शिशु पात्रों का अध्ययन

७- बारह से पन्द्रह वर्षों तक के शिशु पात्रों का अध्ययन

अध्याय -- ७

प्रेमचन्द के शिशु-चरित्र

प- वर्गगत

प्रेमचन्द ने कथा-साहित्य में जीवन की वास्तविकता को ही अपना आधार बनाया है । उन्होंने स्वानुभूति के आधार पर कथानक के तत्वों का चुनाव किया है, इसलिए उनकी रचनाओं में जीवन के जीते-जागते पात्रों के दर्शन होते हैं । उन्हें विषम परिस्थितियों को झेलना पड़ता था । ज़माने के भी कई उतार-चढ़ाव उन्होंने देखे थे । प्रेमचन्द के पात्रोंमें जो इतनी विविधता, अनेकरूपता और व्यक्तित्व के विभिन्न रूप प्राप्त होते हैं, उनका मूल कारण यही है कि प्रेमचन्द ने खुली आंखों और खुले दिमाग़ से जीवन के साथ अपने को सम्पृक्त किया था । उन्होंने अनेक जीवन्त-चरित्रों का निर्माण किया है,जिनकी सामान्य विशेषताओं का अध्ययन पिछले अध्याय ही -- "प्रेमचन्द के चरित्र" में किया जा चुका है । यहां विशेषरूप से में उनके शिशु - चरित्रों पर विस्तारपूर्वक विचार करना चाहती हूं । शिशु चरित्रों के निर्माण में भी प्रेमचन्द ने बड़ी ही बुद्धमता और कलात्मकता का परिचय दिया है । उनके शिशु-चरित्रों को भी मैं कई वर्गों में विभाजित कर सकती हूं और उसके अध्ययन के विविध दृष्टिकोण अपना सकती हूं । उनके कुछ शिशु-चरित्र समूहपरक चरित्र में परिगणित होंगे तो कुछ व्यक्तिपरक में । कुछ ऐसे भी शिशु चरित्र मिलेंगे जो समूह तथा व्यक्तिपरक दोनों होंगे । प्रेमचन्द के कुछ शिशु-चरित्र परिवर्तनशील चरित्र के अच्छे उदाहरण हैं, जब कि कुछ अपरिवर्तनशील भी हैं । उनके शिशु-चरित्रों को भी विविध आयु वर्ग में विभाजित कर सकते हैं ।शिशु वर्ग, बालक वर्ग और किशोर वर्ग । शिशु पात्रों के उच्च, मध्य वर्ग, और निम्न वर्ग भी बनाये जा सकते हैं, जिनके आधार सामाजिक कम हैं, आर्थिक अधिक हैं । यों प्रेमचन्द ने किसी मनोविज्ञान शास्त्र के आधार पर अपने शिशु-चरित्रों का

निर्माण नहीं किया है । उनके सामने खुला हुआ जीवन था, कोई निश्चित शास्त्रीय आधार नहीं था, फिर भी उनकी जीवन की पकड़ इतनी गहरी और जबर्दस्त थी कि मनोविज्ञान के आधार पर भी इनके पात्र खरे उतरते हैं । मैंने यह चेष्टा की है कि उनके शिशु-चरित्रों का मनोवैज्ञानिक पक्ष भी उद्घाटित हो सके । प्रेमचन्द ने शिशु-चरित्रों के चित्रण की विभिन्न प्रचलित प्रणालियों का उपयोग किया है । उन्होंने कथानक के पात्र के रूप में शिशुओं का चित्रण किया है । ऐसे कुछ पात्र प्रधान हैं, कुछ गौण , कुछ वातावरण के स्रष्टा पात्र हैं ।कुछ प्रत्यक्ष न होकर भी कहानी की समस्त घटनाओं का सूत्र अपने हाथ में रखते हैं, कुछ वस्तुत: अप्रत्यक्ष रूप में आते हैं । कहीं तो प्रेमचन्द ने वर्णन प्रणाली द्वारा शिशु पात्रों काचित्रण किया है और कहीं उनके चरित्रों के उद्घाटन के लिए कथोपकथन शैली को लिया है । सभी पहलुओं पर ध्यान देने से लगता है कि प्रेमचन्द का शिशु-अध्ययन अपने-आपमें पूर्ण माना जा सकता है ।प्रेमचन्दने शिशुओं का अध्ययन इतने बड़े पैमाने पर नहीं किया है,जितने बड़े पैमाने पर स्त्री और पुरुषों का किया है । यह एक बहुत बड़ा कारण है ,जिसके आधार पर इस बात की व्याख्या की जा सकती है कि प्रेमचन्द के साहित्य में जहां नारी और पुरुषों के अनेक समूह-परक चरित्र उपलब्ध हैं,वहां शिशुओं के वैसे चरित्र उपलब्ध नहीं होतेहैं । प्रेमचन्द ने शिशुओं का चित्रण चैतन्य होकर किसी वर्ग या वर्ग की विशेषताओं को चित्रित करने के लिए नहीं किया है । शिशुओं के माध्यम से जीवन के व्यापक और विराट रूप को देखने का प्रयत्न भी उन्होंने नहीं किया है । ऐसा उस युग में सम्भव भी नहीं था । फिर भी प्रेमचन्द अपने-अपने वर्ग का किसी-न-किसी रूप में प्रतिनिधित्व करते हैं । यह सही है कि अत्यन्त सूक्ष्म अर्थ में यह प्रतिनिधित्व इनमें बहुत नहीं पाया जा सकता । कुछ ऐसे भी चरित्र हैं, जो किसी भी वर्ग में नहीं आते अर्थात् जिनमें किसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करने की क्षमता नहीं । ऐसे चरित्रों को किसी वर्ग में न रखकर भी उनके महत्व को मैंने स्वीकार किया है । यह आवश्यक भी नहीं है कि सभी चरित्र-समूह परक किसी न किसी वर्ग में परिगणित किए ही जायं ।

प्रस्तुत प्रबन्ध में समूहपरक चरित्रों के छ: वर्ग किए गए हैं --

(१) स्नेह पाने वाला शिशु वर्ग

(२) स्नेह वंचित शिशु वर्ग

(३) समूह की भावना को प्रबल मानने वाला शिशु वर्ग

(४) सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा शिशु वर्ग

(क) शारीरिक प्रतिक्रिया

(ख) मानसिक प्रतिक्रिया

(५) दुर्ललित शिशु वर्ग

(६) बाल-विधवा बालिकाओं का शिशु वर्ग ।

(१) <u>स्नेह पाने वाला शिशु वर्ग</u>

स्नेह पाने वाले शिशुओं का एक वर्ग होता है ,जिसमें उन शिशुओं को रखा जा सकता है ,जिनकी प्रतिक्रियाएं स्नेह पाने पर एक सी होती हैं । ऐसे शिशु-स्नेह देने वाले के प्रति ममत्व दिखलाते हैं, उनकी ओर आकृष्ट रहते हैं और उन्हें अपना मानते हैं । स्वभावत: यह स्नेह माता-पिता की ओर से आता है, किन्तु यह आवश्यक नहीं है । यह स्नेह सगे-सम्बन्धियों की ओर से भी आ सकता है या अन्य व्यक्तियों की ओर से भी प्राप्त हो सकता है । कभी-कभी यह स्नेह पशु-पक्षियों के द्वारा भी प्राप्त होता है । सामान्य शिशु की स्नेह के प्रति यह प्रतिक्रिया होता है कि वह स्नेह देने वाले और अपने बीच किसी प्रकार का व्यवधान स्वीकार नहीं करता । स्नेह-शिशु जीवन की सबसे बड़ी भूख है और इस भूख की तृप्ति के लिए वह किसी की ओर भी आकृष्ट हो सकता है । स्नेह देने वाले और स्नेह पाने वाले के बीच की क्रिया-प्रतिक्रियायें सूक्ष्म विवरणों को छोड़कर सामान्यत: एक-सी होती है । इन्हीं क्रिया-प्रतिक्रिया के आधार पर ऐसे शिशुओं का एक वर्ग बनाया गया है जो विभिन्न घटनाओं के बीच भी स्नेह पाकर समान प्रतिक्रिया को जन्म देते हैं ।

प्रेमचन्द की कहानियों में इस प्रकार के स्नेह पाने वाले शिशु वर्ग में २२ शिशु आते हैं ।

'अलग्योझा' कहानी के शिशु पात्रों में केदार अपने सौतेले भाई रग्घू से स्नेह प्राप्त करता है । रग्घु गांव के किसी बढ़ई के यहां से बंसुला रुखानी लाकर एक छोटी गाड़ी बना देता है । केदार इस स्नेह से गद्-गद् हो उठता है । वह बड़े आनन्द से माता से अपने सौतेले भाई रग्घू की प्रशंसा करता है । उसकी माता पन्ना की प्रतिक्रिया रग्घू के प्रति दूसरी ह अवेह,क्योंकि रग्घु उसका सौतेला पुत्र है । किन्तु केदार के मन में सौतेले के प्रति कोई शंका, अवेह सन्देह नहीं । रग्घू से उसे स्नेह मिल रहा है, अत:वह उसका अपना है । इस प्रकार हम देखते हैं कि केदार अपने और सौतेले भाई के बीच कोई व्यवधान ह नहीं मानता ।

इसी प्रकार इसी कहानी के ये तीनों शिशु लछमन,खुन्नू,मुनिया भी इसी वर्ग के अन्तर्गत आते हैं । इस कहानी में रग्घू सबसे बड़ा किन्तु सौतेला भाई है । पिता जब तक जीवित थे, रग्घू की विमाता अमा इन बच्चों से रग्घू को मिलने नहीं देता था । पिता की मृत्यु के पश्चात् रग्घू का ठुकराया हुआ हृदय कर्तव्य भावना से प्रेरित हो उठता है और वह इन सौतेले भाइयों को स्नेह देने लगता है । लछमन,खुन्नू,मुनिया स्नेह पाकर रग्घू से लिपट जाते हैं । उसे अपना भाई मानने लगते हैं और माता के न चाहने पर भी उसे नहीं छोड़ते । इनमें एक भिन्न प्रतिक्रिया देखी जा सकती है । ये खुशी के मारे अपने-आपमें नहीं हैं । लछमन गाड़ी पर बैठ जाता है और छोटे भाई-बहनों को खींचने को कहता है । खुन्नू गाड़ी की यात्रा कर चुकने के पश्चात् बड़े आनन्द से माता से कहता है कि सब पेड़ दौड़ रहे थे । इसके सिवाय रग्घू के प्रति उसकी भावना स्नेह से स्निग्ध है , वह माता को एक नई खबर देता है कि रग्घू भैया अब हम लोगों के लिए एक गाय भी ला देंगे । मुनिया सबसे छोटी है वह तो रग्घू को कहीं भी नहीं छोड़ती । जब रग्घु जब की गेरोड़ियां बनाता, लछमन और खुन्नू तो उसे घेरे ही रहते हैं, किन्तु मुनिया उसकी गर्दन में हाथ डालकर उसकी पीठ पर सवार ब रहती है । उसकी अभिव्यंजना शक्ति उछल-कूद और चेष्टाओं तक परिमित है,अत: वह तालियां बजा-बजा कर अपने आनन्द को प्रकट करती है । स्नेह पाने वाले शिशु में इन शिशुओं की प्रतिक्रिया सही होती है । ये शिशु इतने प्रसन्न , इतने आनन्द मग्न हैं कि शोक-संतप्त माता का सारा

दु:ख दूर हो जाता है । सारा परिवार उनकी प्रसन्नता के प्रकाश से प्रज्ज्वलित हो उठता है । येसभी बच्चे रग्घू के प्रति अपना ममत्व दिखलाते हैं तथा उसकी ओर आकृष्ट हुए रहते हैं ।

'ज्योति' कहानी में 'सोहन और मैना स्नेह पाने वाले वर्ग में आते हैं । वे दोनों शिशु बुटी नामक विधवा के हैं । इनका बड़ा भाई मोहन बहुत रौबीले स्वभाव का है । बात-बात में अपने दोनों छोटे भाई-बहन को डांटता और फिड़कता स रहता है । मोहन के आते ही ये दोनों बच्चे छिप जाते हैं । स्नेह के अभाव में सोहन की प्रतिक्रिया होती है कि वह आलसी और कामचोर बन जाता है । उसके किसी कार्य में बड़े भाई से प्रोत्साहन नहीं मिलता, अत: किसी कार्य के प्रति दिलचस्पी नहीं रहती । एक दिन वह साबुन लगा रहा था, इतने में मोहन पहुंचता है और उससे सहानुभूति प्रकट करता है कि वह धोती क्यों अपने-आप साफ कर रहा है, धोबी को क्यों नहीं देता । उसके पास पैसे नहीं हैं तो वह उसके सामने एक चवन्नी फेंकता है। सोहन को बड़े भाई द्वारा स्नेह का ऐसा व्यवहार पहली बार मिलता है, अत: भाई के प्रति उसके मन का डर दूर हो जाता है । वह स्नेह और लगन से घर का काम करने लगता है । स्नेह पाकर सोहन की प्रतिक्रियाओं, भावनाओं तथा विचारों में परिवर्तन आ जाता है । मैना के साथ भी यही बात होती है । घरौंदा बनाते समय सोहन को देखकर वह भागना चाहती है, उसे भय है कि भाई कहीं डांट न दें । किन्तु मोहन आकर उसके उलझे हुए बालों को सुलझाने लगता है और गुड़िये का ब्याह करने के लिए पैसा देता है । मैना भाई के स्नेहपूर्ण बर्ताव से बहुत प्रभावित होती है । उसमें एक नई चेतना दौड़ पड़ती है । भाई के प्रति भय दूर हो जाता है और वह भी बड़े ही मनोयोग और लगन से भाई का काम करती है ।

'विश्वास' शीर्षक कहानी में एक बालक भी इस शिशु वर्ग में आता है । वह एक खोया हुआ शिशु है जिसे मिस्टर आप्टे लाकर पालने लगते हैं । उसकी अवस्था पांच-छ: वर्ष की है । मिस्टर आप्टे से इस बालक को सम्पूर्ण पितृ-स्नेह मिलता है, अत:उसके मन में वही भावना है जो इस वर्ग के शिशु में होती है । मिस्टर आप्टे कांग्रेसी कार्यकर्ता हैं । एक दिन

मंच पर भाषण देते समय मिस्टर आप्टे मिस जोशी पर अप्रत्यक्ष रूप से आक्षेप करते हैं । मिस जोशी उनके यहां आती है और गप-शप के सिलसिले में मजाक के तौर पर कहती है कि वे मिस्टर आप्टे को पुलिस से पकड़वा देंगी । यह छोटा बालक वहां बैठा खेल रहा है, किन्तु पुलिस और उसके पिता के पकड़वाने की बात सुनकर उसके कान खड़े हो जाते हैं । दौड़ा हुआ अपने खेलने का डंडा ले आता है और कहता है हम सिपाही को मारेंगे । शिशु में अपने संरक्षक के प्रति रक्षा की भावना होती है । स्नेह पाने पर वह भावना और भी प्रबल हो उठती है । शिशु अपने स्नेह देने वाले व्यक्ति का कोई अनिष्ट नहीं चाहता ।

'बैर का अन्त:' शीर्षक कहानी में तीन लड़के स्नेह पाने वाले शिशु वर्ग में आते हैं । ये विश्वेश्वर राय के बच्चे हैं । पिता की मृत्यु के पश्चात् माता के सामने इन बच्चों के भरण-पोषण की समस्या उठती है । कुछ दिनों तक गहने आदि बेचकर किसी प्रकार निर्वाह करती है, किन्तु जब यह भी अवलम्ब समाप्त हो जाता है । तो वह इन तीनों को अपनी तीन विवाहित लड़कियों के पास भेज देती है । वहां अधिक दिनों तक उनका निर्वाह नहीं हो पाता । अत: माता के पास वे फिर चले आते हैं। यहां उनकी अवस्था शोचनीय हो उठती है । दूसरों के खेतों से गन्ना, मटर उखाड़ कर वे पेट भरते हैं । जागेश्वर राय इन लोगों का चचेरा भाई है और इस परिवार से उसका पुरानी शत्रुता और पट्टीदारी है, किन्तु बच्चों को इस तरह मटर के पीछे खेत उजाड़ने की बातें सफल हो उठती हैं वह उन्हें बुलाकर खाना देता है तथा स्नेह प्रदर्शित करता है । ये बच्चे क्षुधा से पीड़ित और स्नेह से वंचित हैं । जागेश्वर राय से उनकी दोनों भूख शान्त होती है । स्नेह देने वाले और अपने बीच में किसी प्रकार का व्यवधान नहीं मानते । जागेश्वर को देखते ही 'भैया-भैया' कहकर दौड़ पड़ते हैं । बच्चों की प्रतिक्रिया देखकर उनकी माता को भी जागेश्वर की सहृदयता पर विश्वास हो जाता है ।

'दुध का दाम' कहानी में चार वर्षीय बालक बाकी सभी समूह के अन्तर्गत है । यह बहुत गरीब परिवार का है । माता-पिता उसे भरपेट खाना तक नहीं दे सकते हैं तो भला उसकी मनचाही मिठाई

आदि की मांग कैसे पूरी कर सकते थे । एक दिन साधो एक ईसाई धर्म-प्रचारक प्रचारक के खेमे के पास पहुंचता है । पादरी उस दुर्बल बच्चे को देखकर उससे सहानुभूति प्रकट करता है । उसे मिठाई और केले खाने को देता है । यह बालक वहां परच जाता है और उस पादरी में हिल-मिल जाता है । `साधो को पादरी से स्नेह मिलता है और खाने को मिठाइयां । साधो चार वर्ष का है अत: उसके मन में यह भावना जागती है कि यह व्यक्ति मेरा अपना है , माता-पिता से भी अपना । एक दिन माता से कहता है `तुम तो मुझे रोज चने की रोटियां दिया करती हो । तुम्हारे पास तो कुछ नहीं है । साहब मुझे केला और आम खिलावेंगे । यह कहकर वह खेमे की ओर भागा और रात को वहीं सो गया ।`

यह बालक अपने और पादरी के बीच कोई व्यवधान नहीं मानता और पादरी के हो साथ चल देता है ।

`चोट्टा` कहानी में एक सात-आठ वर्ष का लड़का है । एक दिन उसके पिता दो आने की धाना लाने को कहते हैं। लड़का आधी चीनी फांक जाता है । इस लड़के का पिता दुकानदार को दोषी ठहराता है । साथ ही अपने साथ वह चोचार वालों गवाह लाता है कि बनिये ने किसी को हल्दी किसी को कुछ ठग दिया है । बालक इस परिस्थिति में घबराता और रोने लगता है । अपना दोष स्वीकार करना तो चाहता है किन्तु उसके पिता उसपर बिगड़ न जायें इसलिए घबरा उठता है किन्तु स्नेह पाकर अपना दोष स्वीकार करता है अर्थात् स्नेह पाने वाले शिशु वर्ग की प्रतिक्रिया इस बालक में होती है ।

`आधार` शीर्षक कहानी में वासुदेव स्नेह पाने वाले शिशु वर्ग के अन्तर्गत आता है । इसकी अवस्था पांच वर्ष की है । इसके बड़े भाई की मृत्यु हो जाती है । इसकी भाभी अनुपा बहुत सुशील और काम करने वाली है । उसकी सास नहीं चाहती कि अनुपा के घर वाले उसकी दूसरी सगाई कर दें । अत: अनुपा के हृदय पर विजय प्राप्त करने के लिए उसके पास वासुदेव को भेजती है । वासुदेव अनुपा की गोद में बैठकर पूछता है तुम हमसे ब्याह करोगी । अनुपा का हृदय गद्गद् हो उठता है।

अनूपा उसके स्नेह से आकर्षित होती है और वसुदेव को ही अपने जीवन का आधार बना लेती है। दूसरी सगाई को तैयार नहीं होता। वासुदेव में उन सभी प्रतिक्रियाओं का आविर्भाव होता है, वह अनूपा को नहीं छोड़ता, माता से भी अधिक वह उसे प्यार करता है। जो कुछ खाना चाहता है, वह अनूपा से ही मांगता है। कोई मारता है तो रोता हुआ अनूपा के पास जाता है और अनूपा की गोद में सोता है। माता को भूल गया है, अनूपा ही उसके लिए सब कुछ है। वासुदेव के पास उन समस्त गुणों के बीच उपस्थित है जो इस वर्ग के शिशु में पाये जाते हैं। उसके हृदय में स्नेह का एक भूख है, जिसकी तृप्ति होने पर स्नेह देने वाले और अपने बीच कोई व्यवधान नहीं मानता।

`मृतक भोज` कहानी में सोहन ८ वर्ष का बालक है, हठी और जिद्दी। खाने-पीने के मामले में स्वार्थी है किन्तु स्नेह से बात करने से वह अपनी जिद और हठ छोड़ देता है। वह मिठाई जब अकेले खाता है और बहन को भी नहीं देता तो माता के कहने पर `बहन को भी दे दे अकेला ही खा जायेगा`। वह लज्जित हो जाता है। उसकी आँखें डबडबा आती है।

`बिन्नी` चार वर्ष की आयु में अपनी बड़ी बहन मंगला द्वारा गोद ले ले जाती है। मंगला इसकी सौतेली बहन है किन्तु माता-सा स्नेह प्राप्त करने पर वह उससे अलग नहीं हो सकती। मंगला रसोई बनाने जाती है तो बिन्नी भी उसके पीछे-पीछे जाती है। आटा गूंधने, तरकारी काटने खाना बनाने सभी में बहन के साथ रहती और उसके कामों में हाथ बंटाने के लिए झगड़ा करती है। जीजा से भी उसे उतना ही स्नेह मिलता है, अतः जीजा के पूछने पर कि तू किसकी बेटी है? कहती है, तुम्हारी और उछल कर उनकी गोद में जा बैठती है। एक बार बिन्नी के पिता उसे घर ले जाते हैं। वहाँ वह रो-रोकर दुनिया सिर पर उठा लेती है। जब उसके जीजा आते हैं तो बड़ी खुशी से लौट आती है। स्नेह पाकर माता-पिता के प्रति उसकी सारी मनोभावना बदल गई है। प्रेमचन्द के शब्दों में --`बिन्नी अपने माता और पिता को भूल गई। वह चौबे जी को अपना बाप और मंगला को

अपनी मां समझने लगी । जिन्होंने जन्म दिया था अब वे गैर हो गये ।`
स्पष्ट है `भूत` शीर्षक कहानी की यह बिन्नी इसी वर्ग की शिशु है ।

`मांगे की घड़ी` कहानीमें यह बालक दानू बाबू का शिशु है । दानू बाबू कंजूस व्यक्ति हैं अपनी कोई चीज किसी को नहीं देते । सयाने पिता के लड़के भी सयाने होते हैं । यह शिशु पिता की तरह सयाना और अपनी चीज किसी को न देने वाला है । दानू बाबू के मित्र को उनकी घड़ी की जरूरत है, अत: वे शिशु स्नेह के माध्यम से इस कार्य को करना चाहते हैं । वे दानू बाबू की कलाई से घड़ी लेकर उस शिशु की कलाई में बांध देते हैं और उस बालक को स्नेह देकर घड़ी ले लेते हैं ।

`लांछन` कहानी में शारदा को स्नेह देने वाला व्यक्ति उससे पूर्व अपरिचित नहीं है, किन्तु स्नेह पाकर वह उससे घुल-मिल जाती है और उसे राजा भैया कहने लगती है । यह व्यक्ति जिसका नाम रजा है, शारदा की मां देवी को अपनी ओर आकर्षित करना चाहता है । अपने इस कार्य के लिए वह शिशु-स्नेह का साधन अपनाता है । वह शारदा के लिए गुड़िया और खिलौने लाता है, जिसे पाकर शारदा हर्ष विह्वल हो जाती है और उनपर टूट पड़ती है । वह रजा के भीतरी स्वार्थ को नहीं समझ पाती । वह तो स्नेह को समझती है और उसी से आकर्षित होती है । शारदा में परिस्थिति की जटिलता के विश्लेषण की क्षमता नहीं है । यह स्वाभाविक ही है । वह चरित्र के कलुष रूपों को नहीं पहचानती । यह भी स्वाभाविक है । स्नेह का महत्व ही उसके लिए सब कुछ है ।

`कबाली` कहानी में नाम से सम्बोधित पात्र अपने लेखक का चित्रण करता है और उसके चपरासी कबाली से उसका जैसा स्नेह सम्बन्ध था उसे बड़े ही मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त करता है । डाकखाने का काम करने के बाद जब कबाली आता तो वह उसके पास दौड़ पड़ता, उसके साथ खेलता, चिरके सुनता, चोरी-डाके मारपीट, भूत-प्रेत की कहानियां सुनता है । बाल जीवन जीये सबसे मधुर बातें हैं । एक बार कबाली बीमार पड़ता है

तो माता-पिता से बिना अनुमति लिए कजाकी के घर तक जाता है । एक गली में कजाकी के समान दुबले-पतले व्यक्ति को देखकर उसकी ओर दौड़ पड़ता है । वह कजाकी के बिना नहीं रह सकता । कजाकी से उसके हृदय के स्नेह की भूख मिटती है अतः वह उसे ही अपना सब कुछ मानता है ।

'महातीर्थ' कहानी में दो वर्षीय शिशु रुद्रमणि स्नेह पाने वाले शिशु वर्ग के अन्तर्गत आता है । कैलासी इसकी दाई है, जिसे वह अम्मा कहकर पुकारता है । अम्मा उसके जीवन का आधार स्वरूप है । अम्मा के आगे माता को नहीं पूछता । किसी कारणवश रुद्रमणि की माता अम्मा को घर से निकाल देती है । रुद्रमणि के में किस प्रकार की प्रतिक्रिया होती है, उसका चित्रण इस प्रकार है-- 'रुद्रमणि दाई के पीछे-पीछे दरवाजे तक आया, पर दाई ने जब दरवाजा बाहर से बन्द कर दिया तो वह मचल कर जमीन पर लेट गया । और अम्मा-अम्मा कहकर रोने लगा । सुखदा ने चुमकारा, प्यार किया, गोद में लेने की कोशिश की मिठाई देने का लालच दिया, मेला दिखाने का वायदा किया, इससे जब काम न चला तो बन्दर, सिपाही, लू लू और हौवा की धमकी दी पर रुद्र ने वह रौद्र रूप धारण किया कि किसी तरह चुप न हुआ । यहां तक कि सुखदा को क्रोध आगया बच्चे को वहीं छोड़ दिया ।.... रोते-रोते रुद्र का मुंह और ब गाल लाल हो गये, आँखें सूज गईं,' निदान वह वहीं जमीन पर सिसकते-सिसकते सो गया ।

दो साल का लहलहाता हुआ सुन्दर पौधा मुर्झा सा गया । वह बालक जिसे गोद में उठाते ही नर्मी-गर्मी और भारीपन का अनुभव होता था वह अब सूखकर कांटा हो गया था ।'

अकेले में बैठकर कल्पित अम्मा से बातें करता अम्मा, दूधा मुझे, अम्मा गाय दूध देती।के अम्मा उछला-उछला घोड़ा दौड़े । सवेरा होते ही लोटा लेकर दाई की कोठरी में जाता और कहता अम्मा, पानी । दूध का गिलास लेकर उसकी कोठरी में रख आता और कहता -- अम्मा दूध पिला । अपनी चारपाई पर तकिया रखकर चादर से ढक देता और कहता अम्मा सोती है ।' इस प्रकार रुद्रमणि की अवस्था

ऐसी हो जाती है कि वह धीरे-धीरे बीमार पड़ जाता है कि ~~वह धीरे-धीरे बीमार पड़ जाता है~~ और उसके पिता को अम्मा का पता लगा कर बुलवाना पड़ता है । अम्मा को देखते ही रूड़ का पीला मुर्झाया हुआ चेहरा खिल उठता है, जैसे बुझते हुए दीपक में तेल पड़ जाए । अत्यधिक स्नेह देने वाले से हटाये जाने पर शिशु अपना प्राण भी त्याग सकता है ।

'बेटी का धन' कहानी में गंगाजली की माता का देहान्त हो चुका है और वह पिता द्वारा पाली गई है । इसके तीन बड़े भाई तीन भाभियां और कई भतीजे -भतीजियां हैं । पूरा परिवार भरा-पुरा है, किन्तु परिवार का सारा भार इसके पिता पर है, इनके दुःख-दर्द में सहानुभूति प्रकट करने वाला कोई नहीं है । लगान के कारण उसके पिता धुन पर एकतरफा डिग्री हो जाता है । झुड्डू चिन्ता से व्याकुल रहता है । गंगाजली के हृदय में पिता के प्रति अगाध स्नेह और सहानुभूति है । माता के देहान्त के कारण उसे माता का स्नेह भी पिता ही के द्वारा मिलता है । वह अपने पिता के लिए बड़ा-सा-बड़ा त्याग करने को तैयार है । पिता को चिन्तित देख उसे ऋण से मुक्त करने के लिए अपने गहने लाकर उसके सामने रख देती है । झुड्डू बेटी का धन लेकर अपना धर्म नाश करना नहीं चाहता। गंगाजली यह सुनकर बहुत दुखित होती है और क्षुब्ध होकर कहती है कि यदि वह इस प्रकार चिन्ता में अपने को घुला डालेगा तो वह गंगा में डूब मरेगी । पिता को अन्त में उसके गहने लेने ही पड़ते हैं । स्नेह वश वह बहुत बड़ा त्याग करती है । अतः उसे स्नेह पाने वाले शिशु वर्ग के अन्तर्गत रखते हैं ।

'लाडली' अपने परिवार की सबसे छोटी बालिका है । इसके बड़े भाई इसे बहुत तंग करते हैं । जब यह नाश्ता करने बैठती है तो वे आकर उसे झपट कर खा जाते हैं, उसकी मिठाइयां, छीन लेते हैं । लाडली अपनी रक्षा के लिए बूढ़ी काकी की शरण में जाती है । बूढ़ी काकी की गोद ही उसकी सुरक्षा का सबसे अच्छा स्थान है । अब लाडली उसे बहुत प्यार करती है । बूढ़ी काकी इस परिवार में भारस्वरूप है, किसी को उससे साथ न सहानुभूति है और न सम्वेदना ही । परिवार के बच्चे उसे चिकोटी

काटकर भागते और उसे चिढ़ाते हैं किन्तु लाड़ली के साथ यह बात नहीं, वह तो उससे स्नेह और रक्षा पाती है, अत: उसकी मनोभावना उसके प्रति दूसरी है । एक दिन की बात है-- लाड़ली के बड़े भाई का तिलक था और मसाले की क्षुधावर्द्धक सुगन्धि से बुढ़ी काकी बेचैन हो रही थी । उसके यहां मेहमानों ने भोजन किया घर वालों ने भोजन किया, बाजे वाले,धोबी, चमार, सभी भोजन किया, किन्तु बुढ़ी काकी को किसी ने न पूछा । माता-पिता की इस निर्दयता पर लाड़ली अन्दर ही अन्दर कुढ़ रही थी ।लाड़ली के मन में उस स्नेह देने वाली बुढ़ी के प्रति जो प्रतिक्रियायें होती हैं उसका स्पष्ट चित्रण इस प्रकार है-- "लाड़ली को काकी से अत्यन्त प्रेम था । बेचारी भोली लड़की थी । बाल-विनोद और चंचलता की उसमें गन्ध तक न थी । दोनों बार उसके माता-पिता ने काकी को निर्दयता से घसीटा तो लाड़ली का हृदय ऐंठ कर रह गया । वह झुंझला रही थी कि यह लोग काकी को क्यों बहुत-सी पूरियां नहीं दे देते ? क्या मेहमान सब की सब खा जायेंगे? और यदि काकी ने सब मेहमानों के पहले ही खालिया तो क्या बिगड़ जायेगा ? वह काकी के पास जाकर धैर्य देना चाहती थी,परन्तु माता के भय से न जाती थी । उसने अपने हिस्से की पूरियां बिल्कुल न खायी थीं । अपनी गुड़िया की पिटारी में बन्द कर रखी थी ।वह उन पूरियों को काकी के पास ले जाना चाहती थी ।उसका हृदय अधीर हो रहा था । बुढ़ी काकी मेरी बात सुनतेहि[1] उठ बैठेंगी, पूरियां देखकर कैसी प्रसन्न होंगी । मुझे खूब प्यार करेंगी ।" परिवार के सभी प्राणी सो रहे हैं,किन्तु लाड़ली के आंखों में नींद नहीं । रात अंधेरी है, सभी सोये हैं, लाड़ली ज्यों आंख खोलती है तो उसकी दृष्टि दरवाजे के पास के नीम वृक्ष पर हनुमान बैठा है अत: वह भय से आंखें बन्द कर लेती है । वह उठना चाहती है,किन्तु अब भी डर है कि कहीं अम्मा न जाग जाए । काकी को पूरियां दें खिलाने के लिए वह बेचैन हो रही है । अन्त में किसी तरह साहस बटोर कर पिटारी लिए काकी के पास जाती है ।काकी लाड़ली की आवाज पहचान जाती है । वह चटपट उठती लाड़ली को प्यार से गोद में बैठाती और पूरियों प र

---

१ प्रेमचन्द : 'मानसरोवर',भाग ८,पृ० १५३

टूट पड़ती है । काकी का सहानुभूति देखकर लाडली के मन को भी एक प्रकार तृप्ति और सान्त्वना मिलती है । इस प्रकार यह स्पष्ट है कि 'बूढ़ी काकी' कहानी की इस बालिका का चरित्र सम्मुखपरक है ।

'कफ़न' कहानी संग्रह में 'तथ्य' शीर्षक कहानी में पूर्णिमा का शिशु इसी वर्ग के अन्तर्गत है । पूर्णिमा के बचपन का साथी अमृत बराबर आता और इस शिशु को खिलाता है । इसके लिए अच्छी-अच्छी मिठाइयां लाता है । शिशु अमृत से एकदम हिल मिल गया है । वह अमृत को पल भर के लिए भी छोड़ना नहीं चाहता है । जब अमृत उससे पूछता है कि तुम किसके लड़के हो तब वह कहता है 'टुमाले' । शिशु स्नेह देने वाले को ही अपना समझता है । ऐसे वह संसार के सारे रिश्ते-नाते से अनभिज्ञ होता है ।

मिस्टर बागची का यह सबसे छोटा शिशु है । उसके अन्य भाई-बहन जन्म लेते ही किसी न किसी रोग के शिकार होकर मर गये । यह सबसे छोटा माता-पिता का एकमात्र सहारा तथा उनकी आंखों का तारा है । किन्तु यह शिशु अपनी दाई माधवी से अधिक स्नेह पाने के कारण उससे हिल-मिल जाता है । प्रेमचन्द के शब्दों में-- 'माधवी से यह बालक हिल मिल गया कि एक क्षण के लिए भी उसकी गोद से न उतरता । वह कहीं एक क्षण के लिए चली जाती है तो रो-रोकर दुनिया सिर पर उठा लेता । वह सुलाती तो सोता, दूध पिलाती तो पीता, वह खेलाती तो खेलता । उसी को वह अपनी माता समझता । माधवी के सिवाय उसके लिए संसार में कोई अपना न था । बाप को तो वह दिन भर में केवल दो-चार बार देखता और समझता, यह कोई परदेशी आदमी है । मां आलस्य और कमजोरी के कारण उसे गोद में लेकर टहल न सकती थी । उसे वह अपनी रक्षा का भार सम्हालने के योग्य न समझता था और नौकर-चाकर उसे गोद में लेते तो इतनी बेदर्दी से कि उसके कोमल अंगों में पीड़ा होने लगती थी । कोई उसे ऊपर से उछाल देता था, यहां तक कि अबोध शिशु का कलेजा मुंह को आ जाता था। इन लोगों से वह डरता था । केवल माधवी थी जो उसके स्वभाव को समझती थी । वह जानती थी कि कब क्या करने से बालक प्रसन्न होगा, इसलिए बालक को भी उससे प्रेम था ।[1]

[1] प्रेमचन्द : 'मानसरोवर', भाग ३--पृ०४०,पृ०४८

वास्तव में माधवी मिस्टर वागची के यहां प्रतिशोध की भावना से दाई बनकर आती है । मिस्टर वागची ने उसके एकमात्र पुत्र को आठ वर्षों का कारावास का दण्ड दिया था । माधवी मिस्टर वागची को भी शिशु स्नेह से वंचित करना चाहता है, किन्तु यह शिशु माधवी से इतना हिल मिल जाता है कि माधवी का हृदय परिवर्तित होता है । उसका मातृत्व उमड़ पड़ता है । वह प्रतिशोध को भूल जाती है । `माता का हृदय` शीर्षक कहानी में शिशु चरित्र की यही मार्मिक अभिव्यंजना है ।

`गृह-दाह` कहानी का ज्ञानप्रकाश बाबू देवप्रकाश और देवप्रिया का पुत्र है । माता-पिता का प्रिय और लाड़ला है । सत्यप्रकाश इसका बड़ा किन्तु सौतेला भाई है । विमाता सत्यप्रकाश से घृणा करती है, अपने पुत्र को उसके साये से बचाना चाहती है । ज्ञानू को भाई से अधिक स्नेह है । अतः सत्यप्रकाश के विरुद्ध परिवार में होने वाले अत्याचारों का विरोध करता है । उसके फटे-चिथड़े कपड़े देखकर माता से प्रतिवाद करता है और भाई के लिए पैजामा, अचकन मंगवाता है । अपने जेब खर्च से बचाकर भाई को देता है । विमाता के दुर्व्यवहार से जब सत्यप्रकाश घर छोड़ता है, तब ज्ञानप्रकाश रोते-रोते उसके गले मिलता और विदा करता है । वह कहता है `मुझे भूल तो न जाओगे ? मैं तुम्हारे पास खत लिखा करूंगा, मुझे भी एक बार अपने यहां बुलाना ।` फिर (रोते-रोते) `मुझे न जाने क्यों तुम्हारी बड़ी मुहब्बत लगती है ।`

`गुप्तधन` भाग १ में अनाथ लड़की की रोहिणी, `त्रिया-चरित्र` का मगनदास और `शेलमलपुर` का मसऊद स्नेह-प्राप्त बालक हैं । `अनाथ लड़की` शीर्षक कहानी की रोहिणी अपनी वाचालता तथा भोलेपन से सेठ पुरुषोत्तम दास जी के मन को मोह लेती है । इसका पितृ-स्नेह वंचित हृदयनेसम्भवतः सेठ पुरुषोत्तमदास जी के कोमल और स्नेहिल हृदय को पहचान लिया और उन्हें अपना पिता(संरक्षक) बना लिया । इसके बाद वह सदा उनसे स्नेह पाती रही । उनकी कृपा रोहिणी पर इतनी रही कि उन्होंने उसका सम्पूर्ण भार ले लिया और उनकी संरक्षा तथा स्नेह के कारण

शिक्षा तथा गुण में उत्तरोत्तर उन्नति करता गई ।

'त्रिया चरित्र' में मगनदास पांच-छः वर्ष का होनहार अनाथ बालक है, जिसे सेठ लगनदास गोद लेते हैं। ऐसे सेठ लगनदास ने सन्तान के लिए पांच शादियां कीं, किन्तु व्यर्थ सन्तान की अभिलाषा पूरी न हुई अतः इन्होंने इस बालक को गोद लिया और मगनदास नाम रखा । वह बड़ा ही जहीन और समझदार था । माताओं के स्नेह में अन्तर था। कुछ व्यवधान था अर्थात् जब एक माता बहुत अधिक प्यार दर्शाती तो चार माताएं टीका-टिप्पणी करतीं और नफरत करतीं । किन्तु सेठ जी उसके साथ बिल्कुल अपने लड़के का सा सलूक करते थे । पढ़ाने के लिए मास्टर रखे, सवारी के लिए घोड़े । रईसी ख्याल के आदमी थे । राग-रंग का सामान मुहैया था । गाना सीखने का लड़के को शौक था तो उसका भी इन्तजाम हो गया ।

'गुप्तधन' भाग १ में '[illegible]' शीर्षक कहानी में मकरन्द स्नेह प्राप्त शिशु है । वह शाह नामुराद तथा बसरा के सरदार रिन्दा का पुत्र है, जिसकी आयु सात वर्ष का है । शाह नामुराद शाहकिश्वर से चूक छूटे, तीन लाख मुसलमानों को अपने देश पर चढ़ा लिया, जंगल-जंगल भटकते फिरे किन्तु देश पर शाहकिश्वर ने सिक्का जमा लिया । अन्त में शाह नामुराद जंगल जंगल भटकते रहे और एक झोंपड़े में बसर करने लगे । एक दिन बसरा के सरदार से कहा 'मैं शादी करना चाहता हूं । इस पैगाम को सुनकर वह अचम्भे में आ गया और अपनी कुंआरी नौजवान लड़की उनकी भेंट की । तीसरे साल इस युवती के कामनाओं की वाटिका में एक गौरव पौधा लगा । शाह साहब खुशी के मारे फूले न समाये । इस प्रकार वह शिशु अपने माता-पिता के जीवन तथा स्नेह का केन्द्र है । माता-पिता के स्नेह और शिक्षा के कारण विशिष्ट बालक बनता है ।

'गुप्तधन' भाग २ में शान्ता 'प्रेम सूत्र' कहानियों की स्नेह प्राप्त शिशु पात्र है ।———————————

शान्ता ३-४ वर्षों की बालिका ~~प्रभा और पशुपति~~ प्रभा और पशुपति की है । पशुपति और प्रभा का पारिवारिक जीवन विशृंखल हो जाता है, प्रभा स्नेह का केन्द्र बनी रहती है । पशुपति प्रभा को छोड़कर इंगलैण्ड चला जाता है । शान्ता अपनी माता के जीवन का केन्द्रबिन्दु बन जाती है । प्रभा के मनोभाव अपनी पुत्री के प्रति -- प्रभा अपने घर लौटते ही उस कमरे में गई, जहां उसकी लड़की शान्ति अपनी दाई की गोद में बैठ रही थी । अपनी नन्हीं-सी जीती-जागती गुड़िया की सूरत देखते ही प्रभा की आंखें सजल हो गईं । उसने मातृ-स्नेह से विभोर होकर बालिका को गोद में उठा लिया, मानों किसी भयंकर पशु से उसकी रक्षा कर रही है । उस दुस्सह वेदना की दशा में उसके मुंह से यह शब्द निकल गये --बच्ची तेरे बाप को लोग तुझसे छीनना चाहते हैं । हाय तू क्या अनाथ हो जायगी ? नहीं नहीं, अगर मेरा वश चलेगा तो मैं इन निर्दय हाथों से उन्हें बचाऊंगी ।

\+ \+ \+

'प्रभा ने झट बालिका को गोद में उठा लिया और उसे छाती से लगाते ही उसके विचारों ने पलटा खाया । उन भोले नेत्रों में उसके प्रति कितना असीम विश्वास कितना सरल स्नेह, कितना पवित्र प्रेम झलक रहा था । उसे उस समय माता का कर्त्तव्य याद आया । क्या उसकी प्रेमाकांक्षा उसके वात्सल्य भाव को कुचल देगी । क्या वह प्रतिकार की प्रबल इच्छा पर अपने मातृ-कर्त्तव्य का बलिदान कर देगी ? क्या वह अपने शारीरिक सुख के लिए इस बालिका का भविष्य, उसका जीवन धूल में मिला देगी ? प्रभा की आंखों में मिला देगी ? प्रभा की आंखों से आंसू की दो बूंदें गिर पड़ीं । उसने कहा--"नहीं, कदापि नहीं, मैं अपनी प्यारी बच्ची के लिए सब कुछ सह सकती हूं ।"[६]

प्रेमचन्द के उपन्यास 'निर्मला' में निर्मला, कृष्णा और चन्द्रभानु ये तीनों शिशु पात्र स्नेह पाने वाले शिशु हैं । ये उदयभानु और कल्याणी के बच्चे हैं जो क्रमशः पन्द्रह, बारह और दस वर्षों के हैं । एक मध्यवित्त तथा प्रतिष्ठित परिवार के हैं । पंडित उदयभानु लाल एक अच्छे वकील हैं । उन्हें अपनी तीनों सन्तानों से अत्यधिक स्नेह है । इन बच्चों की माता भी इन्हें बहुत प्यार करती है । इन तीनों बालकों को किसी बात की कमी नहीं थी । सारी इच्छाएं पूरी की जाती हैं । शाम को बग्घी तैयार होती है और तीनों बच्चे साथ बग्घी पर घूमने जाते हैं । ये तीनों भाई

६- प्रेमचन्द : 'गुप्तधन', पृ० १८८, १८६ ।

भी आपस में स्नेह और सद्भावना के सूत्र में बंधे हैं ।

जालपा भी `गबन` उपन्यास की स्नेह पाने वाली शिशु पात्री है । इसके माता-पिता मध्यवित्त, प्रतिष्ठित परिवार के हैं । इसके पिता दीनदयाल जमीन्दार के मुख्तार हैं । वेतन से अधिक आमदनी है । जालपा से पहले इसके माता-पिता के तीन-तीन पुत्र पैदा हुए किन्तु अल्प आयु में ही उनकी मृत्यु हो गई । अत: जालपा को माता-पिता तथा परिवार के अन्य सदस्यों का अत्यधिक स्नेह मिलता है । दीनदयाल सदा उपहार के रूप में आभूषण ही इसे देते हैं । अत: इसके मन में आभूषण के प्रति प्रेम बढ़ता ही जाता है ।

`गोदान` में होरी धनिया की दोनों लड़कियां -- सोना और रूपा इसी वर्ग में आती हैं । सोना और रूपा को माता-पिता तथा भाई गोबर का स्नेह प्राप्त होता है । दोनों लड़कियां अपने माता-पिता के कामों में व मदद देती हैं । मिल-जुल कर सारा परिवार काम करता है । दोनों बहनों में अपने -अपने नाम को लेकर जब प्रतिवाद चलता है तब पिता इस विनोद में भाग लेता है --`होरी ने सोना को बनावटी रोष से देखकर कहा -- तू इसे क्यों चिढ़ाती है सोनिया ? सोना तो देखने को है । निबाह तो रूपा से होता है । रूपा न हो तो, रुपये कहां से बनें । बता । सोना ने अपने पक्ष का समर्थन किया -- सोना न हो तो मोहन कैसे बने, नथुनियां कहां से आयें, कंठा कैसे बने ? गोबर भी इस विनोदमय विवाद में शरीक हो गया । रूपा से बोला -- तू कह दे कि सोना तो सूखी पत्ती की तरह पीला होता है । रूपा तो उजला होता है जैसे सूरज ।`[1]

रूपा ~~तो~~ अपने पिता की टांगों में लिपट जाती है, कहती है--` काका ! देखो मैंने एक ढेला नहीं छोड़ा । बहन कहती है, जा, पेड़ तले बैठ । ढेले न तोड़े जायेंगे काका, तो मिट्टी कैसे बराबर होगी ।`

1- `गोदान`,पृ० १७

होरी ने उसे गोद में उठाकर प्यार करते हुए कहा -- तूने बहुत अच्छा किया बेटी, चल घर चलें।[1]

`गोदान` में गोबर और धनिया का जारज शिशु चुन्नू भी सामान्य बालक है उसे अपनी दादी का अत्यधिक स्नेह प्राप्त होता है। दादी अपने इसी वात्सल्य स्नेह के कारण गोबर के अपराध कोभी भूलजाती है और उसे क्षमा कर देती है। इस बच्चे को अपनी दोनों -फुआओं-- सोना और रूपा का भी अत्यधिक प्यार मिलता है। वे दोनों इसे हृदय से लगाती फिरती हैं। उसे अपनी गोद से भी नहीं उतरने देतीं। नये-नये फ्राक, टोप जूता आदि पहना कर राजा बा भैया बनाये रहती हैं।

`गोदान` में मंगल भी इसी वर्ग का शिशु पात्र है। यह गोबर और झुनिया का पुत्र है। इस समय गोबर मिस मालती के यहाँ माली है। इसे माता-पिता का स्नेह तो मिलता ही है, किन्तु इससे अधिक मिस मालती का प्यार एवं सेवा सुश्रुषा प्राप्त करता है। इसके बीमार पड़ने पर इसी के नींद सोती और इसी के नींद जगती ह। मिस मालती के माध्यम से मिस्टर मेहता का भीप्रिय पात्र बन जाता है। वह उनके मुंह की मूंछ और से खींचता है जिससे उनकी आंखों में आंसू भर आते हैं, किन्तु वे कुछ नहीं कहते।

`गोदान` में गोविन्दी और मिस्टर खन्ना का सबसे छोटा पुत्र भीष्म यद्यपि पिता द्वारा ध्यान नहीं प्राप्त करता, किन्तु माता का अत्यधिक स्नेह प्राप्त करता है। यह अपने सभी भाई-बहनों में सबसे अधिक दुर्बल है, अतः माता इसपर सबसे ज्यादा ध्यान देती है।

रामू सिलिया चमारिन और मातादीन ब्राह्मण का जारज पुत्र है। अवस्था इसकी २ वर्ष की है। स्वभाव का चंचल और बहुत बोलने वाला है छूटे बिल्ली की बोली का अनुकरण करने वाला है।

---

१ प्रेमचन्द : `गोदान`, पृ० १६, परिच्छेद ३, पन्द्रहवां संस्करण, १९५८

अतः अपनी तुतली बोली से सब के मन को हरने वाला है एवं वह पूरे गांव का स्नेह पाने वाला शिशु है ।

'गोदान' में गोबर और झुनिया का नवजात शिशु जिसके जन्म के समय माता की कराह की आवाज सुनकर बुढ़िया नामक स्त्री आती है । यह अत्यधिक इस बालक तथा माता की सेवा करती है । इस बालक के माध्यम से इस स्त्री का परिचय होता है । गोबर के जीवन में परिवर्तन होता है और यह माता-पिता दोनों का स्नेह प्राप्त शिशु है ।

(ब) स्नेह वंचित शिशु पात्र वर्ग

ठीक जैसे स्नेह पाने वाले का एक वर्ग बनाया गया है, वैसे ही स्नेह वंचित शिशु-पात्रों का भी एक वर्ग बनाया जा सकता है । जैसे स्नेह, शिशु जीवन को स्वर्ग बना देता है, वैसे ही स्नेह का अभाव भी जीवन को शुष्क, मरुभूमि बना देता है । स्नेह का यह अभाव माता-पिता की अकाल मृत्यु, विमाता का आगमन या अन्य कारणों से हो सकता है । कभी-कभी सामाजिक रूढ़ियां और परम्पराएं भी स्नेह के अभाव का कारण बन सकती हैं । उदाहरण के लिए 'तेंतर' कहानी में तेंतर पुत्री का जन्म अशुभ माना जाने के कारण माता-पिता नवजात शिशु को भी स्नेह नहीं देते । कभी-कभी किसी-किसी का जन्म अपशकुन होता है, उसके जन्म लेते ही घर में दरिद्रता एवं निर्धनता का आगमन होता है । अतः ऐसे शिशु को अमंगलजनक माना जाता है । फलस्वरूप उन्हें स्नेह से वंचित कर दिया जाता है । इसमें उसका कोई अपराध नहीं होता । स्नेह का अभाव आर्थिक संकटों के कारण भी उत्पन्न होता है । किसी दरिद्र परिवार में जब बहुत सारे बच्चे उत्पन्न होते हैं तो माता-पिता में एक तरह की कुण्ठा और झुंझलाहट पैदा होती है, जो संतान के प्रति स्नेह के अभाव के रूप में प्रदर्शित होती है । कभी-कभी सामाजिक कारण भी होता है । कभी-कभी कोई शिशु माता-पिता की अप्रतिष्ठा का हेतु बनता है । वह इतना शरारती, नटखट और शैतान होता है कि माता-पिता उससे तंग रहते हैं और उन्हें स्नेह नहीं देते । स्नेह के अभाव का चाहे जो कारण हो, किन्तु स्नेह के अभाव से उनमें कुछ ऐसी परिस्थितियां होती हैं,

जो ऐसी स्थिति में पड़े शिशुओं में समान होती हैं। इन प्रतिक्रियाओं के आधार पर ही इन शिशुओं का एक वर्ग बनाया जा सकता है।

'अलग्योझा' शीर्षक कहानी में रग्घू स्नेह वंचित शिशु पात्र है। दस वर्ष की अवस्था में उसकी माता का देहान्त हो जाता है। विमाता के आते ही बेचारे के दुर्भाग्य का उदय होता है। इन परिस्थितियों में रग्घू पितृ के स्नेह से वंचित होता है और उसकी प्रतिक्रिया किस प्रकार होती है, इसका विवरण लेखक के ही शब्दों में इस प्रकार है -- 'भोला महतो ने पहली स्त्री के मर जाने के बाद दूसरी सगाई की तो उसके लड़के रग्घू के लिए बुरे दिन आ गए। रग्घू की उम्र उस समय केवल दस वर्ष की थी। चैन से गांव में गुल्ली-डंडा खेलता फिरता था। मां के आते ही चक्की में जुतना पड़ा। पन्ना रूपवती स्त्री थी और रूप और गर्व में चोली-दामन का नाता है। वह अपने हाथों से कोई मोटा काम न करती। गोबर, रग्घू निकालता, बैलों को सानी रग्घू देता, रग्घू ही जूठे बर्तन मांजता। भोला की आंखें कुछ ऐसी फिरीं कि उसे रग्घू में सब बुराइयां ही बुराइयां नज़र आतीं। पन्ना की बातों को वह प्राचीन मर्यादानुसार आंखें बन्द करके मान लेता था। रग्घू की शिकायतों की ज़रा भी परवाह न करता। नतीजा यह हुआ कि रग्घू ने शिकायत करना छोड़ दिया। किसके सामने रोये? बाप ही नहीं, सारा गांव उसका दुश्मन था। बड़ा ज़िद्दी लड़का है, पन्ना को तो कुछ समझता ही नहीं, बेचारी उसका दुलार करती है, खिलाती-पिलाती है। यह उसी का फल है। दूसरी औरत होती तो निबाह न होता। वह तो कहो पन्ना इतनी सीधी सादी है कि निबाह होता है। सबल की शिकायतें सब सुनते हैं, निर्बल की फरियाद भी कोई नहीं सुनता। रग्घू का हृदय माँ की ओर से दिन-दिन फटता जाता था। यहां तक कि आठ साल गुज़र गये।'[1]

विमाता के आने के कारण रग्घू स्नेह से वंचित होता है। दिन भर नौकरों की तरह उसे काम करना पड़ता है।

---

[1] प्रेमचन्द : 'मानसरोवर', भाग १, पृ० १३ (नवां संस्करण)

आज उसकी शिकायत सुनने वाला कोई नहीं है । वह अपनी वेदना किसी से नहीं कह सकता ।

'झांकी' कहानी में सास-बहू के झगड़े के कारण दो शिशु स्नेह वंचित हो रहे हैं । सास अलग मुंह फुलाए बैठी है और बहू अलग । कोई किसी से नहीं बोलता । रात को खाना नहीं बना । दिन को पति देव द्वारा स्टोव पर खिचड़ी डाली गई, पर खाया किसी ने नहीं । छोटी बच्ची कभी माता के पास जाती है, कभी दादी के पास, कोई उसे प्यार नहीं करता , कोई बोलता तक नहीं । बालिका अजीब स्थिति का अनुभव करती है । सोच रही है, उसने कौन सा अपराध किया है, आज घर की स्थिति क्यों ऐसी है, उसका बड़ा भाई शाम को स्कूल से घर आया । किसी ने उससे न कुछ पूछा और न कुछ खाने को ही दिया । अत: दोनों भाई-बहन बरामदे में जाकर बैठे रहे । उनके मन में तरह-तरह की भावनाएं तथा आशंकाएं उठने लगीं । 'घर में आज क्यों लोगों के हृदय उनसे इतने फिर गये हैं । भाई बहन दिन में कितनी ही बार लड़ते हैं, रोना पीटना भी कई बार हो जाता है, पर ऐसा कभी नहीं होता कि घर में खाना न बने या कोई किसी से बोले नहीं । यह कैसा झगड़ा है कि चौबीस घण्टे गुज़र जाने पर भी शान्त नहीं होता ।'[1]

तीतर पुत्री का जन्म अशुभ माने जाने के कारण एक तीतर बालिका के जन्मते ही उसके सम्पूर्ण परिवार में भय और आशंका का वातावरण छा जाता है । तीतर लड़की होकर जन्म लेने में इस बालिका का क्या दोष ? किन्तु मात्र अन्धविश्वास होने के कारण उसे माता तथा दादी के घृणा का शिकार होना पड़ता है । स्नेह की तो बात ही दूर रहे माता उसे दूध तक नहीं पिलाती दादी कहती है --'कलमुंही नक्षत्रों में आयी है, रोई भी नहीं, टुकुर-टुकुर ताकती रही, ये सब लक्षण कुछ अच्छे थोड़े ही हैं ।'[2]

---

1 प्रेमचन्द : 'मानसरोवर', भाग 2, पृ० 195

2 ,, : ,, भाग 3, पृ० 208 (प्रथम संस्करण)

उस बालिका के जन्म के बाद सारी विधियां और रस्म-रिवाज पूरे किए जाते हैं किन्तु हृदय में कुछ भी नहीं -- `छठी भी हुई बरही भी हुई, गाना-बजाना, खाना-खिलाना, देना-दिलाना सब कुछ हुआ पर रस्म पूरी करने के लिए, दिल से नहीं, खुशी से नहीं। लड़की दिन-दिन दुर्बल और अस्वस्थ होती जाती थी। मां उसे दोनों वक्त अफीम खिला देती और बालिका दिन-रात नशे में बेहोश पड़ी रहती, ज़रा भी नशा उतरता तो भूख से विकल होकर रोने लगती। मां कुछ ऊपरी दूध पिलाकर अफीम खिला देती।`[1] माता के इस व्यवहार की प्रतिक्रिया भी इस बालिका में होती है। बालिका की प्रतिक्रिया का सजीव चित्रण इस प्रकार है -- `दामोदर दत्त रात को पानी पीने उठे तो देखा कि बालिका जाग रही है। सामने ताख पर मीठे तेल का दीपक जल रहा था, लड़की टकटकी बांधे उसी दीपक की ओर देखती थी और अपना अंगूठा चूसने में मग्न थी। चुम-चुम की आवाज़ आ रही थी। उसका मुख मुरझाया हुआ था, पर वह न रोती थी, न हाथ पैर फेंकती थी, बस अंगूठा पीने में ऐसी मगन थी मानो उसमें सुधा रस भरा हुआ है। वह माता के स्तनों की ओर मुंह भी नहीं फेरती थी, मानो उसका उनपर कोई अधिकार नहीं। उसके लिए वहां कोई आशा नहीं।`[2]

अत: `तेंतर` नामक कहानी का तेंतर बालिका मात्र अन्धविश्वास के कारण माता-पिता तथा परिवार के प्यार से वंचित की जाती है।

`दुर्गा का मन्दिर` शीर्षक कहानी में मुन्नू और श्यामा दो शिशु हैं। पिता अध्ययन में मग्न है और माता कामों में व्यस्त। कोई इन दोनों बच्चों पर ध्यान नहीं देता, अत: ये दोनों बच्चे सम्भवत: माता-पिता का ध्यान आकर्षित करने के लिए आपस में झगड़ते हैं। श्यामा रोती है कि मुन्नू ने मेरी गुड़िया ले ली है और मुन्नू चिल्लाता है कि श्यामा ने मेरी मिठाई

---

1 प्रेमचन्द : `मानसरोवर`, भाग 3, पृ० 108 (प्रथम संस्करण)
2 ,, : ,,,, पृ० 109 (,,)

खा ली है । उनका ऐसा करना एक विशेष मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया है । श्यामा को मुन्नू में और मुन्नू को श्यामा से शिकायत नहीं है,बल्कि उनकी शिकायत उस परिस्थिति से है,जिसमें उन्हें माता-पिता के स्नेह से वंचित होना पड़ा है। स्नेह वंचित शिशु की ये प्रतिक्रियाएं स्वाभाविक हैं । यदि उनके प्रति यथोचित ध्यान नहीं दिया गया तो स्वभावत: ध्यान आकर्षित करने के लिए उन्होंने जो किया सो किया ।

स्नेह वंचित शिशु 'गुप्तधन भाग २' में 'दूसरी शादी' कहानी का चार वर्षीय बालक रामसरूप है । इस उम्र में उसकी मां की मृत्यु हो जाती है और नई माता का आगमन होता है । उस मातृ-स्नेह-वंचित शिशु के चेहरे पर गहरा विषाद छाया रहता । उसके चेहरे का भोलापन और आकर्षण जो पहले था अब नहीं रहा । वह अपनी सूखी और रुंआंसी आंखों से पिता को घूरता रहता । उसकी इस हालत को देखकर उसके पिता का कलेजा कांप उठता था ।

'वरदान' उपन्यास में मुंशी शालिग्राम के पड़ोस के बच्चे उनके अदृश्य हो जाने पर उनके लिए विह्वल हैं । उन्हें अब मुंशी जी का स्नेह प्राप्त नहीं होता । जिन गलियों से वे बालकों का झुण्ड लेकर निकलते थे, वहां अब धूल उड़ रही थी । बच्चे बराबर उनके पास जाने के लिए रोते और हठ करते थे । उन बेचारों को यह सुध कहां थी कि अब वह प्रमोद सभा भंग हो गई ।

'सेवासदन' में सुमन और शान्ता जब पिता के जेल जाने पर अपनी फुआ के यहां आती है तो वे स्नेहवंचिता के रूप में हमारे सामने आती हैं । फुआ उनसे तथा उनकी माता से सद्व्यवहार तो नहीं ही करती उल्टे उनकी फुआ की लड़कियां भी सदा उनसे दूर-दूर ही रहती थीं ।

'प्रेमाश्रम' उपन्यास की मुन्नी ज्ञानशंकर और विद्या की २ या ३ वर्षीया बालिका है । इस समय विद्या की मृत्यु हो

जाती है । मुन्नी इस वियोग को नहीं सह सकती और वह मातृ-स्नेह से वंचित बालिका माता के लिए हुड़क-हुड़क कर बीमार पड़ती है और एक सप्ताह में ही उसकी मृत्यु हो जाती है ।

'निर्मला' उपन्यास में जियाराम और सियाराम दोनों ही स्नेह वंचित शिशु हैं । सियाराम मुंशी तोताराम का मंझला और सियाराम सबसे छोटा पुत्र है, जब जिया १२वर्ष का और सिया ७ वर्ष का है, तभी विमाता का आगमन होता है। उनके परिवार में एक विधवा बूढ़ी बुआ भी है । परिवार में सदा कलह मचा रहता है । यथोचित वातावरण न मिलने पर जियाराम अपराधी होकर घर से सदा के लिए गायब हो जाता है । सियाराम के बचपन में ही उसकी माता का देहान्त हो गया है । उसका मातृ-स्नेह वंचित मन विमाता निर्मला के स्नेह पाने पर भी तृप्त नहीं होता और अन्त में वह भी साधु परमानन्द जी के साथ चल पड़ता है ।

'गोदान' में गोबर और झुनिया का शिशु 'लल्लू' माता-पिता के स्नेह से वंचित है । उसकी अवस्था दो वर्ष की है । उसकी शैशवावस्था में माता बीमार रहती है अतः बाहर ढकेल कर उसे निकाल देती है । शिशु रोते-रोते बेदम हो जाता है ।

(ख) <u>समूह की भावना को प्रबल मानने वाला शिशु वर्ग</u>

जैसे स्त्री और पुरुष में मनोविज्ञान की दो प्रकार की प्रवृत्तियां पाई जाती हैं, वैसे ही शिशुओं में भी दो प्रकार की प्रवृत्तियां पाई जाती हैं । एक प्रवृत्ति को सामूहिक मनोविज्ञान (मौब साइकोलोजी) कहते हैं और दूसरी प्रवृत्ति को वैयक्तिक मनोविज्ञान (इण्डिवीजुअल साइकोलोजी) कहते हैं । इन दोनों प्रवृत्तियों में अन्तर माना गया है । आदमी जब समूह में होता है, तब वह जैसा करता है, वैसा वह उन परिस्थितियों में भी अकेले नहीं करता । समूह में वह अभिमानित अनैतिक और उद्दण्ड हो सकता है, किन्तु व्यक्ति रूप में वह ठीक उसके विपरीत होता है, इसलिए शिशुओं का भी एक ऐसा वर्ग बनाया जा सकता है, जिसमें इन्हें व्यक्ति रूप में देखा जाता है । समूह रूप में परिस्थितियों

के प्रति जो उनकी प्रतिक्रिया होती है, उसे ही प्रस्तुत वर्गीकरण का आधार मानना होगा वस्तुत: इस आधार में समूह की सामान्य मनोवृत्ति को ही प्रधानता दी गई है ।

हामिद, मोहसिन, महमूद, नूरे और सम्मी पांचों एक ही गांठ के हैं । `ईदगाह` शीर्षक कहानी में ईद के दिन ये व पांचों बालक अपने-अपने घर से पैसे लेकर ईदगाह जाते हैं । इस अवसर पर उनकी बाल मनोवृत्ति उमड़ पड़ती है । सभी बालक पर्व मनाने के लिए एक साथ एकत्रित होते हैं । वहां उनका सामूहिक मनोविज्ञान देखते ही बनता है । इस समूह में सभी बच्चे खुश हैं । इनमें गरीब-अमीर सभी बराबर हैं । सभी अपनी-अपनी जेब से पैसा निकालते गिनते और रख देते हैं । किसी के पास तीन, किसी के पास पन्द्रह, किसी के पास बारह ऐसे ही पैसे हैं । वे इसी को धन का कुबेर समझते हैं । इन पैसों से वे क्या -क्या लेंगे, खिलौने गुड़ियों मिठाई हिंडोला आदि सभी की सूची तैयार करते और उस पर वाद-विवाद करते हैं ।

ईदगाह जाने पर रास्ते में एक लीची का बगीचा मिलता है । नूरे इस बगीचे में घुसता है । अन्य चारों मित्र उसका साथ देते हैं । ये सभी लीची के पेड़ों पर ढेला चलाते हैं । माली के चिल्लाने पर सभी वहां से भाग खड़े होते हैं । वे सब मिलकर खूब हंसते हैं कि कैसा उल्लू बनाया । यह में ये सभी बालक अनियन्त्रित और उद्दण्ड बन गए हैं । मोहसिन भूत-प्रेतों की कथाएं बहुत जानता है । अपने साथियों से भूतों की करामात की चर्चा करता है और सभी उसकी आश्चर्यचकित होकर उसकी बातें सुनते हैं । उनके प्रतिवाद करने पर मोहसिन उनके ऊपर देता है । हलवाई की दुकान देखकर मोहसिन कहता है --` सुना है रात को जिन्नात आकर खरीद ले जाते हैं । अब्बा कहते थे कि आधी रात को एक आदमी हर दुकान पर जाता है और जितना माल बचा होता है, वह तुलवा लेता है और सचमुच के रुपये देता है बिलकुल ऐसे ही रुपये ।

हामिद को यकीन न आया -- ऐसे रुपये जिन्नात को कहां से मिल जाते ? मोहसिन ने कहा-- जिन्नात

को रुपए की कमी क्या ? जिस खजाने में चाहे चले जाएं । द लोहे के दर्वाजे तक उन्हें नहीं रोक सकते जनाब, आप हैं किस फेर में ? हीरे जवाहरात तक उनके पास रहते हैं । जिससे खुश हो गये उसे टोकरों जवाहरात दे दिया । सभी यहां बैठे हैं पांच मिनट में कलकत्ता पहुंच जाय ।

हामिद ने फिर पूछा -- जिन्नात बहुत बड़े-बड़े होते होंगे ।

मोहसिन -- एक एक आस्मान के बराबर होता है जी । जमीन पर खड़ा हो जाए तो उसका सिर आसमान से जा लगे, मगर चाहे तो एक लोटे में घुस जाए ।

हामिद -- लोग उन्हें कैसे खुश करते होंगे ? कोई मुझे वह मन्तर बता दे तो एक जिन्न को खुश कर लूं ।

मोहसिन -- अब यह तो मैं नहीं जानता, लेकिन चौधरी साहब के काबू में बहुत से जिन्नात हैं । कोई चीज चोरी जाए चौधरी उसका पता लगा देंगे और चोर का नाम भी बता देंगे । जुमराती का बछवा उस दिन खो गया था । तीन दिन हैरान हुए, कहीं न मिला, तब झख मार कर चौधरी के पास गये । चौधरी ने तुरन्त बतादिया मवेशीखाने में है और वहीं मिला । जिन्नात आकर उन्हें सारे जहान की खबर दे जाते हैं ।[1]

इन सभी बालकों में हामिद का चरित्र विशिष्ट है । वह अन्य बालकों की अपेक्षा अधिक समझदार, बुद्धिमान और विवेक से काम लेने वाला है । किन्तु बालकों के इस समूह में आकर वह उन्हीं सा सोचने लगता है -- जिन्नात कैसे होते हैं, उन्हें रुपया कहां से मिलता है, इन्हें किस प्रकार अपने काबू में किया जा सकता है आदि आदि ।

नमाज खत्म होने के बाद ग्रामीणों के दल के साथ-साथ हिंडोला के पास आते हैं । हामिद को छोड़कर अन्य बार

---

1 प्रेमचन्द : 'मानसरोवर', भाग 1, पृ० 38

लड़के एक-एक पैसा देकर हिंडोला पर खूब घूमते हैं ।

इसके पश्चात् वे खिलौने की दूकान पर जाते हैं । तरह-तरह के खिलौने हैं -- सिपाही और गुजरिया, राजा और वकील भिश्ती और धोबिन और साधु । एक से एक सुन्दर खिलौने । इतने सजीव मानों बोलना ही चाहते हों । सभी अपनी-अपनी पसन्द के खिलौने लेते हैं । महमुद सिपाही लेता है मोहसिन भिश्ती और नूरे वकील । हामिद चुप है, क्योंकि उसके पास तीन ही पैसे हैं । अत: वह इन मिट्टी के खिलौनों को क्षण भंगुरता को याद कर अपनी लालसा को मिटा देता है । इन पांचों में अपने-अपने खिलौने को लेकर एक वाद-विवाद छिड़ जाता है । सभी अपने-अपने खिलौने के पक्ष में तर्क प्रस्तुत करते हैं । अन्त में वे दो दलों में विभक्त हो जाते हैं । मोहसिन, महमुद, सम्मी और नूरे एक तरफ और हामिद अकेला एक तरफ ।

हामिद -- अगर कोई शेर आ जाय तो मियां भिश्ती के छक्के छूट जायं, मियां सिपाही मिट्टी की बन्दूक छोड़कर भागें, वकील साहब की नानी मर जाएं, चुगे में मुंह छिपाकर जमीन पर लेट जायं । मगर यह चिमटा, यह बहादुर यह रुस्तमें हिन्द लपक कर शेर की गर्दन पर सवार हो जायगा और उसकी आंखें निकाल लेगा ।

हामिद ने आखिरी जोर लगाकर कहा-- भिश्ती को एक डांट बतायेगा, तो दौड़ा हुआ पानी लाकर उसके द्वार पर छिड़कने लगेगा ।

मोहसिन परास्त हो गया, पर महमुद ने कुमुक पहुंचायी — अगर बच्चा पकड़ जायें तो अदालत में बंधे-बंधे फिरेंगे । तब तो वकील साहब के ही पैरों पड़ेंगे ।

हामिद इस प्रबल तर्क का जवाब न दे सका । उसने पूछा -- हमें पकड़ने कौन आयेगा ?

नूरे ने अकड़ कर यह सिपाही बन्दूक वाला ।

हामिद ने मुंह चिढ़ाकर कहा-- यह बेचारे इस बहादुर रुस्तमें हिन्द को पकड़ेंगे । अच्छा लाओ, अभी जरा कुश्ती हो जाय । इसकी सूरत देखकर दूर से भागेंगे । पकड़ेंगे क्या बेचारे ।

मोहसिन को एक नई चोट सूझी -- तुम्हारे चिमटे का मुंह रोज आग में जलेगा ।

उसने समझा था कि हामिद लाजवाब हो जायगा, लेकिन यह बात हुई । हामिद ने तुरन्त जवाब दिया --आग में बहादुर ही कूदते हैं जनाब, तुम्हारे ये वकील, सिपाही और भिश्ती, लौंडियों की तरह घर में घुस जायेंगे । आग में कूदना वह काम है,जो यह रुस्तमें हिन्द ही कर सकता है ।

महमूद ने एक जोर लगाया-- वकील साहब कुर्सी में जाकर बैठेंगे । तुम्हारा चिमटा तो बवर्ची खाने में पड़ा रहेगा। इस तर्क ने नूरे और सम्मी को सजीव कर दिया । कितने ठिकाने की बात कही है,पट्ठे ने , चिमटा बवर्चीखाने में पड़ा रहने के और क्या कर सकता है ।

हामिद को कोई फड़कता हुआ जवाब न सूझा तो उसने धांधली शुरू की-- मेरा चिमटा बवर्चीखाने में नहीं रहेगा वकील साहब कुर्सी पर बैठेंगे तो जाकर उन्हें जमीन पर पटक देगा और उनका कानून उनके पेट में डाल देगा ।

इस प्रकार हामिद के तर्क का सिक्का सब पर जम जाता है और वे सब के सब स्वीकार कर लेते हैं कि उसका चिमटा रुस्तमें हिन्द है । महमूद हामिद को अपने बैठे का सा भी बनाता है ।

मिठाई की दुकान पर भी इनकी सामूहिक भावना के दर्शन होते हैं । किसी ने रेवड़ियां ली है, किसी ने गुलाब जामुन, किसी ने सोहन हलुआ । मजे से खाते हैं । हामिद बिरादरी से बाहर है । अभागे के पास तीन पैसे हैं । क्यों नहीं कुछ ले कर खाता ? ललचायी आंखों से सब की ओर देखता है ।

`स्वामिनी` शीर्षक कहानी में दो-चार बालकों की थोड़ी-सी झांकी मिलती है ।ये बाल-वृन्द रामदुलारी और मथुरा के हैं । मथुरा अपने परिवार के साथ देहात छोड़कर शहर जाने की तैयारी में है, अपना सामान ठीक कर रहे हैं,किन्तु ये बाल-वृन्द अपने मनोराज्य में विचर रहे हैं । नया नया कपड़ा पहने, नवाब बने घूम रहे हैं । इनको चाची इन्हें प्यार करने केलिए बुलाती हैं, पर वे जाते तक नहीं । बैलगाड़ी के आते ही दौड़ पड़ते और उसपर अपना अधिकार जमाते हैं । अपने लिए अच्छी जगह चुनते हैं ।

`गुल्ली डंडा` शीर्षक कहानी में एक व्यक्ति बचपन के `गुल्ली डंडा` खेल और अपने प्रसिद्ध खिलाड़ी गया का स्मरण करता है । खेलमें किस प्रकार इन दोनों में वैयक्तिक भावना के अलावा एक सामूहिक भावना का उदय होता है । गया उस गुल्ली डंडा क्लब का चैम्पियन था । जिसकी तरफ आ जाता जीत निश्चित थी । उसे आते-आते देखकर सभा लड़के दौड़कर उसका स्वागत करते और अपनी गोइंयां बना लेते थे ।

`एक दिन हम और गया दोनों खेल रहे थे । वह पदा रहा था, मैं पद रहा था, मगर कुछ विचित्र बात है कि पदाने में हम दिन भर मस्त रह सकते हैं, पर पदना एक मिनिट भी अखरता है । मैंने गला छुड़ाने के लिए सब चालें चलीं जो ऐसे अवसर पर शास्त्र-विहित न होने पर भी क्षम्य है, मगर गया अपना दांव लिए बगैर मेरा पिण्ड न छोड़ता था ।

मैं घर की ओर भागा । अनुनय विनय का कोई असर न हुआ।

गया ने मुझे दौड़ कर पकड़ लिया और डंडा तान कर बोला -- मेरा दांव देकर जाओ।पदाया तो बड़े बहादुर बनके, पदने के बेर क्यों भागे जाते हो ?
`हां मेरा दांव दिए बिना कहीं नहीं जा सकते ।
`हां `मेरे गुलाम हो ।
`मैं घर जाता हूं देखूं क्या कर लेते हो ।`
`अच्छा कल मैंने अमरूद खिलाया था वह लौटा दो ।`
`वह तो मेरे पेट में चला गया ।`

'निकालो पेट से । तुमने क्यों खाया मेरा अमरूद ।'

'अमरूद तुमने दिया, तब मैंने खाया । मैं तुमसे मांगने न गया था ।

'जब तक मेरा अमरूद न दोगे, मैं दांव न दूंगा ।'

मैं समझता था न्याय मेरी ओर है ।

आखिर मैंने किसी स्वार्थ से ही अमरूद खिलाया होगा । कौन नि:स्वार्थ किसी के साथ सलूक करता है । भिक्षा तक तो स्वार्थ के लिए देते हैं । जब गया ने अमरूद खाया तो उसे मुझसे दांव लेने का क्या अधिकार है । रिश्वत देकर तो लोग खून तक पचा जाते हैं । यह मेरा अमरूदयों ही हजम कर जायेगा ? अमरूद पैसे के पांच वाले थे जो गया के बाप को भी नसीब न होंगे । यह सरासर अन्याय था ।

गया ने मुझे अपनी ओर खींचते हुए कहा--

मेरा दांव देकर जाओ, अमरूद समरूद मैं नहीं जानता ।

मुझे न्याय का बल था । वह अन्याय पर डटा हुआ था । हाथ छुड़ाकर भागना चाहता था । वह मुझे जाने नहीं देता था । मैंने गाली दी, उसने उससे कड़ी गाली दी और गाली ही नहीं, दो एक चांटा भी जमा दिया । मैंने उसे दांत काट लिया । उसने मेरी पीठ पर डंडा जमा दिया । मैं रोने लगा । गया मेरे इस अस्त्र का मुकाबला न कर सका, भागा । मैंने तुरन्त आंसू पोंछ डाले, डंडे की चोट भूल गया और हंसता हुआ घर जा पहुंचा ।'[१]

जब बालक खेल के मैदानमें उतरते हैं तो दुनियां की और सारी बातों को भूल जाते हैं । वे खेल में तथा उसके सामूहिक आनन्द में इस प्रकार अभिभूत हो जाते हैं कि किसी अन्य बात का ख्याल ही नहीं रहता । लेखक के शब्दों में--'वह प्रात:काल घर से निकल जाना, वह पेड़ पर चढ़कर टहनियां काटना और गुल्ली-डंडे बनाना, वह उत्साह, वह लगन, वह खिलाड़ियों के जमघट, वह पदना और पदाना, व वह लड़ाई-झगड़े

---

१ प्रेमचन्द : मानसरोवर, भाग१, पृ० २०१

वह सरल स्वभाव जिसमें छूत-अछूत, अमीर-गरीब का बिलकुल भेद नहीं रहता था.... घर वाले बिगड़ रहे हैं, पिता जी चौके पर बैठे वेग रोटियों पर अपना क्रोध उताररहे हैं,अम्मां की दौड़ केवल द्वार तक है, लेकिन उनकी विचार-धारा में मेरा अन्धकार मय भविष्य टूटी हुई नौका की तरह डगमगा रहा है और मैं हूं कि पढ़ाने में मस्त हूं, न नहाने की सुधि है, न खाने की।[1]

'बड़े भाई साहब' शीर्षक कहानी में एक नौ वर्षीय बालक तथा उसके बड़े भाई साहब के समूह में जाकर अनियंत्रित व्यवहार का चित्रण है । इस कहानी में यह नौ वर्षीय बालक अपनी कहानी सुनाता है । भाई की संरक्षा में छात्रावास में रखागया है । भाई अपने संरक्षक का कर्तव्य निबाहता है । बड़ी मेहनत करता है, टाईम टेबल के अनुसार पढ़ता है, ताकि छोटे भाई के लिए एक उदाहरण बन सके । किन्तु इस छोटे लड़के की मनोवृत्ति बिलकुल दूसरी है । इस प्रकार टाइमटेबल को सामने रखकर श्रमपूर्वक पाठ याद करना इसके स्वभाव के बिलकुल विरुद्ध है । बालकों के झुण्ड में जाकर खेलने के प्रलोभन पर वह विजय नहीं प्राप्त कर सकता। 'मैदान की वह सुखद हरियाली, हवा के वह हलके-हलके झोंके, फुटबाल की वह उछल-कूद, कबड्डी के वे दांव-घात, वालीबाल की वह तेजी और फुर्ती मुझे अज्ञात और अनिवार्य रूप से खींच ले जाती है और वहां जाते ही मैं सब कुछ भूल जाता.....[2] मैं फटकार और घुड़कियाँ खाकर भी खेल-कूद का तिरस्कार न कर सकता।' यह है उस बालक की समूह में जाकर अनियंत्रित रूप से खेलने की अतृप्त लालसा जिसे वह किसी मूल्य पर छोड़ना नहीं चाहता ।

और ये बड़े भाई साहब जो एक कनकौवे को काटते हुए देखकर अपनी सारी शालीनता को भूल जाते हैं और कनकौवे के पीछे दौड़ने वाले लड़कों के साथ दौड़ने लगते हैं । इस स्थल पर बाल समूह का बड़ा मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है । 'एक दिन सन्ध्या समय हास्टल से दूर मैं कनकौआ लूटने बेतहाशा दौड़ा जा रहा था । आंखें आसमान की ओर थीं और मन आकाशगामी पथिक की ओर मन्द गति से

---

१ प्रेमचन्द : 'मानसरोवर, भाग१,पृ०१७१
२ ,, ,, ,, पृ०६१

फुमता पतन की ओर चला जा रहा था । मानों कोई आत्मा स्वर्ग से निकल कर विरक्त मन से नये संस्कार ग्रहण करने जा रही हो । बालकों की पूरीसेना लड़ने और झाड़दार बांस लिए उनका स्वागत करने दौड़ी जा रही थी । किसी को आगे पीछे की खबर न थी । सभी मानो उस पतंग के साथ आकाश में उड़ रहे थे,जहां सब कुछ समतल है, न मोटर कारें हैं न ट्राम गाड़ियां ।[1]

सहसा बड़े भाई साहब से उसकी मुठभेड़ हो गई । उन्होंने वहीं उसका हाथ पकड़ लिया और उग्रभाव से बोले-- 'इन बाजारी लौंडों के साथ धेले के कनकौवे के लिए दौड़ते तुम्हें शर्म नहीं आती ?' किन्तु सहसा कनकौवा उन दोनों के ऊपर से गुजरता है, लड़कों का एक गोल पीछे-पीछे दौड़ा आ रहा है । बड़े भाई साहब की मनोवृत्ति में परिवर्तन होता है, वे अपना नियन्त्रण खो बैठते,उछल कर कनकौवे की डोर पकड़ते और हास्टल की तरफ दौड़ पड़ते हैं ।

'दो बैलों' की कथा में बाल-वृन्द की मनोवृत्ति का सुन्दर चित्रण है । हीरा और मोती नामक दो बैल झूरी की ससुराल पहुंचाये जाते हैं । ये बैल फिर वहां से स्वामी के पास वापस भाग आते हैं । तब वहां बालकों की एक टोली इकट्ठी होती है,जो उसी ग्राम की है । ये बालक बैल की सुन्दर जोड़ी देखकर आनन्द विह्वल हो उठते हैं । तालियां बजा-बजाकर उनका स्वागत करते हैं । यह बाल सभा निश्चय करती है कि दोनों पशु-वीरों को अभिनन्दन पत्र देना चाहिए । कोई अपने घर से रोटियां लाता है, कोई गुड़, कोई चोकर , कोई भूसी । ये बच्चे इन पशुओं के प्रति बाल-सुलभ जिज्ञासा प्रदर्शित करते हैं । कोई कहता है, 'ऐसे कहि बैल किसी के पास न होंगे । दूसरा कहता है इतनी दूर से अकेले चले आये । तीसरा कहता है , बैल नहीं हैं वे, उस जन्म के आदमी हैं ।' आदि ।

'चोरी' शीर्षक कहानी में एक आठ वर्षीय ग्रामीण बच्चे बालक अपने और अपने चचेरे भाई हलधर की चोरी की कहानी स्मरण करता है । एक दिन दोनों ने मिलकर दो रुपये चुराये । अब दोनों मिलकर खूब स्वादी पुलाव बनाते हैं । हलधर के साथ मिलकर

1 प्रेमचन्द : 'मानसरोवर,भाग१,पृ०१६

बारह आने पैसे मौलवी साहब को देता है । हलधर को सजा मिल जाती है, क्लास के बाद मदरसा में ठहरकर पाठ याद करने की । अन्य सभी लड़के मेला देखने चलते हैं यहां यह छोटा भाई अन्य लड़कों के भावों से प्रभावित होता है ।

'शंखनाद' शीर्षक कहानी में ये बालसमुदाय गांव के मुखिया भानु चौधरी के परिवार के हैं । इस गांव में प्रत्येक मंगलवार को गुरदीन नामक एक खोंचे वाला आता है । ये बालक बड़ी आशा से उसकी प्रतीक्षा करते हैं । गुरदीन की आवाज़ सुनते ही उनका हृदय मचल उठता है । उसकी आवाज़ सुनतेही लड़कों का ऐसा धावा होता है कि मक्खियों की असंख्य सेना को भी रणस्थल से भागना पड़ता था ।'

मंगल का शुभ दिन था । बच्चे बड़ी बेचैनी से अपने दरवाजों पर खड़े गुरदीन की राह देख रहे थे । कई उत्साही लड़के पेड़ों पर चढ़ गये और कोई-कोई अनुराग से विवश होकर गांव से बाहर निकल गये थे । सूर्य भगवान अपना सुनहला थाल लिए पूरब से पश्चिम जा पहुंचे थे, इतने ही में गुरुदीन आता हुआ दिखाई दिया । लड़कों ने दौड़कर उसका दामन पकड़ा और आपस में खींचा तानी होने लगी । कोई कहता था मेरे घर चलो, कोई अपने घर का न्यौता देता था । सबसे पहले भानु चौधरी का मकान पड़ा । गुरदीन ने अपना खोंचा उतार दिया । मिठाइयों की लूट शुरू हो गई । बालकों और बालिकाओं का ठट्ठ लग गया । यह हर्ष और विषाद, संतोष और लोभ, ईर्ष्या और लोभ, द्वेष और जलन की नाट्यशाला सज गई ।' यही नहीं ये बालक अन्य 'धान' को चिढ़ा-चिढ़ा कर खाते रहे । धान बांके गुमान का लड़का है । बांके गुमान आलसी और कामचोर है । बूढ़े पिता और भाइयों की कमाई पर आश्रित । उसके भाई के सभी बच्चों के लिए गुरदीन से मिठाई खरीदी जाती है, किन्तु धान के लिए पैसे कौन दे ? अतः इस परिवार के सभी बच्चे जब हाथ में मिठाई लेते हैं, तो मानो इन मिठाई वाले बच्चों का एक अलग वर्ग बन जाता है । समूह में इनकी भावना झुक जाती है । क्रियाएं अनियंत्रित तथा उद्दण्ड बन जाती हैं । अपने छोटे भाई से क्रूर विनोद करते हैं । बेचारे को मिठाइयां दिखा-दिखा कर ललचाते

---

१ प्रेमचन्द : मानसरोवर, भाग ७, पृ० १८४, प्रथम संस्करण ।

और चिढ़ाते हैं । थान ज्यों-ज्यों रोता और चीखता है,त्यों-त्यों वे उसे और चिढ़ाते और तंग करते हैं ।

गुरदीन के आते ही गांवके बालक सामूहिक भावना से अभिप्रेत होते हैं । इनके विचार समूह के अनुकूल बन जाते हैं ।

`बूढ़ी काकी` शीर्षक कहानी में बुद्धिराम और रूपा के अनेक बच्चे हैं ।`बूढ़ी काकी` बुद्धिराम की विधवा चाची है । कोई सन्तान न होने के कारण अपनी सम्पत्ति भतीजे के नाम कर दी है और वर्षों से यहीं पड़ी है । इस परिवार के बच्चे मिलकर इस बुढ़िया को बहुत तंग करते हैं । कोई चिकोटी काटता कोई चिढ़ाता, तथा कोई कुल्ली करके उसपर पानी फेंकता है । बच्चों का यह अनियन्त्रित,अनैतिक, और उद्दण्ड व्यवहार तभी होता है, जब ये सब मिल जाते हैं ।

`सच्चाई का उपहार` शीर्षक कहानी के ये पात्र हैं, जिनमें समूह की भावना प्रबल है । जिस प्रकार `ईदगाह` शीर्षक कहानी में लेखक ने हामिद,नूरे ,सम्मी और महमूद को एक पृष्ठभूमि पर लाकर बाल मनोविज्ञान का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है,उसी प्रकार इस कहानी में भी बाल मनोवृत्ति की मार्मिकता मुखर हो उठी है ।

ये सभी बरांव गांव के एक मदरसे की सातवीं कक्षा के विद्यार्थी हैं । ये सभी जमीन्दार के लड़के हैं,अत: इनमें अमीरी की बू अधिक है । अपने धन का घमण्ड है । स्कूल के प्रधानाध्यापक को बागवानी का बड़ा शौक है । वे स्कूल की फुलवारी को सदा हरा-भरा देखना चाहते हैं। किन्तु इन लड़कों के मन में धन का झूठा घमण्ड है । वे खेत या बाग में काम करना शान के खिलाफ समझते हैं । एक दिन सब राय करके प्रात:काल क ही बाग में पहुंचे और कहीं पौधों को उखाड़ फेंका, कहीं क्यारियों को रौंद डाला, कहीं पानी की नालियां तोड़ डालीं । पूरे बाग को तहस-नहस करके, जब वे निकले थे तो उसी समय उनकी भेंट बाजबहादुर से हुई । बाजबहादुर कक्षा का सबसे अधिक चरित्रवान् लड़का है । अत: उन्हें सन्देह होता है कि वह खिलाफ से बाग उजाड़ने की बात खोली कर देगा । बाजबहादुर उन्हें

विश्वास दिलाता है कि वह चुगली तो न करेगा किन्तु शिक्षक के पूछने पर झूठ भी न बोलेगा । ये बालक नहीं चाहते कि किसी भी तरह यह उनके नाम शिक्षक तक पहुंचे अत: वे बाजबहादुर पर आक्रमण करते हैं । बाजबहादुर अपनेको बहुत बचाता है किन्तु कहां वह अकेला और कहां उसके विरोधी पांच-पांच । वे भी समूह की भावना से अभिभूत हैं - जहां व्यक्ति अपना विवेक खो बैठता है , वह समूह की भावना से ही संचालित होता है, वह अत्यधिक निर्देशनशील हो जाता है, जहां व्यक्ति में उत्तरदायित्व की भावना कम हो जाती है, और वह विकट संवेगात्मक रूप धारण कर लेता है । समूह में व्यक्ति शक्तिशाली और सर्व सम्मिलित समझता है । वे सब मिलकर बाज-बहादुर को खूब पीटते हैं । यहां तक जयराम ऐसा घूंसा मारता है कि उसका घूंसा बैठ जाता है । बाजबहादुर बेहोश हो जाता है । ये सभी यह समझ कर कि कहीं उसकी झिल्ली न फट गई हो और उसे मरा समझ कर वहां से भाग खड़े होते हैं ।

दूसरे दिन जब वे शान्त मन से सोचते हैं तो उन्हें अपने अनैतिक तथा अनियंत्रित बर्ताव पर बड़ा क्षोभ होता है । इस प्रकार का अनैतिक बर्ताव वे अकेले में कदापि नहीं कर पाते । ली बोन ने कहा है कि भीड़ में सब लोग ऐसे सम्मोहित हो जाते हैं कि वे स्वयं अपने व्यवहार को ठीक प्रकार संचालित करने में असमर्थ हो जाते हैं ।[1] स्काट ने कहा -- भीड़ संवेगों से अत्यन्त पीड़ित अति निर्देशित तथा अति उत्तरदायक और तर्क विरुद्ध क्रिया करने वाली, तथा सुझावों को न समझने वाली और अपने सदस्यों से कहीं अधिक असभ्यता पूर्ण व्यवहार करने योग्य होती है ।[2]

'गुप्तधन भाग २' के 'सैलानी बन्दर' कहानी में बालकों का समूह सामूहिक भावना से पूर्ण रूप से प्रेरित है ।

१, २ प्रो० टी०आर० भाटीवाल : 'समाज मनोविज्ञान का सरल अध्ययन' पृ० १६३ ।

सामूहिक भावना से प्रेरित होकर ही ये बीस -पच्चीस लड़के बन्दर के पीछे दौड़े भागे जा रहे हैं । जैसे मदारी के डमरू की आवाज आती है बस बीस पच्चीस लड़के हाजिर । कोई पैसा लाता, कोई रोटी, कोई मिठाई लाकर मन्नु बन्दर के आगे फेंकता है ।

जब मन्नू बाग में घुसकर फल-फूल तोड़ता है तो सभी बच्चे उसके पीछे-पीछे दौड़ते हं और तालियां बजा-बजा कर उसे चिढ़ाते हैं--

ओ बन्दरवा लोयलाय, बाल उखाड़ूं टाय टाय ।
ओ बन्दरवा तेरा मुंह है लाल, पिचके पिचके तेरे गाल ।
मर गई नानी बन्दर की
टूटी टांग मुछन्दर की ।

मन्नू आधा फल खा-खा कर गिराता और ये बच्चे लपक-लपक कर चुन लेते और तालियां बजा-बजा कर फिर चिढ़ाते --

बन्दर मामू और
कहां तुम्हारा ठौर ।

जब मन्नू बाग के मालिक द्वारा पकड़ा गया तब तो नटखट बच्चों को और मजा आ गया। सब उसे घेर लिए । कोई मुंह चिढ़ाता, कोई पत्थर फेंकता तो कोई उसको मिठाई दिखाकर चिढ़ाता और ललचाता था ।

मन्नू की मालकिन बुढ़िया के पागल होने पर भी लड़के उसे घेर लेते हैं । यहशिशुओं का समूह भी सामूहिक भावना से प्रेरित है । एक-एक करके वे उससे तरह-तरह के प्रश्न पूछते हैं । पगली नानी तू कपड़ा क्यों नहीं पहनती, तुके शर्म क्यों नहीं आती, तू सब का लिया कैसे खा लेती , तुके घिन नहीं आती आदि । बालक बहुधा समूह में आकर क्रूर कामों में आनन्द लेते हैं,यहां ये बालक इस पगली के साथ क्रूर विनोदकर रहे हैं ।

प्रेमचन्द के उपन्यास 'रंगभूमि' में भी बालकों का समूह आया है जो सामूहिक भावना से प्रेरित हैं । सूरदास के

झोपड़े में आग लग जाने पर ये उसी गांव के बच्चे इकट्ठे होते और मारे प्रश्न के घूरे को तबाह कर देते हैं । सूरदास को हाथ से राख फेंकते देख इन्हें खेल सूझता है । बस सब राख लेकर उड़ाने लगते और थोड़ी ही देर में वहां की सारी राख बिखर जाती है केवल काला निशान रह जाता है । जब वहां से राख खत्म हो जाती है तब ये किसी दूसरे खेल की तलाश के लिए दौड़ते हैं ।

नवागन्तुक के प्रति बालकों के मन में अजीब कौतूहल भरा रहता है । अपने ज्ञानानुसार ये किसी भी वस्तु को दूसरी संज्ञा दे देते । जब प्रभुसेवक मिठुआ तथा घीसू के गांव में आते हं तो दोनों हांक लगाते हैं-- पादड़ी आया ! पादड़ी आया !! बस गांव के बीसों लड़के इकट्ठे हो जाते हं कि पादड़ी गायेगा, तस्वीरें दिखायेगा, किताबें देगा, मिठाइयां और पैसे बाटेगा । इस लूट की माल से भला ये अपने को वंचित कैसे रख सकते ।

'गबन' में भी रतन के बाग में शिशुओं का एक समुदाय है । यहां झूला टंगा हुआ है, बच्चे झूला झूल झूल रहे हैं । रतन झुला रही है । हो-हल्ला मचा है । उसी समय रमानाथ आता है । रतन उससे भी झूला झूलने का आग्रह करती है । बच्चों का समुदाय इस नवागन्तुक को देखकर उतावले हो जाते हैं । रमानाथ जब झुलाता है तो दो झूले से उतरते तो चार बैठते हैं । सभी अपनी-अपनी बारी के लिए शोर मचाते हैं ।

'गोदान' में मेहता और मालती, राय साहब और मिस्टर खन्ना दोनों अलग-अलग दल में शिकार खेलने लग जाते हैं । मिर्जा साहब एक हरिण का शिकार करते हैं और उस हरिण को निकटवर्ती गांव में लाया जाता है । वहां इस शिकार को देखकर गांव के बच्चे दौड़ पड़ते हैं और उसे घेर लेते हैं । लकड़हारा जो इस हिरण को ढोकर लाया था उसके चार बच्चे दौड़ आते और हिरण पर बैठकर अपना अधिकार जमाते और दूसरों से अपने को बड़ा दिखाते हैं ।

अतः इस दृष्टि से बालकों का समूह जब एक साथ इकट्ठे हों तब उनकी प्रतिक्रियाएं वैसी ही हैं,जैसा मनोविज्ञान के विद्वानों ने समूह मन की विवेचना की है ।

(द) सामाजिक आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा शिशु वर्ग

शिशुओं का एक वर्ग सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से उनकी कतिपय विशेषताओं को लेकर बनाया गया है । सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए शिशु एक विशेष मनोवृत्ति वाले हो जाते हैं ।घटना और परिवेश के प्रति उनमें एक विशेष प्रकार की प्रतिक्रिया होती है । भारतीय समाज में जहां जाति और वर्ग के आधार पर अनेक विभाजनप्रचलित हैं, वहां सामाजिक दृष्टि से ऊंच नीच की भावना प्रत्येक व्यक्ति में घर कर गई है । यह भावना जन्म से ही प्रत्येक शिशु को प्रभावित करती है । समाज में कुछ ऐसी परम्पराएं और रूढ़ियां प्रचलित हैं, जिनके कारण हम न केवल वयस्कों में बल्कि बच्चों में भी छोटे-बड़े का ख्याल बरतते हं । छोटी जाति या नीची जाति के शिशुओं को तुच्छ दृष्टि से देखते हैं । और सब कुछ एक होने पर भी शिशुओं का पारस्परिक मिलन समान स्तर व पर नहीं होता । इसी तरह आर्थिक दृष्टि से हीन परिवारों में एक प्रकार का विभेदरखता ह जिसका प्रभाव शिशुओं पर भी पड़ना अनिवार्य है । गरीब परिवार के बच्चे एक खास ढंग से पलते,सोचते-समझते हैं, अतः एक ऐसा वर्ग बनाया जा सकता है, जिसमें ऐसे शिशुओं को रखा जाए,जिनमें ऐसी प्रतिक्रियाएं समान होती हैं । साधारणतः इन प्रतिक्रियाओं को दो स्थूल भागों में बांटा जा सकता है -- शारीरिक प्रतिक्रिया, मानसिक प्रतिक्रिया । शारीरिक प्रतिक्रिया के अन्तर्गत स्वास्थ्य,बल,शरीर विकास आदि स्थितियों को मानना चाहिए । मानसिक पतिक्रिया के अन्तर्गत सोचने-समझने की आदत, वस्तु और घटना को ग्रहण करने के तरीके आदि को ले सकते हैं ।

'सौभाग्य के कोड़े' शीर्षक कहानी में नथुआ आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है । जाति का भंगी है । माता-पिता का देहान्त हो चुका है,अतः अनाथ है । राय भोलानाथ के द्वार पर पड़ा रहता, वहीं के जूठन से पेट भरता और फटे-पुराने कपड़ों से तन ढंकता है ।

कुछ बड़ा होने पर राय साहब के बंगले में भाड़ू लगाता है। कर्मानुसार उसकी वर्ण-व्यवस्था भी हो गई है । घर के सभी नौकर-चाकर उसे भंगी कहकर पुकारते हैं ,किन्तु नथुआ को इसमें कोई एतराज नहीं, भला नाम से इसकी स्थिति में क्या अन्तर पड़ सकता है । भाड़ू देते समय कभी पैसे मिल जाते हैं,जिससे वह सिगरेट पीता है ।

नथुआ आर्थिक दृष्टि से हीन है । खाने के लिए जूठन तो मिल जाते हैं,किन्तु सोने के लिए शायद एक टाट भी नहीं । एक दिन राय साहब की लड़की रत्ना का बिछावन देखकर उसके मन में प्रतिक्रिया होती है-- 'कैसी उजली चादर बिछी हुई है, गद्दा कितना नरम और मोटा है, कैसा सुन्दर दुशाला है । रत्ना इस गद्दे पर कितने आराम से सोती है , जैसे चिड़िया के बच्चे, घोंसले में । तभी तो रत्ना के हाथ इतने गोरे और कोमल हैं, मालूम होता है कि देह में रुई भरी हुई है ।'[1] उसका मन इस बिछावन पर लेटने के लिए ललच उठता है । वह उस प्रलोभन से अपनेको रोक नहीं सका, चटपट बिछावन पर लेट गया और तब उसमें एक दूसरी प्रतिक्रिया हुई --' वह मारे खुशी के दो-तीन बार पलंग पर उछल पड़ा । उसे ऐसा मालूम हो रहा था, मानो रुई में लेटा हूं, जिधर करवट लेता था, देह अंगुल भर नीचे धंस जाती थी । यह स्वर्गीय सुख मुझे कहां नसीब । मुझे भगवान ने राय साहब का बेटा क्यों न बनाया ? सुख का अनुभव होते ही अपनी दशा का वास्तविक ज्ञान हुआ और चित्त क्षुब्ध हो गया ।'[2]

उसी समय किसी काम से राय साहब अन्दर आये । नथुआ की यह हरकत देखकर आग बबूला हो गये । हण्टर मंगा कर उन्होंने नथुआ को खूब पीटा । रत्ना की कृपा से उसे छुटकारा मिला । वह प्राण छोड़कर भागा । रास्ते में उसे रत्ना को पढ़ाने वाली मेम साहब जैसी महिला मिली । उसने सोचा शायद वे उसे पकड़ने ही आ रही हैं । अतः वह फिर भागा किन्तु जब पैरों में दौड़ने की शक्ति न रही तो खड़ा

---

१ प्रेमचन्द : मानसरोवर भाग १,पृ० २११

हो गया । एक क्षण में मैम साहब आ गईं और टमटम रोक कर बोलीं --`
नथुआ कहां जा रहे हो ?`

नथुआ -- कहीं नहीं ।

मैम० -- राय साहब के यहां फिर जायगा तो वे मारेंगे । क्यों नहीं मेरे साथ चलता । मिशन में आराम से रह । आदमी हो जायगा।

नथुआ --किरस्तान तो न बनाओगी ?

मैम० --किरस्तान क्या मंगी से भी बुरा है, पागल ?

नथुआ -- न मइया किरस्तान न बनूंगा ।

मैम० -- तेरा जी न चाहे न बनना, कोई जबरदस्ती थोड़े ही बना देगा ।

नथुआ थोड़ी देर टमटम के साथ चला ।

उसके मन में संशय बना हुआ था । सहसा उतर गया । मैम साहब ने पूछा --
क्यों चलता क्यों नहीं ?

नथुआ -- मैंने सुना है, मिशन में जो कोई जाता है, किरस्तान हो जाता है, मैं न जाऊंगा, आप फांसा देती हैं ।

मैम० -- अरे पागल, यहां तुझे पढ़ाया जायगा, किसी की चाकरी न करनी पड़ेगी । शाम को खेलने की छुट्टी मिलेगी । कोट-पतलून पहनने को मिलेगा । चलके दो-चार दिन देख तो ले ।`[1]

इस सन्दर्भ में सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से हीन यह बालक विचलित हो उठा । वह निराधार और निस्सहाय था । किन्तु उसने मैम के प्रलोभन का कोई उत्तर न दिया और निश्चिन्त होकर सोचने लगा--`कहां जाऊं ? कहीं कोई सिपाही पकड़ कर थाने न ले जाय । मेरी बिरादरी के लोग तो वहां रहते हैं । क्या वह मुझे अपने घर न रखेंगे । कौन बैठकर खाऊंगा, काम तो करूंगा । बस किसी को पीठ पर रखना चाहिए । आज कोई मेरी पीठ पर होता तो मजाल है कि राय साहब मुझे मारते । सारी बिरादरी जमा हो जाती, घेर लेती, घर सफाई बन्द हो जाती , कोई द्वार पर झाड़ू तक न लगाता । सारी राय साहबी निकल जाती ।`[2] इस तरह सोचता, घूमता, घामता

1 प्रेमचन्द : मानसरोवर ,भाग१,पृ०२१२,प्रथम संस्करण

2 ,, : ,, ,, ,, ,,

वह भंगियों की टोलीमें पहुंचताहै, वहीं उसे आश्रय मिलता है । इस प्रकार सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए बालक नथुआ के मनोभावों के सुन्दर दर्शन होते हैं ।

`गुप्तधन` नामक शीर्षक कहानी में मगनसिंह आर्थिक दृष्टि से हीन बालक है । इसकी मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया नथुआ से भिन्न है । वह गरीब बालक है । बाबू हरिदास सिंह के `ईंट के पजावे में मजदूर का काम करता है । परिवार में वृद्धा माता के सिवा और कोई नहीं, वह भी किसी पुराने रोग से दिन-ब-दिन जीर्ण हुई जा रही है । पजावे में मगन अविश्रान्त परिश्रम करता है । अपने वय के दूसरे लड़कों की अपेक्षा दूनी ईंट ढोता है कि उसे अधिक मजदूरी मिले । सुबह से सन्ध्या तक वह ईंट ढोते-ढोते थककर चूर हो जाता है । उसके बाद घर जाकर माता के लिए रोटियां सेंकता, तब कहीं सोने की फुर्सत मिलती है । माता का स्नेह इस गरीब बालक को एक विचित्र स्फूर्ति और शक्ति से अनुप्राणित करता है । वह बड़ा ही कर्तव्यशील, विनय और चतुर है । वह अपनी आर्थिक स्थिति से ऊपर उठना चाहता है और फलस्वरूप दूनी मेहनत करता है । मालिक उसके परिश्रम से प्रसन्न होकर मजदूर से मौकर बनादेते हैं और मजदूरों को कौड़ियां बांटने का काम उसे दिया जाता है । उसकी माता की तबियत

उसकी माता की तबियत ज्यादा खराब होती है । वह बाबू हरिदास से मिलकर अपना दुःख कहना चाहता है । मगन सिंह हीन भावना से प्रेरित है, मालिक को किस मुंह से अपने यहां आने का आग्रह करे ?

`कफन` कहानी-संग्रह में `जुर्माना` शीर्षक कहानी में नगर निगम की सड़क पर झाड़ू देने वाली भंगिनी अला रक्खी की गोदमें एक बालिका है । इस बालिका की तबियत खराब है । अला रक्खी के कई दिन काम में देर हो गई थी, दरोगा ने उसका नाम भी लिख लिया था । इस महीने तो आधे से अधिक पैसे जुर्माना में कट जायेंगे, यही विचार कर अला रक्खी ने बालिका को गोद में लिया और सड़क पर झाड़ू देने, किन्तु बालिका उसकी गोदसे उतरती ही न थी । अन्त में उसने दरोगा का नाम

लेकर धमकाना शुरू किया, अभी आता होगा, मुझे भी मारेगा, तेरे भी नाक-कान काट लेगा । लेकिन लड़की को अपने नाक-कान कटवाना मंजूर था । गोद से उतरना मंजूर न था, आखिर जब वह डराने, धमकाने, पुचकारने, किसी उपाय से न उतरी तो अला रक्खी ने उसे गोद से उतार दिया और रोती-चिल्लाती छोड़ कर झाड़ू लगाने लगी । मगर वह अभागिन एक जगह बैठकर रोती भी न थी । अला रक्खी के पीछे लगी हुई बार-बार उसकी साड़ी पकड़ कर खींचती, उसकी टांग से लिपट जाती, फिर जमीन पर लेट जाती, और एक क्षण में उठकर फिर रोने लगती ।[1] बालिका के इन क्रियाओं के मूल में सम्भवत: उसकी आर्थिक स्थिति ही है । आर्थिक अभाव में ही कोई भी भला जाड़े के दिनों में सड़के इस प्रकार बीमार बालिका को जमीन पर बैठाकर काम करेगी । बालक के पक्ष में माता का यह अन्याय है कि वह खांसी और बुखार से पीड़ित दूध पीती बच्ची को प्रात:काल में सड़क पर बैठा दे । किन्तु माता क्या कर सकती है, वह तो अपनी परिस्थितियों से बाध्य होकर ऐसा करती है और बालिका की प्रतिक्रिया भी उसी के अनुरूप होती है ।

'अगर सारे गांव में ऐसा कोई बालक था, जिसने गुरदीन की उदारता से लाभ न उठाया हो, तो वह बांके गुमान का लड़का धान था ।

यह कठिन था कि बालक धान अपने भाइयों-बहनों को हंस-हंस और उछल-उछल कर खाते देखकर सब्र कर जाय । उसपर तुर्रा यह कि वह उसे मिठाइयां दिखा-दिखाकर ललचाते और चिढ़ाते थे । बेचारा धान चीखता और अपनी माता का आंचल पकड़-पकड़ कर दरवाजे की तरफ खींचता था, पर वह अबला क्या करे ? उसका हृदय बच्चे के लिए ऐंठ-ऐंठ कर रह जाता था । उसके पास एक पैसा भी नहीं था । अपने दुर्भाग्य पर जेठानियों की निष्ठुरता पर और सबसे ज्यादा अपने पति के निखट्टूपन पर कुढ़-कुढ़ कर रह जाती थी । अपना आदमी ऐसा निकम्मा न होता तो क्यों दूसरों का मुंह

---

1 प्रेमचन्द : 'कफ़न', पृ० ८८, छठवां संस्करण ।

देखना पड़ता, क्यों दूसरों के धक्के खाने पड़ते, उसने धान को गोद में उठा लिया और प्यार से दिलासा देने लगी -- बेटा, रोओ मत, अब की गुरदीन आयेगा तो मैं तुम्हें बहुत सी मिठाइयां दे दूंगी । मैं इससे अच्छी मिठाई बाजार से मंगवा दूंगी, तुम कितनी मिठाई खाओगे । यह कहते-कहते उसकी आखें भर आयीं ।आह! यह मनहूस मंगल आज भी फिर आयेगा, और फिर ये बहाने करने पड़ेंगे । हाय! अपना प्यारा बच्चा धेले की मिठाई को तरसे और घर में किसी का पत्थर सा कलेजा न पसीजे । वह बेचारी तो इन चिन्ताओं में डूबी हुई थी और धान किसी तरह चुप ही न होता था । जब कुछ वश न चला तो मां की गोद से उतर कर जमीन पर लोटने लगा और रो-रोकर दुनिया सिर पर उठा ली । मां ने बहुत बहलाया, फुसलाया, यहां तक कि उसे बच्चे के इस हठ पर क्रोध भी आगया । मानव-हृदय के रहस्य कभी समझ में नहीं आते । कहां तो बच्चे को प्यार से चिपकाती थी,कहां ऐसी झल्लायी कि उसे दो-तीन थप्पड़ जोर से लगाये और झुक कर बोली -- चुप रह अभागे । तेरा ही मुंह मिठाई खाने का है ? अपने दिन को नहीं रोता , मिठाई खाने चला है ।'[1]

इन पंक्तियों में 'शंखनाद' शीर्षक कहानी के धान नामक शिशु पात्र का बड़ा ही सुन्दर तथा मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है । आर्थिक अभाव के कारण माता मिठाई नहीं खरीद सकती ,इसलिए धान की प्रतिक्रियाएं इस प्रकार की हैं ।

'दूध का दाम' शीर्षक कहानी में 'मंगल' सामाजिक आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा शिशु वर्ग के अन्तर्गत आयेगा । यह भूंगी और गूदड़ का पुत्र है । अवस्था इसकी आठ वर्ष की है ।

गांव के जमीन्दार बाबू महेश्वरनाथ के यहां जब किसी शिशु का जन्म होता है, तब भूंगी दाई का काम करती है । माता के साथ-साथ मंगल भी इस परिवार में सम्मान पाता है । दुर्भाग्य से दो वर्ष के अन्दर इसके माता-पिता दोनों की मृत्यु हो जाती है । मंगल असहाय और अनाथ हो जाता है । महेश्वर जी के द्वार पर फेंके जूठन का भी मुहताज हो

---

1 प्रेमचन्द : मानसरोवर, भाग७,पृ० ९८४,प्रथम संस्करण

जाता है । वह दिन भर उन्हीं के द्वार पर मंडराया करता था । महेश्वर बाबू के यहां जूठन इतना निकलता था कि दस-पांच बालक पलसकते थे । खाने की कोई कमी न थी ,किन्तु जब मिट्टी के सकोरे में ऊपर से खाना रख दिया जाता था तो मंगल को बड़ा बुरा लगता था । `सब लोग अच्छे-अच्छे बर्तनों में खाते हैं ,उसके लिए मिट्टी के सकोरे । वह याद किया करता था कि उसकी माता ने जमीन्दार साहब के लड़के सुरेश को अपना दूध पिलाकर पाला था । क्या उस समय छूत-छात का भेद नहीं था ?

`जमींन्दार साहब के मकान के सामने एक नीम का पेड़ था । इसी के नीचे मंगल का डेरा था । एक फटा-सा टाट का टुकड़ा दो मिट्टी के सकोरे और एक पुरानी धोती थी । जाड़ा,गर्मी और बरसात और हर एक मौसम में जगह आरामदेह थी,और भाग्य का बली मंगल फुलसती हुई लू , गलते हुए जाड़ों, लपकती धूप और मुसलाधार वर्षा में भी जिन्दा और पहले से कहीं अधिक स्वस्थ था । बस, अगर कोई उसका अपना था तो गांव का एक कुत्ता ,जो अपने सहवर्गियों के जुल्म से दुखी होकर मंगल की शरण में आ पड़ा था । दोनों एक साथ खाना खाते, एक टाट पर सोते, तबियत भी दोनों की एक-सी थी और दोनों एक-दूसरे के स्वभाव जान गये थे ।कभी आपस में झगड़ा न होता था ।[1] मंगल की यह स्थिति बड़ी ही दयनीय है । मंगल प्रतिदिन शाम को अपना घर देखने और रोने जाता है । पहले साल फूस का छप्पर गिर पड़ा, दूसरे साल दीवार और अब केवल आधी-आधी दीवारें खड़ी थीं,जिनका ऊपरी भाग नोंकदार हो गया था । यहीं उसे स्नेह की सम्पत्ति मिली थी,वही स्मृति, वही आकर्षण ,वही प्यास उसे एक बार उजाड़ में खींच ले जाती थी । मंगल नोंकदार दीवार पर बैठ जाता और जीवन के बीते और आने-जाने वाले स्वप्न देखने लगता ।

एक बार सुरेश अपने गांव के अन्य लड़कों के साथ खेल रहा था । उसने मंगल को बुलाया । उसे घोड़ा बनाकर ऊपर चढ़ने के लिए । मंगल को भय था कि सुरेश को छू देने के लिए ही पता नहीं उसपर कितनी मार पड़ेगी,किन्तु सुरेश और उसके साथियों ने उसे घेर लिया ।

---

१ प्रेमचन्द : `मानसरोवर,भाग२,पृ०२०३(प्रथम संस्करण)

और चटपट घोड़ा बढ़ाया । कुछ दूर तक तो मंगल चला पर आगे जाकर धीरे से सरक कर भाग निकला । सुरेश रोता हुआ माता-पिता के पास पहुंचा कि मंगल ने उसे छू दिया है । मंगल ने बताया कि उसने छुआ नहीं, वह गिर कर रो रहा है । पर मंगल पर विश्वास कौन करता । मंगलरोता हुआ अपना पुराना टाट,मिट्टी के सकोरे और पुरानी धोती उठाया और खण्डहर की ओर चला । यहां उसका हृदय और भी दुखी हो गया । पुरानी स्मृतियां सजग हो उठीं । वह फूट-फूट कर रोने लगा ।

मंगल के सम्पूर्ण जीवन में एक दरिद्र बालक की व्यथापूर्ण कहानी का दर्शन होता है । इसके जीवन की घटनाएं उसकी दरिद्रता के प्रतिफल की परिचायक हैं । सुरेश और मंगल कथा के दो ऐसे पात्र हैं, जो मात्र आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से ही एकदूसरे से भिन्न समझे जाते हैं । सुरेश बदमाश,आलसी और बुद्धिहीन है , पर उसका धन उसके अवगुणों पर आवरण डाल देता है । मंगल भला और होशियार है । किन्तु आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से हीन होने के कारण त्याज्यऔर घृणित बना हुआ है ।

(य) <u>दुर्लालित शिशु वर्ग</u>

इसवर्ग में ऐसे शिशुओं को रखा गया है जो स्नेह पाते हैं,किन्तु उन्हें स्नेह गलत ढंग से दिया जाता है । उनकी हर अच्छी-बुरी इच्छा की पूर्ति की जाती है । फलत: वे अच्छे-बुरे की पहचान खो देते हैं । ऐसे बच्चे ढीठ,शरारती,उद्दण्ड और अनुशासनहीन होते हैं । मां-बाप की एकलौती सन्तान होने के कारण या मां-बाप के बुढ़ापे की सन्तान होने के कारण या सबसे बड़ी छोटी सन्तान होने के कारण या अनियन्त्रित ढंग से वे अन्धाधुन्ध रुपये पैसे मिलने और खर्च करने के कारण इस वर्ग के शिशुओं में एक विशेष प्रकार की प्रतिक्रियाएं देखी जाती हैं । ऐसे बच्चे समाज के लिएविष के दांत होते हैं । शुरू में मां-बाप यह नहीं समझते कि बच्चों की ये आदतें और उनके चरित्र की ये विशेषताएं उनके बच्चों के लिए और समाज के लिए कितनी घातक हो सकती हैं । वे उसे साधारण

बाल क्रीड़ा समझकर अनदेखा कर देते हैं । कभी-कभी आगे दुर्ललित बच्चों में ब सुधार भी होता है, किन्तु ऐसे बच्चों की संख्या कम होती है ।

'मां' शीर्षक कहानी में 'प्रकाश' करुणा और आदित्य का एकमात्र बालक है । उसका पिता भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने के कारण कारावास में बन्द है । कारावास दण्ड के तीन महीने पश्चात् प्रकाश का जन्म होता है । इस शिशु का स्नेह ही करुणा के जीवन का एकमात्र आधार है । उसका लालन-पालन बड़े स्नेह से करती है । तीन वर्ष बाद आदित्य जेल से मुक्त होता है । रोगी और कंकालबनकर खांसता हुआ लाठी टेकता घर पहुंचता है । और उसी दिन उसकी जीवन-लीला समाप्त हो जाती है ।

प्रकाश धीरे-धीरे बड़ा होता है । माता की निर्धनता तथा देश-प्रेम पर बलि हो जाने वाले पिता की दुर्दशा का प्रभाव उसके अचेतन मन पर शनैः शनैः पड़ता है । माता के सन्तोष और आदर्शवादिता तथा पिता की देश भक्ति की भावना के प्रति उसके मन में विद्रोह होता है, एक प्रतिक्रिया होती है । फलस्वरूप वह उद्दण्ड बन जाता है । दसवर्ष की अवस्था में एक भिखारिन की झोली में भूसा डाल देता है । माता के बिगड़ने पर उसका प्रतिवाद करता है । अर्धरात्रि में उसकी नींद टूटती है और वह अपनी माता को रोते हुए पाता है । भिखारिन पर किए गए दुर्व्यवहार के प्रति उसके मन में ग्लानि होती है और वह माता से प्रतिज्ञा करता है कि वह फिर ऐसा काम कभी नहीं करेगा । वह माता के आदर्श का अनुकरण करेगा और दीन-दुखियों की सहायता करेगा किन्तु वह अपनी प्रतिज्ञा पूरी नहीं कर पाता ।

'मंदिर' शीर्षक कहानी में जियावन दुर्ललित शिशु वर्ग के अन्तर्गत आता है । यह सुखिया के जीवन का एकमात्र आधार है । सुखिया का न पति है और न कोई अन्य शिशु । अतः वह जियावन को अपना सर्वस्व समझती है, उसे बड़े लाड़-प्यार से पालती है । एक क्षण के लिए भी अपने से अलग नहीं होने देती । सुखिया उसकी सभी

इच्छा को पूरी करती है ।

एक बार जियावन बीमार पड़ता है । वह माता से गुड़ के लिए ज़िद करता है । माता उसे थोड़ा-सा गुड़ देती है, वह उसके आग्रह को टाल नहीं सकती । यद्यपि वह जानती है कि बीमार बालक के लिए गुड़ बहुत हानिकारक होगा । इसी समय कोई बुधिया को पुकारता है, वह गुड़ की हांडी खुले हुए छोड़कर बाहर चली जाती है । जियावन इस मौके से लाभ उठाता है और गुड़ की दो पिण्डियां निकाल कर खा लेता है । उसकी बीमारी बढ़ जाती है, निदान उसकी मृत्यु भी हो जाती है ।

'स्वर्ग की देवी' शीर्षक कहानी में लीला के दो शिशु जिनकी अवस्था तीन-चार वर्ष के लगभग है, दुर्ललित शिशु वर्ग के अन्तर्गत आते हैं । ये दोनों बच्चे अपने दादा-दादी के प्यार से बिगड़े हुए थे । दोनों शैतान और शोख़ बन गये थे । गाली दे बैठना, मुंह चिढ़ा देना उनके लिए मामूली बात थी । दिन भर खाते रहते और आये दिन बीमार पड़ते रहते थे । उनपर नियन्त्रण करने वाला कोई न था । जो चाहते कर बैठते । माता-पिता का डर तो था ही नहीं । गर्मी के दिन थे । एक आले पर कटा हुआ खरबूजा पड़ा था , और दो-चार कलमी आम । उनपर मक्खियां भिनक रही थीं । दोनों को लालच आयी , तिपाई लगाया उन चीजों को उतारा और दोनों ने मिलकर खूब खाया । शाम होते-होते दोनों को हैजा हो गया और दोनों मां-बाप को रोता छोड़ चल बसे । इन दोनों शिशुओं को स्नेह गलत ढंग से दिया गया है । अत: ये ढीठ और अनुशासनहीन हो गये हैं । अवस्था कम होने के कारण ये ऐसे कार्य कर बैठते हैं, जो उनके जीवन का अन्त करके ही छोड़ता है ।

'दूध का दाम' शीर्षक कहानी का शिशु पात्र सुरेश है जो समृद्ध पक्ष शिशु चरित्र के अन्तर्गत आता है । यह बाबू महेशनाथ का पुत्र है । बाबू महेशनाथ एक बड़े जमीन्दार हैं । तीन लड़कियों के पश्चात् सुरेश का जन्म होता है । अत: परिवार में बहुत आनन्द मनाया जाता है । अत्यधिक प्यार पाने के कारण इसका बौद्धिक

विकास ठीक से नहीं हो पाता है । उनके चरित्र का स्पष्ट चित्रण प्रेमचन्दने इस प्रकार उपस्थित किया है । --' आप थे तो आठ साल के बिलकुल गाव्दी। हद से ज्यादा प्यार ने उसकी बुद्धि के साथ वही किया था, जो हद से ज्यादा भोजन ने उसकी देह के साथ । ' दौड़ने-खेलने में स्थूलकाय होने के कारण वह अपने साथियों को पराजित नहीं कर सकता । मोटी बुद्धि होने के कारण तर्क-वितर्क में मुंह बाकर रह जाता है ।

उपन्यासों में 'रंगभूमि' उपन्यास में मिठुवा और घीसू दोनों दुर्ललित हैं। मिठुवा अनाथ है, यह सूरे के भाई का लड़का है । इसके माता-पिता के देहान्त हो जाने पर सूरदास बड़े लाड़-प्यार से इसे पालता है । सूरदास उसे अपने प्राणों से भी अधिक प्यार करता है । स्वयं मटर चबाकर रह जाता , पर उसके लिए शक्कर और रोटी,घी और नमक के साथ रोटियों का इन्तजाम करता था । कोई उसे भिक्षा में मिठाई या गुड़ देता तो उसे बड़े यत्न से अंगोछे के कोने में बांध लेता और मिट्ठू को ही देता । जब वह भीख मांगकर आता और मिठुआ को रोते पाता तो गोदमें उसे उठाकर अपने झोंपड़े में ले जाता, मुंह धुलवाता और खाना देता । इस पर भी जब मिठुवा के पसन्द का खाना न होता तो ठुनक कर कहता -- मैं यह न खाऊंगा, तब बेचारा सूरदास बजरंगी के घर उसके लिए दूध लेने जाता । जमुनी सूरदास से कहती है कि इतना लाड़-प्यार ठीक नहीं । वह उससे घर का सारा काम करवाए । इस तरह वह इसकी आदत बिगाड़ रही है । प्रेमचन्द के शब्दों में

एक कुल्हिया में आधा पानी लिया और ऊपर से दूध डालकर सूरदास के पास आई । और विश्वास हितैषिता से बोली -- यह लो इस लौंडे की जीभ तुमने ऐसी बिगाड़ दी है कि बिना दूध के कौर ही नहीं उठाता । बाप जीता था तो पेट भर चने भी न मिलते थे । अब दूध के बिना खाने ही नहीं उठता ।

सूरदास -- क्या करूं, भाभी , रोने लगता है । तो तरस आता है ।

जमुनी -- अभी इस तरह पाल-पोष रहे हो कि एक दिन काम आयेगा, मगर देख लेना चुल्लू भर पानी भी पूछे । मेरी बात गांठ बांध लो । पराया लड़का कभी अपना नहीं होता । हाथ पांव हुए और तुम्हें दुतकार कर

अलग हो जायगा । तुम अपने सिर सांपपाल रहे हो ।

सूरदास -- जो कुछ मेरा धरम है, वह किये देता हूं। आदमी होगा, तो कहां तक जस न मानेगा । हां अपनी तकदीर खोटी हुई तो कोई क्या करेगा । अपने ही लड़के क्या बड़ा होकर मुंह नहीं फेर लेते ?

जमुनी -- क्यों नहीं कह देते, मेरी भैंस चरा लाया करे । जवान व तो हुआ क्या जनम भर नन्हा ही बना रहेगा । घीसु ही का जोड़ा पारी तो है । मेरी बात गांठ बांध दो अभी से किसी काममें न लगाया. क्ने तो खिलाड़ी हो जायगा । फिर किसी काम में उसका जी न लगेगा । सारी उमर तुम्हारे ही सिर फुलारियां खाता रहेगा ।

सूरदास ने इसका कुछ जवाब न दिया । दूध की कुल्हिया क ली और लाठी टेकता हुआ घर पर चला ।[1]

"मिट्ठू जमीन पर सो रहा था । उसे फिर उठाया और दूध में रोटियां भिगोकर उसे अपने हाथ से खिलाने लगा । मिट्ठू नींद से गिरा पड़ता था, पर कौर सामने आते ही उसका मुंह आप-ही-आप खुल जाता । जब सारी रोटियां खा चुका तो सूरदास ने उसे चटाई पर लिटा दिया और हांडी से अपनी पंचमेल खिचड़ी निकाल कर खायी । पेट न भरा । तो हांडी धोकर पी गया । तब फिर मिट्ठू को गोद में उठाकर बाहर आया । द्वार पर टट्टी लगाई और मन्दिर की ओर चला ।[2]" यह सूरदास के दुलार की पराकाष्ठा है कि वह स्वयं तो पंचमेलखिचड़ी खाता है और मिट्ठू को दूध रोटी खिलाता है । मिट्ठुआ को खिलाते-पिलाते काफी देर हो जाती और सूर संगत में देर से पहुंचता है । संगत के अन्य सदस्य मिट्ठुआ को इस प्रकार दुर्लालित होना पसन्द नहीं करते । ~~संगत के अन्य सदस्य~~ नायक राम कहता है--" तुमने बड़ी देर कर दी । आध घण्टे से तुम्हारा राह देख रहे हैं । यह लौंडा बेतरह तुम्हारे गले पड़ा है । क्यों नहीं इसे हमारे ही घर से कुछ क मांग कर खिला दिया करते ?"

दयागिरि -- यहां चला आया करे तो ठाकुर जी के प्रसाद ही से पेट भर जाय ।

व जामर कहता है -- "लड़कों को इतना सिर चढ़ाना अच्छा नहीं । गोदमें लादे

1 प्रेमचन्द : 'रंगभूमि', पृ० १५, परिच्छेद २

2 ,, : ,, पृ० १६ ,, २

फिरते हो, जैसे नन्हा-सा बालक हो । मेरा विद्याधर इससे दो साल छोटा है । मैं उसे कभी गोद में लेकर नहीं फिरता ।'
सूरदास -- बिना मां-बाप के लड़के हठी हो जाते हैं ।'[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि सूरदास के अत्यधिक लाड़-प्यार से मिठुआ बिगड़ जाता है । उसपर सूरे का अनुशासन नहीं रहता और आगे चलकर बुरी संगत में पड़ता है । दूसरे लोग मिठुआ को सुधारना भी चाहते हैं तो सूरदास प्रतिवाद करता है ।

मिठुआ का दोस्त घीसू भी दुर्ललित है । यह उसका हमजोली है । यद्यपि इसकी माता जमुनी सूरदास को मिठुआ को अधिक लाड़-प्यार करने के लिए भला-बुरा बताती, दुनिया को रीति-नीति बताती है पर स्वयं उसने अपने बच्चे को बिगाड़ रखा है । घीसू कुछ कम शरारती नहीं है ।

'चंचल प्रकृति बालकों के लिए अन्धे विनोद की वस्तु हुआ करते हैं । सूरदास को उनकी निर्दयतापूर्ण बाल क्रीड़ा से इतना कष्ट होता था कि वह मुंह अंधेरे घर से निकल पड़ता और चिराग जलने के बाद लौटता । जिस दिन उसे जाने में देर होती उस दिन विपत्ति में पड़ जाता था । सड़क पर राहगीरों के सामने उसे कोई शंका न होती थी, किन्तु बस्ती की गलियों में पग-पग पर किसी दुर्घटना की शंका बनी रहती थी, पर कोई लाठी छीनकर भागता, कोई कहता -- सूरदास सामने गड्ढा है, बाईं तरफ हो जाओ । सूरदास बायें घूमता तो गड्ढे में गिर पड़ता । मगर बजरंगी का लड़का घीसू इतना दुष्ट था कि सूरदास को छेड़ने के लिए घड़ी भर रात रहते ही उठ पड़ता । उसकी लाठी छीनकर भागने में उसे बड़ा आनन्द मिलता था । एक दिन सूर्योदय से पहले सूरदास घर से चले तो घीसू एक तंग गली में छिपा हुआ खड़ा था । सूरदास को वहां पहुंचते ही कुछ शंका हुई । वह खड़ा होकर

---

[1] प्रेमचन्द : 'रंगभूमि,' पृ० ३०, परि० २

आहट लेने लगा । घीसू अब हंसी न रोक सका । फटपट सूर का डंडा पकड़ लिया । सूरदास डंडे को मजबूत पकड़े हुए था । घीसू ने पूरी शक्ति से खींचा । हाथ फिसल गया । अपने ही जोर से गिर पड़ा । सिर में चोट लगी, खून निकल आया । उसने खून देखा तो चीखता-चिल्लाता घर पहुंचा। बजरंगी ने पूछा -- क्यों रोता है रे ? क्या हुआ ? घीसू ने उसे कुछ जवाब न दिया । लड़के खूब जानते हैं कि किस न्यायालय में उनकी जीत होगी । आकर मां से बोला -- सूरदास ने ढकेल दिया । मां ने सिर की चोट देखी तो आंखों में खून उतर आया । लड़के का हाथ पकड़े हुए आकर बजरंगी के सामने खड़ी हो गई और बोली -- अब इस अन्धे की सामत आ गई है । लड़के को ऐसा ढकेला कि लहूलुहान हो गया । इसकी इतनी हिम्मत रुपये का घमण्ड उतार दूंगी ।"

इस प्रकार मां बराबर अपने बेटे का पक्ष लेती है और घीसू बिगड़ जाता है । उस बालक पर पिता का नियन्त्रण नहीं हो पाता,क्योंकि मां बराबर पुत्र के मामले में हस्तक्षेप करती है ।

बाल विधवा शिशु वर्ग

इस वर्ग में ऐसी बालिकाओं को रखा जा सकता है जो बचपन में विधवा हो जाती हैं । इस वय में इन्हें विवाह के विषय में कोई ज्ञान नहीं होता । ये माता-पिता के सिवा अपने जीवन में किसी तीसरे व्यक्ति की कल्पना भी नहीं कर सकती । ये अपने समाज तथा परम्परा की रूढ़ियों से परिचित नहीं होती । विधवा - नारी का समाज में क्या स्थान है । उन्हें किसी भी सामाजिक तथा सांस्कृतिक उत्सवों के अवसर पर भाग लेने का अधिकार नहीं आदि बातें उनकी समझ के परे की होती है । ऐसी अज्ञान बालिकाओं के विधवा होने पर उनके मन में प्राय: एक-सी भावना तथा प्रतिक्रिया होती है । अत: ऐसी बालिकाओं की प्रतिक्रियाओं के आधार पर एक वर्ग बनाया जा सकता है ।

`सुभागी` शीर्षक कहानी में सुभागी बाल विधवा है । इसके मन में वही प्रतिक्रिया होती है, जो इस वर्ग की बालिकाओं में होती है । सुभागी की अवस्था ११ वर्ष की है । वह विधवा हो जाती है । घर में कुहराम मच जाता है किन्तु सुभागी समझ नहीं पाती कि ये लोग रो क्यों रहे हैं । इस बालिकाओं के मन में उठने वाली भावनाओं का बड़ा ही मनोवैज्ञानिक चित्रण लेखक द्वारा अभिव्यक्त हुआ है । `घर में कुहराम मचा हुआ था । लक्ष्मी पछाड़ खाती थी । तुलसी सिर पीटते थे । उन्हें देखकर सुभागी भी रोती थी । बार-बार पूछती थी,क्यों रोती हो अम्मां,मैं तुम्हें छोड़कर कहीं न जाऊंगी , तुम क्यों रोती हो? उसकी भोली बातें सुनकर माता का दिल और भी फटा जाता था । वह सोचती थी ईश्वर तुम्हारी यही लीला है । जो खेल खेलते हो वह दूसरों का दुःख देखकर । ऐसा तो पागल करते हैं । आदमी पागलपन करे तो उसे पागलखाने में भेजते हैं मगर तुम जो पागलपन करते हो उसका कोई दण्ड नहीं है । ऐसा खेल किस काम का कि दूसरे रोये और तुम हंसो । तुम्हें तो लोग दयालु कहते हैं । यही तुम्हारी दया है ।

और सुभागी क्या सोच रहीथी ? उसके पास कोठरी भर रुपये होते तो वह उन्हें छिपाकर रख देती । फिर एक दिन चुपके से बाजार चली जाती और अम्मां के लिए अच्छे-अच्छे कपड़े लाती , दादा जब बाकी मांगने आते तो झट रुपये निकाल कर दे देती, अम्मां दादा कितने खुश होते ।` इस प्रकार जहां, जिस परिवार में जिस व्यक्ति के जीवन के लिए कुहराम मचा हुआ है वह निश्चिन्त,आश्चर्यचकित और अबाध है । अल्पवय के कारण उसे सामाजिक रूढ़ियों तथा कुसंस्कृतियों का ज्ञान नहीं है । और वह दिवा स्वप्न के मनोराज्य में विचर रही है ।

`नैराश्य लीला` कहानी में कैलाश कुमारी भी सुभागी की तरह बालविधवा हो जाती है । उसके परिवार में कुहराम मचा हुआ है, पर कैलाशकुमारी की समझ में कुछ नहीं आता। उसके मन में भी

इस वर्ग की बालिकाओं के मन में होने वाली प्रतिक्रियाएं होती हैं । कैलासकुमारी का अभी गौना भी न हुआ था । वह अभी तक यह भी न जानने पाई कि विवाह का आशय क्या है कि उसका सौहाग उठ गया । वैधव्य ने उसके जीवन की अभिलाषाओं का दीपक बुझा दिया ।

माता और पिता विलाप कर रहे थे, घर में कुहराम मचा हुआ था, पर कैलासकुमारी भौंचक्की होकर सबके मुंह की ओर ताकती थी । उसकी समझ ही में न आता था कि ये लोग रोते क्यों हैं ? मां-बाप की इकलौती बेटी थी। मां-बाप के अतिरिक्त वह किसी तीसरे व्यक्ति को अपने लिए आवश्यक न समझती थी । उसकी सुख-कल्पनाओं में अभी तक पति का प्रवेश न हुआ था । वह समझती थी, स्त्रियां पति के मरने पर इसलिए रोती हैं कि वह उनका और उनके बच्चों का पालन करता है । मेरे घर में किस बात की कमी है ? मुझे इसकी क्या चिन्ता है कि क्या खाएंगे क्या पहनेंगे क्या ? मुझे जिस चीज़ की ज़रूरत होगी बाबू जी तुरन्त ला देंगे । अम्मां से जो चीज़ मांगूगी वह तुरन्त दे देंगी । फिर क्यों रोऊं । वह अपनी मां को रोते देखती तो रोती, पति के शोक से नहीं, मां के प्रेम से । कभी सोचती शायद यह लोग इसलिए रोते हैं कि कहीं मैं कोई ऐसी चीज़ न मांग बैठूं जिसे वह दे न सकें । तो मैं ऐसी चीज़ मांगूगी ही क्यों? मैं अब भी तो उनसे कुछ नहीं मांगती, वह आप ही मेरे लिए एक न एक चीज़ नित्य लाते रहते हैं । क्या मैं अब कुछ और हो जाऊंगी ? इधर माता का यह हाल था कि बेटी की सूरत देखते ही आंसू की झड़ी लग जाती । बाप की दशा और भी करुणाजनक थी । घर में आना -जाना छोड़ दिया । सिर पर हाथ धरे कमरे में अकेले उदास बैठे रहते । उसे विशेष दुःख इस बात का था कि सहेलियां भी अब उसके साथ खेलने न आतीं ....माता -पिता की यह दशा देखी तो उसने उनके सामने आना छोड़ दिया,बैठी किस्से कहानियां पढ़ा करती । उसकी एकान्तप्रियता का मां-बापने कुछ और ही अर्थ समझा । लड़की शोक के मारे घुली जाती है । इस वज्राघात ने उसके हृदय को टुकड़े-टुकड़े कर डाला है[1]।

[1] प्रेमचन्द : मानसरोवर,भाग३,प्रथम संस्करण,पृ०५३।

प्रेमचन्द के सभी उपन्यासों के अध्ययन से स्पष्ट है `गोदान` में झुनिया ही एकमात्र बाल विधवा है । वह स्वभाव की सहज, चंचल और आकर्षक है । उसके वंचित मन को भाभियों के व्यंग्य और हास-विलास ने लोलुप बना दिया है । उसका मन गोबर के कौमार्य पर ललच उठता है । प्रथम दर्शन में ही वह गोबर पर अपना प्रभाव डालती है और अन्त में उसे अपना बना लेती है ।

-o-

व्यक्ति परक शिशु-चरित्र

इस सन्दर्भ में ऐसे शिशुओं का विशेष रूप से विश्लेषण किया गया है, जो अपने विशिष्ट स्वभाव और व्यक्तित्व के कारण समूहपरक शिशु-पात्रों से भिन्नता रखते हैं। यद्यपि ऐसे पात्रों में भी विकासोन्मुखी वे प्रवृत्तियां दृष्टिगत होती हैं,जो समूहपरक शिशुओं में हैं तथापि उन समानताओं के होते हुए भी जब कथा भाग में शिशु या बालक की व्यक्तिनिष्ठ रेखाएं उभर आती हैं तो वे समूहपरक शिशुओं से एक अलग वर्ग का निर्धारण करते हैं। इसी दृष्टिकोण से प्रस्तुत अध्याय में व्यक्तिपरक शिशुओं की समीक्षा की जा रही है।

प्रेमचन्द ने 'ईदगाह', 'हामुल का कैदी' 'सच्चाई का उपहार', 'बड़े भाई साहब', 'दो बैलों की कथा', 'मृतक भोज,' 'प्रेरणा', 'सती', 'कप्तान साहब', 'विमाता', 'सौभाग्य के कोड़े', 'गृह-दाह' कहानियों में व्यक्ति-परक शिशु-चरित्रों का निर्माण किया है।

'ईदगाह' का हामिद व्यक्ति-परक शिशु है। इस कहानी में ईद के दिन एक गांव के चार-पांच बालक एक साथ 'ईदगाह' देखने जाते हैं। हामिद भी इनमें से एक है। इन सभी शिशुओं में त्यौहार,उत्सव के सारे अंग,उल्लास और आनन्द वर्तमान हैं। इन शिशुओं की सारी विशेषताओं का सुन्दर चित्रण करते हुए प्रेमचन्द ने हामिद को व्यक्ति-परक शिशु चरित्र के रूप में चित्रित किया है।

हामिद की अवस्था ब पांच वर्ष की है। उसके दल के सभी बच्चे अवस्था में उससे अधिक हैं। अन्य बच्चों की अपेक्षा उसके पास पैसे भी कम हैं। सभी बच्चे आनन्द और उल्लास में ईदगाह पहुंचते ही मिठाई खिलौना आदि खरीदना शुरू करते हैं। वे अपने पैसे की योजना नहीं बनाते किन्तु हामिद विशिष्ट चरित्र का परिचय बदल देता है जो इस वय के शिशु के स्वभाव के सर्वथा प्रतिकूल जान पड़ता है। वह अपने तीन पैसे के लिए मन में योजना बनाता रहता है और उससे सबसे अधिक उपयोगी वस्तु खरीदना चाहता है। साथियों को मिठाई खाते देखता है, उसे लालच होती है। वह उनका कुछ विनोद

सहता है । किन्तु उन पैसों को मिठाई में खर्च करना नहीं चाहता । मित्रों के सम्मुख यह तर्क उपस्थित करता है --` मिठाई कौन बड़ी नेमत है । किताब में कितनी बुराइयां लिखी हैं । खिलौने की निन्दा करता है --` मिट्टी के तो हैं गिरें तो चकनाचूर हो जायं । वह अपने पैसे से दादी के लिए एक लोहे का चिमटा खरीदता है । रोटी पकाते वक्त उसकी दादी की हु अंगुलियां जल जाया करती थी । वह अपने चिमटे के पक्ष में इस प्रकार तर्क उपस्थित करता है कि उसके सभी साथी परास्त हो जाते हैं । वे हामिद के विशिष्ट व्यक्तित्व का लोहा मान लेते हैं ।

`हामुल का कैदी` -- कहानी में कृष्णचन्द्र व्यक्ति-परक शिशु-चरित्र है । वह एक सेठ का पुत्र है उसका पिता मिल-मालिक है । मजदूरों के हड़ताल में वह मजदूरों के नेता गोपी को अपने रिवाल्वर का शिकार बनाता है । गोपी की मृत्यु के पश्चात् कृष्णचन्द्र का जन्म होता है । कृष्णचन्द्र के स्वभाव में व्यक्तिगत विशेषताएं हैं । मिल-मालिक के पुत्र होने पर भी उसमें सुख-विलास, धन-यश आदि के प्रति कोई आकर्षण नहीं । मजदूरों के प्रति उसके मन में सहानुभूति है ।उसे पता चलता है कि उसका रूप-रंग गोपी के समान है ,इस बात से वह प्रभावित होता है, गोपी की विधवा पत्नी तथा उसके परिवार का पता लगाता, और अपना सारा समय उस दरिद्र परिवार की सेवा में लगाता है । कृष्णचन्द्र की इस प्रकार की सेवा उसकी व्यक्तिगत विशेषता है । उसकी वय के साधारण बालक के मन में अपने पिता द्वारा मारे गए व्यक्ति के परिवार के प्रति इसप्रकार की सद्भावना नहीं जागती और न वे इस प्रकार का त्याग ही कर सकते हैं ।

`सच्चाई का उपहार` -- शीर्षक कहानी का व्यक्ति-परक शिशु -पात्र बाजबहादुर है । इस कहानी में प्रेमचन्द ने ग्राम के एक स्कूल के मिडिल कक्षा के शिशुओं का चित्रण किया है । इन सभी चरित्रों के बीच बाजबहादुर एक विशिष्ट चरित्र लेकर हमारे सामने आता है । उसके वर्ग के सभी छात्र शरारती और नटखट हैं । स्कूल के प्रधानाध्यापक को बागवानी का शौक है, अत: वे लड़कों को प्रोत्साहित करके बागवानी का काम कराते हैं । कक्षा के विद्यार्थियों को खेल का समय बचा कर बाग में काम करना पड़ता है । जो इनकी बाल-पद्धति के विरुद्ध है । अत:

वे राय करके एक दिन क्लास शुरू होने के पहले बाग को उजाड़ देते हैं । बाजबहादुर उसी समय वहां पहुंचता है । यदि बाजबहादुर सामान्य बालक होता तो वह भी उस शरारत में शामिल होता । और बड़े उत्साह से उस आनन्द में भाग लेता । किन्तु अन्य बालकों की तरह उसमें विध्वंसात्मक प्रवृत्ति नहीं है । वह अपने साथियों को बड़े ही शान्तभाव से ऐसा करने को मना करता है । शिक्षक को बाजबहादुर की सच्चाई पर विश्वास है । अत: वह उसी से बाग उजाड़ने वाले बच्चों का नाम पूछता है । बाजबहादुर नाम बता देता है, इस स्थलपर हम उसके विचित्र व्यक्तित्व को पाते हैं,क्योंकि बाजबहादुर के साथियों ने नाम बता देने के लिए अच्छी धमकी दी थी ।

सन्ध्या समय सभी शरारती लड़के लेकर बाजबहादुर को पीटते हैं । बाजबहादुर इसकी शिकायत शिक्षक से नहीं करता है । दो तीन दिनों के बाद उसकी भेंट उन साथियों से होती है, जिन्होंने बाग उजाड़ा था और घर लौटते समय उसे मारा था । बाजबहादुर उनसे पूछता है कि वे क्लास में क्यों अनुपस्थित रहते हैं । उसने तो शिक्षक से उन लोगों की कोई शिकायत नहीं की है । वह विश्वास दिलाता है कि यदि उसने शिकायत की होगी तो सच बोलने का इनाम तो उन लोगों ने दे ही दिया । झूठ बोलने का इनाम भी दे देंगे । उसके साथी दूसरे दिन से क्लास जाते हैं । वे बाजबहादुर के विशिष्ट चरित्र से प्रभावित होते हैं । उसके विशिष्ट गुणों तथा व्यक्तिगत विशेषताओं के कारण उसे अपना नेता बनाते हैं । प्रेमचन्द ने इन शिशुओं के सन्दर्भ में बाजबहादुर को रखकर व्यक्ति-परक शिशु-चरित्र का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है ।

'बड़े भाई साहब' -- शीर्षक कहानी में एक नौ वर्षीय बालक अपने बड़े भाई साहब के विभिन्न निराले स्वभाव से तंग आकर अपने अनुभव के रूप में बड़े भाई साहब की चारित्रिक विशेषताओं की चर्चा करता है । उसके भाई के व्यवहार उसकी समझ के परे की चीज़ है । उसका बड़ा भाई उससे पांच वर्ष श्रेष्ठ है, किन्तु पढ़ने में सिर्फ तीन दर्जा ऊपर ।उसमें बाल-स्वभाव के कोई भी लक्षण परिलक्षित नहीं होते । उन्हें खेलने -कूदने का शौक नहीं और न हंसी-मजाक , गप-शप की ओर आकर्षण ही । सदा टेबिल के पास बैठे कुछ-न-कुछ पढ़ता

रहता है । उसने एक समय-तालिका बना रखी है और उसका पालन नियमित रूपसे करता है । पढ़ने से जब जी ऊब जाता है तो वह अपनी कापी पर कुछ-न-कुछ लिखता । जैसे -- स्पेशल, अमीना, भाइयों-भाइयों, दर-असल, भाई-भाई ,राधे श्याम, श्रीयुत राधेश्याम, एक घण्टे तक पढ़ने के क्रम में यही उसके मनबहलाव का साधन था ।

छात्रावास में छोटे भाई के साथ रहने के कारण अपने को अत्यधिक दायित्व के बोझ से दबा पाता है । छोटे भाई के सम्मुख विद्यार्थी जीवन का आदर्श रखने के लिए अपने सभी मनोरंजनों का परित्याग करता है । वह भूल जाता है कि बौद्धिक विकास के लिए मनोरंजन तथा खेल-कूद का ह महत्वपूर्ण स्थान है । अत: एक गलत आदर्श की कल्पना कर उसमें अपने स्वास्थ्य और मानसिक विकास का ह्रास ही ह कर रहा है । पिता के परिश्रम की कमाई को उसे विशेष चिन्ता है । अत: उसकी शिक्षा में जो भी व्यय होतेहैं,उसे बर्बादकरना नहीं चाहता । इसलिए कड़ी मेहनत करता । मनोरंजन का त्याग करता और बराबर पढ़ता रहता है ।

एक दिन कनकौवे के पीछे दौड़ते हुए छोटे भाई का कान पकड़ता है । उसे डांटता और फटकारता है किन्तु उसी समय कनकौवे को खद सामने आते देख उसकी बाल-प्रवृत्ति उभर पड़ती है । वह अपने को संयमित नहीं कर पाता । उचक कर कनकौवे को पकड़ता और बच्चों की तरह हास्टल की ओर दौड़ता है । उसका छोटा भाई उसके व्यवहार से आश्चर्य चकित रह जाता है ।

`दो बैलों की कथा` -- में एक बालिका व्यक्तिपरक शिशु के रूप में आती है । यह बालिका ग्रामीण है । ग्रामीण बालकों में पशु-प्रेम विशेषरूप से पाया जाता है । ग्रामीण बालक पालतू जानवरों विशेषकर गाय,बैल आदि से विशेष आत्मीयता का अनुभवकरते हैं । क्योंकि उनके सम्पूर्ण पारिवारिक और सामाजिक वातावरण में इन पशुओं का विशेष महत्व होता है । ग्रामीण बच्चे इन पशुओं के साथ खेलते तथा इन्हें खिलाते-पिलाते सुख की अनुभूति प्राप्त करते हैं । इन ग्रामीण बालिकाओं में ग्रामीण बच्चों के समस्त गुण होते हुए भी एक ऐसी विशेषता है जिसके कारण ये समूह-परक चरित्र न होकर व्यक्तिपरक शिशु की संज्ञा पाती हैं । बालिका अनाथ है । विमाता उसे कष्ट देती है । हीरा-मोती नामक दो दो बैल उसके फूफा के

यहां से लाए जाते हैं । ये दोनों बैल स्वाभिमानी और स्वतन्त्रता प्रेमी हैं । बालिका बैलों के कष्ट को समझती है । बैलों की दुखानुभूति को अपनी अनुभूति मानती है । बैलों के कष्ट से उसे भी कष्ट होता है । प्रति दिन रात को वह रोटियां खिलाती है । उनका सिर सहला कर उन्हें प्यार करती है । हीरा-मोती भी बालिका की दयनीय स्थिति से परिचित है । एक दिन वह सुनती है कि बैलों के नाक में नथ डाले जायेंगे । वह बैलों के इस कष्ट को नहीं देखना चाहती, रात को बैल खोल देती है और उन्हें इस कष्ट तथा परतन्त्रता से मुक्त कर देती है ।

शिशु स्वभाव से स्वार्थी होता है । एक सामान्य शिशु के मन में इतनी सम्वेदनाएं उत्पन्न ह नहीं होतीं । यदि हों भी तो उसका स्वार्थ सबसे बड़ा होता है । बालिका अपने विशिष्ट चरित्र के कारण इस स्वार्थ से ऊपर उठ गई है ।

'मुक्त मौज' कहानीमें रेवती व्यक्तिपरक चरित्र के रूप में प्रतिष्ठित है । रेवती के बचपन में पिता का देहान्त हो जाता है । यह एक सेठ की पुत्री है । इसके पिता के पास काफी सम्पत्ति है, किन्तु उनकी मृत्यु पर समाज के दो-चार बेईमान तथा धूर्त सेठ मिलकर उसकी सारी सम्पत्ति को हड़प लेते हैं । रेवती अपनी माता सुशीला और भाई सोहन के साथ धैर्य और विनम्रता से एक खटकिन के घर जाकर शरण लेती है । अभी-अभी पिता के जीवन काल में धन और समृद्धि के बीच प्यार और दुलार पाई लड़की इस दरिद्र परिस्थिति के साथ अभियोजित करती है यह उसकी अपनी चारित्रिक विशेषता है । रेवती का छोटा भाई मोहन दही-रेवड़ी और मिठाई के लिए मचलउठता है । रेवती अपने बचाए हुए पैसे से दौड़कर भाई के लिए कुछ खरीद देती है । इस प्रकार भाई के प्रति अपार स्नेह और त्याग का परिचय देतो है । कुछ ही दिनों में इसकी माता का देहान्त हो जाता है । १२-१३ वर्ष की रेवती अपना और अपने भाई का बोझ सम्हालती है । सेठ झाबरमल पचास वर्ष का विधुर इसके सामने विवाह का प्रस्ताव रखता है। इस पर में रेवती उससे डरती नहीं, किन्तु अदम्य साहस का परिचय देती है । उसका उज्ज्वल गौरवमय चरित्र उभर आता है । झाबर मल के रुपये को टुकड़े-टुकड़े करके उसके मुंह पर फेंक देती है । यह साहस इस आयु की बालिका के अनुकूल तथा

बिल्कुल स्वाभाविक नहीं है । झाबर मल के साथ सम्बन्ध को अपमान जनक मानती है, कहीं मामा सचमुच उसका विवाह झाबर मल से न कर दें, इसी भय और शंका से, जीवन से सर्वथा निराश होकर अर्द्ध रात्रि में बार-बार भाई को गले लगाती और चूमती है और अपने जीवन को गंगा में विसर्जित कर देती है । रेवती का विशिष्ट चरित्र पाठक के मन में एक अमिट छाप छोड़ता है ।

'सूर्य प्रकाश' 'प्रेरणा' शीर्षक कहानी में एक विशेष व्यक्तित्व लेकर आता है, अत: हम इसे व्यक्ति-परक चरित्र के रूप में रखते हैं । यह अपनी कक्षा का सबसे उधमी, शरारती और नटखट बालक है । अपने सम्पूर्ण क्लास का नेता । इसके क्लास के सभी लड़के इसके इशारे पर चलते हैं । विद्यालय के प्राध्यापक भी उससे डरते हैं कि कहीं सूर्य प्रकाश के नेतृत्व में पूरे स्कूल का नियम और अनुशासन भंग न हो । सूर्यप्रकाश को न शिक्षकों से भय है और न बाहर से आने वाले निरीक्षक से ही । शिक्षक उसे कोई धमकी नहीं दे सकते । अत: उसका चरित्र अपने ही ढंग का है । क्लास में वह प्रथम स्थान प्राप्त करता है जो उसके शिक्षक को आश्चर्य में डालने वाला है । स्कूल के सभी शरारती लड़कों का नेतृत्व करने वाला उधमी और नटखट बालक पढ़ने में इतना तेज कैसे हो सकता है ।

दस साल के अध्यापन काल में भी इसके एक शिक्षक को इस प्रकार के अध्यापकों को बनाने और चिढ़ाने वाले, उपयोगी बालकों को छेड़ने और सताने वाले, नाना प्रकार के षड्यन्त्र रचने वाला विचित्र प्रकार के बालक से भेंट नहीं हुई थी ।

सूर्यप्रकाश का चरित्र इस शिक्षक के लिए एक नया अनुभव था । शिक्षक के स्थानान्तरण के अवसर पर सभी लड़के स्टेशन तक पहुंचाने गये । बच्चों की आंखों से आंसू बह चले, शिक्षक भी आंसुओं को ब रोक न सके । इन बालकों के बीच सूर्य प्रकाश भी था, वह किन्तु वह दूर खड़ा था, उदास था, उसकी आंखें भीगी थी । अन्य सभी विद्यार्थियों से इस बालक की स्थिति सर्वथा भिन्न थी । प्लेटफार्म पर गाड़ी के चलने के साथ-साथ कुछ लड़के दौड़ पड़े किन्तु वह बहुत देर तक चुपचाप निस्पन्द खड़ा रहा । शिक्षक

की विदाई के अवसर पर सूर्यप्रकाश के चरित्र का दूसरा पक्ष सामने आता है,जो सामान्य बच्चों के चरित्र से भिन्न है, जो स्वयं अपने-आप में अकेला है ।

`सती` कहानी में चिन्ता नामक बालिका है। माता इसकी मर चुकी है । पिता इसके देश के लिए लड़ने वाले एक वीर बुन्देला सेनानी है । चिन्ता का सम्पूर्ण बचपन समरभूमि में पिता के ही साथ व्यतीत होता है । इसका लालन-पालन सामान्य बच्चों से भिन्न परिस्थितियों में होता है,अतः इसका मानसिक एवं संवेगात्मक विकास भी अन्य बच्चों से भिन्न है । जब इसके पिता इसे खोह में छोड़कर चले जाते हैं तो चिन्ता निःशंक भाव से मिट्टी के किले बनाती और बिगाड़ती है । उसके घरौंदे किले ही होते हैं । वह अपनी गुड़ियों को ओढ़नी नहीं ओढ़ाती । गुड्डों को सिपाही का रूप देती है कभी कभी तो वह उन्हें रणभूमि में भी लड़ा करती है। चिन्ता के इस प्रकार के खेल में उसकी वैयक्तिक रुचि एवं नवजात प्रवृत्ति का परिचय मिलता है । कभी-कभी उसके पिता रणक्षेत्र से नहीं लौटते, सन्ध्या समय या रात्रि में ही इस निर्जन सुनसान में चिन्ता को भय तक न छू पाता । भूख-प्यास सभी को वह सहर्ष सहती है,क्योंकि उसके पिता देश के लिए बाहर गये हैं ।यह भी उसकी अपनी चारित्रिक विशेषता है । उसकी व्यक्तिगत विशिष्टता की पराकाष्ठा को पहुंचती हुई पाते हैं । जब चिन्ता पिता की मृत्यु के पश्चात् भी नहीं रोती । जब अन्य वीर योधा आकर उसके सामने रोते हैं तो वह हंसकर कहती है--`अगर उन्होंने वीर गति पाई, तो तुम लोग रोते क्यों हो ? योद्धाओं के लिए इससे बढ़कर और कौन मृत्यु हो सकती है, इससे बढ़कर उनकी वीरता का और क्या पुरस्कार मिल सकता है ? यह रोने का नहीं, आनन्द मनाने का अवसर है ।

यह बालिका भी पिता के ही के समान अपने देश के लिए अपने को बलिदान करने की प्रतिज्ञा करती है ।एक कोमल हृदय की बालिका के संकल्प और वचपन से सभी सिपाही स्तम्भित रह जाते हैं ।

`जगतसिंह `व्यक्ति परक चरित्र के अन्तर्गत आता है । `कप्तान`शीर्षक कहानी में इसका चरित्र-चित्रण बड़े ही सूक्ष्म एवं मनोवैज्ञानिक ढंग से हुआ है । जगत सिंह बिगड़ा हुआ बालक है ,जिसकी बुरी आदतें,शैतानियां और शरारतें अपने ढंग की निराली है । स्कूल वह नहीं

जाता । कभी अमरूद के बगीचे की ओर निकल पड़ता और बदमिजाज माली की गालियां बड़े शौक से सुनाता । कभी नदी की ओर निकल पड़ता और मल्लाहों की डोंगी लेकर दूसरी ओर चल देता, कभी सवार घोड़े के पीछे ताली बजाता, कभी बड़े बूढ़ों की चाल की नकल करता आदि । अपने गांव का नामी था । बालक-परिवार के लोग उससे परेशान थे और सब तरह से चेष्टा करके भी उसे सुधारने में असमर्थ थे । धीरे-धीरे उसमें चोरी की लत पड़ी । वह इस कला में इतना दक्ष और निपुण हो गया कि उसे पकड़ना तथा उसपर शक करना मुश्किल था ।

जब वह घर में कदम रखता तो चारों ओर से कांव-कांव होने लगती है । मां और बहनें सभी उससे घृणा करने लगीं । इस स्थितिमें उसे दो-दो-,तीन-तीन दिन भूखे-प्यासे बाहर ही रहना पड़ता । इतना शरारती होने के बावजूद भी जब जगत सिंहके पिता उसे पीटते तो वह चुपचाप चुपके से मार खा लेता । अपने पिता के सामने वह इतना भीमकाय था कि यदि जरा भी उनका हाथ पकड़ लेता तो वे हिल भी नहीं सकते थे । किन्तु पिता को कुछ करने का दुस्साहस इसे कभी नहीं होता । ऐसे दुष्ट तथा दुश्चरित्र बालक में इस प्रकार का भाव उसकी अपनी विशेषता का परिचय देता है ।

'विमाता' कहानी में मुन्नू व्यक्ति -परक शिशु है । शैशवमें माता का देहान्त हो जाता है । स्नेहवंचित शिशु माता के लिए खिन्न उदास और दुखी रहता है । विमाता आती है और उसे अपना सम्पूर्ण मातृत्व और स्नेह देती है । फिर भीमुन्नू रोता है । मुन्नू इसलिए नहीं रोता कि यह उसकी विमाता है । उसके स्नेह में उसे सन्देह हुआ कि इसका स्नेह बदल सकता है । अपितु वह इसलिए रोता है कि जो उसे बहुत प्यार करती थी, उसकी मृत्यु हो गई और यह नई माता भी उसे बहुत प्यार करती है । इसलिए वे भी मर जायेंगी । इस तरह की भावना मुन्नू की अपनी है । उसकी अवस्था के सामान्य शिशु कदापि इस प्रकार विचार नहीं करते । मुन्नू की अशुभ कल्पना साकार हो जाती है । उसे स्नेह देने वाली यह नई अम्मां उससे सदा के लिए अलग हो जाती है । इस माता के

बाद दु

साथ मुन्नू की शैशवावस्था का सारा चुलबुलापन तथा बाल-क्रीड़ा का भी अन्त हो जाता है । माता की मृत्यु से उसके हृदय पर बड़ा आघात पहुंचता है । वह शौक और नैराश्य की जीवित मूर्ति बना रहता है । जब उसे स्नेह मिलता था तो स्नेह खोने की शंका से रोता था । आज स्नेह खोकर भी वह नहीं रोता ।

'सौभाग्य के कोड़े' शीर्षक कहानी में रत्ना एक व्यक्तिपरक बालिका है। वह एक रायसाहब की लड़की है और उसका लालन-पालन बड़े ही लाड़-प्यार से होता है । रायसाहब के यहां दर्जनों भान्जे -- भतीजे हैं । किन्तु इन बच्चों से उसे मिलने नहीं दिया जाता । इतने प्यार पाने पर भी रतना जिद्दी नहीं होती और न बिगड़ती ही है । उसका विकास बिलकुल सम होता है । वह शील गुण सम्पन्न बनी रहती है । यह उसकी अपनी चारित्रिक विशिष्टता है । रत्ना के चरित्र की शालीनता विशेषरूप से परिलक्षित होती है । जब उसके यहां रहने वाला एक भंगी बालक नथुआ बहुत बड़ा अपराध करता है और रायसाहब द्वारा पीटा जाने पर रत्ना दौड़ आती है । और उसे बचाती है । वह नथुआ के अपराध के लिए पिता से क्षमा मांगती है । यहां रत्ना के चरित्र के विकास में जो सद्गुण और शालीनता पाते हैं, वह वातावरण से प्राप्त नहीं है । सम्भवत: ये वंशानुक्रम के ही हैं,क्योंकि इस प्रकार के वातावरण में बालक का विकास सही दिशा में ही होता है ।

सत्यप्रकाश अपने परिवार का प्रथम शिशु है अत: उसके जन्मोत्सव में बहुत आनन्द मनाया जाता है । पांच -छ: वर्ष की आयु में माता का देहान्त हो जाता है । छ: महीने के बाद जब उसे मालूम होता है कि नई माता आने वाली है तो कल्पना करता है कि उसकी वही माता स्वर्ग से आयेगी और उसे प्यार करेगी । अत: सत्य प्रकाश अपने पिता के विवाह में बहुत खुश है । सत्यप्रकाश की ऐसी भावना और कल्पना सामान्य शिशु से सर्वथा भिन्न है । इस अवस्था में शिशु के मन में विमाता के क्रूर व्यवहार और कटुता का आभास हो जाता है ।

सत्यप्रकाश की विमाता उसपर तरह-तरह के अत्याचार करती है, किन्तु सत्यप्रकाश अपने सौतेले भाई ज्ञानप्रकाश को बहुत प्यार करता है। विमाता के न चाहने पर वह उसे अपना स्नेह देता है। उस स्नेह-वंचित बालक के हृदय की तृप्ति छोटे भाई के स्नेह प्रदान से ही होती है। सत्यप्रकाश के चरित्र में हम जो कुछ पाते हैं, वह व्यक्तिपरक चरित्र की विशेषताएं हैं। उसका दिमाग सुलझा हुआ है, तर्क करने के उसके अपने तरीके हैं। अपने और ज्ञान के साथ परिवार के व्यवहार की भिन्नता को वह समझता है। परिवार में सत्यप्रकाश और ज्ञानप्रकाश दोनों दो समझे जाते हैं, किन्तु समाज के लोगों को यह कैसे समझाया जा सकता है कि वे दोनों दो नहीं एक ही हैं -- एक पिता के पुत्र हैं। इस प्रकार की भावना इस अबोध बालक के मन में है और वह अपने पिता से प्रतिवाद करता है और उनसे बड़ी निर्भिकता से कहता है -- `जिनके भाग्य में भीख मांगना होता है, वही बचपन में अनाथ हो जाते हैं। वहपढ़ाई छोड़ देता है और छोटी-सी पोटली बांधकर घर से निकल पड़ता है। यह उसकी दयनीय स्थिति की चरम सीमा है,जहां एक अबोध बालक असहाय होकर बिना किसी ठौर -ठिकाने के घर से निकल पड़े। वहां उसकी मानसिक वेदना और अन्तर्द्वन्द्व पराकाष्ठा को पहुंचती है। उसका वर्तमान उसे वेदनामय तथा भविष्य अन्धकारमय लगता है। व्यथा से उसका हृदय कराह उठता है,किन्तु जाने से पहले अपने छोटे भाई ज्ञानप्रकाश से मिलता और उसे गले लगाता है।

`देवी` शीर्षक कहानी की तुलिया व्यक्ति-परक-चरित्र है। इसकी अपनी एक अलग विशेषता है। उसका विवाह जब होता है तब वह पांच वर्ष की बालिका है -- उसे खूब याद है उसका विवाह। वह बड़ा बलिष्ठ युवक था, बड़ी-बड़ी आंखें, ऊंचा मस्तक,माथा, चौड़ी छाती, गठा शरीर, मोतियों के से दांत उसने विवाह किया, अपने गांव में ले आया और पूरब गया कमाने। वहां से बराबर पत्र और पैसे भेजता रहा। उसने तुलिया से कहा मैं कमाने जाता हूं, वहां से रुपये भेजूंगा, तू बहुत से गहने बनवाना। जब वहां से आऊंगा तो अपने साथ सन्दूक भर गहने लाऊंगा। वह फिर लौटा नहीं। तुलिया उसी के नाम की पड़ी रही। अपने सतीत्व पर

कभी आंच न आने दिया । गांव की रमणियां जब उससे पूछती--क्यों बुआ तुम्हें फूफा की याद आती है, तुमने उनको देखा तो होगा ? इसपर तुलिया के फुर्रियों से भरे मुखमण्डल पर यौवन चमक उठता और सारी कथा सुनाती --यह जीवन-कथा नित्य के सुमिरन और जाप से जीवन-मंत्र बन गई थी ।

'होली की छुट्टी' शीर्षक कहानी में लेखक के अपने जीवन में होली के अवकाश पर घटित एक विशेष घटना का वर्णन है । इस वर्णन के क्रम में बचपन की एक घटना गुड़ की चोरी की बात याद आती है । लेखक बड़ी सच्चाई और ईमानदारी के साथ इस घटना का वर्णन करता है ।

बचपन में नाना की बीमारी का समाचार सुनकर इनकी अम्मां सेवा-सुश्रूषा हेतु तीन महीने के लिए मायके चली गयीं । साथ में मुन्नु को भी लेती गईं । चूंकि इनकी परीक्षा पास थी, अत: इन्हें घर छोड़ दिया । एक मन गुड़ खरीद कर मटके में अच्छी तरह बन्द कर दिया और ताकीद कर दी कि मटके को न खोलना । उनके लिए एक हांडी गुड़ अलग से रख दिया, लेकिन इनको जो गुड़ का चस्का लगा कि बताया नहीं जा सकता वर्णनातीत है । स्कूल से बार-बार पानी पीने के बहाने आते दो एक पिंडियां निकाल कर खा जाते । हर वक्त गुड़ का नशा सवार रहता । एक सप्ताह में हाँडी का गुड़ जवाब दे दिया । मगर मटका खोलने की सख्त मनाही थी और अम्मां के घर आने में अभी पौने तीन महीने बाकी थे । एक दिन तो मैंने बड़ी मुश्किल से जैसे तैसे सब्र किया लेकिन दूसरे दिन एक आह के साथ सब्र जाता रहा और मटके की एक मीठी चितवन के साथ होश रुख़सत हो गया । मैंने महापाप की भावना के साथ मटके को खोला और हांडी भर गुड़ निकाल कर उसी तरह मटके को बन्द कर दिया और संकल्प कर लिया कि इस हांडी को तीन महीने चलाऊंगा । चले या न चले, मैं चलाये जाऊंगा । मटके को वह सात मंजिल समझूंगा जिसे रुस्तम भी न खोल सका था । मैंने मटके की पिण्डियों को कुछ इस तरह कैंची लगाकर रखा कि जैसे आज दुकानदार दियासलाई की डिबिया भर देते हैं । एक हाँडी गुड़ खाली हो जाने पर भी मटका मुंहोमुंह भरा था । अम्मां को पता ही न चलेगा, सवाल-जवाब की नौबत कैसे आयेगी । मगर दिल और जबान में खींचतान शुरू हुई कि क्या कहूं, और हर बार जीत जबान ही के साथ रहती । यह दो अंगुल की जीभ दिल जैसे शहजोर पहलवान को नचा

रही थी,जैसे मदारी बन्दर को नचाये --उसको जो आकाश में उड़ता है और सातवें आसमान पर मंसूबे बांधता है और अपने जोम में फरऊन को भी कुछ नहीं समझता । बार-बार इरादा करता, दिन भर में पांच पिण्डियों से ज्यादा न खाऊं, लेकिन यह इरादा शराबियों की तोबा की तरह घटे-दो घण्टे से ज्यादा न टिकता । अपने को कोसता धिक्कारता -- गुड़ तो खा रहे हो,मगर बरसातमें सारा शरीर सड़ जायेगा, गन्धक का मलहम लगाये घूमोगे, कोई तुम्हारे पास बैठना भी न पसन्द करेगा । कसमें खाता, विद्या की, मां की, स्वर्गीय पिता की, गऊ की, ईश्वर की-- उनका भी वही हाल होता । दूसरा हफ़ता खत्म होते-होते हाँडी भी खतम हो गई । उस दिन मैंने बड़े भक्ति भाव से ईश्वर से प्रार्थना की-- भगवान, यह मेरा चंचल लोभी मन मुझे परेशान कर रहा है, मुझे शक्ति दो कि उसको वश में रख सकूं। मुझे अष्टधात कीलगाम दो जो उसके मुंह में डाल दूं । यह अभागा मुझे अम्मां से पिटवाने और घुड़कियां खिलवाने पर तुला हुआ है, तुम्हीं मेरी रक्षा करो तो बच सकता हूं । भक्ति की विह्वलता के मारे मेरी आंखों से दो-चार बूंदें आंसुओं की भी गिरीं लेकिन ईश्वर ने भी इसकी सुनवाई न की और गुड़ की लुब्धता मुझ पर छायी रही, यहां तक कि दूसरी हाँडी का भी मर्सिया पढ़ने की नौबत आ पहुंची।[1]

इस प्रकार दूसरी हांडी भी खतम हो गई । बार-बार प्रतिज्ञा करने और चाभी को दीवाल की दरार तथा कुएं में भी फेंकने पर भी वे अपने को उस प्रलोभन से न बचा सके । अम्मां के आने पर गुड़ की चोरी की कल्पित कहानी लेखक ने रो-रोकर अम्मां से बताई कि मार न पड़े ।

इस कथा में गुड़ की चोरी की घटना के माध्यम से जिस शिशु पर प्रकाश पड़ता है, वह व्यक्तिपरक शिशु है । उस शिशु की अपनी विशेषताएं कहानी में परिलक्षित होती हैं । गुड़ न चोरी करने की प्रतिज्ञा,भगवान से आत्मनिवेदन और फिर उस कोमल बालक के

---

1 प्रेमचन्द : 'गुप्तधन',भाग २,पृ०३२-३३

द्वारा भूल हो जाना, उसी प्रलोभन का शिकार होना बड़ा ही मार्मिक और सजीव है ।

'वरदान' उपन्यास का प्रतापचन्द व्यक्ति-परक शिशु है । इसका रूप और गुण दोनों अपने में अनूठे हैं । जैसा नाम वैसा गुण । जब वह किसी से बातें करता तो सुनने वाले मुग्ध हो जाते । प्रतिमा से उसका मुखमण्डल दमकता रहता । छ: वर्ष की अल्पायु में ही उसका मुखमंडल ऐसा ज्ञानमय और दिव्य था कि यदि वह अचानक किसी अपरिचित मनुष्य के सामने आकर खड़ा हो जाता तो वह विस्मय से ताकने लगता था । इस प्रकार उसके शैशव जीवन का प्रारम्भिक आनन्दमय जीवन माता-पिता दोनों के स्नेहिल छत्र छाया में बीता जा रहा था कि छठें वर्ष का अन्त आया । दुर्दिन का श्रीगणेश हुआ । पिता मुंशी शालिग्राम कुम्भ के मेले में गये और लापता हो गये। अब प्रताप माता के संरक्षण में पलने लगा । अपनी माता को कभी उसने किसी बात की चिन्ता न होने दी । पढ़ने-लिखने में सदा आगे रहा । होशियार, अपनी आयु के दुगुने उम्र वाले लड़कों से भी अधिक था । अपनी पड़ोसिन तथा बाल-सखा बृजरानी से तुरन्त परिचय प्राप्त कर लेता है और दोनों घनिष्ठ मित्र बन जाते हैं । बृजरानी को प्रताप से पढ़ने-लिखने की प्रेरणा मिलती है । ज्ञान की बातें मालूम होती हैं । एक बार विरजन अपने पिता से प्रश्न पूछती है,क्यों बाबा ! क्या पहले चिड़ियां हमारी भांति बातें करती थीं तब मुंशी जी ने मुसकुराकर उत्तर दिया कि हां, वे खूब बोलती थीं । अभी यह बात पूरी न निकलने पाई थी कि प्रताप ने कहा -- नहीं विरजन ये कहानियां बनाई हुई हैं । ये तुम्हें भुलाते हैं । इस निर्भीकता पूर्ण खण्डन से वह मुंशी जी को चकित कर देता है । इसी प्रकार वह अनेकानेक ज्ञान की बातें अपनी भोली -भाली भाषा में कह जाता है--

'गंगा जी का पानी नीला है । ऐसे जोर से बहता है कि बीच में पहाड़ भी हो तो बह जाय । वहां एक साधु बाबा है । रेल दौड़ती है सन-सन । उसका इंजिन बोलता है भक-भक । इंजिन में भाप होती है । इसी के जोर से गाड़ी चलती है । गाड़ी के साथ पेड़ भी दौड़ते दिखाई देते हैं'[1] । इन बातों को विरजन चित्र की भांति चुप-चाप बैठी हुई सुनती रहेगी।

1 प्रेमचन्द : 'वरदान',पृ०१६

एक बार विरजन ने पिता के गले में हाथ डालकर कहा--`बाबा ! हम भी प्रताप की किताब पढ़ेंगे । मुंशी--बेटी, तुम तो संस्कृत पढ़ती हो, यह तो भाषा है ।

विरजन--`तो मैं भी भाषा ही यूं पढ़ूंगी । इसमें कैसी अच्छी-अच्छी कहानियां हैं । मेरी किताब में एक भी कहानी नहीं है ,क्यों बाबा पढ़ना किसे कहते हैं ।

मुंशी जी बगले फांकने लगे । इन्होंने आज तक आप ही कभी ध्यान नहीं दिया था कि पढ़ना क्या वस्तु है ? अभी वे माथा ही खुजला रहे थे कि प्रताप बोल उठा-- मुझे तुमने पढ़ते देखा,उसी को पढ़ना क कहते हैं ।`

विरजन--`क्या मैं नहीं पढ़ती ? मेरे पढ़ने को पढ़ना नहीं कहते ?

विरजन सिद्धान्त कौमुदी पढ़ रही थी । प्रताप ने कहा -- तुम तोते की भांति रटती हो ।`

प्रताप विरजन के प्रत्येक जिज्ञासा तथा आशंका का ठीक उत्तर देकर शान्त करता है ।

प्रताप के हृदय में अपनी माता का प्रेम और सेवा-भाव कूट-कूट कर भरा है । माता के बहुत अधिक बीमार होने पर वह बृजरानी के घर जाता, फिर वहां से पता पूछते-पूछते डाक्टर के यहां जाता और माता की बीमारी का समाचार दे बुला लाता है । उसके चरित्र में उसकी अपनी विशेष वैयक्तिकता पाई जाती है । वास्तव में प्रताप अपने माता-पिता को वरदान स्वरूप प्राप्त हुआ है ।

प्रताप के जन्म से पहले बीस वर्षों में कोई ऐसा मंगलवार नहीं गया होगा जब कि सुवामा ने अष्टभुजी देवी के सम्मुख अपनी चिर-संचित अभिलाषा न रखी हो और उनके चरणों में अपना मस्तक न झुकाया हो । एक रात उसने इस प्रकार विनती की--

`माता` मैंने सैकड़ों व्रत रखे,देवताओं की उपासना की, तीर्थ यात्राएं कीं,परन्तु मनोरथ पूरा न हुआ । अब तुम्हारी शरण आयी । अब तुम्हें छोड़कर कहां जाऊं ? तुमने सदा अपने भक्तों की

१ प्रेमचन्द : `वरदान`,पृ०१७,परिच्छेद ३

इच्छाएं पूरी की हैं । क्या मैं तुम्हारे दरबार से निराश होकर जाऊं ?

सुवामा इसी प्रकार देर तक विनती करती रही । अकस्मात् उसके चित्त पर अचेत करने वाले अनुराग का आक्रमण हुआ । उसकी आंखें बन्द हो गईं और कान में ध्वनि आई-- 'सुवामा मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूं । मांग क्या मांगती है ?

सुवामा रोमांचित हो गई । उसका हृदय धड़कने लगा । आज बीस वर्ष के पश्चात् महारानी ने दर्शन दिए । वह कांपती बोली--'जो कुछ मांगूंगी, वह महारानी देंगी ।

'हां, मिलेगा ।'

'मैंने बड़ी तपस्या की है, अतएव बड़ा भारी वरदान मांगूंगी ।'

'क्या लेगी ?' कुबेर का धन ?'

'नहीं ।'

'इन्द्र का बल ?'

'नहीं ।'

'सरस्वती की विद्या ?'

'नहीं ।'

'फिर क्या लेगी ?'

'संसार का सबसे उत्तम पदार्थ ।'

'वह क्या है ?'

'सुपुत्र बेटा ।'

'जो कुल का नाम रोशन करे ?'

'नहीं ।'

'जो माता-पिता की सेवा करे ?'

'नहीं ।

'जो विद्वान् और बलवान हो ?'

'नहीं ।'

'फिर सुपुत्र बेटा किसे कहते हैं ?'

जो अपने देश का उपकार करे ।'

'तेरी बुद्धि को धन्य है। जा, तेरी इच्छा पूरी होगी।'

इस प्रकार हम देखते हैंकि महारानी अष्टभुजी देवी के 'इन्द्र का बल', 'सरस्वती की विद्या' के रूप में यह सुपुत्र बेटा प्रताप-चन्द्र प्राप्त हुआ।

'प्रेमाश्रम' उपन्यास का मायाशंकर शिशु-पात्र व्यक्तिपरक है। इसका ३-४ से १५ वर्ष तक की आयु और अध्ययन का विषय है। यह बड़ा ही मिष्टभाषी, सरल, विनयशील और योग्य बालक है। इसके गुणों से रीफ कर इसकी बड़ी विधवा मासी गायत्री देवी ने इसे गोद ले लेती है। इसका परिवार बड़ा ही विशृंखल परिवार है। पिता ज्ञानशंकर विलासी, लोभी और कपटी है। यह जाल फैला-फैला कर दूसरों का धन हड़पना चाहते हैं। अपने बड़े भाई को धन से वंचित करना और बड़ी साली गायत्री देवी में आध्यात्मिक प्रेम का स्वांग रचकर उसकी जमींदारी को भी अपने अधिकार में करना चाहते हैं। मायाशंकर की माता का देहान्त हो जाता है। छोटी बहन मुन्नी मां के लिए हुड़कती रहती है। मायाशंकर जैसे कोमल-हृदय वाले शिशु के मन पर क्या बीतती है? वह तो उस शिशु को गोद में चिपकाये फिरता, उसके मुरझाये मुंह की ओर देखता और रोता।'

मायाशंकर गायत्री देवी द्वारा गोद लिया गया है, अत: उसके पालन-पोषण की व्यवस्था राजकुमार की तरह की जाने वाली व्यवस्था के समान है। किन्तु मायाशंकर इसे स्वीकार नहीं करना चाहता, ऐसी राजसी व्यवस्था का खण्डन-मण्डन करना अपनी धृष्टता समझता है फिर भी बड़े साहस और उत्साह से अपने बड़े चाचा के समक्ष अपने विचारों को रखता है। वह कहता है--'मेरी शिक्षा पर इतने रुपये खर्च करने की क्या जरूरत है?

प्रेम-- क्यों, आखिर तुम्हें घर पर पढ़ाने के लिए अध्यापक रहेंगे या नहीं? एक अंग्रेजी और हिसाब पढ़ायेगा, एक हिन्दी और संस्कृत, एक उर्दू और फारसी, एक फ्रेंच और जर्मन पाचवां तुम्हें व्यायाम घोड़े की सवारी, नाव चलाना, शिकार खेलना सिखायेगा। इतिहास और

भूगोल में पढ़ाया करूंगा ।

माया-- मेरी कक्षा में जो लड़के सबसे अच्छे हैं, वे घर पर किसी मास्टर से नहीं पढ़ते, मैं उनको अपने से कम नहीं समझता ।

प्रेम -- तुम्हें हवा खाने के लिए एक फिटन की ज़रूरत है । सवारी के अभ्यास के लिए दो घोड़े चाहिए ।

माया -- अपराध क्षमा कीजिएगा, मेरे लिए इतने मास्टरों की ज़रूरत नहीं है, फिटन,मोटर पोलो को भी मैं व्यर्थ समझता हूं । हां,एक घोड़ा गोरखपुर से मंगवा दीजिए तो सवारी किया करूं । नाव चलाने के लिए मैं मल्लाहों को नाव पर जा बैठूंगा । उसके साथ पतवार घुमाने और डांड़ चलाने में जो आनन्द मिलेगा वह अकेले अध्यापक के साथ बैठने में नहीं आ सकता । अभी से लोग कहने लगे हैं कि इसका मिजाज नहीं मिलता । पद्मू कई बार ताने दे चुके हैं । मुझे नक्कू रईसों की भांति अपनी हंसी कराने की इच्छा नहीं है । लोग यही कहेंगे कि अभी कल तक तो एक मास्टर मीन था, आज दूसरों की सम्पत्ति पाकर इतना घमण्ड हो गया है ।

प्रेम-- प्रतिष्ठा का ध्यान रखना आवश्यक है ।

माया-- मैं देखता हूं, आप इन चीजों के बिना ही सम्मान की दृष्टि से देखे जाते हैं । सभी आपकी इज्जत करते हैं । मेरे स्कूल के लड़के भी आपका नाम आदर से लेते हैं,हालांकि शहर के और बड़े रईसों की हंसी उड़ाते हैं । मेरे लिए किसी विशेष चीज की जरूरत क्यों हो ?

माया के प्रत्येक उत्तर पर प्रेमशंकर का हृदय अभिमान से फूल पड़ता था । उन्हें इस लड़के में इतना संतोष और त्याग का भाव क्योंकर उदित हुआ ? इस उम्र में तो प्राय: लड़के टीमटाम पर जान देते हैं, सुन्दर वस्त्रों से उनका जी नहीं भरता ,चमक-दमक की वस्तुओं पर लट्टू हो जाते हैं । यह पूर्व संस्कार है और कुछ नहीं ।[1]

अन्य बातों में मायाशंकर की उदारता कम नहीं ।

---

1 प्रेमचन्द : 'प्रेमाश्रम',पृ०१५३

'माया -- मैं चाहता हूं कि मेरा वजीफा गरीब लड़कों की सहायता में खर्च किया जाय । दस-दस रुपये की १९६ वृत्तियां दी जाएं तो मेरे लिए दस रुपये बच रहेंगे इतने में मेरा काम अच्छी तरह चल सकता है ।

प्रेमशंकर पुलकित होकर बोले -- बेटा, तुम्हारी उदारता धन्य है, तुम देवात्मा हो । कितना देव दुर्लभ त्याग है । कितना संतोष : ईश्वर तुम्हारे इन पवित्र भावों को सुदृढ़ करें पर मैं तुम्हारे साथ अन्याय नहीं कर सकता ।

माया-- तो दो-चार वृत्तियां कम कर दीजिए, लेकिन यह सहायता उन्हीं लड़कों को दी जाय, जो यहां आकर खेती और बुनाई का काम सीखें ।'[1]

माया -- मैंने अपने वजीफे के खर्चा करने की और भी विधि सोची है । आप बुरा न मानें तो कहूं ।

प्रेम-- हां हां शौक से कहो । तुम्हारी बातों से मेरी आत्मा प्रसन्न होती है । मैं तुम्हें इतना विचारशील न समझता था ।

ज्वाला सिंह -- इस उम्र कों मैंने किसी को इतना चैतन्य नहीं देखा ।'

इस प्रकार हम देखते हैं कि मायाशंकर एक अनोखा बालक है और यह अपने वातावरण के सभी व्यक्तियों का मन मोहे है ।

'मुन्नी ',प्रेमाश्रम'की बालिका मन्नू, मायाशंकर की छोटी बहन में एक वैयक्तिकता पाई जाती है । माता के देहान्त के बाद छुड़ती है । भाई मायाशंकर तथा परिवार के सदस्य उसे प्यार करते, उसके लिए खिलौने तथा मिठाइयां लाते,किन्तु मुन्नी उनकी ओर आंख उठा कर भी नहीं देखती । दवा पिलाने के समय मुंह ऐसा बन्द करती कि किसी तरह न खोलती । इसप्रकार माता की मृत्यु के चौथे दिन से उसे बुखार आने लगा और उसके तीन दिन बाद वह अपनी माता के पास चल बसी । इस छोटी बालिका में माता का प्रेम इतना प्रबल था कि वह माता के अभाव में जीवित नहीं रह सकती थी । ऐसा प्रतीत

---

१ प्रेमचन्द : संक्षिप्त प्रेमाश्रम ,पृ० १५६

२ प्रेमचन्द : संक्षिप्त प्रेमाश्रम पृ० १५६

होता है कि इस विशृंखल तथा कलहपूर्ण जीवन से हटकर विद्या का सारा स्नेह इसी बालिका में केन्द्रीभूत हो उठा था ।

'कायाकल्प' में जितने शिशु-पात्र आये हैं उनमें 'कायाकल्प' का शंखधर नामक शिशु व्यक्तिपरक बालक है । वह चक्रधर और अहल्या का पुत्र है । स्वभाव का सरलऔर बहुत बातें करने वाला है । उसके शैशव में ही उसके पिता ने गृह त्याग किया है । इसका प्रभाव उसके अबोध मन पर पड़ता है । वह अपनी माता के पास जाकर अपने पिता के विषय में अनेकानेक प्रश्न पूछता है-- वे कब गए,कहां गए और क्यों गए? अपनी माता को रोते देख उसका हृदय विदीर्ण हो उठता है । अम्मा रानी को पूजा-पाठ करते देख अनेकानेक प्रकार के प्रश्न पूछता है । यह जानकर कि पूजा करने पर भगवान मनुष्य की मनोकामनाएं पूरा करता है और अम्मा रानी की मनोकामना यह है कि उसका पिता चक्रधर शीघ्र लौट आवे, उसके हृदय पर गहरा प्रभाव पड़ताहै । एक दिन प्रात:काल स्नान करने के पश्चात् वह जलपान करने के लिए नहीं आता,किन्तु बगीचे में तुलसी के चबूतरे पर फूल -पत्ते रखकर ध्यानमग्न हो प्रार्थना करता है । चबूतरे की परिक्रमा करता है । बहुत बार पूछने पर भी वह नहीं बताता कि वह क्या कर रहा था । किन्तु जब अहल्या उससे आग्रह करती है और बड़े विश्वास और स्नेह के साथ कानों में बताने को कहती है तो यह बालक आंखों में आंसू भर कर कहता है कि मैं बाबु जी के जल्दी से लौट आने की प्रार्थना कर रहा था । भगवान पूजा करने से सब की मनोकामना पूरी करते हैं ।'

'शंखधर' के मन में पिता को पाने, उनसे मिलने की धुन सवार है । वह अपनी दाई लौंगी द्वारा मालूम करता है कि एक सन्यासी इधर आये थे जो शंखधर के पिता के समान थे ।इसविषय में वह जिज्ञासु बालक उस साधु की आयु के विषय में पूछता है और कहता है कि मेरे पिता भी ४० वर्ष के लगभग होंगे । सन्यासी वाली बात उसके मन में बैठ जाती है । अब वह 'रामेश्वर' जाने की सोचता है,किन्तु वह भूगोल के अपने

अल्प ज्ञान से सन्तुष्ट नहीं है । पता लगता है कि कौन सी रेल रामेश्वर को जाती है । वहां जाकर लोग कहां ठहरते हैं और इस प्रकार अन्त में वह अपने पिता को ढूढ़ने निकल पड़ता है ।

इस विस्तृत और व्यापक विवेचन के अन्तर्गत स्पष्टरूप से देखा जाता है कि प्रेमचन्द ने जिन शिशुओं की विवेचना अपनी कहानियों में की है, उनका विकास समूह परक और व्यक्तिपरक दोनों रूपों में हुआ है । यद्यपि दोनों में अनेक स्थानों पर विकासोन्मुख प्रवृत्तियां दृष्टिगत होती हैं तथापि ऐसे शिशुओं को प्रेमचन्द ने विशिष्ट महत्व दिया है जिनकी व्यक्तिपरक रेखाएं अधिक स्पष्टता से उभारी गई हैं । दोनों वर्गों के शिशुओं की मनोवैज्ञानिक चेष्टाएं प्रस्तुत करने में प्रेमचन्द जी ने एक गहरी अन्तर्दृष्टि का परिचय दिया है व और उससे जीवन की सम्भावनाओं में विस्तृत प्रकाश पड़ता है ।

-o-

व्यक्ति-परक और समूह-परक ।राग्र

'पिसनहारी का कुंआ' कहानी में एक ऐसी बालिका की चर्चा है जो व्यक्ति-परक और समूह-परक दोनों के अन्तर्गत आती है। इसमें दोनों प्रकार के चरित्रों की विशेषताएं हैं। समूह-परक विशेषताओं में ग्रामीण बालिकाओं की सारी विशेषताएं उसमें वर्तमान है। वह बचपन से ही एक खुरपी लेकर घास छीलती है। ग्रामीण बच्चों में कुंआ के प्रति विशेष अनुराग होता है। अत: वह खेल-खेल में कुंआं खोदती है और अपने समवय के शिशुओं को बटोर कर उन्हें भी कुंआं खोदने की प्रेरणा देती है। इसके अलावा उसमें कुछ ऐसी विशेषताएं है जो उसकी अपनी हैं व्यक्तिगत है। वह रात को भी कुंआं खोदती है, पता नहीं उसमें उसकी कौन सी भावना या प्रेरणा काम कर रही है क्योंकि वह दीप जला कर भी इस विलक्षण खेल में मगन रहती है। गांव के कुछ लोग उसके इस कार्य से आश्चर्य चकित रहते हैं और अपने-अपने बच्चों को उस खण्डहर में उस बालिका के साथ खेलने को मना करते हैं। बालिका अकेली ही बड़ी लगन और उत्साह से कुंआं खोदती जाती है। कुंआ के प्रति बालिका के मन में ऐसा प्रेम देख कर गांव के लोगों के मन में भी अनुराग उत्पन्न होता है। वे भी मिल कर कुंआ खोदने लगते हैं। बालिका बुद्धि और बातचीत में अपने तिगुनी उम्र वालों के कान काटती है। जिस दिन कुंआं तैयार होता है जगत पक्की बन जाती है उस दिन बालिका के हर्ष की सीमा नहीं रहती है वह बहुत हंसती-कूदती और गाती-नाचती है। प्रात:काल उस जगत पर उसकी लाश मिलती है। लगता है कुंआं बनाने में ही इस बालिका के जीवन की सार्थकता है। सार्थकता की सिद्धि के बाद उसके पास कोई उद्देश्य नहीं रह जाता और वह मर जाती है। शिशुओं के साधारण खेल से यह एक प्रेरणा ले लेती है और उसे कर्तव्य-पूर्ति का माध्यम बना लेती है। इसमें व्यक्ति और समूह की विशेषताओं का सुन्दर समन्वय है।

प्रेमचन्द के सभी उपन्यासों के शिशु पात्रों का अध्ययन करने पर मैंने पाया कि उनका कोई भी शिशु पात्र व्यक्ति-परक और समूह परक दो पात्र के अन्तर्गत नहीं आता।

परिवर्तन-शील शिशु पात्र

'सौभाग्य के कोड़े' शीर्षक कहानी में 'नथुआ' परिवर्तनशील पात्र है। वह एक भंगी का अनाथ लड़का है और भोलानाथ के यहां जूठन पर पल रहा है। कभी-कभी छोटे-मोटे काम करता और झाड़ू लगाता है। एक दिन लोभवश अथवा जिज्ञासावश अपने मालिक की पुत्री रत्ना के बिछावन पर बैठता है और मालिक द्वारा पकड़े जाने पर पीटा जाता है। मालिक की ये छड़ियां उसके लिए सौभाग्य के कोड़े बन जाते हैं और उसके सम्पूर्ण जीवन में परिवर्तन होता है। वह घर से भाग निकलता है गाना सीखता है और उसके अन्दर सोई हुई कला का विकास होता है और एक प्रसिद्ध गायक बन जाता है। परिस्थितियों के बदलते ही उसमें परिवर्तन आ जाता है।

जगत सिंह, 'कप्तान साहब' कहानी में शिशु पात्र के रूप में है। उसके जीवन की एक घटना, वह भी संयोग से होने वाली एक घटना, उसके सम्पूर्ण जीवन में परिवर्तन ला देती है। वह सैलानी आवारा और घुमक्कड़ है। अपने गांव का नामी शैतान लड़का है, किस तरह की शरारतें वह नहीं करता यह कहना मुश्किल है। घर में माता और बहनों का तिरस्कार सहता है, पिता से मार खाता है। गांजे, चरस, और मिठाईयों की बुरी आदतें हैं। इनके पैसे, घर की चीज़ें चुरा कर और उन्हें बेच कर अदा करता है। एक दिन वह अपने पिता की जेब से एक लिफाफा निकालता है इसमें दो सौ रुपये के नोट हैं। जगत सिंह के मन में अन्तर्द्वन्द्व होता है। उसे दुःख भी होता है क्योंकि उसने कभी नहीं सोचा था कि इसमें इतने रुपये होंगे। चूंकि ये रुपये उसके पिता के अपने नहीं डाकखाने में किसी के बीमा के रुपये हैं और इसे चोरी करने पर उसके पिता पर मुकदमा चलेगा और सारे परिवार को मुसीबतों का सामना करना पड़ेगा आदि बातों का ध्यान आते ही उसका हृदय मर्माहत हो उठता है। किन्तु अब तो वह लिफाफा फाड़ चुका है अतः दण्ड तो इसके लिए भी मिलेगा। दो सौ रुपये से वह चाय आदि की दुकान खोल सकता है यह सोच कर वह रुपये चुराता है और बम्बई की राह लेता है। इसके बाद

उसकी परिस्थितियां बदलती है और उसके सम्पूर्ण जीवन में परिवर्तन आ जाता है। प्रेमचन्द के उपन्यासों में परिवर्तनशील शिशु पात्र नहीं है ।

अपरिवर्तनशील शिशु पात्र

'गुल्ली डंडा' शीर्षक कहानी का 'मैं सर्वनाम से सम्बोधित छात्र अपरिवर्तनशील चरित्र है । यह व्यक्ति अपने बाल-जीवन का सर्वाधिक प्रिय खेल गुल्ली डंडा और साथियों में सबसे निपुण खिलाड़ी गया को याद करता है । गया की याद आते ही उसके बाल-जीवन के सारे आनन्द और उत्साह सजग हो उठते हैं । उसके बचपन के सभी चित्र चलचित्र की भांति उसकी आंखों के सामने एक-एक करके आने लगते हैं । ऐसे सभी मनुष्य अपने बाल-जीवन की दु:खद कल्पना से आनन्दित होते हैं किन्तु बचपन और यौवन में कितना अन्तर आ जाता है । बचपन में यह व्यक्ति गया की जाति वर्ग आदि की कुछ भी परवाह नहीं करता, अमरूद खाता और उसे भी खिलाता है, हारने पर उससे मार भी खाता है किन्तु बड़े होने पर भी उसके इस भावना में कोई परिवर्तन नहीं होता । बहुत दिनों बाद गया से मिलने पर उससे गुल्ली डन्डा खेलने की याचना करता है, गरीब और दुर्बल गया उसकी इच्छा पूरी करता है । इस कहानी में 'मैं' सर्वनाम से सम्बोधित पात्र अपरिवर्तनशील है क्योंकि उसके भावों और विचारों में कोई परिवर्तन नहीं होता । परिस्थितियों के सम्पर्क में भी उसमें कोई परिवर्तन नहीं होता ।

'गृह-दाह' कहानी में 'ज्ञान प्रकाश' अपरिवर्तनशील पात्र के अन्तर्गत आता है । इसका सौतेला भाई सत्य प्रकाश इसे बहुत प्यार करता है अत: ज्ञान प्रकाश भी उसे बहुत प्यार करता है । ज्ञान प्रकाश की माता उसे सत्य प्रकाश के साथ रहने देना नहीं चाहती । सत्य प्रकाश पर तरह-तरह के अत्याचार करती है, उससे ऐसा व्यवहार करती है जैसे किसी मंगी नौकर आदि के साथ भी नहीं किया जाता । ज्ञान प्रकाश के मन से यह बात निकाल देना चाहती है कि सत्य प्रकाश इस परिवार का कोई सदस्य भी है, अथवा इस परिवार में उसका कोई अधिकार भी है । माता की सारी चेष्टाएं व्यर्थ होती हैं । ज्ञान के मन में भाई के प्रति

किसी प्रकार की भी दुर्भावना नहीं आती और न उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन ही होता है ।

"गृह दाह" कहानी में यह पात्र अपरिवर्तनशील है । बचपन में ही उसकी माता की मृत्यु हो जाती है । विमाता के आगमन के प्रति उसके मन में सुन्दर कल्पनाएं हैं कि उसकी वही माता स्वर्ग से आएगी । विमाता के क्रूर व्यवहार से उसकी सारी कल्पनाएं चूर हो जाती हैं । उसके एक भाई का जन्म होता है और इसके बाद से उस पर अत्याचार बढ़ते ही जाते हैं । सत्यप्रकाश उस भाई को बहुत प्यार करता है । माता का दुर्व्यवहार उसके स्नेह में कोई बाधा उपस्थित नहीं कर सकता क्योंकि उसका चरित्र दृढ़ और अपरिवर्तनशील है ।

गुप्तधन की कहानी "देवी" की "तुलिया" अपरिवर्तनशील शिशु पात्र है । उसका विवाह पांच वर्ष की आयु में होता है और उसका पति उसे छोड़कर पूरब कमाने चला जाता है फिर वह लौट कर नहीं आता । तुलिया के हृदय में अपने पति के प्रति प्रेम और निष्ठा का भाव वही है उसमें किसी प्रकार परिवर्तन नहीं आता ।

प्रेमाश्रम में मायाशंकर अपरिवर्तनशील है । उसकी बड़ी मौसी गायत्री देवी उसके गुणों से प्रसन्न होकर उसे गोद लेती है, उसका लालन-पालन राजकीय ढंग से होता किन्तु माया के स्वभावशील और सदाचार में परिवर्तन नहीं होता । वह विनम्र और सदाचारी बना रहता है ।

उच्च वर्ग के शिशु-पात्र

"गरीब की हाय" शीर्षक कहानी में "राम गुलाम" उच्चवर्गीय शिशु-पात्र है । रामगुलाम के पिता मुंशी "रामसेवक" चान्दपुर गांव के नामी रईस हैं । गांव की विधवाएं तथा बूढ़े अपने कपूतों के भय से मुंशीजी के पास अपना रुपया रखते हैं किन्तु मुंशीजी उन्हें कभी नहीं लौटाते । इस प्रकार मुंशीजी के बहुत से रुपये बेईमानी के ही हैं । रामगुलाम इनका एकमात्र पुत्र है । अधिक लाड़-प्यार तथा अनियन्त्रण से यह गांव का नामी शैतान लड़का बन जाता है । इसके पिता इसकी शरारतों के लिए

इसे दण्ड नहीं देते ।

एक बार मुंशी रामसेवक मुंगा नामक विधवा ब्राह्मणी के दो-ढाई सौ रुपये पचा जाते हैं और इसी शोक में मुंगा पागल हो जाती है । रामगुलाम उसके पीछे तालियां बजाता, कुत्तों को दौड़ाता है । एक दिन मुंगा को गोबर घोल कर नहला देता है । मुंगा की दुर्गति होती ही है साथ ही उसके इर्दगिर्द इकट्ठी भीड़ पर भी छींटें पड़ते हैं । लोग यह कह कर कि ~~हरह~~ यह "मुंशी रामगुलाम का दरवाजा है । यहां इसी तरह का शिष्टाचार किया जाता है ।" भाग खड़े होते हैं । द्वार पर से भीड़ को इतनी आसानी से हटा देने के उपाय पर पिता अपने सुशील पुत्र की पीठ ठोंकते हैं । रामगुलाम चूंकि धनी परिवार का लड़का है इसलिए उसे समाज का भी भय नहीं है ।

मुंगा की मृत्यु के बाद इस परिवार का पतन होता है । रामगुलाम की माता का देहान्त हो जाता है । पिता साधु बन जाता है । अमीरी के कारण रामगुलाम की बिगड़ी हुई आदत नहीं सुधरती । दूसरे के खेत में मूली उखाड़ते समय पकड़ा जाता है । मार खाने के प्रतिशोध में रामगुलाम उसके खलिहान में आग लगा देता है । इस अपराध में वह बाल अपराधी के रूप में चुनार के 'रिफार्मेटरी' स्कूल में भेज दिया जाता है ।

"जगतसिंह, जयराम और वली मुहम्मद-- बरांव गांव के तीन जमीन्दार तथा अमीर परिवार से आये हुए तीन बालक । उसी गांव के मदरसे के मिडिल क्लास के विद्यार्थी हैं । जमीन्दार के पुत्र होने के कारण उनमें अहम् की भावना की प्रबलता है । अमीरी का झूठा प्रदर्शन और अभिमान के फलस्वरूप उनमें कक्षा के अन्य विद्यार्थियों से अपने को अलग समझने की प्रवृत्ति है । क्लास में बागवानी के काम को अपनी इज़्ज़त के खिलाफ समझते थे । उनका चित्रण प्रेमचन्द के शब्दों में :--किन्तु दरजे में चार-पांच लड़के जमीन्दारों के थे । उनमें कुछ ऐसी दुर्जनता थी कि यह मनोरंजन कार्य भी उन्हें बेगार प्रतीत होता । अमीरी का झूठा अभिमान दिल में भरा हुआ था । वह हाथ से कोई काम करना निन्दा की बात समझते थे । उन्हें इस बगीचे से घृणा थी । जब उनके काम करने की बारी आती तो कोई न कोई बहाना करके उड़ जाते । इतना ही नहीं, दूसरे लड़कों को भी बहकाते

और कहते वाह, पढ़े फारसी बेचे तेल। यदि खुरपी कुदाल ही करना है तो मदरसे में किताबों से सिर मारने की क्या ज़रूरत? यहां पढ़ने आते हैं कुछ मजूरी करने नहीं आते।[1]

इन शिशुओं के चित्रण के माध्यम से लेखक ने उस युग के उच्चवर्गीय समाज का झूठा दम्भ और अभिमान का चित्रण बड़े ही मनोवैज्ञानिक ढंग से किया है। शिशु के चरित्र पर उसके वातावरण और वंश-परम्परा का स्वभाव किस प्रकार पड़ता है तथा शिशु अपने से बड़ों का अनुकरण किस प्रकार करते हैं इसका भी मार्मिक-चित्रण है। ये तीनों शिशु पात्र 'सच्चाई का उपहार' शीर्षक कहानी के हैं।

'गृह-दाह' कहानी में सत्यप्रकाश और ज्ञान-प्रकाश दोनों बाबू देवप्रकाश के पुत्र हैं। बाबू देवप्रकाश धनी व्यक्ति हैं। सत्यप्रकाश इनका सबसे बड़ा लड़का है और इसके जन्मोत्सव में खूब धूम-धाम मनाया जाता है। छ: वर्षों तक इस शिशु का लालन-पालन बड़े ही स्नेह से होता है। इसी समय माता की मृत्यु हो जाती है और वह अनाथ हो जाता है। विमाता के आगमन के साथ ही इसके बुरे दिन आ जाते हैं। सौतेले भाई ज्ञानप्रकाश के जन्म के पश्चात विमाता का दुर्व्यवहार और भी बढ़ जाता है।

ये दोनों शिशु उच्च परिवार के हैं किन्तु उनमें न झूठा अभिमान है न धन का घमण्ड ही। दोनों भाइयों में बहुत स्नेह है। सत्यप्रकाश का स्नेह-वंचित हृदय छोटे भाई को स्नेह देकर ही तृप्त होता है। और सम्भवत: यह उसके निश्छल प्रेम का ही प्रभाव है कि भाई का दु:ख देखकर ज्ञानप्रकाश का हृदय करुणार्द्र हो जाता है। वह भाई के लिए पैजामा और अचकन बनवाता उसके जेब खर्च के लिए मां से झगड़ता है। ज्ञानप्रकाश को माता का ईर्ष्यालु स्वभाव नहीं मिला है। भाई के स्नेह और सद्भावना से वह अधिक प्रभावित है।

१- प्रेमचन्द : 'मानसरोवर' भाग आठ, पृ०-८३, प्रथम संस्करण ।

'एक आंच की कसर ' शीर्षक कहानी में 'परमानन्द ' नामक एक शिशु-पात्र का निर्माण किया गया है। जिसके एक ही क्रिया के द्वारा उसके पिता के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है। परमानन्द के पिता यशोदानन्द एक लब्ध-प्रतिष्ठित समाज सेवक हैं। परमानन्द की अवस्था सात वर्षों की है। वह सुन्दर होनहार और प्रसन्नमुख है। उसके बड़े भाई के तिलक के दिन बहुत से लोग आमंत्रित होते हैं। यशोदानन्द एक भाषण तैयार करते हैं और अपने छोटे बालक से पढ़वा कर यह दिखाना चाहते हैं कि इस परिवार के बालक कितने कुशाग्र बुद्धि के हैं। यह भाषण तिलक लेने की प्रथा के विरुद्ध है। इस कार्य-क्रम का आयोजन मात्र अपनी पारिवारिक संस्कृति तथा समाजसेवा का प्रदर्शन है। किन्तु मंच पर आने पर परमानन्द गलती से पिता द्वारा लिखे गये व्याख्यान के बदले उनके समधी द्वारा लिखे गये पत्र जिसमें गुप्तरूप से तिलक के लेन-देन की चर्चा है, ले लेता है। बालक बड़े गर्व से मुस्कुराता हुआ मंच पर आता है और उस पत्र को उच्च स्वर से पढ़ने लगता है। उसके इस कार्य से उसके पिता की कलई खुल जाती है। अत: इस शिशु के माध्यम से उस वर्ग में होने वाली सामाजिक बुराई का प्रदर्शन है।

'माता का हृदय ' कहानी में मिस्टर बागची का सबसे छोटा शिशु अत्यधिक स्नेह सिंचित होने के कारण नर्सरी के पौधे के समान-कोमल और नाजुक हो गया है। इसके सभी भाई-बहन जन्म लेते ही मर चुके हैं। माता इसकी रोगिणी है, अत: यह माधवी नामक दाई से हिल-मिल जाता है। उसे ही अपनी माता समझता है। इसका लालन-पालन माधवी की ही देख-रेख में होता है। कुछ दिनों के बाद माधवी एक दिन के लिए घर जाती है। माता ने आलस्य और कमजोरी के कारण कभी इस शिशु को अपनी गोद में भी नहीं लिया था अत: वह क्या जाने इस शिशु का मनोविज्ञान। बच्चा जब रोने लगा तब मां उसे एक नौकर को दिया कि इसे बाहर से बहला लाए। नौकर ने हरी-हरी घास पर बैठा दिया। पानी बरस कर निकल गया था, भूमि भीली थी, कहीं-कहीं पानी भी जमा हो गया था। बालक को पानी देखकर छपकने की इच्छा हुई और वह रेंगता हुआ पानी की ओर चला। पानी में छपकने के कारण शिशु बीमार पड़ा और उसकी मृत्यु हो गई। बहुधा उच्च-

वर्गीय परिवारों में बालक नौकर-चाकरों की ही देख-रेख में छोड़ दिए जाते हैं। इसका बालकों के मनोविज्ञान पर क्या प्रभाव पड़ता है, इसका रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपने बचपन की कहानियों में बड़ा ही सुन्दर चित्रण किया है। माता-पिता की अनुपस्थिति में अपने नौकरों के क्रूर-व्यवहार का मार्मिक चित्रण इन्होंने उपस्थित किया है। इस कहानी में तो यह शिशु नौकर की लापरवाही के कारण ही काल-कवलित होता है।

रायसाहब के घर में यों तो बालकों और बालिकाओं की कमी न थी, दर्जनों भांजे-भतीजे पड़े रहते थे, पर उनकी निज की सन्तान केवल एक पुत्री थी जिसका नाम रत्ना था। रत्ना को पढ़ाने को दो मास्टर थे, एक मेम अंग्रेजी पढ़ाने आया करती थी। रायसाहब की यह हार्दिक अभिलाषा थी कि रत्ना सर्वगुण आगरी हो और जिस घर में जाए उसकी लक्ष्मी बने। वह उसे अन्य बालकों के साथ न रहने देते थे। उसके लिए अपने बंगले में दो कमरे अलग कर दिये थे, एक पढ़ने के लिए दूसरा सोने के लिए। लोग कहते हैं लाड़-प्यार से बच्चे जिद्दी और शरीर सिरीं हो जाते हैं। रत्ना इतने लाड़-प्यार पर भी बड़ी सुशील बालिका थी। किसी नौकर को 'रे' न पुकारती, किसी भिखारिन तक को न दुत्कारती।' नथुवा को वह पैसे, मिठाई दे दिया करती थी। कभी-कभी उससे बातें भी किया करती थी---।

'सौभाग्य के कोड़े' शीर्षक कहानी में रायसाहब भोलानाथ की एकमात्र पुत्री रत्ना का चरित्र अंकित करते हैं। रत्ना उच्च परिवार की है, यह स्वभाव से कोमल, दयालु और नम्र है।

सुरेश- बाबू महेश नाथ का पुत्र है। तीन लड़कियों के पश्चात् इसका जन्म होने के कारण अत्यधिक आनन्द का अनुभव होता है। माता का स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण मुंगी नामक दाई इसका लालन-पालन करती तथा अपना दूधी भी पिलाती है। सुरेश बहुत प्यार पाने के कारण मंद बुद्धि का हो जाता है। अधिक मिठाईयां खाने से इसका शरीर स्थूल और भारी हो गया है, उसी प्रकार अधिक प्यार पाने से उसकी बुद्धि मोटी और भद्दी हो गई है।

'मिस पद्मा' शीर्षक कहानी में मिस पद्मा

और प्रोफेसर प्रसाद उच्चकुल के दम्पति हैं । विवाह के उपरान्त प्रोफ़ेसर प्रसाद अपनी पुत्री की ओर से लापरवाह हो जाते हैं और युनीवर्सिटी की एक लड़की को लेकर इंगलैन्ड भाग जाते हैं । इस शिशु के जन्म के समय पति की अनुपस्थिति से मिस पद्मा के हृदय में हार्दिक वेदना उठती है । बालक को गोद में देखकर उसका कलेजा फूल उठता है पर प्रसाद को न पाकर वह उसकी ओर से मुंह फेर लेती है । उसकी स्थिति वैसी ही होती है जैसे मीठे फल में कीड़े पड़ गये हों ।

एक दिन वह शिशु को लेकर बंगले के बाहर खड़ी होती है । बालक पर उसे कभी दया आती है, कभी प्यार, और कभी घृणा । इतने में एक यूरोपियन दम्पति को बालक को गाड़ी में बैठाये हंसते-बोलते जाते देख उसकी आंखें सजल हो उठती हैं । यह सुखी दम्पति और गोद का यह शिशु उसके जीवन की करुण दशा की याद दिलाता है और उसका हृदय मर्माहत हो उठता है ।

'दो शिशु':-- 'शिकारी' शीर्षक कहानी में कुंवरसाहब और वसुधा के दो शिशु पात्र आये हैं । यों तो सम्पूर्ण कहानी में इन दोनों शिशुओं की झलक मात्र है किन्तु उतने ही अल्पकाल में ये शिशु अपनी माता के मनोविज्ञान तथा पारिवारिक परिस्थिति का परिचय करा देते हैं । कुंवर साहब को अपने परिवार से कोई स्नेह-नाता नहीं है । हमेशा शिकार की सनक चढ़ी रहती है । अत: वसुधा के बीमार पड़ने पर भी उसकी परवाह न कर शिकार खेलने जाते हैं । अत: वसुधा के मन में यह भावना उठती है --"मैं ही इन्हें क्यों प्यार करूं, क्या मैंने ठेका लिया है । वह तो वहां जाकर चैन करें और मैं यहां इन्हें छाती से लगाये बैठी रहूं ।"[1] यह सोचकर वह भी कुंवरसाहब के पास जाने के लिए गाड़ी तैयार करवाती है । उसे जाते देख दोनों शिशु कुनमुनाते हैं किन्तु माता उनसे यह कहती है कि वह बड़ी दूर हौआ मारने जाती है तो उनका यात्रा-प्रेम ठंडा पड़ जाता है ।

१- प्रेमचन्द : मानसरोवर भाग-१, पृ० ३५०, प्रथम संस्करण ।

'मीष्म' -- प्रेमचन्द के उपन्यासों में गोदान में मीष्म नामक एक शिशु है जो उच्चवर्गीय परिवार का है। यह गोविन्दी और मिस्टर खन्ना का सबसे छोटा पुत्र है, जन्म से ही दुर्बल है। अवस्था दस महीने की है किन्तु देखने में पांच-छ: महीने का ही लगता है। खन्ना की धारणा है कि यह बालक बचेगा नहीं अत: उसके प्रति उदासीन रहते हैं पर गोविन्दी इस दुर्बल बालक को सब बच्चों से अधिक चाहती है। मिस्टर खन्ना और गोविन्दी में दाम्पत्य-प्रेम का अभाव है। मायाविनी मिस मालती को लेकर परिवार में कलह है। एक दिन गोविन्दी इस कलह से ऊब कर मीष्म को लिए पार्क में चली जाती है। वहां मिस्टर मेहता से भेंट होती है। मीष्म को लेकर मिस्टर मेहता का पितृ-हृदय सजग हो उठता है और गोविन्दी उनके सामने मिस मालती से विवाह करने का प्रस्ताव करती है। उसके बाद मिस्टर मेहता के हृदय से मालती के सारे पूर्वाग्रह धीरे-धीरे लुप्त हो जाते हैं और वे उससे विवाह करते हैं। गोविन्दी पारिवारिक शान्ति प्राप्त करती है।

गुप्तधन के 'प्रेम-सूत्र' कहानी में शान्ता उच्चवर्गीय परिवार की शिशु पात्रा है। इसका पिता पशुपति समृद्ध तथा सम्पन्न परिवार का मनचला सा युवक है। वह कृष्णा के वाक्चातुर्य से प्रभावित होकर डोरे डालता है। शान्ता की माता प्रभा को पता चलता है। वह दाई के भरोसे अपनी बालिका को छोड़कर इस बात का पता लगाने चलती है और उसका सन्देह ठीक निकलता है। प्रभा अपने पड़ोस के मनचले नवयुवक से प्रेम-सम्बन्ध स्थापित कर अपने पति से प्रतिशोध लेना चाहती है। पर घर आने पर अपनी गुड़िया सी बेटी शान्ता को देख मन बदल जाता। वह इस बच्ची से लिपट कर रोने लगती कि तेरे बाप को लोग तुझसे छीनना चाहते हैं, क्या तू अनाथ हो जायेगी, नहीं मैं इन निर्बल हाथों से तुम्हारी रक्षा करूंगी। इस प्रकार यह बालिका माता के जीवन का केन्द्र बनी रहती है।

'प्रतिशोध' की तिलोत्तमा ३-४ वर्ष की है जब इसके पिता मिस्टर व्यास, जो लखनऊ के नामी बैरिस्टर हैं, हत्या कर दी जाती है। इस समय इसके मन में वही पिता के आने पर अच्छी गुड़िया तथा खिलौने की चाह है। शाहजहांपुर अपनी माता के साथ जाती है अपने पिता के

हत्यारे का पता लगाने । वहां एक दिन नौकर नहीं आता तो तिलोत्तमा बड़े उमंग से अपनी माता को बर्तन साफ़ करने में मदद करती है । लगता है ऐसा अवसर इसे पहले कभी नहीं मिला था । आज वह बहुत खुश है । अपने को निपुण दिखाने का अवसर प्राप्त हुआ है ।

'त्रिया-चरित्र' कहानी का नवजात शिशु जन्म लेकर और एक वर्ष के अन्दर मर कर ही अपने सम्पूर्ण उच्चवर्गीय परिवार की स्थिति से अवगत कराता है । इसके जन्म लेने पर घर में घी के दीप जलते हैं, सेठ लगनदास को पांच शादी करने पर बुढ़ापे में एक पुत्र उत्पन्न हुआ है । इसके जन्म की खुशी का तार मगनदास के पास जापान जाता है जो सैर करने जापान गया है । मगनदास सेठजी का गोद लिया हुआ पुत्र है तो उसकी हालत ख़राब हो जाती है, तार हाथ से छूट कर गिर जाता । अब वह उनके सम्पत्ति का उत्तराधिकारी न हो सकेगा । उसका जीवन एकदम बदल जाता है । वह घर नहीं आता दर-दर की ठोकरें खाता है । इसी बीच एक वर्ष के अन्दर यह शिशु चल बसता है । सेठजी दु:ख के मारे आत्म-हत्या कर लेते हैं । पूरे परिवार में अनुशासनहीनता आ जाती है और फलस्वरूप मगनदास के पास खबर जाती है और वह लौट आता है ।

'त्रिया-चरित्र' का मगनदास सेठ लगनदास का गोद लिया पुत्र है । यह होनहार तथा अनाथ बालक है । सेठजी गोद लेकर अपने पुत्र के समान पालते हैं । लाड़-प्यार तथा शान से इस बालक को पाला जाता है, और यह बालक शिक्षा और गुण में उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है ।

'मिलाप' शीर्षक कहानी में एक तीन वर्ष का शिशु है, जो सेठ नानकचन्द की तीसरी स्त्री से है । इसकी कहानी भी त्रिया-चरित्र के नवजात शिशु के समान ही है । यह एक बिगड़े रईस का पुत्र है । उच्चवर्गीय परिवार का है । इसके जन्म के पश्चात् पिता का मन-परिवर्तन होता है । पिता नानकचन्द व्यापार तथा घर की ओर ध्यान देता है । तीन वर्ष के बाद इस शिशु की मृत्यु हो जाती है इससे पिता बहुत ही दु:खी रहते हैं । इस परिवार पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ता है ।

'प्रेमाश्रम' उपन्यास में मुन्नी उच्चवर्गीय परिवार की बालिका है। जब वह करीब दो वर्ष की होती है- माता का देहान्त हो जाता है। इसकी माता की मृत्यु का कारण उच्चवर्गीय परिवार की विश्रृंखलता है - इसका पिता ज्ञानशंकर धन-यश के लोभ से अपनी बड़ी विधवा साली गायत्री देवी पर आध्यात्मिक प्रेम का स्वांग भर कर डोरे डालता है। इसी शोक में इसकी माता विद्या का शरीरान्त हो जाता है। मन्नू दो वर्ष के लगभग की है। वह मां के लिए हुड़कती रहती है। अम्मां अम्मां पुकारती रहती है। मुन्नी के लिए तरह-तरह के खिलौने लाये जाते मन बहलाने के लिए, दवायें आतीं किन्तु सब व्यर्थ। उस मातृ-हृदय की भूखी बालिका को कोई बचा न सका।

'प्रेमाश्रम' का मायाशंकर भी उच्चवर्गीय शिशु पात्र है। यह एक उच्चघराने का बालक है। सरल, विनयशील और मृदुभाषी। इसके गुणों पर मुग्ध होकर इसकी विधवा मौसी इसे गोद ले लेती है। अब मायाशंकर का लालन-पालन राजकीय ढंग पर होने लगता है। सब प्रकार की शान-शौकत की चीज़ें, सभी प्रकार की विद्याओं के अध्ययन के लिए प्रबन्ध होता है। अच्छे से अच्छे शिक्षक नियुक्त किए जाते हैं। अब उसे हिन्दी, संस्कृत, उर्दू, फारसी, फ्रेन्च, जर्मन, इतिहास, भूगोल, व्यायाम, घोड़े की सवारी, नाव चलाना सभी विद्याओं को अध्ययन करना पड़ता है। पैसा का कोई प्रश्न ही नहीं है। किन्तु यह विनयशील बालक अपने ऊपर इतना अधिक खर्च फजूल खर्च समझता है और अपने ऊपर खर्च के एक हज़ार रुपये गरीब बालकों को वजीफ़े में दे डालने के लिए प्रार्थना करता है। मायाशंकर उच्चवर्गीय है इसे लेखक ने वर्णन द्वारा स्पष्ट कर दिया है।

'कायाकल्प' की एक बालिका जो त्रिवेणी के घाट पर यात्रियों की भीड़ में खोई हुई पाई जाती है वह उच्चवर्ग की है। उस बालिका का परिचय हम इस प्रकार प्राप्त करते हैं --"गोरा रंग, भरा हुआ शरीर, सिर से पांव तक गहनों से लदी हुई, किसी अच्छे घर की लड़की थी।"

यह बालिका अपने माता-पिता का नाम-पता नहीं बता सकती केवल इतना ही बताती है कि वह अपनी मां तथा बाबूजी के साथ 'रेल' रेल पर आई थी। लड़की अपनी तुतली भाषा में महमूद से भी कहती है

'प्रेमचन्द' 'गोदान' पृष्ठ १६०

कि यदि तुम मुझे घर पहुंचा दोगे तो बाबूजी पैसा देंगे । उसके इस कथन से भी स्पष्ट होता है कि वह अच्छे परिवार की है ।

मध्य वर्ग के शिशु-पात्र

'बड़े भाई साहब' कहानी में दो भाईयों के बचपन की कहानी है । ये दोनों बालक मध्यवर्गीय परिवार के हैं । दोनों को विद्याध्ययन के लिये छात्रावास में रख दिया गया है । बड़ा भाई अपने छोटे भाई के संरक्षक के रूप में है, अत: उसके सामने सदा विद्यार्थी जीवन का आदर्श रखता है । छोटा भाई नौ वर्ष का है । उसका मन खेलने में बहुत लगता है । छात्रावास में कभी किताब उलट कर भी नहीं देखता, ठीक इसके विपरीत बड़ा भाई सदा पढ़ता रहता है । प्रतिदिन वह छोटे भाई को खेलते तथा पढ़ने में लापरवाह देखकर बिगड़ता है, उसे डांटता-फटकारता है । उसे अपनी आर्थिक स्थिति का ज्ञान है, अत: वह अपने छोटे भाई से कहता है कि पिता के परिश्रम की कमाई के रुपये को बर्बाद न करने के ख्याल से ही कम से कम वह पढ़े ।

'गुल्ली-डंडा' और 'कज़ाकी' नामक दो कहानियों में "मैं" सर्वनाम से सम्बोधित पात्र आये हैं जिन्होंने अपनी बालस्मृतियों को बड़े ही मार्मिक ढंग से उपस्थित किया है । ये दोनों पात्र मध्यम परिवार के हैं । 'गुल्ली-डंडा' में "मैं" पात्र थानेदार का लड़का है बचपन में वह गया नामक एक नीच जाति के लड़के के साथ गुल्ली-डंडा खेला करता था । गया दुबला, लम्बा बन्दरों की सी लम्बी-लम्बी, पतली-पतली अंगुलियों वाला तथा बन्दरों का सा ही चपल था । खेल में दोनों में जाति-पांति, अमीर-गरीब का कोई भेद-भाव न था । किन्तु एक दिन दांव न देने के कारण गया से एक डंडा मार खाया और एक नीच जाति के लौंडे से पिट जाना उसे उस समय अपमानजनक मालूम हुआ किन्तु घर में आकर किसी से शिकायत न की ।

"कज़ाकी" में "मैं" से सम्बोधित पात्र अपने पिता के चपरासी कज़ाकी से हिल-मिल गया है । कज़ाकी इसे बहुत प्यार करता है । गांव का डाकिया है । उसकी झुन-झुन की आवाज़ सुनकर बालक व्याकुल हो उसकी ओर दौड़ पड़ता है । एकबार कज़ाकी उसके लिए हिरण का बच्चा ला

देता है। किसी कारण उसे नौकरी से हटाये जाने के कारण यह बालक उसके शोक में बीमार पड़ता है और उधर कज़ाकी की भी वही हालत होती है। यह बालक कज़ाकी की दुर्बल अवस्था को देखकर आटा, चावल चोरी करके देता है। कज़ाकी बीमारी की उन्मादावस्था में इस बालक को देखने आता है। गली तक आकर उसे देख कर लौट पड़ता है। बालक भी उसे देखकर उसका पीछा करता है। बालक और कज़ाकी का स्नेह सम्बन्ध देखकर उसके पिता फिर से कज़ाकी को नौकरी दे देते हैं।

'तेंतर' शीर्षक कहानी के दोनों शिशु-पात्र। तेंतर नवजात बालिका है और सिद्धू उसका सबसे बड़ा भाई जिसकी अवस्था आठ-दस वर्ष की होगी। भारत का मध्य परिवार प्राय: रूढ़ियों और परम्पराओं से जकड़ा हुआ है। तेंतर बेटी के जन्म होने से परिवार में अनिष्ट की शंका होती है इसी कारणवश इस बालिका के प्रति तरह-तरह की शंकाएं और दुर्भावनाएं उपस्थित की जाती हैं। माता इसे दूध नहीं पिलाती। जब यह जागती है तो थोड़ी अफ़ीम चटा कर सुला देती है। सिद्धू बहन के जन्म से बहुत खुश है। बार-बार माता से बालिका को गोद में लेने का आग्रह करता है। मौका पाने पर उसे प्यार भी कर आता है। जब इसकी बहन तीन महीने की होती है तो खेल ही खेल में बालिका का मुंह मैदान में चरती एक बकरी के थन से लगा देता है। दूध पाने से बालिका में मानो प्राण आ जाते हैं। सिद्धू का अब यह नित्य का काम हो जाता है। बालिका का स्वास्थ्य बदल जाता है। परिवार में किसी तरह का अनिष्ट नहीं होता बालिका भी दिन ब दिन हृष्ट-पुष्ट होती जाती है। अत: तेंतर लड़की के प्रति जो इस परिवार की भ्रान्ति है वह दूर हो जाती है।

'मृतक भोज' कहानी में दो ब भाई-बहन हैं। ये सेठ रामनाथ के बच्चे हैं। रेवती के बचपन में इसके पिता की मृत्यु हो जाती है। बिरादरी के चौ-चार सेठ आकर श्राद्ध में खर्च करने के बहाने इन लोगों का मकान ले लेते हैं। ये दोनों बच्चे निर्धन और निस्सहाय होकर घर से निकल पड़ते हैं और एक गरीब कुंजड़िन की कोठरी में शरण लेते हैं। हालांकि ये दोनों बच्चे बचपन में ही निर्धन हो जाते हैं किन्तु इनका संस्कार पहले सा ही रह जाता है। रेवती तेरह वर्ष की है और मोहन आठ साल का है। फाबरमल की दृष्टि रेवती पर पड़ती है। वह कामुकता का पुतला धर्म और बिरादरी की आड़ लेकर रेवती के

सम्मुख उससे अपने विवाह का प्रस्ताव रखता है। रेवती बड़ी निर्दयता से उसको आड़े हाथों लेती है और उसी दिन अर्ध रात्रि में गंगा की धारा में अपने को विसर्जित कर देती है। जाने से पहले वह अपने भाई को बार-बार गले लगाती है। मोहन असहाय और अनाथ होकर रह जाता है।

'कुत्सा' शीर्षक कहानी में एक दस-वर्षीय बालिका राष्ट्रीय संस्था के संचालकों में से किसी एक की पुत्री है। वह अपने यहां सदा पार्टी तथा कार्यकर्ताओं की निन्दा-स्तुति सुना करती है। अत: उसके मन में यह विचार बैठ जाता है कि ये समाजसेवक, जुआरी, शराबी तथा जनता के रुपये गबन करने वाले हैं। अत: समाज के कुत्सित विचारों का प्रभाव इस बालिका के मन पर पड़ता है। मध्यवर्गीय परिवारों में वयस्क बहुधा बालकों का ख्याल किये बिना ही आपस में सब तरह की बातें किया करते हैं कि जिसका प्रभाव बालमन पर बड़ा ही बुरा होता है।

'दो बैलों की कथा' कहानी में यह बालिका मध्य किसान भैरों की लड़की है। इसकी माता का देहान्त हो गया है। विमाता उसे सताती है। स्नेह वंचित बालिका हीरा-मोती नामक बाये हुए बैलों को अपना स्नेह प्रदान कर हृदय का बोझ हल्का करती है। वह उन्हें रात को चुपके से रोटियां खिलाती है। एक रात चुपके से उन दोनों बैलों को स्वतंत्र कर चिल्लाती है --"दोनों फूफा वाले बैल भागे जा रहे हैं। ओ दादा, दोनों बैल भागे जा रहे हैं। जल्दी दौड़ो।"

'मृत' शीर्षक कहानी में बिन्नी अपनी सौतेली बहन द्वारा पाली जाती है। बिन्नी चार वर्ष की है। इसके माता-पिता निर्धन हैं किन्तु बहन-बहनोई मध्य आर्थिक स्थिति के हैं। यहां बिन्नी की सारी इच्छाएं पूरी की जाती हैं अत: बिन्नी अपने माता-पिता के पास जाने का नाम नहीं लेती।

'स्वर्ग की देवी' कहानी में दोनों शिशु दादा-दादी के प्यार में बिगड़ जाते हैं। उनके खाने-खेलने, सोने आदि किसी पर न कोई नियंत्रण है और न कोई नियम। उनकी आदत बिगड़ जाती है जिससे वे ताख पर के अमरूद को उतार कर खा जाते हैं उन्हें हैजा हो जाता है और शाम होते-होते

काल-कवलित हो जाते हैं। मध्यवित्त सम्मिलित परिवार के ये बच्चे हैं। लगता है इन पर माता का कोई अधिकार नहीं दादा-दादी ही सर्वस्व हैं। अत: दो शासन के कारण इनकी यह दुर्गति होती है।

'मांगे की घड़ी' नामक कहानी में दानू बाबू का एक लड़का है। दानू बाबू का मित्र ससुराल जाने के लिए दानू बाबू के हाथ की घड़ी लेना चाहता है। वह उनके स्वभाव से परिचित है अत: शिशु स्नेह के माध्यम से उनके सूम-हृदय पर विजय प्राप्त करना चाहता है। वह बालक को उठाकर बहुत प्यार करने लगता है। बातों के सिलसिले में दानू बाबू की घड़ी उतार कर बालक को पहनाता है और उसके बाद घड़ी की याचना उससे करता है। इस प्रकार एक नये तरीके से अपने काम में सफल होता है और 'मांगे की घड़ी' लेकर ससुराल जाता है। 'मांगे की घड़ी' इस कहानी का शीर्षक भी है। इस कहानी में उस वर्ग का चित्र है जहां लोग मंगनी की चीज़ों द्वारा अपनी आर्थिक स्थिति का प्रदर्शन करना चाहते हैं।

'आधार' शीर्षक कहानी में वासुदेव मथुरा का भाई है जिसकी अवस्था पांच वर्ष की है। यह परिवार मध्यवित्त किसान परिवार है तथा ग्राम में इसकी प्रतिष्ठा भी है। मथुरा की मृत्यु हो जाती है। अनूपा जैसी लक्ष्मी वधू को विधवा देख सास-ससुर को बड़ा दु:ख होता है। वे उसे अपने परिवार से अलग जाने देना नहीं चाहते हैं। सास ऐसी वधू को रखकर समाज में परिवार की प्रतिष्ठा निभाना चाहती है। वासुदेव इस विचार से कि दूसरी सगाई होने पर भाभी चली जायेगी अपना निष्कलंक बाल-हृदय लेकर आता है और उससे पूछता है कि क्या वह उससे ब्याह करेगी। अनूपा का हृदय गदगद हो उठता है। वह वासुदेव को ही अपना आधार मान लेती है और उस परिवार में रह जाती है।

"नैराश्य लीला" कहानी में अयोध्या के सम्मानित पंडित हृदयनाथ की पुत्री कैलाश कुमारी तेरह वर्ष की आयु में विधवा हो जाती है। परिवार के सभी सिर धुन कर रोते हैं पर यह कुछ समझ नहीं पाती। माता-पिता के सिवाय जीवन में किसी तीसरे व्यक्ति को आवश्यक नहीं समझती है। वह सोचती है कि पति है क्यों उपार्जन के लिए, अच्छे-अच्छे, गहने, कपड़े तथा मिठाईयां लाने के लिए। पति के न रहने पर वह इन चीज़ों की मांग माता-पिता से नहीं करेगी,

तो फिर ये इतना रोते क्यों हैं ? इधर माता-पिता मध्यवर्गीय सामाजिक रूढ़ियों और कुसंस्कारों को याद कर अपना माथा ठोक लेते हैं अब उनकी बेटी विधवा है उसे किसी तीज-त्योहार, आनन्द-उत्सव में भाग लेने का अधिकार नहीं ।

'इस्तीफ़ा' शीर्षक कहानी में चुन्नी फतहचन्द और शारदा की बालिका है । यह परिवार मध्यवित्त है किन्तु इसका सामाजिक आधार सामान्य है । पिता दिन भर नौकरी के लिए बाहर चला जाता है आने पर पुत्री स्नेह और स्वागत के लिए खड़ी हो जाती है । पिता भी बड़े स्नेह से अपनी तश्तरी से नाश्ता निकाल कर देता है ।

'बासी माल में खुदा का साफा' में दीनानाथ नौकरी पेशे वाले सामान्य सामाजिक आधार तथा मध्यवित्त आर्थिक स्थिति के व्यक्ति हैं । अपना काम बड़ी ईमानदारी के साथ करते हैं । एक बार इनका मालिक इन्हें बुला कर किसी जाली कागज़ की नकल करने का प्रस्ताव करता है । दीनानाथ किंकर्तव्य-विमूढ़ हो जाते हैं किन्तु अन्त में अपने मन को किसी प्रकार समझा बुझा देते हैं । कुछ दिन में उनका शिशु बीमार पड़ता है, इनकी आत्मा इन्हें धिक्कारती है कि यह उनके अनैतिक कार्य का दण्ड है । यह दैवी प्रकोप है ।

'लाटरी' शीर्षक कहानी में कुन्ती विक्रम की छोटी बहन है जिसकी अवस्था ग्यारह वर्ष की है । विक्रम अपने मित्र के साझे में लाटरी खरीदता है । दोनों मित्र बराबर कमरा बन्द करके इस लाटरी की चर्चा करते हैं । एक बार कुन्ती जो स्वभाव से चंचल है धमाके से घर में प्रवेश करती है और विक्रम तथा उसके मित्र की गुप्त वार्ता का पता लगा लेती है । वह कहती है कि हमारे समाज में यह विश्वास है कि कुंवारियों की प्रार्थना भगवान सुनते हैं, अत: वह माता के लाटरी के लिए प्रार्थना करती है । इसी परम्परागत विश्वास से अभिभूत होकर विक्रम कुन्ती को मित्र के साझे में लाटरी खरीदने का रहस्य बता देता है जिसे माता-पिता के भय से उसने आजतक गुप्त रखा था । वह कुन्ती से प्रार्थना करने के लिए कहता है और लाटरी पड़ जाने पर आभूषण देने का वायदा करता है ।

'प्रेरणा' शीर्षक कहानी में मध्यवित्त तथा प्रतिष्ठित परिवार का बालक सूर्यप्रकाश बड़ा ही उधमी तथा विषम प्रकृति का था। क्रीड़ा में उसकी जान बसती थी । अध्यापकों को बनाने-चिढ़ाने और उद्योगी

बालकों को छेड़ने और रुलाने में ही उसे आनन्द आता था। ऐसे-ऐसे षड्यंत्र रचता, ऐसे-ऐसे फन्दे लगाता, ऐसे ऐसे बन्धन बान्धता कि देखकर आश्चर्य होता था। अधिष्ठाता की आज्ञा टल जाए मगर क्या मजाल है कि कोई उसके हुक्म की अवज्ञा कर सके। स्कूल के चपरासी और अर्दली उससे थर-थर कांपते थे। इन्सपेक्टर के आने पर भी एक बार उसने ऐसी राय की कि सभी देर से पहुंचे। इस प्रकार स्कूल की बदनामी हुई, कक्षा की बदनामी हुई और अध्यापक तथा प्रधानाध्यापक सबकी बदनामी हुई। इन्सपेक्टर ने लिखा डिसिप्लीन बहुत खराब है। लड़कों से पूछ-ताछ करने पर किसी ने सूर्य प्रकाश का नाम तक नहीं लिया। शिक्षक के डेस्क में मेंढ़क रखने तथा अन्य दूसरी शरारत के कारण शिक्षक ने गुस्से से कहा--"तुम इस कक्षा में उम्र भर नहीं पास हो सकते। सूर्यप्रकाश ने अविचलित भाव से कहा-- आप मेरे पास होने की चिन्ता न करें। मैं हमेशा पास हुआ हूं और अबकी भी हूंगा। इस प्रकार सूर्यप्रकाश में शरारत की भावना कूट-कूट कर भरी है किन्तु वह पढ़ने-लिखने में अच्छा है अपनी कक्षा में सबसे अच्छा। उसी साल उस शिक्षक की बदली हो जाती है। बच्चे उन्हें प्रीति-भोज के लिए आमंत्रित करते हैं स्टेशन पर पहुंचाने जाते हैं। सभी लड़के आंसुओं से शिक्षक को विदाई देते हैं, किन्तु सूर्य प्रकाश पर एक भिन्न प्रतिक्रिया होती है। शिक्षक की विदाई के समय वह स्तब्ध है। सभी लड़के गाड़ी के साथ-साथ कुछ दूर तक दौड़ते हैं किन्तु सूर्यप्रकाश मूर्ति की तरह अचल और निस्पन्द है।

'निमंत्रण' शीर्षक कहानी में फेकू पंडित मोटेराम का सबसे छोटा लड़का है। पंडित मोटेराम मध्यवित्त परिवार के हैं। इनके जजमान अच्छे परिवार के लोग होते हैं, अतः जजमानी में इन्हें काफी आमदनी होती है। एक बार रानी साहिबा के यहां से इन्हें निमंत्रण आता है। रानी साहिबा इन्हें पांच ब्राह्मणों को साथ लाने को कहती है। पंडित मोटेराम की लालच बढ़ती है इसलिए अपने चारों पुत्रों को लेकर कथा पांच ब्राह्मणों की संख्या पूरी करते हैं। अपने मित्र चिन्तामणी को नहीं बुलाते। चिन्तामणि को द्वेष होता है और वह रानी साहिबा के सम्मुख मोटेराम के स्वार्थ का भंडाफोड़ करना चाहता है। मोटेराम अपने सभी बच्चों के नाम तथा बाप का नाम बदल कर रटवा देता है जिससे रानी साहिबा यह न समझें कि ये सब उनके ही पुत्र हैं। फेकू सबसे

छोटा है अत: महारानी इसे मिठाइयों का लालच दे कर पूछती है कि यदि जो बात वे पूछें और वह सच-सच बताये तो वे मिठाईयां देंगी । बालक मिठाइयों के प्रलोभन से क्या नहीं करता ? रानी इसके पिता का नाम पूछती है ज्योंही वह बोलता है त्योंही मोटेराम कस कर उसे डांट देता है । उसकी आधी बात मुंह में ही रह जाती है ।

'लांछन' कहानी की बालिका शारदा के भी मिठाई और खिलौने के लोभ से उसके परिवार की एक अजीब स्थिति हो जाती है । 'निमंत्रण' कहानी में चिन्तामणि और रानी साहिबा फेंकू को मिठाई का प्रलोभन देकर पिता के गुप्त बातों का भेद लेना चाहते हैं । 'लांछन' कहानी में भी रजामियां नाम का एक व्यक्ति शारदा को मिठाई और खिलौने का प्रलोभन देकर घर की सारी बातों का पता लगाता है उसके पिता जी हैं या कहीं गये हैं ? माता जी कहां है क्या कर रही है । रजा मियां घर का सारा भेद लेकर अपने स्नेह के माध्यम से शारदा की माता से सम्बन्ध रखना चाहता है । इस स्थल पर वही मनोविज्ञान है जो 'मांगे की घड़ी' शीर्षक कहानी में अर्थात् शिशु स्नेह के माध्यम से परिवार वालों पर अधिकार जमाने की प्रवृत्ति ।

शारदा को खिलौने, मिठाई देने से उसकी माता देवी तो खुश होती है किन्तु पिता के मन में सन्देह होता है । इस प्रकार परिवार के सुन्दर वातावरण पर घोर तिमिर छा जाता है ।

'सती' शीर्षक कहानी में चिन्ता एक प्रतिष्ठित वीर बुन्देले की कन्या है । इस बालिका में अपने पिता तथा अपने परिवार की प्रतिष्ठा की भावना अत्यधिक मात्रा में है । पिता के साथ यह जंगल की खोह में रहती है । दिन को तो पिता समर-भूमि में चले जाते हैं और यह बालिका मिट्टी के किले बनाती, गुड्डे को सिपाही बनाती, गुड्डी को ओढ़नी न देती, इस भावना से कि गुड्डी भी गुड्डे की तरह समर-भूमि में जाएगी । उसके खेल में पिता के देशप्रेम की भावनाओं की प्रतिष्ठा भरी है । पिता की मृत्यु के बाद भी यह बालिका नहीं रोती क्योंकि समर-भूमि में मर कर उन्होंने वीरगति पाई है ।

'चोरी' कहानी में 'मैं' और हलधर दोनों एक ग्रामीण मध्यवर्गीय परिवार के शिशुपात्र हैं । एक दिन हलधर दो रुपये चुराता है । दोनों मिलकर बारह आने फकीर मौलवी साहब को देते हैं, दो पैसे का अमरूद

खरीदते तथा शेष पैसों को मेला देखने के लिए रखते हैं। क्लास के बाद रूलवर के पिता उसे पकड़ लेते हैं और पीटते हुए घर ले जाते हैं। घर जाकर उसके हाथ पैर बांध दिये जाते हैं। उसका छोटा भाई जब मेले से लौटता है तब ज्योंही पिता पीटने के लिए हाथ उठाते वह इतने जोर से चिल्ला उठता है कि पिता भी सहम जाते हैं और उस पर मार नहीं पड़ती। पैसे का दुरूपयोग उन्होंने नहीं किया है अत: सजा देकर उन्हें छोड़ दिया जाता है। चोरी का यह उनका प्रथम प्रयास था अत: उचित सजा मिलने पर वे दोनों बालक जीवन भर के लिए चेत जाते हैं।

'कप्तान साहब' कहानी का जगतसिंह इन दोनों बालकों से भिन्न है। जगत सिंह को जब अवसर मिलता घर के रूपये उड़ा ले जाता। नकद न मिले तो बर्तन और कपड़े उठा ले जाने में भी उसे संकोच न होता था। घर में जितनी शीशियां और बोतलें थीं वह सब उसने एक-एक करके गुदड़ी बाजार में पहुंचा दी। पुराने दिनों की कितनी चीजें घर में पड़ी थी उसके मारे एक भी न बची। इस कला में ऐसा दक्ष और निपुण था कि उसकी चतुराई और पटुता पर आश्चर्य होता था। एक बार वह बाहर ही बाहर, केवल कार्निसों के सहारे अपने दो मंजिले मकान की छत पर चढ़ गया और ऊपर ही ऊपर से पीतल की एक बड़ी थाली लेकर उतर आया। घर वालों को आहट तक न मिली। इस प्रकार जगत सिंह चोरी करने की कला में पटु है। एक बार पिता की जेब टटोलता है। एक लिफाफा मिलता है, सोचता है इसमें स्टाम्प होंगे पर बीमा रजिस्ट्री के दो सौ के नोट हैं। वह किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाता क्योंकि इसे इतने रूपये न चाहिए था, साथ ही इसके पिता की नौकरी पर धब्बा भी है। अत: वह उन रूपयों को लेकर बम्बई के लिए रवाना होता है।

"जेल" शीर्षक कहानी में मान नामक शिशु मध्यविध परिवार का है। इसकी माता स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने के कारण जेल में है। मान के मस्तिष्क पर सत्याग्रह आन्दोलन, जुलूस झण्डोत्तोलन आदि का प्रभाव पड़ता है। वह अपने खेल में इन सबका अनुकरण करता है। माता जब जेल से लौटती है तब वह इतने दिन पर मिलने के कारण माता से रूठ जाता है।

बाम - गांव के मुखिया भानु चौधरी का नाती है। परिवार प्रतिष्ठित है, प्रत्येक मंगलवार को गुरदीन के आने पर सभी के लिए

मिठाईयां खरीदी जाती हैं। धान इस मिठाई से वंचित रह जाता है। क्योंकि इसका पिता आलसी और काम चोर है। एक बार धान को बहुत रोते तथा उसकी माता के फटकार को सुनकर 'गुमान' विचलित हो उठता है। इस प्रकार शिशु का रुदन पिता के लिए 'शंखनाद' का काम करता है।

रुद्रमणि- यह शिशु 'महातीर्थ' कहानी का है। इसकी अवस्था दो वर्ष की है। 'कैलासी' नामक दाई की देखरेख में यह पलता है। दाई से अत्यधिक स्नेह है। उसे 'अन्ना' कह के पुकारता है। अन्ना उसकी माता से बढ़कर है थोड़ी देर के लिए भी वह उसे नहीं छोड़ सकता। एक बार माता कैलासी को निकाल देती है। रुद्रमणि बीमार पड़ता है। अन्ना के बुलाने पर ही उसकी बीमारी दूर होती है।

'नागपूजा' कहानी में तिलोत्तमा एक छोटी बालिका है। अपने बागान में टहलते समय एक दिन वह नाग को देखती है और उसके विषय में विभिन्न प्रकार की जिज्ञासा प्रगट करती है। माता के मन में नाग के प्रति परम्परागत रूढ़ियां हैं अत: वह इस नाग के आगमन को परिवार के लिए शुभ मानती है और बेटी को भी उसके प्रति श्रद्धाभाव रखने को कहती है।

'बेटी का धन' कहानी में 'गंगाजली' एक छोटे से ग्राम में चौधरी की लड़की है। वह पिता के द्वारा पाली गई है, अत: पिता से उसका अगाध स्नेह है। परिवार भरा पूरा है पर सुक्खु चौधरी पर समय पड़ने पर कोई बेटा उसको सहायता नहीं देते। बेटी अपना गहना पिता को अर्पण करती है।

'विमाता' में मुन्नू एक मध्यवर्गीय परिवार का एक शिशु है। बचपन में उसकी माता मर चुकी है। विमाता आती है। पिता दफ्तर में काम करते हैं और अपनी नई पत्नी से सदा इस शिशु को मातृ-स्नेह देने की याद दिलाते रहते हैं। एक दिन मुन्नू छिपकर रोता और सिसकता है। पिता के पूछने पर वह कहता है कि मेरी नई अम्मा मुझे बहुत प्यार करती है इसलिए वह रोता है कि कहीं वे भी उसे छोड़ कर न चली जाएं। उसकी यह आशंका कठोर सत्य बनकर उसके सामने उपस्थित होती है। विमाता की मृत्यु हो जाती है। शिशु की बाल-क्रीड़ा समाप्त हो जाती है, वह नैराश्य की मूर्ति बन जाता है।

'बूढ़ी काकी' शीर्षक कहानी में लाड़ली बुद्धिराम और रूपा की सबसे छोटी सन्तान है। बुद्धिराम की चाची नि:सन्तान है तथा विधवा भी है। उन्होंने पूरी सम्पत्ति भतीजे के नाम कर दी है और इनकी परवरिश यहीं होती है। बेचारी बूढ़ी एक कोने में पड़ी रहती है जो कुछ मिल जाता है उसे खा लेती है। परिवार में इसका बड़ा अनादर और तिरस्कार है। बच्चे चिकोटी काट कर भाग जाते हैं। बुढ़िया चिल्ला कर रह जाती है। कोई सुनने वाला नहीं। परिवार में यदि किसी को उससे संवेदना है तो वह है लाडली। बूढ़ी काकी की गोद लाड़ली का सबसे सुरक्षित स्थान है। जब उसके भाई बहन उसे मारते-चिढ़ाते या उसका नाश्ता छीनते हैं तब वह बूढ़ी काकी की ही शरण में जाती है।

'तथ्य' शीर्षक कहानी में 'पूर्णिमा' का शिशु पूर्णिमा के साथी 'अमृत' से बहुत प्यार पाता है। अमृत जब उससे पूछता है कि तुम किसके बेटे हो तब वह कहता है 'टुमाले'। कुछ दिनों बाद पूर्णिमा विधवा हो जाती है। अमृत अपनी अतृप्त भावना लिए उसके पास जाता है। किन्तु वह देखता है कि उसके स्वार्थपूर्ण हृदय और पूर्णिमा के शुद्ध-हृदय के बीच बड़ा अन्तर है। पूर्णिमा उसे अपने शिशु की याद दिला कर उस दूरी को हटाती है।

'मेरी पहली रचना' शीर्षक कहानी में प्रेमचन्द ने अपनी पहली रचना की कहानी लिखी है। प्रेमचन्द मध्यवित्त परिवार के थे। इस वर्ग के समाज में कौन-कौन सी घटनाएं होती हैं उसके उदाहरण के रूप में इस कहानी को लिखा है। उनके एक मामू अपनी दाई के, जो जाति की चमारिन थी नयन-बाणों से घायल हो गये। चमारों ने पंचायत की और राय बांध कर ठीक मौके पर उनको पकड़ा। उनके घर को घेर लिया और खूब पीटा। मामू साहब महीनों हल्दी गुड़ पीते रह गये। इस घटना का प्रभाव प्रेमचन्द के भावुक मन पर पड़ा और उन्होंने इस घटना से प्रेरणा लेकर एक मजेदार नाटक बना डाला।

प्रेमचन्द के उपन्यास 'निर्मला' में निर्मला,कृष्णा और चन्द्रभानु बाबू उदयभानु लाल और कल्याणी के बच्चे हैं जो मध्यवर्गीय परिवार से आते हैं। बाबू उदयभानु लाल वकील हैं, आमदनी खूब है, अत: परिवार में सभी तरह की सुख-सुविधाएँ प्राप्त हैं। बड़ी लड़की सयानी हो चली है अत: उसके

विवाह की बड़ी-बड़ी तैयारियां हो रही है। बाबू उदयभानु लाल हृदय खोलकर खर्च करना चाहते है पर कल्याणी इस मामले में दूरदर्शिता से काम लेना चाहती है। वह और पैसे अन्य बच्चों के लिए भी रखना चाहती है। इसी बात पर दोनों पति-पत्नी में विवाद खड़े हो जाते हैं किन्तु दुर्भाग्यवश एक दिन उदयभानु लाल की हत्या हो जाती है और ये सारी तैयारियां खत्म हो जाती हैं और निर्मला का विवाह एक बूढ़े वकील से हो जाता है जिसके पास तीन लड़के है।

'निर्मला' उपन्यास के दो अन्य ~~शिशुपात्र~~ शिशु पात्र जियाराम और सियाराम भी मध्यवित्त परिवार के ही है। ये मुंशी तोता राम के पुत्र और इनकी माता का देहान्त होने पर विमाता के रूप में निर्मला का आगमन होता है। मुंशी तोताराम मध्यवित्त श्रेणी के व्यक्ति हैं, वकील हैं, आमदनी अच्छी है। किन्तु अपनी अदूरदर्शिता, बड़े बेटे तथा निर्मला पर सन्देह, विधवा बहन के रहने से पारिवारिक कलह आदि के होने से शनैः शनैः इस परिवार का पतन होता जाता है। मंसाराम मर जाता है। जियाराम कुसंग में पड़ कर विमाता के गहने चुराता और पुलिस वालों के डर से घर से लापता हो जाता है। सियाराम का जीवन भी अत्यन्त बोझिल हो जाता है। स्नेह और सद्भावना की खोज में स्वामी परमानन्द के साथ चल पड़ता है।

'गबन' उपन्यास में '~~जालपा~~' जालपा दीनदयाल और मानकी की पुत्री है जो मध्यवित्त परिवार से आती है। इसके पहले इसके तीन भाइयों का निधन हो चुका है अतः अब परिवार में अकेली होने के कारण बहुत प्यार पाती है। उसकी सारी मनोकामनाएं पूरी की जाती हैं। पिता उपहार स्वरूप गहने ही दिया करते हैं। दादी आशीर्वाद में अच्छे गहने, अच्छा घर आदि की ही चर्चा करती है। इसकी शादी भी मध्यवर्गीय परिवार में होती है।

'गोदान' में सोना और रूपा शिशु-पात्रों का चित्रण प्रारम्भ में मध्यवित्त किसान परिवार बाद में दरिद्र किसान और अन्त में मजदूर के रूप में होता है। ये दोनों होरी और धनिया की लड़कियां है। यह एक आदर्श परिवार है, बच्चे पिता की आज्ञा मानते हैं, खेती का सारा काम मिलजुल कर होता है। सभी सुखी हैं। बाद में कड़े लगान, कर्ज,

किसके सहारे इन बच्चों का पालन करेगी । रघुधू इस भार को सम्हाल लेता है । रघुधू के विवाह होने पर उसे भी दो बच्चे होते हैं । ये दोनों बच्चे अपनी आर्थिक हीनता का परिचय देते हैं । रघुधू जवानी में मर जाता है । उसकी पत्नी मुलिया जब खलिहान में अनाज़ माड़ने जाती है तो इन तीनों बच्चों को साथ ले जाती है । एक को वृक्ष के नीचे सुला देती है, दूसरे को उसकी बगल में बैठा देती है । जब गोद का बच्चा रोने लगता है तब बड़ा लड़का कहता है --"बैया चुप रहो ।" धीरे-धीरे उसके मुंह पर हाथ फेरता है जब बच्चा चुप नहीं होता तो उसके बगल में लेटकर छाती से लगाकर प्यार करने लगता है, और इधर मुलिया बैलों को हांकती है और आंचल से आंसु पोछती जाती है ।"

हामिद, मोहसिन, महमूद, नूरे और सम्मी-- ये पांचों बालक एक गांव के निम्नवित्त परिवार के मुसलिम बालक हैं जो ईद के दिन बहुत खुश हैं । इनकी प्रसन्नता का सबसे बड़ा कारण यह भी है कि आज इनको शायद कुबेर का धन प्राप्त हो गया है । हामिद के पास तीन पैसे, किसी के पास पांच, किसी के पास आठ और किसी के पास पन्द्रह पैसे हैं । ये बार-बार इन पैसों को जेब से निकालते साथियों के सामने गिनते और फिर जेब में रख देते हैं ।

मोहसिन कहता है --"अम्मी मनों आटा पीस डालती हैं । बरा सा बैट पकड़ लेंगी तो हाथ कांपने लगे । सैकड़ों घड़े पानी रोज़ निकालती हैं ।- - - - ।" इस तरह वे गप्प करते-करते ईदगाह को जाते हैं । इससे उनकी आर्थिक स्थिति का पता भी चलता है । ईद की तैयारी में सबके यहां तैयारियां और जल्दीबाज़ी है । "किसी के कुरते में बटन नहीं है । किसी के जूते कड़े हो गये हैं, उनमें तेल डालने के लिए तेली के घर भागा जाता है --------- लड़के सबसे ज्यादा प्रसन्न हैं - - - - - - -इन्हें गृहस्थी की चिन्ताओं से क्या प्रयोजन, सिवइयों के लिए दूध और शक्कर घर में है या नहीं उनकी बला से । ये तो सिवइयां खायेंगे । वह क्या जाने कि अब्बाजान क्यों बदहवास चौधरी क्यामत अली के घर दौड़े जा रहे हैं । उन्हें क्या खबर कि चौधरी आज आंखें बदल लें, तो यह सारी ईद मुहर्रम हो जाय ।"[२]

---

१. प्रेमचन्द: मानसरोवर भाग -१, पृ० ३५, नया संस्करण ।

'मां' शीर्षक कहानी में प्रकाश एक देशप्रेमी बालक है। इसका पिता देश की आज़ादी के कारण जेलखाने में है। माता आर्थिक कठिनाइयों के बीच इसको जन्म देती है। जब प्रकाश तीन वर्ष का होता है तब इसका पिता जेलखाने से राजयक्ष्मा का रोगी बन कर कंकाल शरीर लिए खांसता-लाठी टेकता घर आता है। शिशु प्रकाश को देख कर उसकी आंखें सजल हो उठती हैं। उसका रोम-रोम तिरस्कार करता है कि इस फूल से शिशु को संसार में लाकर दरिद्रता की आग में फोंकने का उसे क्या अधिकार था। वह उसी दिन मर जाता है। प्रकाश बड़ा होता है। उसके चरित्र में दरिद्रता के प्रति घोर विद्रोह होता है अत: वह अपने पिता के आदर्श को कभी निभा नहीं सकता।

'ज्योति' शीर्षक कहानी में सोहन और मैना दोनों विधवा 'बूढ़ी' के बच्चे हैं। इनके भरण-पोषण में आर्थिक अभाव के कारण माता कभी-कभी झुंफला उठती है और मृत पति को कोसती है। माता बड़े बेटे मोहन से कभी खुश नहीं रहती क्योंकि वह रूपा नामक एक लड़की के फेर में है। सोहन और मैना दोनों बड़े भाई से डरते हैं। रूपा से विवाह करने के लिए मोहन भाई-बहन तथा माता के हृदय को जीतना चाहता है। अत: एक दिन वह सोहन को घर पर अपने कपड़े फींचते देखकर उससे पूछता है कि वह अपने कपड़े धोबी को क्यों नहीं देता। सोहन कहता उतने पैसे कहां से लावेंगे। मोहन उसके सामने चार पैसे देता है कि साबुन लावे। मैना बाल बिखेरे आंगन में घरौन्दा बनाती है, भाई को देखकर वह सहम कर जूठे बर्तन साफ़ करने चलती है। जब मोहन उसके उलझे हुए बालों में हाथ डालकर उसे प्यार करता है तो वह भाई से दो पैसे मांगती है। एक पैसे का वह रंग लेगी और एक पैसे का बताशा। दो पैसे में तो उसकी गुड़िया का ब्याह धूम-धाम से हो जायेगा।

'दूध का दाम' शीर्षक कहानी का मंगल और 'सौभाग्य के कोड़े' कहानी का नथुवा दोनों निम्न जाति के अनाथ शिशु हैं जो अपने गांव के जमीन्दार के द्वार पर जूठन के लिए कुत्तों से पड़े रहते हैं। मंगल आठ वर्ष का है। गांव के जमीन्दार बाबू महेश्वर राय का लड़का सुरेश भी इसी अवस्था का है किन्तु खेल-खेल में भी मंगल उसे छू नहीं सकता क्योंकि वह निम्न जाति का है।

टामी नामक कुत्ते से उसकी गहरी मित्रता है । मंगल अपना दु:ख-सुख उसी से कहता है । नथुआ भोलानाथ के द्वार पर रहता और फाड़ू बुहारा करता है । एक दिन रत्ना के बिछावन पर लेटने के कारण बहुत मार खाता और निकाल दिया जाता है ।

'फांकी' शीर्षक कहानी के दो शिशु आर्थिक दृष्टि से निम्न किन्तु सामाजिक दृष्टि से सामान्य परिवार के हैं । इस परिवार में के सास-बहू में कलह है । सास अपनी बेटी के यहां तीजा भेजने के लिए सामानों की जो सूची बनाती है उसमें बहुत काट-छांट करना चाहती है । उनका कहना था-- "जब रोजगार में कुछ मिलता नहीं, दैनिक कार्यों में खींच-तान करनी पड़ती है, दूध, घी के बजट में तखफीफ हो गई, तो फिर तीजे में क्यों इतनी उदारता की जाए ।"

अत: इस आर्थिक आधार के कारण दोनों सास-बहू में कलह है । पति महोदय किसी की ओर बोल नहीं सकते, न मां की ओर न पत्नी की ओर । दोनों बच्चे उदास और दु:खी हैं । आज उनसे कोई नहीं बोलता, कोई प्यार नहीं करता ।

'गुल्ली डंडा' कहानी में गया निम्नवर्गीय परिवार से आता है जिसका सामाजिक स्तर अज्ञात है । उसका चित्रण इस प्रकार है --"मेरे हमजोलियों में एक लड़का गया नाम का था । मुझसे दो तीन साल का बड़ा होगा । दुबला, लम्बा, बन्दरों की सी लम्बी-लम्बी, पतली-पतली उंगलियां, बन्दरों की सी चपलता, वही फल्लाहट । गुल्ली कैसी भी हो उस पर इस तरह लपकता था, जैसे छिपकली कीड़ों पर लपकती है । मालूम नहीं उसके मां-बाप थे या नहीं, कहां रहता था, क्या खाता था, पर था हमारे गुल्ली क्लब का चैम्पियन ।"[1] इस प्रकार बाल जीवन में गरीब तथा निम्न परिवार का होते हुए भी गया चैम्पियन होने के कारण बालकों के बीच आदर पाता है । एक बार दांव न देने के कारण गया अपने साथी को एक डन्डा जमाता है । साथी

१- प्रेमचन्द : 'मानसरोवर' भाग-१, पृ० १६५, नवां संस्करण ।

को दु:ख तो होता है कि वह एक नीच जाति के लड़के से पीटा गया किन्तु वह करता क्या ? दांव तो उसे देना ही था ।

'आखिरी हीला ' कहानी में कम आमदनी का व्यक्ति जिसका सामाजिक स्तर सामान्य ही है - वैवाहिक जीवन में बालक को सुख साधन का बाधक मानकर सामान्य शिशुओं की चर्चा करता है । वैवाहिक जीवन का एक पथ-मोहक और आकर्षक है दूसरा पथ भयंकर और हृदय-विदारक के कारण, इस स्थिति के पिता की अवस्था यह है -शाम हुई और आप बदनसीब बच्चे को गोद में लिए तेल या ईंधन की दूकान पर खड़े हैं । अंधेरा हुआ और आप आटे की पोटली बगल में दबाये गलियों में कदम बढ़ाते हुए निकल जाते हैं मानो चोरी की है । सूर्य निकला और बालकों को गोद में लिए होम्योपैथिक डाक्टर की दूकान में टूटी कुर्सी पर आरूढ़ हैं । किसी खोंचे वाले की रसीली आवाज़ सुनकर बालक ने गगनभेदी विलाप आरम्भ किया और आप के प्राण सूखे । ऐसे बापों को भी देखा है जो दफ्तर से लौटते हुए पैसे दो पैसे की मूंगफलियां या रेवड़ियां लेकर लज्जास्पद शीघ्रता के साथ मुंह में रखते चले जाते हैं कि घर पहुंचते-पहुंचते बालकों के आक्रमण से पहले ही यह पदार्थ समाप्त हो जाए ।[1]

'सुभागी ' आर्थिक दृष्टि से निम्न तथा सामाजिक दृष्टि से सामान्य परिवार की बालिका है । उसका स्वभाव सरल है । यह चतुर और गृहस्थी के कामों में निपुण है । यों तो इसी उसके बड़े भाई तथा भाभी भी हैं किन्तु ये दोनों गृहस्थी के कामों में हाथ नहीं बंटाते । उन्हें सुभागी से ईर्ष्या है कि माता-पिता उसे अधिक प्यार क्यों करते हैं । इसलिए सुभागी के विधवा होने पर वे उसकी दूसरी सगाई कर देना चाहते हैं पर सुभागी माता-पिता को नहीं छोड़ती । अन्त में अलगौझे की नौबत आती है, सुभागी बूढ़े माता-पिता के साथ अलग हो जाती है और उनको सुखी रखने के लिए सतत् परिश्रम करती है ।

'स्वामिनी ' शीर्षक कहानी में निम्नवर्गीय किसान परिवार जिनका सामाजिक स्तर सामान्यत: प्रतिष्ठित है, के कुछ शिशु

१- प्रेमचन्द : 'मानसरोवर' भाग- १, पृष्ठ २६३, नवां संस्करण ।

एक समुदाय के रूप में उपस्थित होते हैं। प्रसंग है एक परिवार का ग्राम छोड़कर जीविका की खोज में शहर जाना। शहर जाने की सारी तैयारियां हो रही हैं। बैलगाड़ी द्वार पर आगई है, बच्चों को नये कपड़े पहनाये गये हैं। आज मानो उनके लिए कोई उत्सव या त्यौहार ही है। एक तो नये कपड़े दूसरे गाड़ी पर चढ़ने की कल्पना, वे आनन्द के मारे फूले नहीं समा रहे हैं।

'बालक' शीर्षक कहानी में एक ~~कककक कक~~ नवजात-शिशु आर्थिक दृष्टि से हीन, सामाजिक दृष्टि से तिरस्कृत एक कुलटा स्त्री गोमती का है। गोमती विधवा आश्रम में रहती है। आश्रम वालों ने तीन बार उसका विवाह किया है किन्तु तीनों बार भाग आयी है। कहीं नह टिकती नहीं। गंगू किसी अच्छे परिवार में नौकर है। गोमती की ओर आकर्षित होता है और सब किसी के मना करने पर भी मक्खी निगलता है, उससे विवाह करके लाता है। गोमती एकाएक एक दिन गायब हो जाती है और लखनऊ के जनाने अस्पताल में इस शिशु को जन्म देती है। गंगू गोमती का पता लगाता है और उसे पालता है। गंगू का इस शिशु के प्रति प्रेम आस-पास के लोगों के हृदय की सोई हुई महानता को जगाता है। इस शिशु के चरित्र पर कोई प्रकाश नहीं है किन्तु इस शिशु के माध्यम से लेखक ने एक निम्नवर्गीय तथा निम्न-जातीय व्यक्ति के मन में बसने वाली आदर्श की ऊंचाई को दिखाया है।

'डामुल का कैदी' शीर्षक कहानी में कृष्णाचन्द्र नामक शिशु पात्र है जो निम्नवर्गीय परिवार से आता है। उसे अपने वर्ग के प्रति सम्वेदना है अत: माता से चुपचाप स्कूल के बाद ही एक ऐसे परिवार की सेवा में लगा रहता है जिसकी निर्धनता और दरिद्रता का कारण उसका पिता है।

'विश्वास' कहानी का बालक निम्नवर्गीय है। मिस्टर बार्पट द्वारा पाला गया है। अपने पालित पिता पर ख़तरा की बात सुनकर लाठी लेकर तैयार हो जाता है, उसकी रक्षा के लिए।

'मंदिर' कहानी में एक निम्नवर्गीय शिशु है। बीमारी की हालत में गुड़ चुरा कर खा जाने से इसकी मृत्यु हो जाती है किन्तु इसी शिशु को आधार बनाकर लेखक ने एक विधवा की सारी धार्मिक, सामाजिक, और आर्थिक स्थिति का सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया है।

'पिसनहारी का कुंआ' कहानी में एक बालिका के चरित्र-चित्रण के अध्ययन से निम्नवर्गीय अनाथ बालिका की दयनीय स्थिति का सजीव चित्र उपस्थित किया गया है। बालिका गांव के लोगों की दया से प्राप्त रोटियों पर पलती है। बहुत कम वय में ही खुरपी लेकर घास गढ़ने का खेल खेलती है। मानों इस खेल में ही वह अपने को भावी संघर्ष के लिए तैयार करती है। घास गढ़कर ही उसे अपनी क्षुधा की तृप्ति करनी होगी।

'आत्माराम' कहानी में आत्माराम के तोता उड़ जाने पर गांव के बच्चों का समूह एकत्र होता है। ये बालक निम्न आर्थिक स्थिति के हैं। इस स्थल में इन बालकों की प्रतिक्रिया वर्गगत नहीं अपितु समुदाय में होने वाली बच्चों की ही है।

'बैर का अन्त' शीर्षक कहानी के तीन लड़के विश्वेश्वर राय के हैं। पिता की मृत्यु के बाद इनकी दशा शोचनीय हो जाती है। माता तीनों को अपनी तीन व्याही हुई लड़कियों के पास भेजती है। किन्तु वहां इन गरीब अनाथों को कौन पूछता ? वहां घर वाले उनको चिढ़ाते और मारते थे। लाचार होकर माता उन्हें बुला लेती है। बच्चे दिनभर भूखे रह जाते हैं। किसी को कुछ खाते देखकर माता से मांगते हैं। सामने जाकर खड़े हो जाते और क्षुधित नेत्रों से देखते हैं कोई तो मुट्ठी भर चबेना निकाल कर दे देता है, कोई दुत्कार देता है। जाड़े के दिनों में मटर की फलियों के खेत में घुसकर क्षुधा की तृप्ति करते हैं।

लेखक ने उनके सम्पूर्ण दशा का मार्मिक चित्रण मानों एक ही वाक्य में कर दिया है। एक बार एक किसान मटर उखाड़ कर ला रहा था और "तीनों लड़के पिल्लों की भांति दौड़ चले आते थे।" यह मनुष्य की गरीबी की चरम सीमा है जहां मानव-शिशु पिल्लों की भांति किसी के पीछे-पीछे दौड़ें। इस वाक्य में भारत के निम्नवर्गीय स्थिति का करुणापूर्ण चित्र है।

'खून सफ़ेद' कहानी में साधो के माता-पिता भी कठिन परिश्रम के बाद भी अपना पेट भरने में असमर्थ हैं। 'बैर का अन्त' कहानी में तीनों बालक खाने की कुछ सामग्री पाने के कारण चचेरे भाई के पास परक जाते हैं, माता सोचती है कि पट्टीदारी की पुरानी अदावत पूरा करने के लिए जागेश्वर

उसके बच्चों को बुलाता है । वह बच्चों को मना करती है पर वे नहीं मानते । यहां भी साधो मिठाई पाने के कारण एक ईसाई पादरी के पास परक जाता है ।

चार वर्ष का साधो नींद से उठकर कहता है --

मां मुझे बड़ी भूख लगी है पर तुम्हारे पास तो कुछ नहीं है । मुझे क्या खाने को दोगी ?'

फिर कहता है -- 'मां मैं न होता तो तुम्हें इतना दु:ख तो न होता ।' यह कहकर वह फूट-फूट कर रोने लगता है । शिशु-चित्रण के माध्यम से निम्नवर्गीय स्थिति के लोगों की आर्थिक तथा मानसिक स्थिति की मार्मिक अभिव्यंजना हुई है ।

'खून सफेद' शीर्षक कहानी में शिवगौरी १०-१२ वर्ष की लड़की है । इसके माता-पिता साधारण मज़दूर हैं । एक दिन वह एक पेंट और कमीज़ पहने हुए आदमी को उसके पिता से लिपटते देख कर दौड़ी आती है और मां को सूचना देती है कि किसी साहब ने पिता को पकड़ लिया है । इस निम्नवर्गीय बालिका के मन में अपने से अमीर धनी मानी ज़मीन्दार या साहिबों के प्रति एक ग्रन्थि बन गई है । उसमें अपने आपके प्रति सम्भवत: अपने वर्ग के प्रति भी हीनता का भाव आ गया है ।

'सच्चाई का उपहार' शीर्षक कहानी, ग्राम के मदरसे का एक गरीब बालक । इसकी कक्षा में छ:-सात ज़मीन्दारों के लड़के भी पढ़ते हैं । उनका दल बराबर अलग रहता है । उनकी शरारतें और अमीरी की बोलियां उसे पसन्द नहीं । यह सच्चरित्र, शान्त, परिश्रमी और दीन है । उसकी सच्चाई का प्रभाव उसके वर्ग के अमीर और अभिमानी लड़कों पर पड़ता है और वे उसको अपना नेता बना लेते हैं ।

'गुप्तधन' कहानी में मगन सिंह दरिद्र परिवार का बालक है । वृद्ध रोगिणी माता के सिवाय इसके परिवार में और कोई दूसरा व्यक्ति नहीं है । गांव से कुछ दूर एक पजावे में ईंट ढोने का काम करता है । इसकी परिस्थिति ने इसे बाल्यकाल में ही मज़दूरी करने को बाध्य कर दिया । माता का स्नेह तथा उसकी बीमारी उसे अपनी अवस्था के लड़कों से दूनी ईंट ढोने के लिए आन्तरिक उत्साह और साहस प्रदान करता है । इसकी

परिस्थिति ने, इसके आर्थिक अभाव ने, मानो इसके स्वभाव में ही परिवर्तन ला दिया है। इसमें न लड़कपन की चंचलता है, न शरारत और न खिलाड़ीपन। यहां तक कि उसके होठों पर हंसी तक नहीं आती। प्रतिकूल परिस्थिति में भी यह संघर्ष करता और अपने कार्य में उन्नति करता है।

'बौड़म' शीर्षक कहानी का एक सात वर्षीय लड़का आर्थिक दृष्टि से निम्न तथा सामाजिक दृष्टि से अप्रतिष्ठित परिवार का है। एक बार इसके पिता इसे दो आने चीनी लाने को देते हैं तो वह रास्ते में ही थोड़ा सा फांक जाता है। इसका पिता बनिया को दोषी ठहराने के लिए दो-चार झूठी गवाहियां उपस्थित करता है। इस दृश्य को उपस्थित करके निम्न-वर्गीय समाज का सुन्दर किन्तु सत्य चित्र उपस्थित किया है।

'जुरमाना' कहानी में एक बालिका भंगी अलारक्खी की बालिका है। माता सड़कों पर झाड़ू देती है। बालिका को सर्दी और बुखार है। जाड़े का दिन है। अलारक्खी को सुबह चार बजे ही नगरपालिका की सड़कों पर झाड़ू लगाना पड़ता है। बच्ची की बीमारी में उचित तो यह था कि माता दो दिनों की छुट्टी लेकर उसकी सेवा करती किन्तु उसकी आर्थिक स्थिति ऐसी है कि वह काम पर आने के लिए बाध्य है। इस परिस्थिति में बालिका की दशा दयनीय है। वह माता की गोद से उतरना नहीं चाहती, रोती, चिल्लाती, पैर पटकती, और माता का आंचल खींचती है। अलारक्खी को जमादार का भय है अत: वह उसे ठंड में ही सड़क के एक किनारे बैठाकर झाड़ू देना चाहती है। इन सारी कहानियों में शिशुओं की जो क्रिया-प्रतिक्रियायें हैं उसके आधार पर हमें उनके आर्थिक तथा सामाजिक आधार के विषय में मालूम होता है।

गुप्तधन भाग १ में 'अनाथ लड़की' शीर्षक कहानी में रोहिणी एक अनाथ बालिका है। उसके पिता की मृत्यु के पश्चात् उसकी माता दूसरों के कपड़े सिला करती और बड़े मुश्किल से गुजारा होता है। माता इसे सरस्वती पाठशाला में भेजती है और स्वयं दूसरों के यहां से कपड़े बटोर लाती और सिलाई करती है। इस बालिका के के मन में पितृ-स्नेह वंचित होने का दु:ख है। यह बालिका तीव्र-बुद्धि वाली सुन्दर और मृदुभाषिणी है

अत: सेठ पुरुषोत्तम दास जी को अपना पिता बना लेती है।

'सौत' शीर्षक कहानी का शिशु पात्र जोखु निम्नवर्गीय ग्रामीण परिवार का शिशु है। सन्तान न बचने के कारण इसका पिता रामू अपनी पत्नी रजिया से दुर्व्यवहार करता और दसिया को लाता है। दसिया ज्वान और खूबसूरत है। जोखु इसी दसिया तथा रामू का पुत्र है। दसिया के आते परिवार में गरीबी छा जाती है। दसिया से मिहनत नहीं हो पाती। रामू बीमार पड़ता है। घर में कंगाली छा जाती है। जोखु के स्वास्थ्य पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है। बेचारा बहुत दुबला हो गया है। खाने की कमी के कारण पाव भर, आध पाव दूध का भी इन्तजाम नहीं कर सकते। परिवार में ऐसी दरिद्रता समाई कि पहले के जो गाय-बैल थे अब कुछ भी नहीं रहे।

'वरदान' का प्रतापचन्द और 'वृजरानी' दोनों मध्यवर्गीय शिशु-पात्र हैं। मध्यवर्गीय परिवार के शिशुओं की विशेषताएं इन दोनों बालकों में हैं। प्रतापचन्द्र के पिता की मृत्यु के पश्चात् उसके परिवार की व्यवस्था बदल जाती है। माता सारी ज़मीन तथा गांव का घर बेच कर मुंशी जी के कर्ज से मुक्त होती है। जब मुंशी शालिग्राम जीवित थे उनके यहां आमदनी से अधिक खर्च था। नित्य नये जलसे, अतिथियों का सत्कार, पूजा-पाठ, दान-दक्षिणा आदि में बहुत अधिक खर्च होते थे किन्तु उनकी मृत्यु के पश्चात् सब एकाएक गायब हो गये और उसका भोक्ता यह शिशु प्रतापचन्द्र बना। उसकी माता ने रो रो कर कहा कि अब कल से मिठाई बन्द, पर प्रताप की समझ में इसका कारण या माता की आर्थिक स्थिति की गंभीरता कुछ समझ में न आयी। मध्यवित परिवारों की यही बुराई है - आमदनी से अधिक खर्च। प्रताप को कम वय में अवश्य ही कठिनाइयों का सामना करता है किन्तु वह अबोध है-- अपने दु:खों को बाहर बोल कर व्यक्त नहीं कर सकता। माता बीमार रहती है पर उससे छिपाती है किन्तु प्रताप के तीक्ष्ण दृष्टि से यह बात गुप्त नहीं रह सकती, वह अपनी माता से प्रतिवाद करता है कि तुम बहुत दुबली-पीली हो गई हो तुम्हें ज्वर अधिक है। वह अपरिचित स्थान में साहस के साथ डाक्टर बुलाने चला जाता है। परिस्थितियाँ उसे मुसीबतों का सामना करने को आध्य करती है।

वृजरानी के पिता जीवित हैं अत: उसे माता-

पिता दोनों का लाड़-प्यार मिलता है। इसके पिता इसकी सारी इच्छाओं को पूरा करते हैं। चूंकि ये दोनों परिवार एक ही वर्ग के हैं, दुर्भाग्य से प्रताप के पिता नहीं रहे, इसीलिए माता-पिता को दोनों बच्चों को साथ खेलने में आपत्ति नहीं पर सुवामा बृजरानी को घन्टों निहारती और सुशीला प्रताप को प्यार करती। दोनों बच्चों का मेल-मेल बढ़ता जाता है।

'रंगभूमि' उपन्यास में घीसू और मिठुआ दोनों निम्नवर्गीय परिवार के शिशु हैं। मिठुआ सूरदास के भाई का लड़का है। सूरदास ने उसे अधिक लाड़-प्यार में बिगाड़ दिया है। उसके ऊपर कड़ा अनुशासक होना चाहिए था। लेकिन सूरदास उसकी हर ज़िद पूरी करता है। घीसू उसका मित्र है। दोनों शरारत के पुतले। दोनों जगधर और भैरों को सरस पद से चिढ़ाते हैं। दोनों अपने गांव के बच्चों के नेता हैं। इस गांव के 'बालकों का समूह' भी इसी वर्ग में आता है।

'रंगभूमि' के साबिर और नसीमा ज़ाहिर और जाबिर मध्यवर्गीय परिवार के हैं। यह सम्मिलित परिवार है। ताहिर अली और कुलसुम के बच्चे साबिर और नसीमा हैं जो अपने पिता के सरल स्वभाव तथा परिवार में माता का कोई स्थान न रहने के कारण तकलीफ़ उठा रहे हैं। ये दाने-दाने को तरसते, उधर ज़ाहिर और जाबिर अपनी माताओं की व्यवहारकुशलता और चालाकी से मौज करते मिठाइयां उड़ाते हैं। मध्यवर्गीय सम्मिलित परिवार की यही विशेषता है। परिवार के जो सदस्य चतुर और व्यवहारिक होते हैं उनकी पत्नी तथा बच्चे औरों की अपेक्षा अपनी सारी ज़रूरतें तथा लाभ ले लेते हैं। इस पारिवारिक संघर्ष का सबसे अधिक प्रभाव परिवार के छोटे बच्चों पर होता है क्योंकि ये बच्चे बड़े ही सम्वेदनशील होते हैं। इसी संघर्ष के फलस्वरूप बच्चे दब्बू हो जाते हैं। जब प्रभु सेवक उनके गांव में जाते हैं तो मिठुआ पुकारता है पादड़ी-पादड़ी और उस गांव के बच्चे वहां इकट्ठे हो जाते हैं। गांव के इन बच्चों को इतनी शिक्षा या ज्ञान नहीं ये प्रभु सेवक पादड़ी नहीं, वह एक इसाई है। कोट पैंट पहनने वाला व्यक्ति उनकी दृष्टि में पादड़ी है। बच्चों के इस समूह को हम दूसरे स्थल पर सूरे के झोंपड़े के राख के पास पाते हैं, जब वे राख को हाथ से उठा-उठा कर फेंकते हैं। जब राख खतम हो जाती तो फिर

वहां से दूसरे सेल की तलाश में भागते हैं ।

'गोदान' उपन्यास में झुनिया भोला महतो की लड़की निम्नवर्गीय परिवार से आती है । उसकी माता का देहान्त हो चुका है । वह बाल-विधवा है । स्वभाव की सहज, चंचल और आकर्षक है । उसका हृदय स्नेह वंचित है । भाभियाँ उस पर व्यंग करती हैं । भाभियों का हास-विलास उसको लोलुप बना देता है और वह गोबर को अपने वश में कर लेती है । अपराधी होने पर दीन बन कर सारी स्थिति को संभालती है । सिलिया चमारिन और मातादीन ब्राह्मण का जारज पुत्र रामू भी निम्नवर्ग का शिशु पात्र है । यह बड़ा ही चंचल और आकर्षक बालक है । अपनी माता तथा गांव का प्रिय-पात्र है किन्तु इस शिशु का देहान्त २ वर्ष में हो जाता है ।

'चुन्नू', 'मंगल' और 'लल्लू' ये तीनों गोबर के शिशु हैं । गोबर, होरी और धनिया का पुत्र है । गोबर के माता-पिता प्रारम्भ में तो प्रतिष्ठित किसान परिवार के थे किन्तु बाद में दरिद्र किसान और तब मजदूर बन जाते हैं । गोबर झुनिया से अवैधानिक सम्बन्ध स्थापित करता और मज़दूर बनकर शहर चला जाता है अत: इसकी आर्थिक अवस्था निम्न वर्ग की हो जाती है और ये तीनों उसके शिशु हैं जिनका दर्शन उपन्यास में दो वर्ष से अधिक आयु में नहीं पाते । प्रथम बालक चुन्नू के जन्म के पहले लोकलज्जा के कारण ही गोबर गांव छोड़कर शहर जाता और मजदूर बन जाता है ।'मंगल' के समय गोबर मिस मालती के यहां माली है । लल्लू के समय झुनिया की तबियत बहुत खराब रहती है अत: वह उस बालक के साथ निर्दयता से पेश आती है और मारपीट कर घर से निकाल देती है । बरसात में इस बालक को दस्त आने लगता है और वह संसार को छोड़ सदा के लिए अनन्त विश्राम को चला जाता है ।

-o-

फ – मनोगत

विविध आयु वर्ग का मनोवैज्ञानिक अध्ययन

लेखक अपने चारों ओर फैले हुए जीवन को खुली आंखों देखता है और उसका देखना किसी भी दूसरे व्यक्ति के देखने से भिन्न होता है। 'सामान्य व्यक्ति और कवि में यही अन्तर है कि सामान्य व्यक्ति जिस ध्वनि को कानों से नहीं सुन पाता, कवि के कर्ण कुहरों में वह ध्वनि अनायास पहुंच जाती है। जिन अदृश्य लोकों को सामान्य व्यक्ति देख नहीं पाता, कवि के हाथों में वे हस्तामलक बन जाते हैं। जहां रवि नहीं पहुंच सकता, वहां कवि पहुंच जाता है। 'कवय: किम् न पश्यन्ति' की कहावत इस बात का प्रमाण है कि कवि की दृष्टि अत्यन्त व्यापक होती है।' इस प्रकार कवि परिस्थितियों में अपने व्यक्तित्व का निर्माण करता हुआ जो अनुभव प्राप्त करता है, वह अपनी रचनाओं में उपस्थित करता है। हेनरी हडसन का कहना है कि 'साहित्यकार मूलत: भाषा के माध्यम द्वारा जीवन का अनुभव अपनी रचनाओं में उंडेलता रहता है। निस्सन्देह जीवन के अनुभवों द्वारा ही एक तरफ वह अपने व्यक्तित्व का निर्माण करता है, दूसरी तरफ वह अपने अनुभवों को अभिव्यक्त करने वाली रचनाओं में अपने व्यक्तित्व को अनावृत करता है। आलोचकों का कहना है कि एक ओर हेमलेट और सेटन में शेक्सपियर और मिल्टन का व्यक्तित्व झांकता है तो दूसरी ओर सूर की राधा और तुलसी की सीता में भी कवि के व्यक्तित्व का ही प्रक्षेपण है। इस प्रकार साहित्यकार अपने पात्रों के निर्माण में अपने व्यक्तित्व के अंशों का ही उपयोग करता है। पश्चिम के कई आलोचकों का मत है कि साहित्यकार अपने चरित्र को अपने पात्रों में अभिव्यक्त किए बिना नहीं रह सकता। अपने जीवन में साक्षात् अनुभूति दुःख और सुखों से भरी घटनाओं को वह विभिन्न पात्रों के माध्यम से वैसी ही अनुरूप घटनाओं में चित्रित करता है। 'ब्रेडले का कथन है कि जिस प्रकार शेक्सपियर के जीवन में हेमलेट के रचना के पूर्व' लगातार कई संबंधियों की मृत्यु का दु:ख देखना पड़ा और थियेटर की नौकरी भी छूटने की उसे आशंका बनी रही, ठीक उसी प्रकार हेमलेट को भी संबंधियों की मृत्यु का दु:ख सहना पड़ा और उसके पितृव्य स्वयं उसके पिता का वध करके हेमलेट के राज्याधिकार को

अपहृत करना चाहते थे । इस प्रकार विचार करने पर ब्रेडले इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि सम्भवतः शेक्सपियर अपने जीवन और व्यक्तित्व को ही हैमलेट के रूप में व्यक्त करना चाहता था ।[1]

टी०एस० इलियट ने कलाकार कीरचना और उसके व्यक्तित्व के अन्तस् सम्बन्धों पर विचार करते हुए लिखा है कि कविता मनोवेगों को खोलकर रख देना नहीं प्रत्युत उससे बचना है , व्यक्ति की अभिव्यक्ति नहीं, प्रत्युत व्यक्तित्व से बचकर निकल जाना है । इस आधार पर कुछ आलोचकों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि साहित्य में कलाकार के व्यक्तित्व का वह अंश आता है जिसे व्यावहारिक जीवन में क्रियात्मकरूप से उपस्थित करने में वह समर्थ होता है । दूसरे शब्दों में साहित्य, साहित्यकार के अपने जीवन को देखते हुए भी जीवन का पूरक माना जा सकता है । वस्तुतः व्यक्तित्व इतना व्यापक होता है कि उसे किसी सीमा में बांधा नहीं जा सकता और इसी व्यापकता को ध्यान में रखें तो इलियट कीयुक्ति के बावजूद यह मानना पड़ेगा कि कलाकार के लिए साहित्य में व्यक्तित्व से पलायन का कोई रास्ता नहीं । भारतीय मनीषियों ने भी काव्य में कवि के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति को किसी-न-किसी रूप में स्वीकार किया है । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने तुलसी के ग्रन्थों से उनका व्यक्तित्व इस प्रकार अभिव्यक्त किया है --" तुलसीदास का व्यक्तित्व उनके ग्रन्थों में बहुत स्पष्ट होकर प्रकट हुआ है । अत्यन्त विनम्र भाव सच्ची अनुभूति के साथ अपने आराध्य पर अटूट विश्वास उनके व्यक्तित्व के प्रधान तत्व हैं । उनके सम्पूर्ण साहित्य में यह तथ्य भरा पड़ा है । आराध्य की ऐसी एक निष्ठ भक्ति, ऐसा अनन्य विश्वास और इतनी अखण्ड आस्था संसार के इतिहास में दुर्लभ है । निरन्तर विषपान करने से जो व्यक्ति नीलकण्ठ हो गया था उसके मुँह से आशा और विश्वास की यह वाणी निकली है । इस प्रकार अपने अखण्ड विश्वास और गम्भीर अध्ययन के योग से वे एकदम नवीन जगत का निर्माण कर सके हैं ।"[2] साहित्यकार के जीवन की घटनाओं के समानान्तर उसके द्वारा निर्मित पात्रों के चरित्रों को रखकर परखना देखना सम्भव नहीं हो सकता । यह

१ दशरथ ओझा : "समीक्षा शास्त्र", पृ० २८

२ ,, : ,, पृ०३८

सही है कि साहित्यकार उन्हीं घटनाओं और मनोवेगों को साहित्य में उपस्थित करना चाहता है या करता है, जिससे उसका अत्यन्त घना और निकट का परिचय होता है ।रचना की सफलता और प्रभावोत्पादकता के लिए यह आवश्यक ही है । यदि लेखक केवल निजी जीवन के घेरे में आबद्ध रहे तो उसके साहित्य के विवेच्य विषय की सीमा स्पष्टत: संकुचित हो जायगी । फिर भी यह सही है कि साहित्यकार अपने जीवन को जितने समीप,जितनी निकटता और गहराई से जानता है, वह उतना दूसरों के जीवन को नहीं जानता । इसलिए प्रत्येक साहित्यकार की रचनाओं में हम कुछ ऐसे चरित्र अवश्य पाते हैं, जो उसके अपने जीवन की सच्ची घटनाओं और स्वानुभूत मनोवेगों पर आधारित होते हैं और कुछ ऐसे चरित्र, जिन्हें वह अपने चारों ओर देखता है और जिनका परिचय वह बहुत नजदीक से पाता है ।

प्रेमचन्द के शिशु-चरित्रों का भी एक ऐसा ही स्थूल वर्गीकरण सम्भव है । प्रेमचन्द ने कुछ ऐसे शिशु-चरित्रों की रचना की है, जो उनके जीवन की घटनाओं पर आधारित चरित्र हैं । ऐसे चरित्रों को लेकर जो कहानियां लिखी गई हैं, उन्हें हम आत्मचरितात्मक कहानी मान सकते हैं । दूसरे वर्ग में ऐसे शिशु पात्र हैं,जिन्हें प्रेमचन्द ने अपने युग और समाज में देखा-सुना था ।

अन्य भारतीय लेखकों की तरह प्रेमचन्द की भी जीवन का प्रामाणिक इतिहास हमें नहीं मिलता । यद्यपि यह सही है कि प्रेमचन्द को मरे अभी ३५ वर्ष ही हुए हैं । प्रेमचन्द ने अपनी ऐसी कोई जीवनी नहीं लिखी है । अपने बारे में उन्होंने जो कुछ लिखा है, उससे उनके जीवन की स्थूल रूप-रेखा मात्र ही हो सकती है । अन्य दूसरे स्रोतों से प्रेमचन्द के जीवन के सम्बन्ध में हमें जो ज्ञात होता है वह भी ऐसे अध्ययन के लिए अपर्याप्त है । असल में लेखक के स्थूल घटनाओं का ब्यौरा जानकर ही हम उसके मनोवेगों,विचारों के घात-प्रतिघातों और परिस्थितियों की विभिन्न प्रतिक्रियाओं को सही-सही नहीं जान सकते । जो इन घटनाओं के माध्यम से लेखक में उत्पन्न हुए होंगे । उन्हें सही-सही जानने का एकमात्र उपाय है कि कथाकार स्वयं उन घटनाओं के संस्मरण लिखें । प्रेमचन्द ने अपने जीवन के ऐसे संस्मरण लिखे हैं किन्तु ये व्यापक अध्ययन के

लिए अपर्याप्त हैं । प्रेमचन्द की कहानियों में उनके जीवन से साम्य रखने वाली घटनाओं का जहां चित्रण हुआ है, वहां हम इस अनुमान का सहारा लेने को बाध्य हैं । किन्तु वस्तुत: इनमें अभिव्यक्ति अनुभूति उनकी स्वानुभूतियां हैं । इसी आधार पर हम प्रेमचन्द के उन शिशु-चरित्रों का अध्ययन कर सकते हैं,जिनमें बहुत सम्भव है उन्होंने अपने को प्रक्षेपित किया है ।

प्रेमचन्द का जन्म एक अत्यन्त सामान्य परिवार में हुआ था । वे गरीबी में पले और उनके जीवन का अधिकांश गरीबी में ही बीता । प्रेमचन्द सम्मिलित परिवार के सदस्य थे और सम्मिलित परिवार के समस्त गुण-दोषों का प्रभाव उनके जीवन पर पड़ा । प्रेमचन्द कायुग सम्मिलित परिवार के विघटन का युग था । उसमें विनाश के कीटाणु घर कर चुके थे । औद्योगिक सभ्यता के उदय के साथ सम्मिलित परिवार की असुविधाएं उभर कर आ रही थीं । प्रेमचन्द को अपने शैशव काल से ही उसी सम्मिलित परिवार के रोगग्रस्त जर्जर जीवन का भार ढोना पड़ा था । प्रेमचन्द के जीवन के रूप और गति देने वाली अनेकानेक शक्तियां हैं,जिनमें चार प्रमुख हैं --

१ सम्मिलित परिवार
२ गरीबी
३ सौतेली मां
४ बाल-विवाह

एक तरह से प्रेमचन्द कापूरा जीवन ही अनेकानेक पूर्ण-अपूर्ण कहानियों का पुंज है । उनका जीवन एक ऐसा उपन्यास है,जो अपने विस्तार ,अपनी विविधता और अपने केन्द्रहीनता के कारण अत्यन्त मार्मिक और स्वाभाविक है ।

प्रेमचन्द की जिन कहानियों में शिशु-पात्र आए हैं और जो उपर्युक्त किसी एक विभाजन पर आधारित हैं, या उन मूलभूत शक्तियों का उनपर विशेष प्रभाव है, उनका भी एक वर्गीकरण किया जा सकता है ।

१ सम्मिलित परिवार से सम्बन्ध रखने वाली कहानियां-- "चोरी", "अलग्योझा", "आत्माराम", "स्वर्ग की देवी",

`शंखनाद`, `बेटी का धन` ।

२ गरीबी से सम्बन्धित कहानियां-- `जुर्माना`, `अलग्योझा`, `ईदगाह`, `दूध का दाम`, `बैर का अन्त`, `सौभाग्य के कोड़े`, `मंदिर` `खून सफेद`, `गुप्तधन` आदि कहानियां हैं । उपन्यासों में `रंगभूमि` में मिठुआ की गरीबी का दारुण चित्र है ।

३ सौतेली मां से सम्बन्धित कहानियां-- `अलग्योझा`, `गृहदाह`, `विमाता`, `दो बैलों की कथा` और `दूसरी शादी` हैं । `निर्मला` उपन्यास में भी `सौतेली मां`से सम्बन्धित `जियाराम` `सियाराम` की कहानी है।

बाल विवाह से सम्बन्धित कहानियां-- `अभागी`, `नैराश्यलीला`, `देवी`,आदि हैं ।

पात्रों का अध्ययन विस्तार से करते समय मैंने उनके शिशु-पात्रों पर उक्त दृष्टिकोण से विचार किया है और यथासम्भव पात्रों के चरित्र पर प्रभाव डालने वाली उक्त शक्तियों को प्रकाश में लाया है ।अत: यहां अलग से विवेचना करना पुनरावृत्ति होगी ।

छप्पन विविध आयु वर्ग के शिशुओं में शिशु, शिशु-वर्ग के अन्तर्गत आते हैं । शिशु वर्ग की अवस्था जन्म से आठ वर्ष तक मानी गई है ।मेरे अध्ययन के अन्तर्गत कहानियों में तेरह शिशु बालक-वर्ग के हैं । आठ से सोलह वर्ष तक के लड़कों को बालक माना जाता है, फिर पन्द्रह शिशु-पात्र किशोर-वर्ग में आए हैं । ग्यारह से पन्द्रह वर्ष की अवस्था के बालक को किशोर कहते हैं । अन्य कुछ शिशु पात्र जिनकी चर्चा मेरे अध्ययन-विस्तार के अन्तर्गत हुई है,उनकी अवस्था ठीक-ठीक नहीं दी गई है । फलत: उन्हें इन निर्धारित वर्गों में यथास्थान रखना सम्भव न हो सका है । इन विविध आयु वर्ग के शिशुओं का अध्ययन अगले अध्याय में किया गया है ।

चरित्रों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन

किसी भी व्यक्ति के विकास को प्रभावित करने वाले तत्व हैं आनुवांशिकता और वातावरण । कहानी में हम किसी व्यक्ति की आनुवांशिकता को नहीं ढूंढ सकते,क्योंकि कहानी की परिधि

छोटी होती है । इसमें जीवन के एक क्षण का चित्र होता है । उपन्यासों में अनुवांशिकता का वर्णन हो सकता है,क्योंकि उपन्यास में सम्पूर्ण मानव जीवन का चित्र खींचा जाता है । कहानी में हम शिशु की प्रतिक्रियाओं तथा व्यवहार को देखकर उसकी अनुवांशिकता की चर्चा नहीं कर सकते । अत: प्रेमचन्द की कहानियों में हम भी हम उनके शिशु-पात्रों की अनुवांशिकता का प्रभाव नहीं पा सकते । चिन्तन और मानसिक विकास को भी कहानी में देख सकना सम्भव नहीं है । वहां चिन्तन की बातें आती हैं,किन्तु उनका आधार इतना पुष्ट नहीं होता कि हम किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुंच सकें ।

वातावरणके अन्तर्गत परिवार,शिक्षालय खेलके मैदान, साथी, पुस्तकालय, चलचित्र आदि शिशु पर अपना प्रभाव विशेषरूप से डालते हैं । कहानियों में किसी भी पात्र पर वातावरण का प्रभाव आसानी से जाना देखा जा सकता है । एक प्रकार से बिना वातावरण की सृष्टि किए कहानी का निर्माण सम्भव नहीं । किसी भी व्यक्ति के जीवन की एक झलक के लिए भी तो उसका परिवेश उपस्थित करना अनिवार्य ही है । मनुष्य के इर्द-गिर्द जो कुछ है, वह उसका वातावरणहै और उसके वातावरण का प्रभाव प्रत्येक व्यक्ति पर अबाध रूप से पड़ता रहता है । अत: प्रेमचन्द की कहानियों में उनके शिशु पात्रों पर वातावरण का जो प्रभाव परिलक्षित होता है, उसे मनोवैज्ञानिक ढंग से देखने और समझने की पूरी चेष्टा की गई है । मैंने वय को आधार मानकर उनके शिशु-पात्रों की शारीरिक , ज्ञानात्मक, क्रियात्मक, भाषा, चिन्तन,बुद्धि,खेल,सामाजिक व्यवहार आदि के विकास और प्रतिक्रियाओं का अध्ययन प्रस्तुत किया है ।

(क) जन्म से दो वर्ष के शिशु-पात्रों का अध्ययन

तेंतर नवजात शिशु है । इसका जो चित्रण — प्रेमचन्द ने उपस्थित किया है , वह सहज,सरल तथा मनोवैज्ञानिक है । जन्म के पश्चात् शिशुओं में प्रकाश के प्रति प्रतिक्रिया देखी जाती है ।यह मनोवैज्ञानिक सत्य है। प्रकाश के प्रति शिशु कुछ क्षणों में सम्वेदनशील रहते हैं । प्रकाश में यदि तीव्रता कम हो तो शिशु उस ओर एकटक ताकते रहते हैं । तेंतर का भी चित्र इसी मनोवैज्ञानि सत्य के अनुसार आया है `सामने ताक पर मीठे तेल का दीपक जल रहा था,लड़की

टकटकी बाँधे उसी दीपक की ओर देखती थी और अपना अंगूठा चूसने में मग्न थी ।`

क्रियात्मक विकास

`और अपना अंगूठा चूसने में मग्न थी । चुम चुम की आवाज आ रही थी । उसका मुख मुरफाया हुआ था, पर वह न रोती थी न हाथ-पैर फेंकती थी, इस अंगूठा पीने में व ऐसी मग्न थी मानों उसमें सुधारस भरा हुआ है ।`[1]

`उन्होंने उसे गोद में उठा लिया और उसका मुख चूमने लगे । लड़की को कदाचित् पहली बार सच्चा स्नेह का ज्ञान हुआ । वह हाथ-पैर उछाल कर गुं-गुं करने लगी और दीपक की ओर हाथ फैलाने लगी । उसे जीवन ज्योति-सी मिल गई ।` शिशु के क्रियात्मक तथा संवेगात्मक प्रतिक्रियाओं के आधार पर लेखक का चित्रण मनोविज्ञान तथा खरा है । लेखक की संवेदनाओं में तीव्रता आ गई है ।

...... ` इस भांति कोई एक महीना गुजर गया, लड़की हृष्ट-पुष्ट हो गई, मुख पुष्पके समान विकसित हो गया । आँखें जाग उठीं । शिशुकाल कीसरल आभा मन को हरने लगी ।`[2] उचित भोजन पाने के पश्चात् शिशु के स्वास्थ्य में विकास तथा उसकी परिपक्वता आ गई है ।

एक अस्वस्थ द्विवर्षीय शिशु की ज्ञानात्मक, भावात्मक, संवेगात्मक और क्रियात्मक प्रतिक्रियाओं का चित्रण :--

उसने लड़के बच्ची को गोद में उठाया और फाड़ू लेकर सड़क पर जा पहुंची । मगर वह दुष्ट गोद से उतरती ही न थी । उसने बार-बार दरोगा के आने की धमकी दी । अभी आता होगा, मुझे भी मारेगा, तेरे भी कान काट लेगा । लेकिन लड़की को अपने नाक-कान कटवाना मंजूर था, आखिर जब वह डराने-धमकाने,पुचकारने किसी उपाय से न उतरी तो अलारक्खी ने

---

१ प्रेमचन्द : `मानसरोवर` भाग३,पृ०१०१

२ ,, : ,, ,, पृ०११०

उसे गोद से उतार दिया और रोती-चिल्लाती छोड़कर झाड़ू लगाने लगी । मगर वह अभागिन एक जगह बैठकर रोती भी न थी । अलारक्खा के पीछे लग गई । बार बार उसकी साड़ी पकड़ कर खींचती, उसकी टांग से लिपट जाती, फिर जमीन पर लोट जाती और एकदम उठकर फिर रोने लगती ।`[1]

भावात्मक ,क्रियात्मक तथा भाषा-विकासों क्रम में दो वर्ष के शिशु का उपक्रम :-

`एकाएक छोटे बच्चेका रोना सुनकर उसने ताका तो बड़ा लड़का चुमकार कह रहा था । भैया तुम रहो, चुप रहो । धीरे-धीरे उसके मुंह पर हाथ फेरता था और चुप कराने के लिए विकल था । जब बच्चा किसी तरह चुप न हुआ तो वह खुद उसके पास लेट गया और उसे छाती से लगाकर प्यार करने लगा, मगर प्रयत्न सफल न हुआ तो रोने लगा ।`[2]

स्नेहधात्री से अलग होने के समय दो वर्ष के शिशु के भाव और प्रतिक्रियाएं

`रुक्मणि दाई के पीछे-पीछे दरवाजे तक आया । मगर दाई ने जब दरवाजा बाहर से बन्द कर लिया तो वह मचल कर जमीन पर लोट गया और अन्मा-अन्मा कहकर रोने लगा । सुखदा ने चुमकारा ,प्यार किया, गोद में लेने की कोशिश की, मिठाई देने का लालच दिया मेला दिखाने का वादा किया, इससे जब काम न चला तो बन्दर,सिपाही,लू लू और हौवा की धमकी दी, पर रुद्र ने वह रौद्र भाग धारण किया कि किसी तरह चुप न हुआ । ... रोते-रोते रुद्र का मुंह और गाल लाल हो गए, आंखें सूज गईं । निदान वह वहीं जमीन पर सिसकते-सिसकते सो गया ।`[3]

यहां हम देखते हैं कि अलारक्खी की लड़की और रुक्मणि की प्रतिक्रियाएं एक ही हैं । दोनों के कारण भले ही भिन्न हैं । अलारक्खी की बेटी माता की गोद से उतरना नहीं चाहती और रुक्मणि अपनी दाई से विलग होना नहीं चाहता । दोनों अपनी इच्छा कीपूर्ति चाहते हैं ।

---

१ कफन और शेष रचनाएं -- मुमांना , पृ० २८

२ प्रेमचन्द : `मानसरोवर, भाग१,पृ०३१

३ ,, ,, भाग७,पृ०४३

डराने-धमकाने ,प्यार करने तथा पुचकारने का कोई प्रभाव उनपर नहीं पड़ता ।

'महातीर्थ' कहानी में रुद्रमणि की शारीरिक तथा मानसिक स्थिति का विकासक्रम भी दिखाया गया है । रुद्रमणि उस दाई के वियोग में दिन-दिन घुलता जा रहा है । अतः उस शिशु के 'चिन्तन-प्रक्रिया' तथा भाषा का दिग्दर्शन होता है ।.....रुद्र को अन्ना कीरट लगाने और रोने के सिवाय और कोई काम न था । वह शान्त प्रकृति का कुत्ता जो उसकी गोद से एक दाण के लिए भी न उतरता था, वह मौन व्रत धारी बिल्ली जिसे ताक पर देखकर फूला न समाता था, वह पंखहीन चिड़िया जिसपर वह जान देता था, सब उसके चित्त से उतर गये ।वह उनकी तरफ आंख उठाकर भी न देखता। अन्ना की जैसी जीती-जागती, प्यार करने वाली, गोदमें लेकर घुमाने वाली, थपक-थपक कर सुलाने वाली, गा-गाकर खुश करने वाली चीज का स्थान उन निर्जीव चीजों में पूरा न हो सकता था । वह अक्सर सोते-सोते चौंक पड़ता, और अन्ना-अन्ना पुकार कर आंखों से इशारा करता, मानों उसे बुला रहा है । अन्ना की खाली कोठरी में घण्टों बैठा रहता, उसे आशा होती कि अन्ना यहां आती होगी । इस कोठरी का दरवाजा खुलते सुनता तो अन्ना-अन्ना कहकर दौड़ता । समझता कि अन्ना आ गई । उसका भरा हुआ शरीर घुल गया, गुलाब जैसा चेहरा सूख गया, मां और बाप उसकी मोहिनी हंसी के लिए तरस कर रह जाते थे । यदि वह बहुत गुदगुदाने या छेड़ने से हंसता तो भी ऐसा ज्ञान पड़ता था कि दिल से नहीं हंसता केवल दिल रखने के लिए हंस रहा है । ....

.... दो साल का लहलहाता हुआ सुन्दर पौधा मुरझा गया ।'[1]

.... अकेले बैठकर कल्पित अन्ना से बातें करता, अन्ना कुत्ता भूंके । अन्ना गाय दूध देती । अन्ना उजला-उजला घोड़ा दौड़े । सबेरा होते ही लोटा लेकर दाई की कोठरी में जाता और कहता अन्ना पानी । दूध का गिलास लेकर उसकी कोठरी में रख आता और कहता -- अन्ना दूध पिला ।

---

1 प्रेमचन्द :'मानसरोवर' भाग ७,पृ०२५३

अपनी चारपाई पर तकिया रखकर चादर से ढांक देता और कहता --अन्ना सोनती है । सुखदा जब खाने बैठती तो कटोरे उठा-उठाकर अन्ना की कोठरी में ले जाता और कहता -- अन्ना खाना खाएगी । अन्ना अब उसके लिए स्वर्ग की वस्तु थी, जिसके लौटने की उसे अबबिल्कुल आशा न थी । रुद्र के स्वभाव में धीरे-धीरे बालकों की चपलता और सजीवता की जगह एक निराशाजनक धैर्य, एक आनन्दविहीन शिथिलता दिखायी देने लगी ।[1]

~~दाई से पुनर्मिलन के बाद रुद्र में परिवर्तन~~

'प्रेमाश्रम', उपन्यास में 'मुन्नी' नामक दो वर्षीय बालिका स्नेहदात्री माता की मृत्यु के पश्चात् मां के लिए हुड़कती है । वह मां ! मां की रट लगा देती । किसी के वश में नहीं आती, संसार की सारी चीजें मिठाई, खिलौना उसके लिए व्यर्थ, स्नेहदात्री की कमी को कोई पूरा नहीं कर सकता । इस प्रकार वह बालिका बीमार पड़ जाती है और चार-पांच दिनों में ही उसका देहान्त हो जाता है । 'महातीर्थ' कहानी में --'रुद्र ने आंखें खोलीं, क्षण भर दाई को चुपचाप देखता रहा तब यकायक दाई के गले से लिपट कर बोला --'अन्ना आई । अन्ना आई !! रुद्र की भाषा कितनी मनोवैज्ञानिक है इसका अध्ययन मनोवैज्ञानिक आधार के अन्तर्गत मैंने प्रस्तुत किया है ।

दाई से पुनर्मिलन के बाद रुद्र में परिवर्तन--रुद्रमणि का पीला मुरझाया हुआ चेहरा खिल उठा, जैसे बुझते हुए दीपक में तेलपड़ जाय । ऐसा मालूम हुआ मानो वह कुछ बढ़ गया है...

... एक हफ्ता बीत गया । प्रात:काल का समय था, रुद्र आंगन में खेल रहा था । इन्दुमणि ने बाहर आकर उसे गोद में उठा लिया और प्यार से बोले -- तुम्हारी अन्ना को मार कर भगा दें ?

रुद्र ने मुंह बनाकर कहा--'नहीं रोएगी ।'[2]

रुद्र के अन्तिम वाक्य 'नहीं रोएगी' में रुद्रमणि अपनी भावनाओं का प्रतिक्षेपण अन्ना पर करता है । वह जानता है कि

---

१ प्रेमचन्द : मानसरोवर, भाग७, पृ० २४३

२ ,, ,, ,, पृ० २४३

अन्मा नहीं ,वही रोगा -- पर अपने रोने तथा दुखी होने की पिछली याद उसके लिए इतना कठोर और निर्मम है कि वह उसे चेतना में लाना नहीं चाहता ।

'बन्द दरवाजा' शीर्षक कहानी में एक ही शिशु 'बच्चा' का ज्ञानात्मक,भावात्मक,संवेगात्मक तथा क्रियात्मक कलापों का दिग्दर्शन कराया गया है । 'सूरज क्षितिज की गोद से निकला, बच्चा पालने से--वही स्निग्धता, वही लाली, वही कुमार ,वही रोशनी ।'

इन दो पंक्तियों में ही प्रातःकालीन जागते हुए शिशु का ऐसा ज्ञानात्मक तथा भावात्मक संवेगों का मनोवैज्ञानिक चित्रण है,जो अन्य शब्दों में व्यक्त करना कठिन है ।

भावात्मक तथा क्रियात्मक कार्यकलाप

'मैं बरामदे में बैठा था, बच्चे ने दरवाजे से झांका । मैंने मुस्करा कर पुकारा । वह मेरी गोद में आकर बैठ गया ।'

'उसकी शरारतें शुरू हो गईं । कभी कलम पर हाथ बढ़ाया, कभी कागज पर । मैंने गोद से उतार दिया । वह मेज़ का पाया पकड़े खड़ा रहा ।... एक चिड़िया फुदकती हुई आई । सामने के सहन में बैठ गई । बच्चे के लिए मनोरंजन का यह नया सामान था । उसकी तरफ लपका । चिड़िया ज़रा भी न डरी । बच्चा समझा अब वह परदार खिलौना हाथ आगया । बैठकर दोनों हाथों से चिड़िया को बुलाने लगा । चिड़िया भाग गई, निराश बच्चा रोने लगा ।'

'गरम हलवे की मीठी पुकार आई । बच्चे का चेहरा खिल उठा । खोंचेवाले सामने से गुजरा । बच्चे ने मेरी तरफ याचना की आंखों से देखा । ज्यों-ज्यों खोंचेवाला दूर होता गया, याचना की आंखें रोष में परिवर्तित होती गईं । यहां तक कि जब मोड़ आ गया और खोंचेवाला आंख से ओझल हो गया तो रोष ने पुरशोर फरियाद की सूरत अख्तियार की । मगर मैं बाजार की चीजें बच्चों को नहीं खाने देता... ।

.... मैंने आंसू पोंछने के ख्याल से अपना फाउन्टेनपेन उसके हाथ में रख दिया । बच्चे को जैसे सारे ज़माने की दौलत मिल गई ।

उसकी सारी इन्द्रियां इस नई समस्या को हल करने में लग गईं ।`

एकाएक दरवाजा हवा से खुद-ब-खुद बन्द हो गया । पट की आवाज बच्चे के कानों में आई । उसने दरवाजे की तरफ देखा । उसकी व्यस्तता लुप्त हो गई । उसने फाउण्टेनपेन को फेंक दिया और रोता हुआ दरवाजे की तरफ चला, क्योंकि दरवाजा बन्द हो गया था ।` इस परिच्छेद में उस शिशु का ज्ञानात्मक विकास है कि दरवाजा बन्द होते ही उसकी चेतना लौटती है कि अब अन्दर न जा सकेगा ।[1]

नवीन चीजों की ओर आकर्षण

`गोदान` का चुन्नू -- `बच्चा इन चीजों की ओर लपक रहा था और चाहता था, सब का सब एक साथ मुंह में डाल ले, पर झुनिया उसे गोद से उतरने न देती थी ।`[2]

`गोदान` का शिशु मंगल -- .... `बालक मालती की गोद में आकर जैसे किसी बड़े सुख का अनुभव करने लगा । अपनी जलतीहुई उंगलियों से उसके गले की मोतियों की माला पकड़कर अपनी ओर खींचने लगा ।`

+ + +

मंगल ने इस स्वर्ग को कुतूहल भरी आंखों से देखा । छत में पंखा था, रंगीन बल्ब थे, दीवारों पर तस्वीरें थीं । देर तक उन चीजों को टकटकी लगाए देखता रहा ।`[3] .....

` मिस्टर मेहता को भी बालक से स्नेह हो गया था । एक दिन मालती ने उसे गोदमें लेकर उनकी मूंछ उखड़वा दी थी । दुष्ट ने मूंछों को ऐसा पकड़ा था कि समूल ही उखाड़ लेगा । मेहता की आंखों में आंसू भर आए थे ।`[4]

`रामू` गोदान में सिलिया चमारिन तथा दातादीन का जारज पुत्र है । इसमें भाषा-विकास का मनोवैज्ञानिक चित्रण है ।

---

१ प्रेमचन्द : `गुप्तधन` भाग२, पृ०११२-११३
२ ,, : `गोदान` पृ०२०६
३ ,, : ,, पृ० ३३५
४ ,, : ,, पृ०३३६

दो वर्ष का है । अत: शब्दोच्चारक अवयवों की अपरिपक्वता के कारण शिशु की भाषा तुतली है ।

उसकी भाषा में त, ल और य की कसरत थी और स, र आदि वर्ण गायब थे । उस भाषा में 'रोटी' का नाम 'ओटी', 'दूध' का 'तुत', 'साग' का 'छाग' और 'कौड़ी' का 'तौली'[1] ।

शिशु में अनुकरण करने की प्रवृत्ति

रामू में अनुकरण करने की प्रवृत्ति अपने वय के बालकों से अधिक है ।

'जानवरों की ऐसी नकल करता है कि हंसते-हंसते लोगों के पेट में बल पड़ जाता है । किसी ने पूछा -- रामू कुत्ता कैसे बोलता है? रामू गम्भीर भाव से कहता है -- भौं, भौं और काटने को दौड़ता । बिल्ली कैसे बोले ? और रामू म्यांव म्यांव करके आंखें निकाल कर ताकता और पंजों से नोचता[2] ।' यहां हम देखते हैं कि रामू में अति अनुकरण करने की प्रवृत्ति है ।

उसके ये सब व्यवहार दो वर्ष के शिशु के नहीं हैं । ये सब व्यवहार असमान्य है । रामू जाति से भी निम्न, आर्थिक दृष्टि से गरीब और पिछड़ा और सिलिया तथा मातादीन का जारज पुत्र है । इस बात से वह किसी न किसी रूप में अचेतन रूप से अवगत है । अत: अपने को आकर्षण का केन्द्र बनाने के लिए इस प्रकार के नकल करता है ।

अपने से स्नेह करने वालों की ओर जाने की इच्छा प्रकट करना तथा तत्पश्चात उनसे मुंह मोड़ लेने की प्रवृत्ति इस आयु के शिशु में पाई जाती है । उदाहरण स्वरूप 'निर्मला' उपन्यास की आशा और 'कर्मभूमि' के दो शिशु हैं । आशा अपने पिता मुंशी तोताराम की ओर लपकती और फिर मां से चिमट जाती है ।

'कर्मभूमि' में लखनऊ के मुसाफिरखाने का शिशु मुन्नी की ओर रेंगता हुआ आता है, किन्तु ज्यों ही मुन्नी उसे लेने हुए के लिए हाथ बढ़ाती है, वह भाग जाता है । इसी उपन्यास में सुखदा तथा अमरकान्त का पुत्र नैना से सर्वाधिक अधिक हिला है पर सुखदा के जेल जाते समय वह नैना से मुंह

---

1 प्रेमचन्द : 'गोदान', पृ० ३४२, पृ० ४३५
2 ,, : ,, ,, पृ० ३२५

मोड़ लेता है ।

दो से चार वर्ष के शिशु-पात्रों का अध्ययन

'माता का हृदय' कहानी के बालक की स्थिति रुक्मणि से मिलती है । वह भी माता से अधिक अपनी दायी माधवी को प्यार करने लगता है । इसके सम्बन्ध में भी उसकी प्रतिक्रिया रुक्मणि सी होती है । ... माधवी से यह बालक इतना हिल गया है कि एक क्षण के लिए भी उसकी गोद से न उतरता । वह कहीं एक क्षण के लिए चली जाती तो रो-रोकर दुनिया सिर पर उठा लेता । वह सुलाती तो सोता, दूध पिलाती तो पीता, वह खेलाती तो खेलता । उसी को वह अपनी माता समझता । माधवी के सिवा उसके लिए संसार में कोई अपना न था ।'[1]

इस अवस्था का शिशु अपने हाथ-पैर के द्वारा ही खेलता है । पानी या किसी गीली चीज़ को हाथ से लपेटने उसमें छपकने की ओर उसकी प्रवृत्ति होती है और वह इसमें बहुत आनन्द उठाता है । 'कहींकहीं पानी भी जमा हो गया था । बालक को पानी में छपकें लगाने से प्यारा और कौन खेल हो सकता था है । खूब प्रेम से उमग उमग कर पानी में लोटने लगा ।'[2]

भाषा-विकास के क्रम में जहां दो-तीन वर्ष के शिशु में भाषा की अभिव्यक्ति स्पष्ट नहीं होती, वहीं चार वर्ष में उसमें काफी विकास आ जाता है । दो-तीन वर्ष की मुनिया ('अलग्योझा' में) अपने आनन्द को भाषा के द्वारा अभिव्यक्त नहीं कर पाती । उसकी व्यंजनशक्ति और उछल-कूद नेत्रों तक ही परिमित है । वह आनन्द प्रकट करने के लिए तालियां बजा-बजाकर नाचती और कूदती है । किन्तु चार वर्ष की बिन्नी (सुत) और साधो (सुन सबेरेद) में हम भाषा की परिपक्वता पाते हैं । रोहिणी (अनाथ लड़की) ये दोनों बिन्नी और साधो अपने भावों को भाषा के

---

१ प्रेमचन्द : 'मानसरोवर,' भाग २, पृ०१८-१९

२ ,, ,, , पृ०१६-१९

माध्यम से अच्छी तरह अभिव्यक्त करने में समर्थ है ।

'साधो --'मां मुझे बड़ी भूख लगी है, लेकिन तुम्हारे पास तो कुछ नहीं है । मुझे क्या खाने को दोगी ?'[1]

....' मां , मैं न होता तो तुम्हें इतना दु:ख तो न होता, यह कहकर वह फूट -फूट कर रोने लगा ।'[2]

बिन्नी भी समयानुकूल बातें करती है और बहन-बहनोई में जिससे उसे अधिक लाभ की आशा है,उसी के पक्ष में बोलती है ।

पंडित जी ने पूछा -- तू किसकी बेटी है?

बिन्नी -- न बतायेंगी ।

मंगला -- कह दे बेटा, जीजी की बेटी है ।

बिन्नी -- न बताऊंगी ।

पंडित -- अच्छा हम लोग आंखें बन्द किए बैठे हैं , बिन्नी जिसकी बेटी होगी
गोद में बैठ जायगी ।

बिन्नी उठी और फिर चौबे जी की गोद में बैठ गई[3] ।'

चौबे जी मुसकरा कर कहते -- बेटी मार खाओगी ।

बिन्नी कहती -- तुम मार खाओगे, मैं तुम्हारे कान काट लूंगी , जू जू को बुलाकर पकड़ा दूंगी[4] ।'

बिन्नी में अपने से बड़ों के कामों में हाथ बंटाने की प्रवृत्ति है,जो बहुधा इस अवस्था की बालिकाओं में विशेषरूप से होता है --' मंगला रसोई बनाने जाती तो बिन्नी उसके पीछे-पीछे जाती,उससे आटा गूंधने के लिए झगड़ा करती । व तरकारी काटने में उसे बड़ा मजा आता था[5] ।'

---

१ प्रेमचन्द : मानसरोवर ,भाग८,पृ०७
२ ,, ,, पृ ०८
३ ,, ,, भाग४,पृ० १७६
४ ,, ,, ,, ,,
५ ,, ,, ,, ,,

अनाथ लड़की कहानी की रोहिणी भी अपनी मीठी बातों से सेठ पुरुषोत्तमदास जी को अपना संरक्षक पिता बना लेती है ।

चार वर्ष के अनुशासनहीन दो शिशुओं का चित्रण --`स्वर्ग की देवी` में दोनों शोख और शरीर थे । गाली दे बैठना, मुंह चिढ़ा देना तो उनके लिए मामूली बात थी । दिन भर खाते और आए दिन बीमार पड़े रहते ।[1]

बालकों के चिन्तन में या किसी भाव में कृमबद्धता नहीं होती । बच्चे किसी भी बात को जल्दी भूल जाते हैं । उनके चिन्तन आत्मकेन्द्रित होते हैं । ये बच्चे कभी वहां दादा-दादी के लिए रो रहे थे, किन्तु ताख पर फल देखकर सब भूलगए और फल खाने में लीन हो गए ।

३ चार से छः वर्ष तक के शिशु पात्रों का अध्ययन

बालकों की इच्छाओं का विरोध करने पर उनमें क्रोध होता है । बालक अपने क्रोध की अभिव्यक्ति शारीरिक क्रिया द्वारा करते हैं, रोना, चिल्लाना, हाथ पैर पटकना आदि । परिवार के सभी बच्चे मिठाई खा रहे हैं । `धान` की माता उसके लिए खरीदने क में असमर्थ थी अतः वह `चीखना और अपनी माता का आंचल पकड़ कर दरवाजे की तरफ खींचता था` ।

...... वह बेचारी तो इन चिन्ताओं में डूबी हुई थी और धान क किसी तरह चुप ही न होता था । जब कुछ वश न चल तो मां की गोद से जमीन पर उतर कर लोटने लगा, और रो-रोकर दुनिया सिर पर उठा ली ।[2]

लछमन और जुन्नू में बालकों की सहज प्रवृत्ति `यान` के प्रति आकर्षण है । यदि यह यान खेल-खेल में हो या किसी खिलौने का हो तो उसमें इन्हें विशेष आनन्द आता है । खेलमें बालक स्वार्थी

---

१ प्रेमचन्द : मानसरोवर ,भाग४,पृ० १७६

२ ,, ,, ,, पृ० १८४

बन जाता है । यहां दानों भाई एक दूसरे को गाड़ी खींचने को कहते हैं और स्वयं गाड़ी पर चढ़कर मोटर की मजा लेना चाहते हैं । `दुनियां का सबसे अनमोल रतन` शीर्षक कहानी में पांच छ: वर्ष का एक लड़का एक छड़ी को घोड़ा की कल्पना करके खुश है--` इसी भीड़ में एक खूबसूरत भोला-भाला लड़का एक छड़ी पर सवार होकर अपने पैरों पर उछल-उछल कर फर्जी घोड़ा दौड़ा रहा था और अपनी सादगी की दुनिया में ऐसा मगन था कि जैसे वह सचमुच अरबी घोड़े का शहसवार है ।[१]` अत: दोनों बालकों में एक ही मनोविज्ञान है काल्पनिक वस्तु से सवारी का आनन्द प्राप्त करना ।

`हामिद की अवस्था पांच वर्ष छ की है । उसकी बातचीत तथा कार्य-कलापों से उसकी मानसिक आयु अधिक है । बाल स्वभाव के जो तत्वउसमें वर्तमान हैं,उसे इस प्रकार संक्षेप में उपस्थित किया जा सकता है --

(क) त्योहारों के अवसर पर शिशुओं की अत्यधिक प्रसन्नता, पैसा उनके आनन्द का विशेष साधन, मित्रों के बीच पैसा गिनने रखने और फिर गिनने की प्रवृत्ति पैसे के अनुसार आयोजन बनाने की अभिलाषा ।

(ख) मृत व्यक्ति के प्रति सुन्दर तथा आशामय कल्पना ।

(ग) भूत-प्रेतों तथा रहस्य मय या गुप्त बातों के प्रति जिज्ञासा, अपने समूह में इन बातों की चर्चा ।

(घ) बड़े बूढ़ों को चिढ़ाना, बगीचा आदि में ढेले फेंकना ।

(ङ०) खिलौने लेकर मित्रों क में प्रतिद्वन्द्विता का भाव, वाद-विवाद में अपने पक्ष का समर्थन चाहना । यथा सम्भव अपनी व्यावहारिकता कुशलता और बुद्धि का प्रदर्शन ।

(च) खिलौना नया होने पर उससे अत्यधिक मोह । यहां तक कि थोड़ी भी देर के-लिए दूसरों को छूने न देना ।

शारदा की अवस्था पांच वर्ष की ह । उसमें मिठाई तथा खिलौनों के प्रति आकर्षण है । मिठाई का प्रलोभन देने वह किसी भी गोपनीय बातों को उगल सकती है । यह प्रवृत्ति लड़कों में भी पाई

---

१ प्रेमचन्द : `गुप्तधन`,भाग १,पृ०२

जाती है जिस प्रकार फेंकू के चरित्र में भी हमने अन्य अध्याय में देखा है । स्थिति की गम्भीरता का अभाव शिशुओं में होता है इस कारण शारदा और फेंकू दोनों से एक ही गलती होती है ।

प्रेमचन्द की अभिव्यक्ति सामाजिक तथा वा सांस्कृतिक मान्यताओं के अनुकूल होती है । इस विकास में बालक को कोई प्रेमोपहार देने में अत्यधिक खुश हो जाते हैं ।

'आधार' का वासुदेव और 'विश्वास' कहानी का एक बालक के प्रेम का विकास व्यक्ति के प्रति अधिक है उस व्यक्ति के प्रति जिन्हें वे जीवन का आधार स्वरूप मानते हैं और जिन पर उनका विश्वास है । अपने प्रेम के प्रदर्शन में वे वहा प्रतिक्रिया करते हैं । जो इस अवस्था के शिशु में होता है । वासुदेव ठुमकता और शर्माता भौजाई की गोद में जा बैठता और कहता है--' हमसे ब्याह करेगी ?'

और मिस्टर आप्टे का पाला हुआ लड़का उनको बचाने के ख्याल से कहता है' हम सिपाही को मालेंगे ।'

किसी भी वस्तु का सम्बन्ध भय से करा देने से शिशु का उत्साह ठण्डा पड़ जाता है इसका चित्रण 'शिकारी' के दो शिशुओं में हम पाते हैं जिसकी अवस्था दो-तीन-चार-पांच वर्ष की है । 'खुदी' शीर्षक कहानी की बालिका मुन्नी तथा 'गोदान' उपन्यास की रूपा दोनों इस आयु वर्ग के अन्तर्गत हैं,किन्तु उनके मनोविज्ञान में अन्तर है । मुन्नी दिलदार नगर की अनाथ बालिका है और रूपा किसान परिवार की ।रूपा अपने पिता होरी का अत्यधिक प्यार पाती है । अत: वह चपल,खुश और बात-बात पर अपनी ज़िद पूरा करने वाली बन जाती है । मुन्नी गांव की प्यारी है पर वह वंचित है । उसका अपना कोई घर नहीं,कोई सहारा नहीं । रूपा से जब सोना मजाक में रूपा(चांदी) की खिल्ली उड़ातीं, चिढ़ाती तो पिता और भाई उसके लिए लड़ते किन्तु मुन्नी से कोई माता-पिता की कहता तो रो पड़ती ।

(४) छ: से आठ वर्ष के शिशु-पात्रों का अध्ययन

इस आयु के बच्चों में हम बुद्धि विकास के तत्व पर विचार कर सकते हैं। मनोविज्ञान कहता है कि बुद्धि का सम्बन्ध वंशानुक्रम से अधिक है वातावरण से कम। बुद्धि वंशानुक्रम से पाई जाती है। सुन्दर तथा वैज्ञानिक वातावरण द्वारा बुद्धि का विकास किया जा सकता है।

यद्यपि कहानियों में किसी पात्र के वंशानुक्रम का विकास या प्रभाव नहीं पाते किन्तु माता-पिता के चरित्र पर लेखक द्वारा थोड़ा संकेत पाने पर उसका कुछ अन्दाज लगा सकते हैं इसमें कोई सन्देह नहीं। उदाहरण के लिए 'दूध के दाम' का सुरेश। सुरेश बेवकूफ है उसका वातावरण उसे और भी परावलम्बी बना देता है। दूसरी ओर मंगल है जो अपनी परिस्थितियों के कारण चतुर बन जाता है। वाद-विवाद में वह सुरेश को हरा देता है।

मंगल का चिन्तन आत्मकेन्द्रित है। वह प्रतिदिन अपनी झोपड़ी के पास जाता और अपने माता-पिता को याद कर रो लेता है। "यहीं उसे स्नेह की सम्पत्ति मिली थी। वही आकर्षण वही प्यास उसे एक बार उस उजाड़ में खींच ले जाती है [1]... मंगल नोंकदार दीवार पर बैठ जाता और आने वाले स्वप्न देखने लगता..."

बालक अपनी-अपनी रुचि तथा परिस्थिति के अनुसार अपना साथी ढूँढ लेते हैं और उसी से खेलते हैं। खेलकी तीन कसौटियां हैं पहली-- यह एक आनन्ददायक प्रक्रिया है। दूसरी बच्चे इसमें स्वतन्त्रता का अनुभव करते हैं। तीसरी कसौटी है कि यह प्रेरणात्मक है। 'नादान दोस्त' शीर्षक कहानी में केशव और श्यामा दोनों भाई-बहन ही एक दूसरे के मित्र हैं। इनके मन में जितनी जिज्ञासा है, उसका निदान वे स्वयं ढूँढना चाहते हैं। माता-पिता दोनों अपने-अपने कामों में लगे रहते, अत: उनके प्रश्नों का उत्तर देने वाला कोई नहीं है। अत: वे गर्मी की दोपहरी में चिड़िया, उसके अण्डे और बच्चे के विषय जिज्ञासा को स्वयं तृप्त करना चाहते हैं। 'पिसनहारी का कुँआँ'

---

१ प्रेमचन्द : 'मानसरोवर', भाग२, पृ०२०३

कहानी की बालिका किसी अन्त:प्रेरणा के आधार पर कुआं खोदने का खेल खेलती है । मंगल अपनी स्थिति के अनुसार ही एक अभागा कुत्ता अपना साथी चुन लेता है,क्योंकि उसके साथ वह स्वतन्त्रता से रह सकता है । गांव के अन्य बच्चे तो उससे घृणा करते हैं । उससे उसे सहानुभूति मिलती है, आनन्दमिलता है ।

मोहसिन,महमुद,नूरे ,सम्मां आदि जो इसी वर्ग के शिशु हैं ब उनके खेल में आनन्द हैं । उनके खेल अनुकरणात्मक भी हैं ।

बालक अपने खेल में एकान्तता को खोजते हैं । "पिानहारी का कुआं " की बालिका भी वैसी ही है ।

मोहसिन, महमुद,नूरे,सम्मां,चिन्तन में सर्वात्मवादी हैं,क्योंकि वे अपने खिलौनों में जीवन तथा संवेग आदि के गुण आरोपित करते हैं । नूरे कहता है " और मेरा वकील कुछ मुकदमा लड़ेगा । सम्मी की धोबिन रोज़ कपड़ा धोयेगी और महमुद तथा उसके दोनों भाई खिलौने का सिपाही लेकर उसकी तरफ से कहते हैं " छोने वाले , जागते रहो" इस वाक्य को देखते ही हमारा ध्यान अनायास शिशु के भाषा-विकास की ओर जाता है-- उच्चारण अवयव की परिपक्वता के कारण शब्दों का अशुद्ध उच्चारण या मुख सुख के अनुसार ही व्यंजनों में परिवर्तन । अब इन बच्चों का खिलौना सिपाही पहरा देते-देते गिर पड़ता है,क्योंकि रात अंधेरी होनी चाहिए और बालक दिन में ही रात का अभिनय करते हैं । उसकी टांग टूट जाती है । बालकों की शल्य चिकित्स शुरू होती है । गूलर का दूध आता है । सिपाही की टांग जोड़ दी जाती ह । इस शल्य चिकित्सा में बालकों की अनुकरणात्मक प्रवृत्ति का दिग्दर्शन होता है । बालक खेल में भावी जीवन की तैयारी करता है । मनोवैज्ञानिकों का यह सिद्धांत इन पात्रों में पूर्ण रूपसे देखा जाता है ।

किसी भी वस्तु का सर्वोत्तम उपयोग करने की चेष्टा हमारी रहती है ।शिशुओं में भी यह प्रवृत्ति पाई जाती है । चाहे वह अनुकरण हो चाहे उनकी स्वाभाविक वृत्ति । महमुदके सिपाही की एक टांग टूटने पर तथा उसकी शल्य चिकित्सा के व्यर्थ होनेब पर सिपाही एक टांग और तोड़कर

सन्यासी बनादिया जाता है । यहां उनमें काल्पनिकता भी दिखाई पड़ती है । जिसका व्यवहार इस आयु के शिशु अपने खेलों में किया करते हैं और एक ही खिलौने को भिन्न-भिन्न रूपों में रूपान्तरित करते हैं ।

बाल-मनोविज्ञान की दृष्टि से 'ईदगाह' प्रेमचन्द की सर्वश्रेष्ठ कहानी मानी जा सकती है । क्योंकि यह कथा मात्र शिशुओं का आधार मानकर लिखी गई है । महमूद, नूरे, सम्मी, मोहसिन आदि शिशु-पात्रों के माध्यम से बालकों का यथार्थ और मनोवैज्ञानिक चित्र उपस्थित किया गया है । इसमें हम बालकों के के चिन्तन, भाषा, खेल, प्रतिस्पर्धात्मकता, कल्पना, सहयोग , सामूहिक भावना आदि सभी पक्षों का सुन्दर विश्लेषण पाते हैं ।

केदार, मोहन, परमानन्द और 'बोझ' शीर्षक कहानी का एक लड़का ये सभी इस वय के हैं । केदार में अपने -पराये का ज्ञान नहीं है । स्नेह के कारण अपने सौतेले भाई को अपने समान मानता है । अपने खेल तथा आनन्द की चर्चा बड़ी उत्सुकता से अपनी माता से करता है ।

'मृतक भोज' कहानी का मोहन खाने-पीने के मामले में स्वार्थी है । उसकी बहन रेवती जब उसके लिए एक पैसे का दही ला देती है तो बिना बहन को पूछे झटपट खा जाता है । दूसरे बच्चों को खाते देख ललचायी दृष्टि से देखता है । बालक स्वभाव से हठी होते हैं, किन्तु कभी-कभी उनका बाल हठ पिघल भी जाता है । जैसे मोहन रोगी पिता के स्नेह को देखकर मोटर लाने की हठ छोड़ देता है ।

'एक आंच की कसर' में परमानन्द की आयु सात वर्ष की है । उसके अनजाने में जब उसके पिता की निन्दा होने लगती है तो वह बड़ी निर्भीकता से पिता का प्रतिउत्तर देता है । क्योंकि वह निर्दोष है ।

दण्ड से शिशु के मन में भय उत्पन्न होता है और वह सच बोलने में डरता है । 'बोझ' कहानी का एक लड़का सहानुभूतिपूर्ण बर्ताव पाकर अपना दोष स्वीकार करता है । 'निर्मला' में सियाराम छः वर्ष का बालक है । विषम परिस्थितियों में वह समझ नहीं पाता कि क्या करे । उसकी विमाता की कृपणता का शिकार बनाता है । इस आयु के बालक स्नेह और अनुशासन में पलना चाहता है व सियाराम दोनों से वंचित है । अतः साधु के

प्रलोभन में आकर घर छोड़ चला जाता है ।

५ आठ से दस वर्ष तक के शिशु पात्रों का अध्ययन-

शिशु के विकास में महत्वपूर्ण स्थान उसके वातावरण का होता है । आठ दस वर्ष की आयु में वातावरण का प्रभाव स्पष्ट देखा जाता है । 'मां' शीर्षक कहानी का बालक प्रकाश जिसकी अवस्था दस वर्ष की है, माता की एकमात्र सन्तान है । माता गुणवती और आदर्शवादिनी है । प्रकाश के चारित्रिक विकास के लिए वह कोई कसर उठा नहीं रखती । अत: प्रकाश हमारे सामने आता है । रूपवान्,बलिष्ठ,प्रसन्नमुख,बल का तेज,साहसी और मनस्वी बालक के रूप में । 'उसके एक-एक अंग में आत्मगौरव की ज्योति निकल रही है , आंखों में दिव्य प्रकाश है--गम्भीर,अथाह और असीम ।'[1]

दूसरी कहानी 'अलग्योझा' में रग्घू है । उसकी भी अवस्था दस वर्ष है, किन्तु माता उसे छोड़कर चल बसी है । उसे सहना पड़ता है विमाता का कठोर और निर्मम प्रहार । दिन-रात कामों में जुटा रहता है । घर के सारे काम उसे करने पड़ते हैं । पिता रग्घू की शिकायत की जरा भी परवाह नहीं करता । रग्घू अनाथ और असहाय है अत: गांव में कोई उसकी तकलीफ सुनने वाला नहीं । सारा गांव उसका दुश्मन है और सब की दृष्टि में वही दोषी है । इस अवस्था में रग्घू निरीह बना हुआ है । एकान्त में जाकर रो लिया करता है ।

'कुत्सा' कहानी की एक बालिका दस वर्ष की आयु में ही समाज की बुराइयों से उसकी कुत्सित भावनाओं से परिचित होती है । कौन नेता शराबी है, कौन समाज सेवक ,चोर और बेईमान तथा देशसेवक केवल मोटर पर हवा खाने ही निकलते हैं,आदिआदि बातों को तर्कपूर्ण ढंग से दूसरों के समीप प्रस्तुत कर सकती है । यद्यपि इन सब बातों का ज्ञान इस आयु की बालिका के लिए अवांछनीय है ।उसके परिवार का वातावरण ऐसा है उसमें बालिका का कोई दोष नहीं । इन तीनों कहानियों में बालकों के चरित्र पर केवल इसी पक्ष का प्रभाव स्पष्टरूप से दिखाये गये हैं ।

---

१ प्रेमचन्द , मानसरोवर भाग१,पृ०५८

`बड़े भाई साहब` कहानी में `मैं` सर्वनाम से सम्बोधित एक नौ वर्षीय बालक अपने अनुभव कहता है-- पढ़ने में रुचि जी न लगाना, हाउटल से निकल कर मैदान में कंकरियां उछालना, फाटक पर चढ़कर आगे-पीछे झुलाना और उसे मोटर का आनन्द लेना, बड़े भाई से डाट सुनना, अपने कामों पर आत्मग्लानि और पश्चाताप करना, भाई की आज्ञा मानना तथा `टाइम टेबल` के अनुसार पढ़ने की प्रतिज्ञा करना , किन्तु अपनी बाल दुर्बलता के कारण,उसमें सफल नहीं होना और फिर वही आदतें , और फिर वही डाट-फटकार आत्म-कथात्मक रूप में वह अपने सारे प्रलोभनों और दुर्बलताओं को कह सुनाता है ।

`चोरी` कहानी में मैं नाम से सम्बोधित लड़का अपने एक दिन की चोरी की कहानी बताता है । चोरी के पकड़े जाने की शंका से वह बार-बार भगवान से अपनी तरफ से हवाई किले बनाता है । चोरी की घटना के सिलसिले में हलधर और उसके छोटे भाई का चित्रण बड़े ही मनोवैज्ञानिक रूपमें हुआ है । जैसे-- `मुझे देखतेही पिता जी ने लाल आंखें करके पूछा --` कहां थे अब तक ?

मैंने दबी जबान सेकहा --` कहीं तो नहीं` अब चोरी की आदत सीख रहा है ,बोल तूने रुपया चुराया कि नहीं ?

मैंने जान पर खेल कर कहा--"मैंने कहा-- मुंह से पूरी बात न निकलने पाई थी कि पिता जी विकराल रूप धारण किए दांत पीसते झट उठे और हाथ उठाये मेरी ओर चले । मैं जोर से रोने लगा । ऐसा चिल्लाया कि पिता जी भी सहम गये । उनका हाथ उठा ही रह गया "।

मार खाने तथा रो-धो लेने के पश्चात् दोनों बालकों के मनोविज्ञान का अर्मोत्कर्ष` में गुड़ चबैना लिए कोठरी से बाहर निकला । हलधर भी उसी वक्त खिलखिलाते हुए बाहर निकले । हम दोनों साथ-साथ बाहर आए और अपनी बीती सुनाने लगे । मेरी सुखमय थी । हलधर की दु:खमय ,पर अन्त दोनों का एक ही था --`गुड़ और चबैना ।` अत: हम यहां इन बालकों का सुन्दर तथा स्वाभाविक चरित्र देखते हैं । `निर्मला`तथा`गबन` उपन्यास में चन्द्रभानु तथा विश्वम्भर दो ऐसी आयु के बालक आए हैं । दोनों मध्यवर्गीय परिवार के हैं । चन्द्रभानु परिवार का अकेला लाडला बेटा है ।

उधमी , अपने से छोटे तथा हमजोली को चिढ़ाने वाला और अपने ज्ञान का प्रदर्शन करने वाला है । गोपी के ये स्वभाव स्वतन्त्ररूप में प्रकाशित नहीं हो पाते ,क्योंकि बड़े भाई रमाकान्त की कनेठियां कब लगें पता नहीं । फिर भी मौकामिलने पर अपने से बड़े भाई गोपी के साथ पतंग और कनकौवे उड़ाता है । एक ही वर्ग, एक ही आयु के होने पर भी पारिवारिक वातावरण के कारण दोनों के व्यवहार में अन्तर है ।

६ दस से बारह वर्ष के शिशु-पात्रों का अध्ययन

'सुभागी' शीर्षक कहानी में सुभागी ग्यारहवर्षीय बालिका है । इस समय वह विधवा हो जाती है । सारे घर में कुहराम मच जाता है ।सुभागी को आश्चर्य होता है ।जीवन में अपने माता-पिता के सिवाय तीसरे व्यक्ति की आवश्यकता वह नहीं समझती । वह रोती है , क्योंकि परिवार के सभी रोते हैं। वह एकान्त में जाकर के दिवा स्वप्न में विचरण करने लगती है । सोचती है,माता के लिए बाजार से अच्छी -अच्छी साड़ियां,कपड़े ला देगी तो माताका क्लेश दूर हो जायगा । इसके चरित्र में तीन मनोवैज्ञानिक तथ्यों का दिग्दर्शन होता है ।

(१) अधिक प्यार पाने पर उसमें कार्यकुशलता तथा दक्षता का आविर्भाव होता है ।

(२) इस आयु में उसका मानसिक विकास उतना नहीं हुआ है कि वह विवाह ,वैधव्य तथा सामाजिक रूढ़ियों को समझ सके । इस आयु की बालिका में इसका विवेक नहीं रहता ।

(३) दुखपूर्ण वातावरण से पलायन की प्रवृत्ति और दिवा स्वप्न में विचरना ।

'सुन सेकड' कहानी की शिव गौरी, आयु दस -बारह वर्ष, स्वभाव की सीधी और सरल, काम करने में निपुण, माता को चक्की पीसने में सहायता देने वाली है । ग्रामीण वातावरण के अनुसार उसका विकास हुआ है । गुड़ियों के ब्याह रचाने में विशेष आनन्द

पातीहै । ग्रामीण बालिका शहरी आदमी को देखकर भयभीत होती है । माता पर अधिक निर्भर रहती है । उसी के संकेतों पर काम करती है ।

'लाटरी' कहानी की कुन्ती अवस्था--ग्यारह वर्ष , छठें कक्षा में पढ़ने वाली , स्वभावकी चंचल बालिका है । इसी स्वभाव के अनुरूप अपने घर में एक ऐसा वातावरण मिल जाता है जिसके सन्दर्भ में इस बालिका की भावनाओं पर पूर्ण प्रकाश पड़ता है । यह विषय है लाटरी जो परिवार का केन्द्रीभूत विषय बन गया है । परिवार के सभी लोगों की आशा-आकांक्षा तथा हवाई किले का एक आधार बना हुआ है । कुन्ती अपनी चंचलता,सरलता और वाक्चातुर्य से अपने भाई द्वारा खरीदी गई लाटरी का रहस्य जान लेती है । बस इसकेबाद सारा घर इस बात को जानलेता है । कुन्ती ने भाई से प्रतिज्ञा तो की थी कि वह लाटरी की बात किसी से नहीं कहेगी । पर वह ऐसी बात को पचा न सकी । कुन्ती के स्वभाव में कुछ बाल विशेषताएं परिलक्षित हुई हैं :-

(१) जादू के प्रति जिज्ञासा-भाव

(२) आभूषण के प्रति आकर्षण

(३) नई बातें बताने की प्रवृत्ति ।

कुन्ती की आभूषणप्रियता 'गबन' उपन्यास की बालिका जालपा में भी देखते हैं । किन्तु जालपा का आभूषण प्रेम इस आयु में जाग्रत नहीं हुआ है, वह तो बचपन का है और पारिवारिक वातावरण में इस अबोध पांच-छः वर्ष की बालिका के मनमेंआभूषण प्रेम की भावना डाल दी गई है । इस वय में अवश्य उसकी आभूषणप्रियता और बढ़ गई है ।

जगतसिंह,आराम और वली मौहम्मद के तीनों बालक एक ही सन्दर्भ में उपस्थित किए गए हैं । इन तीनों की आयु दस-१२ वर्ष के बीच में है और ये सातवीं कक्षा के विद्यार्थी हैं । तीनों जमीन्दार तथा अमीर परिवार से आतेहैं । इनके मन में धन और मर्यादा का झूठा दम्भ है । एक दिन सभी मिलकर स्कूल के बाग को उजाड़ देते हैं । इसी परिवेश में इनका चरित्र उपस्थित किया गया है । इनके चारित्रिक विकास के मूल में जो मनोवैज्ञानिक तथ्य है उसकी ओर इस प्रकार संकेत किया जा सकता है :--

(१) उच्चवर्गीय परिवार के बालकों को अपनी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति और मर्यादा का ज्ञान :- उनमें भी परम्परा से चली आती हुई अभिमान का प्रदर्शन, स्कूल में बागवानी आदि कार्यों को हेय समझने की प्रवृत्ति ।

(२) इस अवस्था के बालकों में विध्वंसात्मक प्रवृत्ति ।

(३) क्रोध के फलस्वरूप किसी भयंकर कार्य कर देने के बाद पश्चाताप ।

(४) सम्भवत: अनुशासन के अभाव में बालकों का आलसी और उद्दण्ड होना ।

(५) स्नेह और सद्भाव से मन परिवर्तन ।

७- बारह से पन्द्रह वर्ष तक के शिशु-पात्रों का अध्ययन

'गुल्ली डंडा' कहानी में 'मैं' सर्वनाम से सम्बोधित पात्र गुल्ली डंडा खेल का बड़ा सजीव चित्र उपस्थित करता है । गुल्ली डंडा के साथ-साथ उसका सम्पूर्ण बाल जीवन अपनी सम्पूर्ण स्वाभाविकता के साथ दृश्यमान हो उठता है । उसके बचपन के दिन एक दृश्य चलचित्र की भांति आता है--'वह प्रात:काल घर से निकलना, वह पेड़ पर चढ़कर टहनियां काटना और गुल्ली बनाना, वह, उत्साह, वह लगन, वह खिलाड़ियों का जमघट (झमघट), वह पदना और पदाना, वह लड़ाई-झगड़े, वह सरल स्वभाव जिसमें छूत-अछूत, अमीर-गरीब का बिलकुल भेद-भाव न रहता था, जिसमें अमीराना चोंचले के प्रदर्शन की, अभिमान की, गुंजाइश ही न थी । यह उसी वक्त भूलेगा जब .... जब । घर वाले बिगड़ रहे हैं, पिता जी चौके पर बैठे वेग से रोटियों पर अपना क्रोध उतार रहे हैं । अम्मां की दौड़ अब केवल द्वार तक है, लेकिन उनकी विचारधारा में मेरा अन्धकार मय भविष्य टूटी हुई नौका की तरह डगमगा रहा है, और मैं हूं, पदाने में मस्त, न नहाने को सुधि है, न खाने की; गुल्ली है तो जरा सी, पर उसमें दुनिया भर की मिठाइयों की मिठास और तमाशों का आनन्द भरा हुआ है ।' कहानी का मनोवैज्ञानिक आधार-सूत्र :-

(१) खेल की तैयारी में बालकों की लगन, उनका जमघट, लड़ाई-झगड़ा आदि ।

(२) खेल के समय अन्य सभी बातों का त्याग ।

(३) बालकों के खेल में अमीर-गरीब जाति-पांत की भावना का अभाव ।

(४) हारने (हारने) पर साथी से खाई हुई वस्तु को मांगने का बाल -स्वभाव ।

(५) बांह के बल से दूसरे को डराने-धमकाने की प्रवृत्ति

(६) साथियों में अपने को बड़ा दिखाने की प्रवृत्ति ।
(७) यात्रा की तैयारी में अत्यधिक प्रसन्नता ।

मेरी पहली रचना में प्रेमचन्द ने स्वयं अपने तेरह वर्ष की आयु की लिखी गई पहली रचना की कहानी लिखी है। रचना की प्रेरणा प्रतिशोध की भावना से मिली । मामू से संबंधित कहानी जो स्पष्टत: इस आयु के बालकों पर अपना प्रभाव डालती है-- अविवाहित मामू का चमारिन के नयन बाणों से घायल होना, चमारों की पंचायत, गांववालों का घर में घुसकर मामू की मरम्मत, उसका महीनों हल्दी-गुड़ पीना ।

प्रेमचन्द जब खेलते या उपन्यास पढ़ते तो मामू उनपर रौब जमाते और उनके पिता से शिकायत करने की धमकी देते । अत: उन्होंने प्रतिशोध की भावना से मामू पर एक नाटक लिखा । बालक के ऊपर सच्चरित्र या मर्यादित व्यक्ति का ही प्रभाव पड़ता है, जो स्वयं अपने में इतना पतित अथवा गिरा हुआ है उसे दूसरों को उपदेश देने का क्या अधिकार -- १३वर्षकी आयु के बालक में यह भावना प्रबल रूप से काम करती है । कभी-कभी इस घटना का प्रभाव बालक के मन पर अमिटरूप से पड़ता है ।

'बड़े भाई साहब' कहानी में बड़े भाई साहब के चरित्र के आधार पर बाल स्वभाव के कुछ तत्व -- (१) बड़ी बहन का छोटे भाई के प्रति अगाध स्नेह तथा उसके लिए त्याग की भावना ।
(२) स्वाभिमान तथा नारीत्व की रक्षा-भावना के लिए एक बालिका में अद्भुत साहस और वीरता का उदय ।

'कप्तान साहब' कहानी में जगत सिंह के माध्यम से एक अपराधी बालक तथा बिगड़े हुए बालक का चित्र प्राप्त होताहै । माता-पिता से पैसा न पाने पर चोरी की आदत लगती है तथा उचित निर्देशन के अभाव में बालक बिगड़ जाता है । शिशु के चरित्र-निर्माण में उसके वातावरण का बड़ा हाथ होता है । जगतसिंह स्वभाव से ही नटखट,शैतान,आवारा और घुमक्कड़ है,किन्तु समय-समय पर वह अपने वातावरण का कठपुतला सा नजर आता है ।

`डाकमुल के कैदी` में कृष्णचन्द्र के माध्यम से माता-पिता के संस्कारों का प्रभाव शिशु पर पड़ता है, इसका मनोवैज्ञानिक चित्रण प्रेमचन्द ने उपस्थित किया है । प्रेमचन्द की कहानियों में `पिसनहारी का कुँआ` शीर्षक कहानी में भी माता-पिता की चिन्ताग्रसित भावना का एक संस्कार के रूप में एक बालिका का जन्म होता है । यह भावना शैशव में ही बड़ी दृढ़ और सशक्त है इसी की प्रेरणा से वह बालिका मामूली खेल को भी कर्तव्य को पूरा करने का माध्यम बना लेती है । इसकी पूर्ति ही उसके जीवन की सार्थकता है । इसकी सिद्धि के बाद उसकी मृत्यु हो जाती है । इसी प्रकार कृष्णचन्द्र माता-पिता की ग्रसित भावना से गोपी की आत्मा लेकर जन्म लेता है । गोपी उसके पिता द्वारा मारा गया मिल-मजदूरों का नेता था । कृष्णचन्द्र के जीवन की सार्थकता है, मजदूरों के नेता का भार वहन् करना(गोपी का स्थान लेना) तथा गोपी के परिवार की शुभ चिन्ता करना । गोपी कीमृत्यु कृष्णचन्द्र के पिताके रिवाल्वर द्वारा होती है और ठीक इसके पन्द्रह वर्ष बाद कृष्णचन्द्र की मृत्यु इसी प्रकार मजदूर नेता के रूप में पुलिस के रिवाल्वर द्वारा होती है ।

अत: इस कहानी में हम माता-पिता के दृढ़ संस्कार को शिशु में पाते हैं । यहां प्रेमचन्द ने इन मनोवैज्ञानिक सत्य का उद्घाटन बड़ी सफलता से कराया है ।

प्रेमचन्द के उपन्यासों में इस आयु-वर्ग के सात बालक हैं ।`वरदान` में बृजरानी और प्रतापचन्द, `प्रेमाश्रम` में मायाशंकर, `रंगभूमि` में मिट्ठू और धीसू , `गबन` में गोपी तथा `निर्मला` में निर्मला । ये सभी बाल-पात्र भिन्न-भिन्न आर्थिक पारिवारिक तथा सामाजिक स्थितियों के हैं ।

मिट्ठू और धीसू निम्नवर्गीय ग्रामीण निर्धन परिवार के हैं । माता-पिता की अशिक्षा तथा अत्यधिक लाड़-दुलार, ग्रामीण सभ्यता से शहरी सभ्यता की ओर अग्रसर होना आदि बातें सब मिल-जुल कर इनके चरित्र को पतन की ओर ले जाती हैं । प्रतिशोध लेनेकी भावना तथा दूसरों को चिढ़ाने तथा उनका मजाक उड़ाने की प्रवृत्ति इन दोनों में है ।

बृजरानी तथा निर्मला मध्यवर्गीय प्रतिष्ठित

परिवार की बालिकाएं हैं । निर्मला पन्द्रह वर्ष की है,अत: इस आयु की बालिकाओं का स्वाभाविक गुण है (क) घर के कामों से जी चुराना(ख) खेलकी और अत्यधिक आकर्षण,(ग) बाजे की आवाज सुनकर दौड़ पड़ना ।

वृजरानी का दर्शन इस उपन्यास में उसके छ: वर्ष की अवस्था में ही होता है । इस समय वह नये मित्र प्रतापसे घुल-मिल जाती है । चिड़ियों की तरह चहकती,तुतली भाषा में सब का मन लुभा लेती है । परिवार की अकेली बालिका तीव्र बुद्धि और अच्छे मित्र के मिलने के कारण उसका मानसिक विकास भिन्न ढंग से होता है । उसमें शिक्षा प्राप्त करने की लगन तथा गृहकार्य की और आकर्षण है ।

किशोरावस्था में बालक अधिक सम्वेदनशील होता है, उसे हम प्रताप, मायाशंकर तथा गोपी में पाते हैं । प्रताप अपनी माता की रुग्णावस्था से विक्षुब्ध होकर वृजरानी के यहां जाता है । वृजरानी को देखकर उसका हृदय अत्यधिक संवेदनशील हो उठता है और रोने लगता है । वृज के हृदय में भी सेवा-भाव का उदय होता है और घण्टों उसकी माता की सेवा करती है ।

मायाशंकर अत्यधिक संवेदनशीलहोने के कारण हीअपने वजीफे के रुपये साथ पढ़ने वाले निर्धन गामीण बालकों में बांट देता है । माता की मृत्यु के पश्चात् छिप-छिप कर रोता तथा छोटी बहन मुन्नी को हृदय से चिपकाये रखता है ।

गोपी कलकत्ते से बहुत जल्दी ऊब कर घर लौटने की रट लगाता है ।

गोपी,मायाशंकर,धीमू तथा मिठुवा सबमें यात्रा के प्रति/आर्कषण नये स्थान देखने की अभिलाषा है । गोपी अपनेभाई को खोजने के लिए कलकत्ता जाने की बात सुनकर खुश हैं, मायाशंकर बनारस से बड़ी मासी गायत्री देवी के पास जाने के लिए प्रसन्न है । मिठुवा और धीमू गांव से शहर तथा बने हुए नए स्टेशन की ओर जाने का आनन्द प्राप्त करते हैं ।

प्रताप और मायाशंकर दोनों बड़े होनहार हैं । इनके किशोरावस्था के शील स्वभाव आदि का दर्शन बचपन में ही पाते हैं ।

प्रतापचन्द के बचपन का चित्रण लेखक के शब्दों में--'जब वह बातें करता सुनने वाले मुग्ध हो जाते । भव्य ललाट,दमक-दमक करता था । इस अल्पायु ही में उसका मुखमंडल ऐसा ज्ञानमय और दिव्य था कि यदि अचानक किसी अपरिचित मनुष्य के सामने आकर खड़ा हो जाता था, तो वह विस्मय से ताकने लगता था ।'[1]

मायाशंकर का चरित्र वह ऐसा समझदार ऐसा मिष्ठभाषी, ऐसा विनयशील, ऐसा सरल बालक था कि थोड़े ही दिनों में गायत्री उसे हृदय से प्यार करने लगी ।'[2]

इन दोनों होनहार बालकों के बचपन की झांकी देकर प्रेमचन्द ने इस मनोवैज्ञानिक सत्य को बड़ी सफलता के साथ हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है । शैशव काल में ही बालक के शील,गुण को देखकर उसके उज्ज्वल भविष्य की कल्पना की जाती है ।

-o-

---

१ प्रेमचन्द : 'वरदान' ,पृ०८

२ ,, : 'संक्षिप्त प्रेमाश्रम' ,पृ०६८

अध्याय--८

-0-

प्रेमचन्द के कुछ श्रेष्ठ बाल-पात्रों का विवेचन

(१) तुलिया, (२) होली की छुट्टी कहानी में 'मैं' (३) रामसरूप
(४) 'बन्द दरवाजा' का शिशु (५) मुन्नी, (६) मरणोपरान्त
अपनी माता या पिता के जीवन के केन्द्र-बिन्दु बनने वाले शिशु-पात्र
(अ) रामू (ब) लल्लू (स) 'मिलाप' शीर्षक कहानी का एक तीन-
वर्षीय शिशु । (७) केशव और श्यामा , (८) मुन्नी तथा रुक्मणि
(९) हामिद ।

-0-

अध्याय--८

प्रेमचन्द के कुछ श्रेष्ठ बाल-पात्रों का विवेचन

प्रेमचन्द के कथा-साहित्य में अनेक ऐसे सन्दर्भ हैं, जिनमें घटनाओं की प्राप्ति शिशुओं और बालकों के द्वारा हुई है। ऐसे प्रसंगों में लेखक ने ऐसी अनेकानेक परिस्थितियां चित्रित की हैं, जिनमें बाल मनोविज्ञान के भोले और निरीह चित्र रेखांकित हो जाते हैं। ऐसी कथाओं में प्रेमचन्द के समदा वर्गगत और सम्प्रदायगत कोई भी बाधा नहीं है। अमीर, गरीब, हिन्दू, मुसलमान, ब्राह्मण और अछूत सभी वर्गों और सम्प्रदायों के बालक उनकी कहानियों, उपन्यासों में जीवन के मार्मिक घटनाओं की सृष्टि करते हैं। बाल-मनोविज्ञान में सबसे अधिक संस्कार जो बालकों में चित्रित किया जाता है, वह निरीहता और भोलापन है। यह प्रवृत्ति अधिकतर खिलौनों अथवा खोमचों की खट्टी-मीठी चीजें खाने में अधिक मुखरित हुई है। बालकों की आभूषणप्रियता केवल कौतुक और नवीनता को लेकर चली है, किन्तु कहीं भी बालकों में उन सरल संस्कारों के अतिरिक्त किसी प्रकार की जटिलता नहीं आने पायी है। ऐसा लगता है कि प्रेमचन्द ने बालकों का एक नया संसार ही निर्मित किया है, जिनके निश्छल और सरल व्यवहारों से जीवन की उमंग और उल्लासप्रियता ही लक्षित होती है। मेरी अपनी धारणा यह है कि यदि इस बाल-समाज को कथा-भाग से निर्वासित कर दिया जाय तो प्रेमचन्द की अनेक कहानियां और उपन्यास अपना स्वाभाविक आकर्षण खो देंगे। इसलिए इस शिशु और बाल-जगत की समीक्षा करना प्रेमचन्द की कहानी-कला और उपन्यास-कला का एक आवश्यक अंग है। इसी दृष्टि से

इस अध्याय में कुछ विशिष्ट शिशु-पात्रों पर विचार किया जा रहा है जिससे कथा के अन्तर्गत मनोविज्ञान में विशेष अध्ययन किया जा सके । यों तो प्रेमचन्द का प्रत्येक शिशु-पात्र अपने स्थान पर अपरिहार्य है, फिर भी मनोविज्ञान की स्वाभाविकता और महत्ता स्पष्ट करने के लिए कुछ बाल-पात्रों का अध्ययन निम्नलिखित प्रस्तुत किया जा रहा है ।

प्रेमचन्द के शिशु-पात्रों का सविस्तार अध्ययन करने पर उनके कुछ विशिष्ट शिशु-पात्र दृष्टिगत होते हैं ।

'बुलिया' का शैशव हम बुलिया के मुंह से ही सुनते हैं । उसका विवाह पांच वर्ष की आयु में हुआ था, उसका पति सुन्दर और बलिष्ठ था । वह युवक उससे विवाह करके अपने यहां लाया । उसके गहने बनवाने और पैसे भेजने की प्रतिज्ञा कर पूरब कमाने चला गया । वहां से बराबर बुलिया के पास पैसे और पत्र भेजता रहा, किन्तु लौट कर कभी नहीं आया । बुलिया वृद्धावस्था को प्राप्त हुई । वह इस गांव की विशिष्ट प्राणी है । जब उसे विवाह का ज्ञान नहीं था, तब उसका विवाह हुआ ,जब उसे विवाह का ज्ञान हुआ तब वह उसके सुखों से वंचित रही । पति के ऊपर उसकी निष्ठा जीवनपर्यन्त बनी रही । अपनी स्मृतियों के आधार पर अपनी जीवन-गाथा सुनाया करती । गांव की रमणियां उससे हंसी-हंसी में पूछतीं कि उसे उसके फूफा की कुछ याद है या नहीं ? बुलिया का आत्माभिमान मानों जाग उठता । निष्ठा और प्रेम का ज्वार उसके हृदय में उठता । उसके झुर्रियों से भरे मुखमण्डल पर गर्व और यौवन चमक उठता कितना सुन्दर नौजवान था उसका पति । आज तक यहां कोई देखने में न आया । बुलिया ही के मुख से -- 'बड़ी-बड़ी आँखें,लाल-लाल ऊंचा माथा, चौड़ी छाती,गठी हुई देह । ऐसा तो अब यहां कोई पट्ठा नहीं है । मोतियों के से-दांत थे बेटा । लाल-लाल कुरता पहने हुए था । जब ब्याह हो गया तो मैंने उनसे कहा, मेरे लिए बहुत से गहने बनवाओगे न , नहीं तो तुम्हारे घर नहीं रहूंगी । लड़कपन था बेटा । सरम लिहाज कुछ थोड़ा ही था । मेरी बात सुनकर बड़े जोर से ठट्ठा मार कर हंसे और मुझे अपने कंधे पर बैठा कर बोले -- मैं तुझे गहने से लाद दूंगा,बुलिया । कितने गहने पहनोगी । मैं

परदेस कमाने जाता हूं, वहां से रुपया भेजूंगा । तू बहुत से गहने बनवाना । जब वहां से आऊंगा तब अपने साथ सन्दूक भर कर गहने लाऊंगा ।"

विवाह के बाद दुलिया का पहला आग्रह व अपने पति के गहने के लिए था ।" मेरे लिए गहने बनवाओगे नहीं तो तुम्हारे घर नहीं रहूंगी ।" इस छोटी सी पांच वर्षीय ग्रामीण बालिका के मन में आभूषण के प्रति प्रेम है । उसके माता-पिता गरीब थे । विवाह नहीं दे सकते थे । अत: उसका डोला हुआ था । आभूषण एक ऐसी वस्तु है जो ग्रामीण बालाओं को विवाह के बाद ही पति द्वारा मिल सकती है, उस बालिका के मन में यह बात है इसीलिए वह पति से गहने की मांग करती है ।

पति द्वारा दिया गया गहना उसका अपना होगा, उसपर उसका अधिकार होगा उसके शरीर को अलंकृत करेगा । बालिका के मन में विवाह के प्रति यही मानसिक प्रतिमा है ।

प्रेमचन्द के उपन्यास "गबन" में भी इसी प्रकार एक बालिका "जालपा" के हृदय में आभूषण-प्रेम पाते हैं । यह बालिका मध्यवर्गीय शहरी परिवार की है । दुलिया निम्नवर्गीय ग्रामीण परिवार की है ।जालपा का आभूषण प्रेम उसके परिवार तथा वातावरण द्वारा जगाया हुआ है । इकलौती सन्तान होने के कारण वह आभूषण ही में पलती है । उसके पिता दीनदयाल जब कभी प्रयाग जाते तो उसके लिए कोई न कोई आभूषण अवश्य लाते । उनकी व्यावहारिक बुद्धि में यह विचार ही न आता था कि जालपा किसी और चीज से भी खुश हो सकती है या उसके लिए खिलौने भी चाहिए । परिवार की अन्य स्त्रियां उससे गहने तथा ससुराल की ही चर्चा करती ।

जब वह तीन वर्ष की अबोध बालिका थी, उस वक्त उसके लिए सोने के चूड़े बनवाये गये थे । व दादी जब उसे गोद में खिलाने लगती ,गहनों की चर्चा करती । तेरा दुलहा तेरे लिए बड़े सुन्दर गहने लायेगा । ठुमक-ठुमक कर चलेगी ।

जालपा पूछती—चांदी के होंगे या सोने के दादी जी ।

दादी कहती -- सोने के होंगे बेटी, चांदी के क्यों लावेगा ? चांदीके लावे तो तुम उठाकर उसके मुंह पर पटक देना ।

मानकीछेड़कर कहती-- चांदी के तो लावेगा ही । सोने के इसे कहाँ मिले जाते हैं । जालपा रोने लगती । इसपर बूढ़ी दादी मानकी घर की महरियां पड़ोसिनें और दीनदयाल सब हंसते हैं । उन लोगों के लिए यह विनोद का अशेष भण्डार था ।[1]

जालपा के आभूषण प्रेम का कारण ज्ञात है पर तुलिया के आभूषण प्रेम का कारण अज्ञात है । शहर की बालिकाओं में गहने उपहारस्वरूप भी प्राप्त होते हैं किन्तु ग्रामीण बालिकाओं में इसका सम्बन्ध विवाह से ही स्थापित होता है । बालिका के मन में विवाह का अर्थ बाहरी धूम-धाम, गहने,सजी हुई दुलहिन, बाजे-गाजे,प्रीति-भोज (खाना-पीना) से है । विवाह में दुल्हा-दुलहन केन्द्र होते हैं । वे सब के चर्चा तथा आदर के विषय होते हैं । बालक में अपने को बड़ा दिखाने, अपने को समाज में विशिष्ठ स्थान रखने की प्रवृत्ति होती है[71] । यही कारण है कि बालक अपने पिता के कन्धे पर चढ़कर कहता है मैं तुमसे बड़ा हूं । वह कुर्सी पर चढ़कर अपने से बड़ों से नपाता और कहता मैं तुमसे बड़ा हूं । बालकों की यह प्रवृत्ति ५-६ वर्ष की आयु में होती है । वह भी जिस वातावरण में रहता है,उसका केन्द्र-बिन्दु बनना चाहता है । वह सब का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट रखना चाहता है । तुलिया में इसी कारण विवाह में बनी हुई केन्द्र-बिन्दु दुलहिन बनने की आकांक्षा है और विवाह का सम्बन्ध गहने से उसके मन में यह बिम्ब है ।

शैशव में जिस किसी के प्रति निष्ठा हो जाती है, वह जीवनपर्यन्त बनी रहती है । शैशव के किसी के प्रति प्रेम, क्रोध भय, घृणा आदि का भाव जीवन में स्थायी रूपसे रह जाता है । तुलिया के मन में पति के प्रति जो निष्ठा का भाव उत्पन्न होता है वह जीवनपर्यन्त रहता है । वह अपने सतीत्व पर किसी प्रकार आंच न आने देगी । अपने पति के प्रेम में अडिग बनी रहती है ।

---

१ प्रेमचन्द : 'गबन',पृ०२४,परि०२

'होली की छुट्टी' कहानीमें में सर्वनाम से प्रेमचन्द ने स्वयं अपने बचपन की एक घटना का वर्णन बड़े ही सच्चाई के साथ किया है । यह है अम्मां की अनुपस्थिति में तीन महीने के अन्दर दो मटके गुड़ खाकर खतम कर लेना । इस कहानी में प्रेमचन्द ने आत्मसंस्मरणात्मक रूप में इस घटना का सही उल्लेख किया है । इस घटना के साथ बाल्यावस्थाके पवित्र मन की झांकी मिलती है । मीठी वस्तु से कितना प्रलोभन होता है,उससे बचने का लाखों प्रयत्न करने के बाद भी बालक अपने को बचा नहीं पाता । बालक ईश्वर से कितना निवेदन करता है कि हे प्रभु! उसे शक्ति दो कि वह फिर गुड़ चोरी करके न खाये । अपने मन को इतना समझाता कि अधिक गुड़ खाने से बरसाती व घाव होंगे, गन्धक के मलहम लगाने पड़ेंगे कोई समीप नहीं बैठेगा , दुर्गन्ध निकलेगी किन्तु इतना सोचने,अपने मन में शक्ति बटोरने के बावजूद भी वह गुड़ की चोरी करता और एक हांडी गुड़ खतम कर देता है । अब दूसरी हांडी की नौबत आती है । इसी बीच में तीन दिनों की छुट्टी में वह अपनी अम्मां के पास जाता है । अम्मां पूछती है कि गुड़ में कहीं चीटियां तो नहीं लगीं, सीलन तो नहीं आई और यह बालक मटके की ओर न देखने की कसम खाकर अपनी ईमानदारी का परिचय देता है ।अत: अम्मा सगर्व नेत्रों से देखकर उसमें से एक हांडी गुड़ निकालने की अनुमति देती है । बस फिर क्या, घर लौटने पर फिर गुड़बाजी शुरू होती है । यह गुड़बाजी ऐसी कारण बन जाती है कि उस बालक को अकेले बिना अभिभावक के अपने ऊपर नियन्त्रण करना कठिन हो जाता है । किन्तु फिर भी वह अपने को समझा-बुझा कर उस कोठरी में ताला लगाकर कुंजी को उस दीवार कीसंधि में फेंक देता है । किन्तु फिर निकाले हुए गुड़ के समाप्त होने पर वही बेचैनी । किसी काम में मन नहीं लगता । तबियत खोई हुई सी रहती है । अन्त में इस बालक के मन में तर्क-वितर्क शुरू होते हैं ? अम्मां ने मनाही क्यों की गुड़ खाने की ? उन्हें उचित काम से अलग रखने का क्या अधिकार है ? यदि वे मना करें कि खेलने न जाओ, पेड़ पर न चढ़ो, तालाब में तैरने मत जाओ या तितलियां मत पकड़ो

तो क्या मैं मान लूंगा ? आखिर गुड़ आज खाना ही है, एक महीने बाद भी खाना ही है । यहां बालकों के मन में अन्तर्द्वन्द्व होने का सुन्दर मनोविज्ञान दिखाया गया है । लेखक प्रेमचन्द अभिभावकों की ओर इंगित करते हैं कि Don't (निषेध) कितना हानिकारक होता है, यह बाल-मन को किस प्रकार कुंठित बनादेता है ।बालकों को किसी काम को मना करते समय उसका कारण स्पष्ट कर देना चाहिए ताकि बालक समझ कर उस काम को न करे ।

माता की निषेधात्मक आज्ञा पर अत्यधिक तर्क-वितर्क करने के पश्चात् वासना ने फिर से उसे परास्त किया । तड़के उठकर उसने कुदाल लेकर दीवार खोदना शुरू किया। आध घण्टे के घनघोर परिश्रम के बाद कोई एक गज लम्बा तीन इंच मोटा चप्पड़ गिर पड़ा और उस छेद के से कुंजी मिली । झटपट दरवाजा खोला,मटके से गुड़ निकाल कर हांडी में भरा और दरवाजा बन्द किया । अब इस मटके में झांकने से साफ पता चलता था कि इसमें से गुड़ निकाला गया है ।

अम्मां की वापसी तक गुड़ खतम न हो जाय इस भय से उसने कुंजी कुएं में डाल दी । लेकिन इसके बाद भी वह अपनी वासना पर विजय न प्राप्त कर सका । ताला तोड़ा, मटके के खाली हो जाने पर उसे फोड़ कर कुएं में डाल दी और अम्मां के आने पर रो-रोकर मटके की चोरी होने की कहानी कही ।

इस पूरी घटना में बाल्यावस्था में उठने वाली वासना, उससे अन्तर्द्वन्द्व और उसकी जय-पराजय की कहानी है । आत्मबल होते हुए भी लाख चेष्टा करने पर हम वासनाओं द्वारा पराजित होते हैं ।

इस कहानी में किशोरावस्था का मनोविज्ञान है । इस अवस्था में बालक न बच्चा तथा वृद्ध होना चाहता है । इस अवस्था में बालक अच्छा या बुरा जिस दिशा की ओर ले जाया जाय, उस दिशा की ओर जाता है । यह अवस्था बड़ी ही नाजुक है तथा अभिभावकों का कर्तव्य है कि बड़े ही मनोविज्ञान ढंग से इस आयु में बालकों के साथ व्यवहार करें उनकी शिक्षा - दीक्षा पर सतर्कता

पूर्वक ध्यान दें । दूसरी स्थिति उनके प्रत्येक प्रश्नों का उत्तर उनके विवेक, विचार तथा तर्क पर उचितरूपसे ध्यान दें । निषेधात्मक आज्ञा से उनके सम्पूर्ण जीवन में एक कुंठा उत्पन्न हो सकती है और उनका पूरा जीवन बर्बाद हो सकता है । लेखक कहता है कि अम्मां को बताना चाहिए था सब गुड़ न खाना और क्यों न खाना ।

इस समय बालक भला और बुरा को समझना चाहता है इसलिए उनका निर्देशनउचित रूप से होना है ।

आधुनिक युग में स्कूलों तथा कालेजों में जो अनुशासनहीनता देखी जाती है, उसका कारण यह है कि बालकों को उचित मार्ग पर चलने का ठीक निर्देशन नहीं है । जो बालक अपरिपक्व दिमाग के होते हैं वे ही आये दिन हड़ताल आदि में शामिल होते हैं । जिन बालकों को परिवार में उचित शिक्षा नहीं मिली होती है, जिन्हें अच्छा और बुरा कर्तव्य तथा अकर्तव्य का सही अर्थ नहीं मालूम होता है, वेही बच्चे किसी अन्य प्रकार के बहकावे में आकर अनुशासनहीनता का व्यवहार करते हैं । इसलिए इनकी चेतना, ज्ञान या बोध काविकास उचित रूप से होना चाहिए ।

'दूसरी शादी' शीर्षक कहानी का शिशु-पात्र रामसरूप विशेष पात्र है । इस चारवर्षीय बालक का पिता दूसरी शादी करता है । इस घटना से बालक के मन पर क्या प्रभाव पड़ता है ? बस वह अपनी सूर्ख और रंजीदा आंखों से अपने पिता को घूरता नजर आता है । उसमें वह भोलापन और आकर्षण नहीं रह जाता जो दो वर्ष पहले था ।

उसका कुम्हलाया चेहरा और दुःखी आंखें उसके पिता के हृदय में टीस बनकर रह जाती है । सौतेली मां के आगमन पर बाल-मन पर क्या प्रभाव पड़ता है वह उसके चेहरे के एक्सप्रेसन्स से ही पता चलता है ।

मनुष्य के चेहरे पर उसके आन्तरिक विचार तथा भाव प्रकट हो जाते हैं । यहां पिता के भाव उसके चेहरे पर झलकते हैं —

पहले एक परिवार था उसमें तीन प्राणी थे ।अब तीन प्राणी हैं पर परिवार दो हैं । इन तीन के बीच बालक अपना नहीं है । पिता का परिवार बदल गया है । यह बात सदा पिता के मन में खटकती है और उसके चेहरे पर प्रकट हो जाता है । बालक बड़े ही संवेदनशील होते हैं वे माता-पिता के चेहरे से ही उनके हृदय के भाव जान जाते हैं, दो-चार वर्ष के शिशुओं में यह भावना अधिक पाई जाती है । माता के उदास होने पर शिशु दूध नहीं लेता माता के मुंह को निहारता है । चार वर्ष का शिशु प्रेम,घृणा, आनन्द,उदासी सभी भावनाओं को चेहरा देखकर जान जाता है और उसी के अनुसार उसकी प्रतिक्रिया होती है । रामसरूप में भी यही बात है ।

'बन्द दरवाजा' में शिशु के एक मनोवैज्ञानिक सत्य को हमारे सामने रखा गया है । जब तक कोई चीज बालक के सामने खुली पड़ी रहे उसे कोई परवाह नहीं पर ज्यों ही उस वस्तु को उसके पास से हटा दी जाती है। वह उसे पाना चाहता है, मानों उसकी चेतना उस वस्तु के लिए जाग उठती है ।

प्रात:काल में एक शिशु पालने से निकला , जैसे सूर्य क्षितिज की गोद से । शिशु में वही नवीनता, वही लालिमा, वही खुमार, वही प्रकाश है, जो नवोदित सूर्य में । बालक निकला बरामदे में,दरवाजे से अब झांका, लेखक ने पुचकार कर बुलाया, वह आकर गोद में बैठ गया ।

इसके बाद चहकती हुई एक चिड़िया आई बालक उसके पीछे । दोनों हाथों से उसे बुलाने लगा । चिड़िया उड़ गई । बालक रोने लगा ।

रास्ते से 'गरम हलवे' की ध्वनि आई । बालक ने याचना भरी दृष्टि से लेखक की ओर देखा । लेखक ने सोंचेवाले को न बुलाया । उसकी याचना भरी दृष्टि रोष भरी दृष्टि में परिवर्तित होती गई । आंसू छलक आये । लेखक ने फाउण्टेपैन थमा दिया । बच्चे को मानो सारे जमाने की दौलत मिल गई । वह उसी में व्यस्त रहा । अचानक दरवाजा बन्द

हुआ । पट की आवाज आई । बालक ने उस ए तरफ देखा । उसकी व्यस्तता तत्क्षण लुप्त हो गई । फाउण्टेनपेन फेंक कर रोता हुआ दरवाजे की ओर भागा।

यह सम्पूर्ण घटना प्रात:काल में होने वाली थोड़ी ही देर की है,किन्तु शिशु मनोविज्ञान का कितना सुन्दर चित्रण है ।

बालक का मन अस्थिर होता है । वह किसी एक बात पर अपने मन को अधिक देर के तक केन्द्रित नहीं कर सकता ।रवीन्द्रनाथ ठाकुर के 'काबुलीवाला' कहानी की बालिका 'मिनी' इसी प्रकार चपल स्वभाव की है । उसका मन स्थिर नहीं --बार-बार बाहर जाती, बार-बार लेखक से अनेक प्रश्न पूछती है, जैसे --

'सबेरे में अपने उपन्यास के सत्रहवें परिच्छेद को लिखने जा रहा था कि मिनी ने आकर शुरू कर दिया,'बाबू,रामदयाल दरबान काक को कौवा कह रहा था । वह कुछ नहीं जानता है, है न बाबू ?

संसार कि भाषाओं की भिन्नता के विषय में मं उसे कुछ ज्ञान-दान करने को ही था कि उसने दूसरा प्रसंग छेड़ दिया । 'सुनो बाबू, भोला कह रहा था कि आसमान से हाथी सूंड से पानी गिराता है और तभी बारिश होती है । हाय! अम्मा, भोला झूठमूठ को इतना बकता है! बस बकता ही रहता है, दिन-रात बकता रहता है बाबू !'

इस बारे में मेरी राय के लिए तनिक भी इन्तजार न कर वह अचानक पूछ बैठी --'क्यों बाबू, अम्मा तुम्हारी कौन लगती है ?'

मैंने मन-ही-मन कहा,' साली' और मुंह से कहा, 'मिनी , तू जा, जाकर भोला के साथ खेल । मुझे अभी काम करनाहै ।

तब वह मेरी लिखने की मेज़ के पास मेरे पैरों के निकट बैठ गई और दो घुटने और हाथ हिला-हिला कर फुर्ती से

मुंह चलाते हुए रटने लगी -- 'आगड़ुम-आगड़ुम घोड़ा डुम साजे ।' उस समय मेरे उपन्यास के सत्रहवें परिच्छेद में प्रताप सिंह कंचनमाला को लेकर अंधेरी रात में कारागार की ऊंची खिड़की से नीचे नदी के पानी में कूद रहे थे ।

मेरा कमरा सड़क के किनारे था । यकायक मिनी 'अक्कौ बक्कौ तीन तिलक्कौ' का खेल छोड़कर खिड़की के पास दौड़ी दौड़ी गई और जोर से चिल्लाकर बुलाने लगी -- 'काबुली वाला, ओ काबुली वाला ।'[1]

यहां भी इस बालक का मन एक वस्तु के साथ खेलने पर तुरन्त ही भर जाता और वह दूसरी ओर लपकता है ।

लेखक 'शिशु मनोविज्ञान' से परिचित है । 'हलुवा' बालक के लिए हानिकारक हो सकता था । लेखक बाजार की चीजें बच्चों को खाने नहीं देता । इसलिए बालक के रोष का ख्याल न कर उसके मन को दूसरी दिशा की ओर मोड़ने के लिए उसने पेन दे दिया । उसने बालक को हलवे के लिए कोई नकारात्मक उत्तर नहीं दिया-- बालक इस पेन के साथ बहुत देर तक उलझा रहा मानों सारे जमाने की दौलत मिल गई ।

जन्म से दो वर्ष तक शिशु आकर्षण का केन्द्र होता है । लेखक इसे जानता है । अत: वह इस पालने से निकलने वाले शिशु की तुलना सूर्य से करता है क्योंकि प्रात: काल का सूर्य आकर्षण का केन्द्र होता है ।

प्रात:काल के सूर्य को देखकर सम्पूर्ण दिन का अनुमान लगाया जाता है इसी प्रकार पालना से निकलते हुए शिशु को देखकर उसके सम्पूर्ण जीवन के मनोविज्ञान को समझा जाता है ।

फ्रायड के अनुसार जीवन के आरम्भिक काल -- शैशव में-- यदि माता के दूध से वंचित किए जायं तो यही आगे चलकर धूम्रपान के व्यसन में परिवर्तित हो जाता है । अत: जीवन की प्रारम्भिक इच्छाओं का दमन नहीं करना चाहिए किन्तु बालक के ध्यान को दूसरी ओर केन्द्रित कर देना चाहिए । लेखक, शिशु मनोविज्ञान का ज्ञाता होने के कारण ही बालक

1- 'काबुली वाला' रवीन्द्रनाथ ठाकुर, हिंद पॉकेट बुक्स प्रा० लि०, पृष्ठ सं० 40-41

के चपल मन को पैन देकर हलवे की ओर से हटा देता है, वह अभिभावकों के सामने इस बात को रखता है कि किस प्रकार शिशुओं का ध्यान दूसरी ओर बंटा दें ।

किवाड़ बन्द होने वाली बात में भी जब तक किवाड़ खुली है बालक मां से दूर होने पर भी उसके पास है । वह अपनी मां से अलग रहना नहीं चाहता । दरवाजा बन्द होकर माता से मिलने में एक व्यवधान उपस्थित कर देता है ।

'खुदी' कहानी में दिलदार नगर की मुन्नी एक विशिष पात्र है । वह बेचारी अबोध बालिका अनाथ है । उसकी आयु पांच वर्ष की है । उसे अपनी माता -पिता का स्मरण है किन्तु वे कहां गये, क्या हो गये,उसे नहीं मालूम । वह दिलदार नगर में एक वृक्ष के नीचे खेलती हुई पाई गई । देखने में बड़ी सुन्दर, देखकर लोगों का मन मोह जाता। उसे अपने खाने-पीने की सुधि नहीं रहती । जो कोई कुछ खाने को दो कौर दे देता, वह खा लेती । जहां किसी के घर एक टाट के टुकड़ों को पाती उस पर सो रहती । मुन्नी गांव भर की प्यारी थी । अपनी तुतली वाणी से वह सब को प्रसन्न करती ।

लोग उससे उसके माता-पिता के विषय में पूछते तो वह कहती कि कभी एक देवी थी जो उसे खिलाया करती और एक देवता उसे कंधे पर लेकर खेतों की सैर कराया करता । जब कोई और पूछता तेरे मां-बाप कहां गये तो वह रोने लगती, या कभी यों ही जवाब टालने के लिए आकाश की ओर दिखा कर कहती-- ऊपर ।

जब कुछ बड़ी हुई,कुछ काम करने लायक हुई तब कोई कहता जरा तालाब से कपड़ा धो ला । मुन्नी धोने चलती तो दूसरा कहता जरा कुएं से पानी ला दे । मुन्नी उसे छोड़कर पानी लाने चलती, इसी बीच कोई कहता जरा खेत से साग ला, वह उसे छोड़कर खेत से साग लाने चलती । मुन्नी नहीं समझ सकती किसका काम करे और किसका न करे । जिसका काम नहीं करती वही उससे बिगड़ जाता । वह

सोचती मेरी अम्मा कौन है, मैं तो सब की हूं ।

मुन्नी अनाथ तथा असहाय बालिकाओं का प्रतिनिधित्व करती है । अनाथ बालिका के मन में उठने वाले भाव तथा समाज में होने वाले दुर्व्यवहार का वर्णन है । माता-पिता के बिना बालकों का क्या स्थान है । समाज में कोई उसका अपना नहीं होता । इस बाल पात्रा के माध्यम से अनाथ बालिकाओं की दयनीय स्थिति का मर्मस्पर्शी वर्णन है । यह बालिका अनाथ है,इसमें मुन्नी का अपना कोई दोष नहीं ।

समाज में अनाथ,जारज तथा तिरस्कृत (मानसिक तथा शारीरिक रोगों से पीड़ित) बालक बालिकाएं पाई जाती हैं । उन्हें इस स्थिति में होने का उनका अपना दोष नहीं । अत: उन्हें पूर्ण मानव होने का अधिकार है ।

इस बालिका के माता-पिता नहीं हैं । इसका कोई दोष मुन्नी को नहीं है । अत: उसे इस समाज का पूर्ण सदस्य होने का अधिकार है । यह बालिका तिरस्कृत है उसका अधिकार उससे छिन जाता है। उसके माता-पिता तो नहीं हैं । कोई सगा-संबंधी भी नहीं है । अत: समाज का कर्तव्य है कि इसे सब कुछ दे । (सामाजिक समस्याओं को) आदिकाल से बड़े बड़े लेखक, समाज सुधारक,राजनीतिज्ञ आदि ने हल करना चाहा, किन्तु संभव नहीं हो सका । समाज में सदा असमानता रही । अपने उपन्यासों में लेखक ने वनिता आश्रम 'सेवासदन' आदि की समस्या उठाई,जिससे नारी का कल्याण हो । इस कहानी के माध्यम से प्रेमचन्द ने हमारे सामने मुन्नी को रखकर अनाथालय की समस्या रखी है ।

मुन्नी के चरित्र में हम इस मनोवैज्ञानिक सत्य को देखते हैं कि बालकों में माता-पिता का प्रेम सबसे अधिक होता है । मुन्नी के हृदय में भी वह प्रेम कूट-कूट कर भरा है । अत: वह उन्हें देवी-देवता स्वरूप मानती है और इसी रूप में उनकी चर्चा करती है ।

प्रेमचन्द के समय में अनाथालय या शिशु विहार की कमी थी । प्रेमचन्द मुन्नी को उपस्थित कर समाज का एक चित्र

हमारे सामने रखते हैं और अनाथ बच्चों के लिए कुछ निदान चाहते हैं ।

माता-पिता का प्रेम संसार की किसी भी वस्तु से पूरा नहीं किया जा सकता । इस स्थिति में ऐसे बालकों के प्रति समाज का कर्तव्य और उत्तरदायित्व और बढ़ जाता है किन्तु यहां हम मुन्नी की दयनीय दशा देखते हैं-- वह नहीं जानती कि किसका काम करें किसका न करें । जब किसी का काम नहीं कर पाती तो उसे गालियां और झिड़कियां सुननी पड़ती । कोई खाने को नहीं देता था । अत: समाज में ऐसी संस्थाएं आवश्यक हैं जहां अनाथ, जारज, तिरस्कृत, अंधे, लंगड़े, गूंगे बधिर आदि शिशुओं का उचित पालन पोषण हो ।

माता-पिता का प्रेम बालकों के उचित विकास के लिए सबसे बड़ा तथा सबसे आवश्यक तत्त्व है । इस मनोवैज्ञानिक तथ्य को दृष्टि में रखते हुए अनाथ बच्चों के प्रति समाज का कर्तव्य और उत्तरदायित्व और अधिक हो जाता है ।

प्रेमचन्द की कहानियों तथा उपन्यासों में तीन प्रकार के शिशु-पात्र हैं जो दो-तीन वर्ष की आयु में मर जाते हैं । मर कर वे अपनी माता के जीवन का केन्द्र बन जाते हैं ।

(अ) रामू-- 'गोदान' उपन्यास में सिलिया चमारिन और मातादीन ब्राह्मण का जारज पुत्र है। आयु इसकी दो वर्ष की है । सारे गांव में दौड़ लगाने वाला, चंचल और बहुत बोलने वाला शिशु , अपनी तुतली भाषा से सबको प्रसन्न करने वाला--

सिलिया का बालक अब दो साल का हो रहा था और सारे गांव में दौड़ लगाता था । अपने साथ एक विचित्र भाषा लाया था और उसी में बोलता था चाहे कोई समझे, या न समझे । उसकी भाषा में त, ल और घ की कसरत थी और स र आदि वर्ण गायब थे । उस भाषा में रोटी का नाम 'ओटी' दूध का दूद, साग का धाग और कौड़ी का तौली । जानवरों की बोलियों की ऐसी नकल करता है कि हंसते-हंसते लोगों के पेट में बल पड़ जाता है । किसी ने पूछा -- रामू कुत्ता कैसे बोलता है ? रामू गम्भीर भाव से

कहता -- मौं, मौं ! और काटने को दौड़ता । बिल्ली कैसे बोले ? और रामू म्यांव म्यांव करके आँखें निकाल कर ताकता और पंजों से नोचता । बड़ा मस्त लड़का था । जब देखो खेलने में मगन रहता न खाने की सुधि थी न पीने की । गोद से उसे चिढ़ थी । उसके सबसे सुखी क्षण वह होते जब वह द्वार पर नीम के नीचे मनों धूल बटोर कर उसमें लोटता, सिर पर चढ़ाता, व उसकी ढेरियाँ लगाता घरौंदे बनाता, अपनी उम्र के लड़कों से व उससे एक क्षण न पटती । शायद उन्हें अपने साथ खेलने के योग्य ही नहीं समझता था ।[1]

यहाँ रामू का चरित्र एक सामान्य तथा स्वस्थ बालक का नहीं है । रामू का २ वर्ष की आयु में ही कुत्ते बिल्ली की बोली की नकल कर काटने को दौड़ना आदि हीन भावना का द्योतक है । बालक सामाजिक दृष्टि से पिछड़ा है । यह जारज शिशु है, इसे पिता का प्यार नहीं मिलता । इन सब कमियों की वह अपने अत्यधिक अभिनय द्वारा ही पूर्ति करता है । उसका इस प्रकार मनों धूल से खेलना, अपने सिर पर धूल लगाना आदि में भी हीन भावना के कारण हैं । वह अपने साथ के बच्चों को अपने योग्य नहीं समझता । इसमें अपनी हीन भावनाओं को दूसरों के ऊपर प्रस्थापित (Project) करता है । वास्तव में वही हीन है, सामाजिक दृष्टि से निम्न गिरा हुआ तथा पारिवारिक दृष्टि से पिता के स्नेह से वंचित है । अतः वह अपने हीन भावना को दूसरों के ऊपर आरोपित करके उन्हें ही हीन समझता है ।

कोई पूछता-- तुम्हारा क्या नाम है?
झटपट कहता -- लामू ।
तुम्हारे बाप का क्या नाम है ?
मातादीन ।
और तुम्हारी माँ का ?
सिलिया ।
और दातादीन कौन हैं?
वह अमाला दाला है ।

---

[1] प्रेमचन्द : 'गोदान', पृ० ३४२, परि०३४

न जाने किसने मातादीन से उसका यह नाता बता दिया था।[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि गांव के बड़े बूढ़े भी उस अबोध बालक के मनोभावों से विनोद करने में नहीं सकुचाते हैं। परिणामस्वरूप बालक मानसिक रूप से अस्वस्थ कुंठाग्रस्त हो जाता है।

लेखक ने रामू के जन्म के माध्यम से एक सामाजिक बुराई की ओर ध्यान आकर्षित किया है, ब्राह्मण का अत्याचार चमार पर, उच्च वर्ग का अत्याचार निम्न वर्ग पर। मातादीन सिलिया पर अत्याचार करके उससे अलग हो जाता है, सिलिया इसे सह लेती है पर इस बुराई का शिकार यह अबोध शिशु है। इस सामाजिक बुराई के कारण इस शिशु के मनोविज्ञान पर कितना प्रभाव (मानसिक रूप से) होता है। लोगों का चिढ़ाना, पिता का नाम पूछना आदि इसके मानस पर कैसा प्रभाव डालती होगी इस ओर लेखक ने हमारा ध्यान आकर्षित किया है।

इसके अतिरिक्त हम यह भी जानते हैं कि प्रेमचन्द एक स्वस्थ बालक के मनोविज्ञान से तो परिचित थे ही पर एक अस्वस्थ (कुंठित) बालक के मनोविज्ञान से भी परिचित थे।

(ब) लल्लू इसी प्रकार का एक दूसरा शिशु है। यह झुनिया और गोबर का शिशु है। इसकी आयु भी दो वर्ष की है। इस समय झुनिया बहुत बीमार रहती है, अतः चिढ़कर बच्चे को मार कर घर से निकाल देती है। बालक रोते-रोते बेदम हो जाता है। वह माता का दूध नहीं प्राप्त कर सकता। बरसात में लल्लू को दस्त आता और वह एक सप्ताह की बीमारी में मर जाता है। लल्लू की स्मृति माता के सामने सदा सजीव बनी रहती है अब वह माता के जीवन का केन्द्र बना हुआ है।

---

1 प्रेमचन्द : 'गोदान', पृ०३४३, परि०४

फुनिया को अब लल्लू की स्मृति लल्लू से भी कहीं प्रिय थी । लल्लू जब तक सामने था वह उससे जितना सुख पाती थी, उससे कहीं ज्यादा कष्ट पाती थी । अब लल्लू उसके मन में आ बैठा था, शान्त स्थिर, सुशील और सुहास । उसकी कल्पना में अब वेदनामय आनन्द था, जिसमें प्रत्यक्ष की काली छाया न थी ।.... जीते जी जो उसके जीवन का भार था मर कर उसके प्राणों में समा गया था । उसकी सारी ममता अन्दर जाकर बाहर से उदासीन हो गई ।"

इस शिशु के माध्यम से मातृ-हृदय पर प्रकाश पड़ता है । माता का हृदय अपने शिशु के तकलीफ या पीड़ा को नहीं देख सकता । फुनिया निर्धन है, उसका स्वास्थ्य बिगड़ा हुआ है, उसके पास और बच्चे हैं । वह लल्लू पर उचित ध्यान नहीं दे सकती । लल्लू को माता का दूध नहीं मिल रहा है। अतः लल्लू कमजोर बीमार और चिड़चिड़ा स्वभाव का हो गया है । माता शिशु को इस स्थिति में नहीं देखना चाहती ,बालक का क्लान्त और श्रीहीन शरीर माता के मन पर कष्टदायी प्रभाव डालती है और वह उसे ढकेल कर बाहर कर देती है । लल्लू के मरने के बाद माता के मन में यह भाव है । एक अजीब शान्ति इस बात की है कि अब लल्लू इन सारी पीड़ाओं से मुक्त है ।

हम सब पुरानी स्मृतियों को याद करने में आनन्द उठाते हैं । जीवन के दुःखदायी क्षणों की स्मृतियाँ सुखद स्मृतियों से अधिक सुखदायिनी होती हैं ।

(स) 'मिलाप' शीर्षक कहानी में एक तीन वर्षीय बालक है । यह शिशु नानकचन्द का है । नानकचन्द बहुत बड़े रईस का बिगड़ा हुआ लड़का है । यह अपने पड़ोस की विधवा स्त्री ललिता को भगा ले जाता है । वहाँ उसकी कमला नाम की पुत्री का जन्म होता है । कुछ वर्षों के बाद उसे अपने पिता के देहान्त होने का समाचार मिलता है । तो उसे पिता के धन का उत्तराधिकारी बनने की धुन सवार होती है । वह ललिता और अपनी जारज पुत्री कमला को धोखा देकर नदी में डूब कर मर जाने का षड्यन्त्र रचकर बनारस आता है । वहां एक रईस की लड़की से विवाह करता, प्रतिष्ठित लोगों से मेल-मिलाप

कर मानों अपने किए गए कुकर्म पर पर्दा डाल लेता है । धन पाकर कुछ दिनों के बाद उसके चरित्र की दुर्बलताएं उभर आती हैं । इसके शोहदेपन से इसकी दो स्त्रियां मर जाती हैं । अब तीसरी शादी होती है । तीसरी पत्नी सुन्दर है, उससे एक शिशु का जन्म होता है । इस शिशु के जन्म के बाद नानकचन्द में परिवर्तन होता है । उसका मन गार्हस्थ्य जीवन की ओर आकृष्ट होता है । उनका शोहदापन कम होता है, किन्तु तीन वर्ष के बाद पत्नी और प्यारा शिशु दोनों प्लेग से मर जाते हैं । यह बालक मर कर अपने पिता के दिल पर ऐसा दाग छोड़ जाता जिसका कोई मरहम नहीं । यह अपने पिता के जीवन का केन्द्र बना रहता है ।

हर परिवार में माता-पिता तथा शिशु तीनों मिलकर अपने कर्तव्य का उचित पालन करके ही सुखी परिवार बनाते हैं । इन तीनों में किसी एक के अभाव में परिवार पूर्ण नहीं होता । पति-पत्नी के बीच पारिवारिक सुख तथा आनन्द के लिए शिशु का होना परमावश्यक है । विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक की 'ताई' शीर्षक कहानी में इसका सुन्दर तथा मनोवैज्ञानिक चित्रण है । नानक चन्द के साथ जब दो स्त्रियों से बालक नहीं होता तो उसका शोहदापन बढ़ जाता है, उसको पारिवारिक आनन्द नहीं मिलता, frustrated होकर वह घर से बाहर रहता और बुरी संगति में रहता आदि । किन्तु इस शिशु के जन्म के बाद इसका परिवार सम्पूर्ण परिवार बनता है शिशु का अभाव नहीं खटकता और यह गार्हस्थ्य जीवन की ओर आकृष्ट होता है ।

यहां शिशु का दूसरा पार्ट यह है कि वह अपने पिता के सम्मुख बीती हुई बातों को स्मरण कराता है । इस बच्चे के देहान्त से आनन्द अपनी बालिका कमला को याद करता है ।

'नादान दोस्त' में दो भाई-बहनों के बाल-मन में उठने वाली जिज्ञासा तथा उनका स्वयं निदान करने की कथा है । इनके कार्निस पर चिड़िया ने अण्डे दिए थे । केशव और श्यामा बड़े ध्यान से इसे देखा करते । तीन-चार दिन हो गये । अण्डे से बच्चे निकले होंगे । उनकी

जिज्ञासा बढ़ती गई । दिन-रात मन में वही चिड़िया वही चिड़िया के अण्डे और बच्चे बसे हुए थे । उन्हें और किसी बात की सुधि नहीं रहती । कौन उपाय किया जाय कि कार्निस पर चढ़कर बच्चों को देख लिया जाय । बस, गर्मी की दोपहरी में मां के सामने दोनों आंखें मूंदें, दम साधे पड़े रहे ज्योंही पता चला कि अम्मा सो गईं, चुपचाप निकल पड़े । नहाने की चौकी पर स्टूल रखा और केशव उसपर चढ़ा । श्यामा स्टूल को पकड़े रही, क्योंकि उसकी चारों टांगें बराबर न थीं कार्निस पर हाथ रखते ही दोनों चिड़िया उड़ गईं । केशव ने देखा तीन अण्डे, अभी बच्चे नहीं निकले हैं । श्यामा भी देखने के लिए मचल उठी । केशव ने चिथड़े मांगे, क्योंकि बेचारे अण्डे तिनके पर पड़े थे, शायद तिनका उनको गड़ता हो । श्यामा पुरानी धोती फाड़कर लाई । केशव ने टोकरी मंगवा कर उसे एक लकड़ी के सहारे टिका कर छाजन बनाया, उन्हें धूप से बचाने के लिए प्याले में दाना-पानी मंगवा कर ऊपर रखा और धीरे से नीचे उतर आया । श्यामा ऊपर चढ़ने के लिए गिड़गिड़ाती रह गई । केशव उसे चढ़ने न दिया । उसे डर था कि डगमगाते स्टूल पर से श्यामा गिर सकती है और तब सारा दोष उसी के सिर पर मढ़ा जायगा। श्यामा ने माता से शिकायत करने की धमकी दी इसपर केशव ने धमकाया कि यदि शिकायत करेगी तो वह उसे बड़ा मार मारेगा । इसी बीच माता की नींद खुली और वह संटी लिए वहां पहुंची । दोनों को डांटा, दोनों चुप । दोनों में से किसी ने एक दूसरे की शिकायत न नहीं की। दोनों को फिर कमरे में बन्द कर दिया गया । अम्मां पंखा झलने लगी और दोनों सो गये ।

चार बजे श्यामा की नींद खुली और जाकर देखा कि अण्डे तो कार्निस के नीचे हैं । केशव आया, दोनों के चेहरे के रंग उड़ गये । श्यामा ने पूछा अंडे तो गिरे हैं, बच्चे कहां हैं ?

केशव को ग्लानि के साथ क्रोध भी आया । दो-चार दिन में भला अण्डे में बच्चे बन जाते हैं ?

मां को पूरी घटना का पता चला । उसने केशव को डांटा कि उसके सिर पर तीन की जान लेने का पाप चढ़ेगा ।

केशव का हृदय इससे दुखी रहा करता । कभी-कभी उसकी याद करके रो पड़ता । दोनों चिड़िया वहां कभी नहीं दिखाई दीं।

यह कहानी प्रायः सभी बालकों के साथ घटने वाली घटना व की कहानी है । छः से दस वर्ष की आयु में ऐसी घटनाएं घटती है । इस आयु के बालकों के हृदय में पशु-पक्षियों के प्रति अधिक संवेदना होती है । उनका मन उनके सुख-दुःख की ओर आकृष्ट होता है रहता है.। बालकों के मन में उठने वाले अनेकानेक प्रश्नों तथा उनके हृदय की संवेदनशीलता पर प्रकाश डाला गया है । इन दोनों शिशुओं के माता पिता अपने अपने कामों में व्यस्त रहते हैं, बाबू जी दफतर के कामों में व्यस्त रहते और मां घर के कामों में,उन्हें फुर्सत नहीं कि वे बच्चों पर ध्यान दें,उनके मन में उठने वाले प्रश्नों का उत्तर दें,उनकी जिज्ञासा शान्त करें । फलस्वरूप ये दोनों भाई-बहन एकान्त में चुप-चुप एक दूसरे से बात करते हैं ।एक प्रश्न करता तो दूसरा उसका उत्तर देता ।

प्रेमचन्द के कथा-साहित्य में दो ऐसे शिशु पात्र हैं,जो बहुत ही अधिक संवेदनशील हैं । परिवार में एक व्यक्तिके प्रति जो उन्हें सबसे अधिक स्नेह देता है, इतनी अधिक निष्ठा है कि उस व्यक्ति के बिना जीवित नहीं रह सकते ।

एक है 'प्रेमाश्रम' की मुन्नी दूसरा महातीर्थ का रुक्मणि । प्रेमाश्रम की मुन्नी अपनी माता के देहान्त के बाद जीवित नहीं रह सकती । व उसके लिए हुड़कती, तथा अम्मा अम्मा की रट लगा देती है । उसके लिए तरह तरह की मिठाइयाँ तथा खिलौने आते हैं पर सबसे अपना मुंह फेर लेती । खाना पीने से इनकार कर देती है,ताऊ,ताई,परिवार की किसी महरी दाई की गोद में नहीं जाती । लाख प्रयत्न करने पर भी किसी के सम्हाल में नहीं आई । अम्मा अम्मा की रट कम नहीं होती । आँखें घुमा-घुमा कर सदैव अपनी अम्मा को ढूंढती है । परिणामस्वरूप तेज ज्वर से पीड़ित होकर पाँच छः दिनों के अन्दर ही वह मातृ-स्नेह-वंचित बालिका सदा के लिए अपनी माता के पास चली जाती है ।

'महातीर्थ' कहानी में रुक्मणि अपनी दाई कैलासी जिसे वह अम्मा कहता है, को बहुत प्यार करता है। एक बार किसी कारणवश

रुक्मणि की माता अन्ना को निकाल देती है । अन्ना के लिए रुक्मणि बेचैन हो जाता है वह उसके लिए छटपटाता रहता है । अन्ना - अन्ना की रट लगा देता । उसे तेज ज्वर आ जाता है, अपने पुत्र की ऐसी स्थिति देखकर रुक्मणि के पिता अन्ना के यहां जाते हैं । अन्ना का जीवन भी रुक्मणि के बिना निस्सार और बोझिल हो जाता है । वह तीर्थ करने की तैयारी करती है । इसी समय रुक्मणि के पिता वहां पहुंचते और कहते तुम अपने बेटे रुक्मणि के पास जाओ, उसे बचाओ, यही तुम्हारा महातीर्थ होगा ।

इन दोनों स्थलों में प्रेमचन्द ने मानव-मन की सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया की ओर संकेत किया है ।प्रेमाश्रम में मुन्नी के परिवार की ओर यदि दृष्टिपात करें तो हम देखते हैं कि यह परिवार विशृंखल परिवार है-- मुन्नी के पिता ज्ञानशंकर अपनी पत्नी विद्या से प्रेम नहीं करते । उनके मन में धन और मान की लिप्सा है । इसी के वशीभूत होकर अपनी बड़ी विधवा साली गायत्री देवी पर अपना जाल फैलाते हैं । विद्या अपने जीवन से निराश है, उसके परिवार में वे ही सब बातें हो रही हैं जो अशोभनीय व तथा घृणित हैं पर उसका कुछ भी वश नहीं चलता । अतः संसार के से अधिक मनमें विराग उत्पन्न होता है और यह उसकी गोद की सबसे छोटी बालिका उसके जीवन का आधार बन जाती है । पति उससे बात नहीं करता, उसे बातों बात में झिड़कता है, उसके बड़े बेटे मायाशंकर को उससे छीन कर गायत्री देवी को दे दिया गया है, अब मुन्नी ही उसके पास बच रही है । मुन्नी का प्रेम माता में केन्द्रित है और माता का प्रेम मुन्नी में । यही कारण है कि माता के देहान्त के पश्चात् मुन्नी जीवित नहीं रह सकती । वह भी मर जाती है ।

रुक्मणि को अपने माता-पिता के से अधिक प्यार दाई से मिलता है । अतः उसके बिना वह रह नहीं सकता । उसके चले जाने पर उसकी काल्पनिक दुनियां में अन्ना ही केन्द्र बनी हुई है --..... कोने बैठ कर कल्पित अन्ना से बातें करता, अन्ना, भूखा मुझे । अन्ना गाय दूध देगी । अन्ना उसका उसका घोड़ा घोड़ु । सवेरा होते ही लोटा लेकर दाई की कोठरी में जाता और कहता अन्ना पानी। दूध का गिलास लेकर उसकी कोठरी में

रख आता और कहता अम्मा दूध पिला । अपनी चारपाई पर तकिया रखकर चादर से ढांक देता और कहता -- अम्मा सोती है ।सुखदा जब खाने बैठती तो कटोरे उठा-उठाकर अम्मा की कोठरी में लाता और कहता अम्मा खाना खायेगी ।[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि रुक्मणि के इस व्यवहार में प्रेमचन्द ने कितनी सूक्ष्म मनोवैज्ञानिकता का चित्रण किया है ।

प्रेमचन्द के बाल-पात्रों में हामिद श्रेष्ठ बाल पात्र है । उसका मनोविकास आयु क्रम से अधिक हुआ है । वह चार-पांच साल का गरीब सूरत,दुबला-पतला लड़का है जिसका पिता गत साल हैजे की भेंट हो गया और मां न जाने क्यों पीली होती होती एक दिन मर गई । किसी को पता न चला, क्या बीमारी है । अब हामिद अपनी दादी अमीना की गोदमें सोता है और उतना ही प्रसन्न है ।उसके अब्बा जान रुपया कमाने गये हैं । बहुत सी थैलियाँ लेकर आयेंगे । अम्मी जान अल्लाहमियां के घर से उसके लिए बड़ी अच्छी-अच्छी चीजें लाने गई है इसलिए हामिद प्रसन्न है ।

ईद के दिन गांव के सभी बच्चे,महमूद,मोहसिन नूरे और सम्मी ईदगाह जाने के लिए तैयार हैं और सभी अपनी-अपनी जेबों से पैसे निकाल कर गिनते हैं । हामिद के पास पैसे कहां ? बेचारी अमीना आठ आने पैसे को ईमान की तरह बचाती हुई चली आई थी । अब सबखर्च हो चुके हैं केवल पांच पैसे उसके बटवे में और तीन पैसे हामिद की जेब में है । हामिद बहुत प्रसन्न है । वह अपने साथियों के साथ मेला जाता है । रास्ते में सभी बच्चे अदालत,कालेज ,क्लबघर आदि पर अपने-अपने विचार प्रकट करते आगे बढ़ते हैं । आम के बाग में घुसकर आम के पेड़ों पर कंकड़ी मारते, माली के चिल्लाने पर वहां से भागते हैं खूब हंसतेहैं कि माली को कैसा उल्लू बनाया ।

मेला आया । सभी लड़के अपने अपने पैसे से आनन्द उठा रहे हैं । मिट्टी के खिलौने की दूकानपर मोहसिन भिश्ती खरीदता है महमूद सिपाही, नूरे वकील और सम्मी धोबिन ,हामिद खिलौने की निन्दा करता है क्योंकि उसके पास उतने पैसे नहीं कि वह खिलौना भी खरीद सके । वह खिलौनों की ओर ललचायी आंखों से देखता तो है फिर भी कहता है

मिट्टी के तो हैं गिरें तो चकनाचूर हो जायं।

खिलौने के बाद मिठाइयों की दुकानें आती हैं कोई रेवड़ियां खाता है, कोई गुलाब जामुन कोई सोहनहलवा। सब मजे से खा रहे हैं। हामिद इस बिरादरी से पृथक् है। अभागे के पास तीन पैसे हैं,क्यों नहीं कुछ लेकर खाता। ललचाई आंखों से सब की ओर देखता है। लड़के मिठाई के साथ उसकी ओर हाथ बढ़ाते, मिठाई की प्रशंसा करते, हामिद ज्योंही उसे लेने को हाथ बढ़ाता है वे मिठाई अपने मुंह में डाल लेते हैं। इस प्रकार उसके सभी मित्र उसके साथ यह क्रूर विनोद करते हैं। महमूद कहता है, हामिद बड़ा चालाक है। जब हमारे सारे पैसे खर्च हो जायेंगे तो हमें ललचा-ललचा कर खायेगा।

इसके बाद लोहे की चीजों की दुकानें आती हैं। बालकों का यहां कोई आकर्षण नहीं। सब आगे बढ़ जाते हैं। हामिद एक दुकान पर रुक जाता है। चिमटों को देखकर उसे ख्याल आता है कि दादी के पास चिमटे नहीं हैं। तवे से रोटियां उतारती हैं तो हाथ जल जाता है। अगर वह चिमटा ले जाकर उनको दे तो वह कितना खुश होंगी, फिर उनकी उंगलियां न जलेंगी। घर में काम की एक चीज हो जायेगी। इस प्रकार बड़े हिम्मत से मोल तोल करके आखिर वह तीन पैसे में चिमटा खरीद लेता है। आगे बढ़कर देखता है उसके सभी साथी शर्बत पी रहे हैं। हामिद के मन में फिर अन्तर्द्वन्द्व उठता है-- देखो, सब कितने लालची हैं इतनी मिठाइयां लीं,मुझे किसी ने एक भी न दी उसपर कहते हैं मेरे साथ खेलो। यह मेरा काम करो। अब अगर किसी ने कोई काम करने को कहा, तो पूछेगा। खायें मिठाइयां, आप मुंह सड़ेगा, फोड़े-फुन्सियां निकेंगी आप ही जबान चटोरी हो जायगी। तब घर से पैसे चुरायेंगे और मार खायेंगे। किताब में झूठी बातें थोड़े ही लिखी हैं। मेरी जबान क्यों खराब होगी? अम्मां चिमटा देखते ही दौड़कर मेरे हाथ से ले लेंगी और कहेंगी -- मेरा बच्चा अम्मां के लिए चिमटा लाया है हजारों दुआएं देंगी। फिर पड़ोस की औरतों को दिखायेंगी सारे गांव में चर्चा होने लगेगी, हामिद चिमटा लाया है। कितना अच्छा लड़का है।[2]

1 "प्रेमचन्द की सर्वश्रेष्ठ कहानियां",पृ० १७-१८

चिमटा खरीदने के बाद इसके सभी साथी इस चिमटे का मज़ाक बनाने लगे । हामिद ने सब की बातों को अपने तर्क से काट दिया । उसने सब को अपनी बातों से परास्त कर दिया और सिद्ध कर दिया कि उसका चिमटा रुस्तमे-हिन्द है और सभी खिलौनों का बादशाह । जब वह घर पहुंचा अमीना चिमटा देख कर चकित रह गई । अब उसने हामिद को छाती से लगा लिया और रोने लगी । अमीना ने सोचा कितना बेसमझ लड़का है कि पूरे दिन न कुछ खाया न कुछ पिया । चिमटा उठा लाया । हामिदने अपराधी भाव से कहा -- तुम्हारी उंगलियां तवे से जल जाती थीं इसलिए मैंने इसे ले लिया ।

'बुढ़िया का क्रोध तुरंत स्नेह में बदल गया और स्नेह भी वह नहीं जो प्रगल्भ होता है अपनी सारी कसक शब्दों में बिखेर देता है । यह मूक स्नेह था, खूब ठोस रस और स्वाद से भरा हुआ । बच्चे में कितना त्याग कितनासद्भाव और कितना विवेक है । दूसरों को खिलौना लेते और मिठाई खाते देखकर इसका मन कितना ललचाया होगा । इतना जब्त इससे हुआ कैसे ? वहां भी इसे अपनी बुढ़िया दादी की याद बनी रही । अमीना का मन गद्गद् हो गया ।

और अब एक बड़ी विचित्र बात हुई । हामिद के इस चिमटे से भी विचित्र । बच्चे हामिद ने बूढ़े हामिद का पार्ट खेला था । बुढ़िया अमीना बालिका बन गई ।' हामिद के पांच वर्ष की आयु में ही Super ego का विकास हो गया है ।वह अपनी इच्छाओं का दमन कर अपने तीन पैसों काउपयोग अच्छे काम में करता है । साथियों के साथ तर्क आदि करते समय भी वह उनसे ज्यादा होशियार है । वह उनको परास्त कर देता है । हामिद के समान शिशु अन्य साहित्य में कभी बहुत कम पाये जाते हैं ।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट ज्ञात होगा कि प्रेमचन्द ने परिस्थितियों के अनुसार बाल मनोविज्ञान को प्रभावित किया है और वह बाल-मनोविज्ञान के आधार पर परिस्थितियों को मोड़ दिया है।

---

१ प्रेमचन्द की सर्वश्रेष्ठ कहानियां, पृ० २४

इस भांति मनोविज्ञान और परिस्थितियों का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है ,ऐसा भीहुआ है कि बाल-मनोविज्ञान और परिस्थितियाँ समानान्तर चली हैं ।

सारांश रूप में कहा जा सकता है कि प्रेमचन्द बालकों के मनोभावों पर इतनी गहरी अन्तर्दृष्टि रखते थे कि उनसे एक स्वाभाविक वातावरण की सृष्टि हो जाती थी और इस भांति यह सरलता से कहा जा सकता है कि कथा-साहित्य में प्रेमचन्द से बढ़कर बाल-मनोविज्ञान का शिल्पी कोई दूसरा अभी तक नहीं हुआ है ।

-0-

अध्याय -- ६

उपसंहार -- निष्कर्ष

अध्याय --६

-०-

उपसंहार-- निष्कर्ष

प्रस्तुत प्रबन्ध का विषय प्रेमचन्द के कथा-साहित्य का अध्ययन है और वह भी विशेषरूप से शिशु जीवन का अध्ययन । इस अध्ययन में प्रवृत्त होने पर मैंने प्रेमचन्द रचित कथा-साहित्य का अध्ययन किया है । उन्होंने प्राय: हिन्दी में करीब २५०(दो सौ पचास) कहानियां लिखीं । उनकी सारी कहानियां कहा जाता है, मानसरोवर के आठों भागों और `कफ़न` तथा शेष रचनाएं के अन्तर्गत आ गई हैं । `मानसरोवर` और `कफ़न` की कहानियों की निश्चित संख्या दो सौ पैंतीस है । `गुप्तधन` के दो खण्डों में उनकी छप्पन कहानियां और हैं । "१९०७ई० में मैंने उर्दू में कहानियां लिखना आरम्भ किया और निरन्तर सफलता मिलते रहने से मैंने लिखना जारी रखा ।"[1] १९१४ई० में उनकी कहानियां दूसरों द्वारा अनुदित हुईं और हिन्दी मासिकों में प्रकाशित हुई हैं ।

हिन्दी में उनकी सबसे पहली कहानी `संसार का सबसे अनमोल रत्न` है जो १९०७ई० में `ज़माना` नामक मासिक पत्रिका में प्रकाशित हुई थी । उनकी अन्तिम कहानी `दो बहनें`, मानी जाती है ।

प्रेमचन्द ने शिशु-साहित्य की रचना की ।इस सम्बन्ध में मैंने द्वितीय अध्याय में विचार किया है।`कुत्ते की कहानी` (१९३६ई०) रामचर्चा(१९४१ई०) जंगल की कहानियां(१९३८) हिन्दी की आदर्श कहानियां (१९२७) में प्रकाशित रचनाएं उनके साहित्य-जीवन के प्रौढ़ काल की रचनायें हैं । इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दी में शिशु-साहित्य के अभाव की ओर उनका ध्यान गया

---

१ प्रेमचन्द : `प्रेमचन्द का एक विवेचन`,पृ०१५५ तीसरा संस्करण ।

ही था शिशुओं की ओर भी उनका ध्यान कम न था । प्रेमचन्द की कहानियों में शिशु-चरित्रों का चित्रण नहीं अचेतन नहीं (Unconcious) चेतन (Concious) प्रयास है । व्यापक और विविध जीवन में शिशुओं का मूल्य उनकी पैनी दृष्टि से छिपा नहीं रह सका । जीवन के अनेकानेक तानों-बानों में उन्होंने शिशुओं की शक्ति का परिचय पाया और अनेक घटनाओं के मुख्य सूत्रधार के रूप में उन्होंने उन्हें अपनी कहानियों में स्थान दिया है । यह अवश्य है कि प्रेमचन्द तक भारतीय जीवन इतना जटिल और उलझा हुआ नहीं था । इसलिए उनके शिशु-चरित्रों में अधिक उलझनों और गुत्थियों का अभाव है । स्वयं वे कुछ और दिनों तक जीवित रहते तो निश्चय ही आज के जटिल जीवन में भी पैठते और तब शिशु-जीवन और चरित्र को अधिकाधिक ग्रहण करते । मेरे विचार से प्रेमचन्द के परवर्ती हिन्दी साहित्य से इस बात की पुष्टि हो जाती है। शिशु के रूप में प्रेमचन्द का कथा-साहित्य समृद्ध है । उनकी सारी कहानियों तथा उपन्यासों में छोटे-बड़े,मुख्य,गौड़ परिवर्तनशील, अपरिवर्तनशील,समूहपरक,व्यक्तिपरक आदि सभी प्रकार के एक सौ उनतालिस शिशु-चित्रण मुझे मिले हैं । इन चरित्रों में कथा के मुख्य पात्र के रूप में पैंतालिस शिशु आये हैं । गौण पात्रों के रूप में चौंसठ शिशु है । वर्गीकरण के विविध आधार के अनुसार इनके समूहपरक शिशु-चरित्रों की संख्या एक सौ सात है । व्यक्तिपरक चरित्र की संख्या बीस और व्यक्ति और समूह परक की संख्या एक है । यह शिशु व्यक्ति परक और समूहपरक की विशेषताओं से सम्बन्धित किया गया है । परिवर्तनशील शिशु-चरित्र चार हैं और अपरिवर्तनशील तीन हैं । इन शिशु-चरित्रों में आठ वर्ष तक के आयु-वर्ग के छप्पन शिशु -चरित्रों का अध्ययन मैंने प्रस्तुत किया है । बालक वर्ग में तेरह और किशोर वर्ग में पन्द्रह उनकी कतिपय कहानियों में शिशु-चरित्रों की आयु का निश्चित पता नहीं चलता । घटनाओं,परिस्थितियों एवं अन्य सूचनाओं के आधार पर उनकी आयु का अनुमान मैंने लगाया है । शिशुओं के मनोवैज्ञानिक अध्ययन के अन्तर्गत मैंने शिशु-चरित्रों को आयु-वर्ग के अनुसार रखने का प्रयत्न किया है।

जन्म से लेकर दो वर्ष तक केशिशुओं की संख्या सोलह है, दो वर्ष से लेकर चार वर्ष तक के शिशुओं की संख्या बारह है। चार वर्ष से छ:वर्ष तक के शिशुओं की संख्या सोलह है। छ: से आठ वर्ष तक के शिशुओं की संख्या पन्द्रह है। आठ से दस वर्ष तक के शिशुओं की संख्या सात है। दस से बारह वर्ष में बारह शिशु आये हैं। फिर बारह से पन्द्रह वर्ष तक की आयु में बारह शिशु आये हैं। इस प्रकार अट्ठासी शिशुओं का मनोवैज्ञानिक अध्ययन आयु के आधार पर मैंने उपस्थित किया है। शेष चरित्रों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन उनकी विशेषताओं के आधार पर किया गया है।

सामाजिक,एवं आर्थिक दृष्टि से भी मैंने प्रेमचन्द के शिशु-पात्रों को परखने का प्रयास किया है। प्रेमचन्द ने सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से अपने कथा-साहित्य में प्रमुखता दी है। इस दृष्टि से किया गया शिशु-चरित्रों का विश्लेषण अत्यन्त महत्वपूर्ण निष्कर्षों की ओर संकेत करता है। प्रेमचन्द ने तेईस उच्चवर्ग के शिशु-चरित्रों का चित्रण किया है। चौंसठ मध्यवर्ग के और सैंतालिस निम्नवर्ग के। स्पष्टत: उन्होंने मध्यवर्ग के और निम्नवर्ग के शिशु-चरित्रों का चित्रण अधिक किया है। प्रेमचन्द का अपना सम्बन्ध निम्नमध्य वर्ग से था। इस वर्ग से उनका परिचय घना था। उनके संस्कार इसी वर्ग के थे। अपने जीवन में भी उन्हें उच्च वर्ग के सम्पर्क में आने के बहुत कम अवसर प्राप्त हुए थे। अपने रहन-सहन,बोल-चाल में वे इतने साधारण थे कि मध्यवर्ग और निम्नवर्ग का जीवन ही उन्हें अपना और आत्मीय जीवन मालूम होता था। उनके कलाकार की सम्पृक्ति इस जीवन से ही अधिक थी। मध्यवर्ग में भी आर्थिक दृष्टि से उच्च मध्यवर्ग के साथ प्रेमचन्द का सम्बन्ध नहीं के बराबर था। उनके सारे जीवन-चरित्र उनकी बाहरी अनुभूति और अनिवार्य सम्पृक्त के आधार पर निर्मित है। इन वर्गों के विविध चित्रण वे बड़ी क्षमता से कर सके हैं।

प्रेमचन्द के शिशु-चरित्रों का अध्ययन मनोविज्ञान की दृष्टि से भी किया गया है। प्रेमचन्द ने यद्यपि मनोविज्ञान

शास्त्र को चरित्र-चित्रण का कभी आधार नहीं बनाया, हरदम जीवन को खुले-बिखरे यथार्थ जीवन की ओर उनका आकर्षण रहा । फिर भी मनोविज्ञान शास्त्र के आधार पर उनकी रचनाओं का अध्ययन किया जा सकता है ।किन्तु जितनी कोटियाँ और भेदों-उपभेदों की गुंजाइश है, उतनी प्रेमचन्द में पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं होती । यह भी ध्यान देने की बात है कि प्रेमचन्द में ऐसा भी कुछ है जिसे सहज जीवन की उलझन से मनोविज्ञान शास्त्र अलग नहीं कर सका । प्रेमचन्द की कहानियों के शिशु-जीवन की पकड़ असंदिग्ध रूप से वर्तमान है, अध्ययन से इस निष्कर्ष पर पहुंच सकी हूं ।

प्रेमचन्द ने शिशु-चरित्रों के चित्रण में अपने युग की प्रचलित सभी प्रणालियों का प्रयोग किया है । कथानक के प्रधान पात्र के रूप में उनके पैंतालिस शिशु-चरित्र आए हैं । गौण पात्र के रूप में छिहत्तर वातावरण के सृष्टा के रूप में प्रेमचन्द के इकतीस शिशु-चरित्र हैं , सूत्रधार के रूप में पन्द्रह । अप्रत्यक्ष पात्र के रूप में एक शिशु -चरित्र का चित्रण किया है । प्रेमचन्द ने शिशु-चरित्रों का उद्घाटन के लिए कथोपकथन का सहारा लिया है । प्रेमचन्द ने कथोपकथन के आधार पर भी शिशु-चरित्रों को उपस्थित किया है । अधिकांश कथा में शिशु के चरित्र के उद्घाटन के लिए कथोपकथन और वर्णन सम्मिलित रूप से प्रयोग किया है । वस्तुत: प्रेमचन्द की सर्वाधिक प्रिय प्रणाली वर्णन प्रणाली ही थी । प्रेमचन्द की कला बहुत आगे बढ़कर भी वर्णन प्रणाली से सर्वथा मुक्त नहीं हो सकी । इस प्रणाली के गुण-दोष साहित्यिक क्षेत्र में इसके प्रयोग को एक साथ ही भिन्न अर्थ दे देते हैं । इसका गुण यह है कि कलाकार अपनी पूरी क्षमता का परिचय इसमें सहज ही उपस्थित कर सकता है । उसकी पकड़ और उसकी अनुभूति बिना तिर्यक हुए बिना किसी पेचीदे माध्यम को स्वीकार किए सीधे पाठक तक पहुंचती है । वर्णन प्रणाली में कलाकार और पाठक के बीच और कोई नहीं होता । अन्य प्रणाली या प्रणालियों में यह सीधा सम्बन्ध नहीं बना रहता। पाठक तक कलाकार तिर्यक होकर पहुंचता है । फलत: इस प्रणाली में कलाकार खुलकर जो कहना चाहता है, कहता है । इसी शैली में वह कहानी में

जिज्ञासा और कुतूहल की वृत्तियों को उभार सकता है। मेरी दृष्टि में कलाकार को तौलने का इससे बड़ा तराजू यही है कि वह अपनी कथा कहने की शैली में किस प्रकार कुतूहल को उभार सकता है। मैंने अपने अध्ययन में इसका आश्रय लिया है। इसके एक बड़े दोष की सम्भावना है, वह यह कि इस प्रणाली के पात्र की विवरणात्मक स्थिति सीधे ढलकर आती है, अतः बहुत कुछ ऐसा भी चला आता है,जो सूक्ष्म ,मधुर और निर्मल नहीं होता। उससे छनने का या छनकर आने का अवसर नहीं मिलता। कला में एक ओर हम ईमानदारी तो चाहते ही हैं, दूसरी ओर हम स्पष्टता और सुष्ठुता भी चाहते हैं। ईमानदारी इतनी कि अनुभूति पराई न हो, किन्तु इस अनुभूति को हम सूक्ष्म ,मधुर और सुष्ठु रूप में ग्रहण करना चाहते हैं। यही कारण ह कि चरित्र-चित्रण में जब कलाकार सीधे वर्णन द्वारा या बोलकर कोई धारणा उत्पन्न करने के बदले घटना, वातावरण एवं अन्य पात्रों के कथोपकथन आदि के आधार पर चरित्र प्रस्तुत करता है, तो उसे जागरूक पाठक अधिक कलात्मक मानता है।वर्णन प्रणाली की एक निश्चित स्थिति यह है कि कलाकार पाठक को अपने चश्मे से देखने को एक तरह से बाध्य करता है। पाठक और कम-से-कम जागरूक पाठक इससे विद्रोह करता है। वह प्रत्येक पात्र के सम्बन्ध में अपनी राय बनाना चाहता है, चाहता है कि कलाकार उसे अपनी राय बनाने की सुविधा दे। यह सुविधा कलाकार उसे तभी दे सकता है, जब वह खुद ही वर्णन न करे या अपनी ओर से टिप्पणियां न दे। ऐसा करने के लिए संयम,सतर्कता और अभ्यास आवश्यक है और प्रेमचन्द ने इसे सफलता से निभाया है। इस दृष्टि से देखें तो प्रेमचन्द की विकसित कहानियों (कफ़न में उदाहरण के लिए) में ही पाठकों को अपनी राय बनाने की पूरी स्वतन्त्रता दी गई है। उनके उपन्यासों में 'गोदान' के चरित्रों का चित्रण इस दृष्टि से बहुत सफल माना जायगा।

हिन्दी साहित्य में प्रेमचन्द के आगमन के पूर्व शिशु-चरित्रों का चित्रण दूर को छोड़कर नहीं के बराबर है। उपन्यास के आदि काल में बाल या शिशु-चरित्रों का अभाव-सा है। आधुनिक काल में

भारतेन्दु के "सत्य हरिश्चन्द्र" नाटक में बाल-चरित्र रोहिताश्व का चित्रण मिलता है। वह काशी की गलियों में "कोई हमको भी मोल ले ले।" पुकार पुकार कर कहता है, किन्तु उसका समस्त मनोविज्ञान अपनी माँ शैव्या के मनोविज्ञान से परिचालित होता है। भारतेन्दु के नाटकों में जहां अनेक नये चरित्र पहली बार उपस्थित हुए हैं, केवल एक बाल पात्र का ही चित्रण हो सका है। द्विवेदी युग के आते-आते शिशु-चरित्रों को आख्यायिका, उपन्यास और नाटकों में स्थान मिलने लगता है। इसमें भी प्रेमचन्द निःसन्देह अग्रणी हैं। प्रसाद के 'अजातशत्रु' नाटक में और 'कामायनी' में (मानव) शिशु चरित्र लिए गए हैं। 'अजातशत्रु' नाटक में कुणीक के बाल्यकाल का प्रदर्शन होता है। लुब्धक उसके चीता 'चित्रक' के लिए प्रतिदिन मृगशावक लाता है। कुणीक चित्रक को मृगशावक खाते प्रतिदिन देखता है। इस वीभत्स दृश्य को देखने में उसे विशेष आनन्द आता है। 'कामायनी' के आनन्द सर्ग में मानव वृष रज्जु को थाम कर से किए आश्चर्य चकित नेत्रों से सृष्टि को देख रहा है। इस भांति प्रसाद जी ने अपने नाटक 'अजातशत्रु' और महाकाव्य कामायनी में केवल बाल-वृत्तियों का ही परिचय दिया है। उनके विकास और संघर्ष के सम्बन्ध में कुछ नहीं लिखा। कौशिक, सुदर्शन आदि कथाकारों ने अपनी कहानियों में अत्यन्त मर्मस्पर्शी शिशु-चरित्रों की कल्पना की है। विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक' 'ताई' शीर्षक कहानी में शिशु 'मनोहर' का चित्रण बड़े मनोवैज्ञानिक रूप में किया है, किन्तु परिमाण और वैविध्य को देखते हुए प्रेमचन्द के साहित्य में यह प्रयास बड़े पैमाने पर किया गया है। प्रेमचन्द ने सतर्क होकर अपने शिशु एवं बाल-चरित्रों के निर्माण में अपनी प्रखर प्रतिभा का प्रदर्शन किया है। हिन्दी साहित्य की इस पृष्ठभूमि में प्रेमचन्द का यह योग-दान एक विशिष्ट महत्त्व प्राप्त कर लेता है।

-0-

शिशु चरित्रों के आंकड़ों की तालिका

मानसरोवर भाग -१

	शिशु चरित्र की संख्या		शिशु चरित्र की संख्या
१- अलग्योफा-- रग्घु, केदार लछमन, कुन्नू, मुनिया, दो शिशु।	६	१९- सुभागी...सुभागी....	१
२- ईदगाह-- हामिद, मोहसिन, महमूद, नूर और सम्मी।	५	२०- अनुभव.............	
३- मां........प्रकाश....	१	२१- लांछन..........	
४- बेटों वाली विधवा.....	--	२२- आखिरी हीला....बालक	१
५- बड़े भाई साहब--बड़े भाई साहब, नौ वर्षीय बालिका।	२	२३- तावन.............	
६- शान्ति.............	--	२४- घासवाली..........	
७- स्वामिनी..... बाल-वृन्द..	१	२५- गिला..............	
८- नशा.............	--	२६- रसिक सम्पादक........	
९- ठाकुर का कुआं.....		२७- मनोवृत्ति..	
१०- घर जमाई.......			२७
११- पूस की रात.....			
१२- फांकी....दो शिशु....	१		
१३- गुल्ली डंडा-मैं(सर्वनाम), गया--	२		
१४- ज्योति....मोहन, मैना...	२		
१५- दिल की रानी........			
१६- धिक्कार...........			
१७- कायर...............			
१८- शिकारी.....दो शिशु...	१		

मानसरोवर भाग-२

	शिशु चरित्र की संख्या
१- कुसुम	
२- खुदाई फौजदारी	
३- वेश्या	
४- चमत्कार	
५- मोटर के छींटे	
६- कैदी	
७- मिस पद्मा नवजात शिशु	१
८-विद्रोही	
९- उन्माद	
१०- न्याय	
११- कुत्सा.. एक बालिका	१
१२- दो बैलों की कथा--एक बालिका-बाल समुदाय।	२

	शिशु.चरित्र की संख्या
१३- रियासत का दीवान	
१४- मुत्फ का यश	
१५- बासी भात में खुदा का साफा--एक शिशु	१
१६- बालक...एक शिशु--	१
१७- जीवन का शाप	
१८- डामुल का कैदी--कृष्णाचंद्र	१
१९- नैउर	
२०- गृह नीति	
२१- कानूनी कुमार	
२२- लाटरी...कुन्ती..	१
२३- जादू	
२४- नया विवाह	
२५- शुद्र	
२६- दूध का दाम--सुरेश, मंगल	२२-

	१०

मानसरोवर भाग-३

१- विश्वास...एक बालक	१
२- नरक का मार्ग	
३- स्त्री और पुरुष	
४- उद्धार	
५- निर्वासन	
६- नैराश्य लीला.. कैलाश कुमारी	१
७- स्वर्ग की देवी..दो शिशु	१

	शिशु.चरित्र की संख्या
८- आधार...वासदेव	१
९- एक आंच की कसर--परमानन्द	१
१०- माता का हृदय --एक शिशु -	१
११-परीक्षा	
१२- तेंतर.. तेंतर, सिद्ध	२
१३- नैराश्य	
१४- दण्ड	
१५- धिक्कार	
१६- लैला	
१७- मुक्ति धन	
१८- दीक्षा	
१९- क्षमा	
२०- मनुष्य का परम धर्म	
२१- गुरु मंत्र	
२२- सौभाग्य के कोड़े--नथुआ, रत्ना	२
२३- विचित्र होली	
२४- मुक्ति मार्ग	
२५- डिक्री के रुपये	
२६- शतरंज के खिलाड़ी	
२७- वज्रपात	
२८- सत्याग्रह	
२९- भाड़े का टट्टू	
३०- बाबा जी का भोग	
३१- विनोद	

	१०

मानसरोवर भाग -४

	शिशु चरित्र की संख्या
१- प्रेरणा,..सूर्य प्रकाश	१
२- सद्गति	
३- तगादा	
४- दो कब्रें	
५- डपोर शंख	
६- डिमांस्ट्रेशन	
७- दारोगा जी	
८- अभिलाषा	
९- खुचड़	
१०-आगा-पीछा	
११-प्रेम का उदय	
१२-सती	
१३-मृतक भोज--रेवती,सौरन	२
१४-भूत,...बिन्नी	१
१५-सवा सेर गेहूं	
१६-सभ्यता का रहस्य	
१७-समस्या	
१८-दो सखियां	
१९-मांगे की घड़ी,.. बालक	१
२०-स्मृति का पुजारी	
	५

	शिशु चरित्र की संख्या
४- मंत्र	१
५- कामना-तरु	१
६- सती,... चिन्ता	
७-अहिंसा परमोधर्म	
८- वहिष्कार	
९- चोरी,...मैं (सर्वनाम) और हलधर	२
१०- लांछन,... शारदा	१
११- कजाकी,..मैं (सर्वनाम)	१
१२- आंसुओं की होली	
१३- अग्नि समाधि	
१४- सुजान-भगत	
१५- पिसनहारी का कुआं--एक बालिका	१
१६- सोहाग का शव	
१७- आत्म संगीत	
१८- एक्ट्रेस	
१९- ईश्वरीय-न्याय	
२०- ममता	
२१- मन्त्र	
२२- प्रायश्चित	
२३- कप्तान साहब- जगत सिंह	१
२४- इस्तीफा ....बुन्नी.	१.
	६

मानसरोवर भाग-५

१- मन्दिर,..बियावन	१
२- निमंत्रण .... फेकू	१
३- रामलीला	

मानसरोवर भाग - ६

१- यह मेरी मातृभूमि है

२- राजा हरदौला

३- त्यागी का प्रेम

	शिशु चरित्र की संख्या
४- रानी सारन्धा	
५- शाप	
६- मर्यादा की वेदी	
७- मृत्यु के पीछे	
८- पाप का अग्निकुण्ड	
६- आभूषण	
१०-जुगनू की चमक	
११-गृह-दाह--सत्य प्रकाश, ज्ञान प्रकाश	२
१२-धोखा	
१३-लाग-डांट	
१४-अमावस्या की रात	
१५-चकमा	
१६-पछतावा	
१७-आप-बीती	
१८-राज्य-भक्त	
१६-अधिकार-चिन्ता	
२०-दुराशा	
	२

	शिशु चरित्र की संख्या
६- समर-यात्रा	
७- शान्ति	
८- बैंक का दिवाला	
६- आत्माराम... बाल-समुदाय	१
१०- दुर्गा का मंदिर,.मुन्नू, श्यामा	२
११- बड़े घर की बेटी	
१२- पंच परमेश्वर	
१३- शंखनाथ,...बाल समुदाय, धान	२
१४- जिहाद	
१५- फातिहा	
१६- बैर का अन्त,...तीन लड़के	१
१७- दो भाई	
१८- महातीर्थ,.....रुद्रमणि	१
१६- विस्मृति	
२०- प्रारब्ध	
२१- सुहाग की साड़ी	
२२- लोकमत का सम्मान	
२३- नाग-पूजा,... तिलोत्तमा,.	१
	६

मानसरोवर भाग-७

१- जेल,....(मान)...	१
२- पत्नी से पति...	१
३- शराब की दुकान	
४- जुलूस	
५- मैकू	

मानसरोवर भाग -८

१- खून सफेद,.. साधो, शिवगौरी	२
२- गरीब की हाय,..राम गुलाम	१
३- बेटी का धन ,. गंगाजली	१
४- धर्म संकट	
५- सेवा-मार्ग	

	शिशु चरित्र की संख्या
६- शिकारी राजकुमार	
७- बलिदान	
८- सच्चाई का उपहार-- बाजबहादुर, जगत, जयराम, वलीमुहम्मद	४
६- बोध	
१०-ज्वाला मुखी	
११-पशु से मनुष्य	
१२-फ़ठ	
१३-ब्रह्म का स्वांग	
१४-विमाता.....मुन्नू	१
१५-बूढ़ी काकी--लाडली, बच्चों का समूह	२
१६-हार की जीत	
१७-दफ्तरी	
१८-विध्वंस	
१६-स्वत्व रक्षा	
२०-पूर्व संस्कार	
२१-दुस्साहस	
२२-बौड़म.....एक लड़का	१
२३-गुप्त धन.....मगन सिंह	१
२४-आदर्श विरोध	
२५-विषाय समस्या	
२६-अनिष्ट शंका	
२७-सौत	
२८-सज्जनता का दण्ड	
२६-नमक का दारोगा	
३०-उपदेश	
३१-परीक्षा	

	१३

गुप्तधन भाग -१

	शिशु चरित्र की संख्या
१- दुनिया का सबसे अनमोल रतन... एक लड़का	१
२- शेख मखमूर .... मसऊद	१
३- शोका का पुरस्कार	
४- सांसारिक प्रेम और देश प्रेम	
५- विक्रमादित्य का तेगा (राजा)	१
६- आखिरी मंजिल	
७- आल्हा	
८- नसीहतों का दफ्तर	
६- राजहठ	
१०- त्रिया--चरित्र....मगनदास नवजात शिशु	२
११- मिलाप कमला, एक शिशु	२
१२- मनावन	
१३- अंधेर	
१४- सिर्फ एक आवाज़ (बालकों का समूह)	१
१५- नेकी......हीरामन	१
१६- बांका ज़मीन्दार	
१७- अनाथ लड़की.... रोहिणी	१
१८- कर्मों का फल	
१६- अमृत	
२०- अपनी करनी	
२१- गैरत की कटार	
२२- घमण्ड का पुतला	
२३- विजय	
२४- वफ़ा का खंजर	
२५- मुबारक की बीमारी	
२६- वासना की कड़िया	

	१०

गुप्तधन भाग -२

	शिशु.चरित्र की संख्या
१- पुत्र-प्रेम	
२- रज्जन का खुन	
३- होली की छुट्टी (मैं सर्वनाम से)	१
४- नादान दोस्त (केशव +श्यामा)	१
५- प्रतिशोध (तिलोत्तमा)	१
६- देवी (तुलिया, तीन वर्षीय शिशु)	२
७- खुर्दा (मुन्नी)	१
८- बड़े बाबू	
९- राष्ट्र का सेवक	
१०- आखिरी तोहफ़ा	
११- कातिल	
१२- बोहनी	
१३- बन्द दरवाजा (बच्चा)	१
१४- तिरसूल	
१५- स्वांग	
१६- सैलानी बन्दर(बालकों का समूह)	१
१७- नबी का नीति -निर्वाह	
१८- मंदिर और मसजिद	
१९- प्रेम सूत्र (शान्ता)	१
२०- तांगे वाले की	
२१- शादी की वजह	
२२- मोटे राम जी शास्त्री	
२३- पर्वत यात्रा	
२४- कवच	
२५- दूसरी शादी (राम सरूप)	१
२६- सौत (भोलू)	१
२७- देवी	
२८- पेपुजी	
२९- क्रिकेट मैच	
३०- कोई दुख न हो तो बकरी खरीद लो	
	११

५६ कहानियां २१ (इक्कीस शिशु चरित्र)

उपन्यासों के शिशु पात्र

१- वरदान में

१- प्रताप	१
२- वृजरानी	१
३- बालकों का समूह	१

२- प्रतिज्ञा में

१- तीन बालिकाएं	१

३- सेवा सदन

१- गंगाजली	१
२- जाह्नवी की दो लड़कियां	१

४- प्रेमाश्रम

१- मायाशंकर	१
२- मुन्नी	१

५- निर्मला

१- जियाराम	१
२- सियाराम	१
३- निर्मला	१
४- कृष्णा	१
५- चन्द्रभानु	१

	शिशु-चरित्र की संख्या
६- आशा	१
७- सोहन	१
६- रंगभूमि	
१- मिठुआ	१
२- घीसु	१
३- बालकों का समूह	१
४- (साबिर, नसीमा, जाबिर)	१
७- कायाकल्प	
१- शंखधर	१
२- एक बालिका	१
८ गबन	
१- जालपा	१
२- गोपी	१
३- विश्वम्भर	१
४- दो बच्चे	१
५- शिशुओं का समूह	१
६- कर्मभूमि	
१- नैना	१
२- एक बालक (लालटेन लेकर मुन्नी के पास)	१
३- अमरकान्त के पाठशाला के बच्चे	१
४- दो शिशु (मुसाफिर वाले का -मुन्नी का)	१
५- लल्लू	१
	४०

उपन्यासों के चालीस शिशु-पात्र

	शिशु चरित्र की संख्या
१०- गोदान	
१- सोना	१
२- रुपा	१
३- मंगल	१
४- लल्लू	१
५- रामू	१
६- नवजात शिशु	१
७- मीष्म	१
८- बच्चों का समूह	१
६- चुन्नू	१
	४०

उपन्यासों में चालीस शिशु-चरित्र

प्रेमचन्द की कहानियों के समूह परक शिशु-पात्र

१-(स्नेह पाने वाला शिशु चरित्र)

क्रम	शिशु चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र प्रकार	वर्ग
१	केदार	अलग्योझा	मा०स०भाग१	सामान्य	मुख्य पात्र	निम्नवर्ग
२	लछमन	,,	,,	,,	गौण	,,
३	खुन्नू	,,	,,	,,	गौण वातावरण का स्रष्टा	,,
४	फुनिया	,,	,,	,,	,,	,,
५	सोहन	ज्योति	,,	,,	गौण	,,
६	मैना	,,	,,	,,	,,	,,
७	एक बालक	विश्वास	भाग३	प्रतिष्ठित	,,	,,
८	तीन लड़के	बैर का अन्त	भाग	अप्रतिष्ठित	,,	,,
९	साथी	खुन सफेद	भाग ८	,,	मुख्य	,,
१०	एक लड़का	बौड़म	भाग ८	,,	गौण	,,

विशेषताएं

	आयु
अपने पराए का ज्ञान नहीं, नवीन घटना की अभिव्यक्ति का प्राबल्य ।	७वर्ष
खेल के प्रति आकर्षण,स्वार्थ भावना ।	--
सामूहिक विनोद ।	४-५वर्ष
स्नेह करने वाले से लिपटना, आत्माभिव्यक्ति का प्राबल्य ।	२-३वर्ष
क्रोध करने वाले से भय,स्नेह देने वाले के प्रति सद्भावना, स्नेह प्रबल है जिस दिन से स्नेह मिलने लगा वह काम करने लगता है ।	--
क्रोध करने वाले से भय,स्नेह देने वाले के प्रति सद्भावना । मिठाई के प्रति मोह स्नेह मिलने पर मैना का स्वभाव बदलजाता है ।	--
बालक अपने संरक्षक की रक्षा करता है । यह पालित पुत्र है ,स्नेह पाता है अत: अपने संरक्षक की रक्षा चाहता है ।	--
अपने पराए शत्रु-मित्र की अज्ञनता, स्नेह देने वालों से घुल मिल जाना ।	
मिठाई से प्रेम,वातावरण का प्रभाव, अपने को माता-पिता की चिन्ता का एक मानना ।	४वर्ष
सहानुभूति पूर्ण बर्ताव से दोष स्वीकार करना ।	७-८वर्ष

क्रम	शिशु चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम ।	सामाजिक स्तर	पात्र प्रकार	वर्ग
११	वासुदेव	आधार	भाग ३	प्रतिष्ठित	कथानक का सूत्रधार ।	मध्यवर्ग
१२	मोहन	मृतक भोज	भाग ४	,,	गौण	मध्यवर्ग
१३	लिल्ली	मृत	भाग ४	,,	मुख्य	,,
१४	लालक	मांगे की घड़ी	भाग ४	,,	गौण पात्र	,,
१५	शारदा	लांछन	भाग ५	,,	कथानक का सूत्रधार	,,
१६	'मैं' सर्वनाम से संबोधित	कजाकी	भाग ५	,,	मुख्य	,,
१७	रुद्रमणि	महातीर्थ	भाग ७	,,	गौण	,,
१८	गंगाजली	बेटी का धन	भाग८	,,	कथानक का सूत्रधार ।	,,
१९	लाडली	बूढ़ी काकी	भाग८	,,	गौण	,,
२०	एक शिशु	तथ्य	कफन	,,	,,	,,
२१	एक शिशु	माता का हृदय	भाग२	,,	,,सूत्रधार	उच्चवर्ग
२२	ज्ञानप्रकाश	गृहदाह	भाग६	,,	गौणपात्र	,,

विशेषताएं	आयु
स्नेह देने वाली स्त्री को माता समझना, नारी के लिए शिशु आधार	५वर्ष
मिठाई के प्रति आकर्षण, स्वार्थी, स्नेह पाकर लाल रुठ छोड़ देना	८वर्ष
स्नेह देने वाली को माता के समान अधिक प्यार करना, उनके प्रति पक्षपात की भावना, बालक में अनुकरण की प्रवृत्ति ।	४वर्ष
शिशु स्नेह का प्रदर्शन कर अभिभावक को मिलाना, नवीन वस्तु के प्रति आकर्षण	--
शिशु स्नेह के प्रदर्शन के माध्यम से परिवार वालों से मित्रता, मिठाई, खिलौने के प्रति आकर्षण, स्थिति की गंभीरता के प्रति अज्ञानता, अतः फुसलाने पर मना किए गए बातों को बता देना । स्नेह देने वाले के प्रति अगाध प्रेम, शिशु में पशु-प्रेम, दया करने की भावना	४-५वर्ष
स्नेह देने वाली दाई के प्रति अगाध प्रेम, उसकी अनुपस्थिति में दुखी शिशु-स्नेह के द्वारा त्याग का उदय ।	२वर्ष
मां के न रहने पर पिता से अगाध प्रेम, वाक्पटुता ।	
वर्ग के साथ संरक्षता का भाव, स्नेह देने वाले के प्रति त्याग, रात्रि में भय संवेदनशील । स्नेह देने वालों से आत्मीयता	
स्नेह देने वाली दाई को शिशु माता के समान प्यार करता है, जल से खेलने के प्रति आकर्षण, शिशु स्नेह के कारण नारी के प्रतिशोध की भावना का अन्त । अपने पराए का ज्ञान नहीं, दूसरे शिशु के प्रति संवेदनशील	२-३वर्ष

'गुप्तधन' में स्नेह पाने वाला शिशु-चरित्र

	शिशु चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र प्रकार	वर्ग
१	रोहिणी	अनाथ लड़की	गुप्तधन भाग१	प्रतिष्ठित	मुख्य	निम्नवर्ग
२	मगनदास	त्रिया-चरित्र	,,	,,	,,	उच्च वर्ग
३	मसऊद	शेख मखमूर	,,	,,	,,	मध्य वर्ग
४	शान्ता	प्रेम-सूत्र	,,	,,	मुख्य(सूत्रधार)	उच्च वर्ग

उपन्यासों में स्नेह पाने वाले शिशु-पात्र

		उपन्यास-नाम				
१	निर्मला	निर्मला		,,	मुख्य	मध्य वर्ग
२	कृष्णा	,,		,,	गौण	,,
३	चन्द्रभानु	,,		,,	,,	,,
४	[illegible]	[illegible]		,,	,,	,,
५	मीना	गोदान		,,	,,	उच्चवर्ग
६	[illegible] शिशु					

विशेषताएं

	उम्र
(क) अपने भोलेपन से दूसरों का हृदय मोह लेने की क्षमता। (ख) अनुकूल परिस्थिति मिलने पर शिक्षा तथा कला में योग्यता प्राप्त करना।	३-४क
(क) अनाथ तथा होनहार बालक, गोद लिए जाने पर अनुकूल परिस्थिति के कारण शिक्षा दीक्षा, कला कौशल में योग्यता प्राप्त करना।	५-६
(क) शिशु पर आनुवंशिकता तथा वातावरण का प्रभाव, (ख) राजा व का पुत्र, ग्रामीण बालकों का नेता (ग) राज-काज की बात ऐसे भाव से सुनना जैसे अपने राज्य और खानदान के विषय में जानता हो।	७
(क) शिशु परिवार का केन्द्रबिन्दु। (ख) शिशु की सरलता, अबोधता तथा स्नेह पारिवारिक अनेक वैषम्य को मिटाने वाला (ग) शिशु परिवार का सूत्रधार, पथभ्रष्ट पिता को माता के प्रेम-सूत्र में बांधने वाली बालिका।	३-४
(क) इस वय का स्वाभाविक गुण काम से जी चुराना, मां की आवाज सुनकर अनसुनी कर देना। (ख) खेल की ओर अत्यधिक आकर्षण, बाजे की आवाज सुनकर दौड़ पड़ना (ग) वातावरण के अनुसार अज्ञात भय और शंका का उदय।	१५
(क) काम से जी चुराना, खेल में व्यस्त रहना (ख) समाज में होने वाले व्यवहार के प्रति जिज्ञासा (ग) मस्तिष्क की अपरिपक्वता के कारण अविद्या द्वारा अर्थ ग्रहण करना।	१०
(क) अपने से छोटे तथा हमजोली को चिढ़ाने की प्रवृत्ति (ख) इस वय के बालक स्वभाव के उधमी (ग) अपने ज्ञान के प्रदर्शन की स्वाभाविक प्रवृत्ति।	१२
(क) बालिकाओं के मन में अलंकार के प्रति आकर्षण (ख) वातावरण के अनुकूल वस्तु विशेष से अभिरुचि (ग) शैशव में ही किसी वस्तु के प्रति मानसिक प्रतिक्रिया का आविर्भाव।	३-६
(क) दुर्बल और कमजोर होने के कारण माता के स्नेह का केन्द्र बनना। (ख) नई चीज़ के प्रति आकर्षण, उसकी ओर लपकना; मूंछ को उखाड़ने की प्रवृत्ति।	१०माह

'गुप्तधन' में स्नेह पाने वाला शिशु-चरित्र

क्रम	शिशु चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र प्रकार	वर्ग
१	रोहिणी	अनाथ लड़की	गुप्तधन भाग१	प्रतिष्ठित	मुख्य	निम्नवर्ग
२	मगनदास	त्रिया-चरित्र	,,	,,	,,	उच्च वर्ग
३	मसऊद	शेख मखमूर	,,	,,	,,	मध्य वर्ग
४	शान्ता	प्रेम-सूत्र	,,	,,	मुख्य(सूत्रधार)	उच्च वर्ग

उपन्यासों में स्नेह पाने वाले शिशु-पात्र

क्रम	शिशु चरित्र के नाम	उपन्यास-नाम		सामाजिक स्तर	पात्र प्रकार	वर्ग
१	निर्मला	निर्मला		,,	मुख्य	मध्य वर्ग
२	कृष्णा	,,		,,	गौण	,,
३	चन्द्रभानु	,,		,,	,,	,,
४	जालपा	गबन		,,	,,	,,
५	मीना	गोदान		,,	,,	उच्चवर्ग

विशेषताएं

	उम्र
(क) अपने भोलेपन से दूसरों का हृदय मोह लेने की क्षमता। (ख) अनुकूल परिस्थिति मिलने पर शिक्षा तथा कला में योग्यता प्राप्त करना।	३-४क
(क) अनाथ तथा होनहार बालक, गोद लिए जाने पर अनुकूल परिस्थिति के कारण शिक्षा दीक्षा, कला कौशल में योग्यता प्राप्त करना।	५-६
(क) शिशु पर आनुवंशिकता तथा वातावरण का प्रभाव, (ख) राजा व का पुत्र, ग्रामीण बालकों का नेता (ग) राज-काज की बात ऐसे चाव से सुनना जैसे अपने राज्य और खानदान के विषय में जानता हो।	७
(क) शिशु परिवार का केन्द्रविन्दु। (ख) शिशु की सरलता, अबोधता तथा स्नेह पारिवारिक अनेक वैषम्य को मिटाने वाला (ग) शिशु परिवार का सूत्रधार, पथभ्रष्ट पिता को माता के प्रेम-सूत्र में बांधने वाली बालिका।	३-४
(क) इस वय का स्वाभाविक गुण काम से जी चुराना, माँ की आवाज सुनकर अनसुनी कर देना। (ख) खेल की ओर अत्यधिक आकर्षण, बाजे की आवाज सुनकर दौड़ पड़ना (ग) वातावरण के अनुसार अज्ञात भय और शंका का उदय।	१५
(क) काम से जी चुराना, खेल में व्यस्त रहना (ख) समाज में होने वाले व्यवहार के प्रति जिज्ञासा (ग) मस्तिष्क की अपरिपक्वता के कारण अविधा द्वारा अर्थ ग्रहण करना।	१०
(क) अपने से छोटे तथा हमजोली को चिढ़ाने की प्रवृत्ति (ख) इस वय के बालक स्वभाव के उधमी (ग) अपने ज्ञान के प्रदर्शन की स्वाभाविक प्रवृत्ति।	१२
(क) बालिकाओं के मन में अलंकार के प्रति आकर्षण (ख) वातावरण के अनुकूल वस्तु विशेष से अभिरुचि (ग) शैशव में ही किसी वस्तु के प्रति मानसिक प्रतिमा का आविर्भाव।	३-६
(क) दुर्बल और कमजोर होने के कारण माता के स्नेह का केन्द्र बनना। (ख) नई चीज़ के प्रति आकर्षण, उसकी ओर लपकना :-मूंछ को उखाड़ने की प्रवृत्ति।	१०माह

क्रम	शिशु चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	व सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
६	नवजात शिशु (गोबर झुनिया का जारज पुत्र)	गोदान		अप्रतिष्ठित	गौण	निम्न
७	मंगल	,,		प्रतिष्ठित	,,	,,
८	चुन्नू	,,		अप्रतिष्ठित	,,	,,
९	रामू	,,		,,	,,	,,
१०	रूपा	,,		प्रतिष्ठित	,,	मध्यवर्ग (किसान)
११	सोना	,,		,,	,,	,,

२- स्नेह वंचित शिशु-पात्र

१	रग्घू	अलग्योझा	मान० भाग१	सामान्य	मुख्य	निम्न
२	दो शिशु	झांकी	,,	,,	गौण	,,
३	तैंतर	तैंतर	,,३	प्रतिष्ठित	मुख्य	मध्य
४,	मुन्नू (श्यामा)	दुर्गा का मंदिर	,,७	सामान्य	गौण	,,

'गुप्तधन' में स्नेह-वंचित शिशु-पात्र

१	रामस्वरूप	दूसरी शादी	गुप्तधन भाग२	प्रतिष्ठित	,,	,,

विशेषताएं	उम्र वर्ष
(क) माता के अस्वस्थ होने के कारण पड़ोस की स्त्री द्वारा आकर्षण प्राप्त करना (ख) जन्म के समय अप्रत्यक्षरूप से परिवार की दशा में परिवर्तन लाना	जन्म के समय
नवीन वस्तु के प्रति कौतूहल, उस ओर लपकना, स्नेह के प्रति आग्रह,अपरिचित से डरना,स्नेह के प्रति आग्रह, मूंछ उखाड़ने के प्रति आकर्षण अत्यधिक स्नेह प्राप्त,अनुकरण की प्रवृत्ति, ग्रामीण बालक,धूल में खेलना	क स्वर्ष
(क) अपने नाम से अनेक सम्बन्ध स्थापित करने की प्रवृत्ति(रूपा से रुपया बनता है आदि) (ख) ग्रामीण बालिका, अत: पशु-प्रेम (ग) एक जगह की बात दूसरी जगह सजीव बनाकर कहना (घ) मिठाई के प्रति आकर्षण ।	५-६
(क) वाद-विवाद में अपने तर्क द्वारा दूसरों को पराजित करने की बाल-सुलभ प्रवृत्ति (ख) सौगात आने पर चटपट बांट-बखरा लगाने की प्रवृत्ति । (ग) परिवार की सबसे बड़ी लड़की होने के कारण अधिक समझदार तथा चिन्तनशील । (घ) सुखद वातावरण के प्रति आनन्दपूर्ण प्रतिक्रिया ।	१२
विमाता, स्नेह वंचित, अपनी परिस्थिति से उदासीन	१०
कलह की स्थिति में शिशु स्नेह से वंचित, नई स्थिति के प्रति कौतूहल	
स्नेह के अभाव में नवजात शिशु की क्रियाओं में शिथिलता, तैंतर के जन्म से माता-पिता तथा दादी के चरित्र पर प्रकाश ।	नवजात
मनोरंजन के अभाव में मारपीट, दूसरों का ध्यान आकर्षित करने की प्रवृत्ति	--
(क) मातृ-स्नेह-वंचित तथा सौतेली मां वाले शिशु के चेहरे से भोलापन और आकर्षण का लोप हो जाना । अपने मुख के ऐसे दयनीय भावों द्वारा पिता के हृदय को दहला देने वाला ।	४

उपन्यासों में स्नेह-वंचित शिशु-पात्र

क्रम	शिशु चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
१	बच्चों का समूह	वरदान		अज्ञात	गौण वातावरण का स्रष्टा ।	अज्ञात
२	सुमन, शान्ता	सेवासदन		प्रतिष्ठित	,,	मध्य
३	जियाराम	निर्मला		,,	गौण बाल-अपराधी	,,
४	सियाराम	,,		,,	गौण	,,
५	लल्लू	गोदान		अप्रतिष्ठित	,,	,,

विशेषताएं	उम्र वर्ष
(क) स्नेह करने वाले व्यक्तियों के पास बालकों का समूह जमा हो जाना (ख) बाल समुदाय के माध्यम से मुंशी शालिग्राम के वात्सल्य भाव तथा पितृ-हृदय पर प्रकाश ।	शिशुवर्ग
अवांछित अतिथि के रूप में मामा के यहां त्याज्य और स्नेह वंचित बालिकाएं	अज्ञात
(क) परिवार में विमाता के आगमन, बूढ़ी फूआ तथा विमाता के दोहरे शासन की प्रतिक्रिया बाल-मन पर, बालक का बिगड़ना, उद्दण्ड होना । (ख) मध्यवर्गीय परिवार के बालकों में अपना काम स्वयं करने में लज्जा का अनुभव करने की हीन भावना, (ग) उद्दण्ड बालक-- बड़ों के मुंह से लगना, बुरी संगति से चरित्र का पतन, आत्मीय जन के उपदेश से सद्वृत्ति का आगमन, उचित वातावरण न मिलने बाल-अपराधी, (घ) चोरी की खबर पुलिस में दी जाने पर बाल-अपराधी के मन में अन्तर्द्वन्द्व । बाल अपराधी परिवार में अपने को अभियोजित करने में असमर्थ ।	१ १२
(क) मातृ से वंचित शिशु के हृदय में करुण-विलाप, सुषुप्तावस्था में आत्मीयजन से चिमट जाना । बालक का मुंह भय और शंका से विकृत हो जाना । (ख) विमाता की आंखों में आंसू देखकर बालक के हृदय में ग्लानि नहीं अपितु अज्ञात, भय और शंका का उदय । (ग) बार-बार सौदा लौटाने वाले शिशु की मानसिक स्थिति, (घ) बालक का साधू के जीवन के प्रति जिज्ञासा और कौतूहल (ङ०) संवेदना पाकर ऐसे शिशु का रो पड़ना, शिक्षक के कठोर दण्ड से भयभीत (च) विमाता के विवेकपूर्ण सम्भाषण का प्रभाव बाल-मन पर, स्नेह से ठुकराया बालक स्नेहपूर्ण आश्रय के लिए विह्वल (छ) नवागन्तुक के साथ बालक की व्यवहार-कुशलता का प्रदर्शन ।	७
(क) माता की अस्वस्थ अवस्था में शिशु-मातृ-स्नेह-वंचित (ख) दूध न पाने के कारण दांत काटने की प्रवृत्ति, (ग) आने वाले शिशु की स्मृति से मृत शिशु की स्मृति अधिक वेदनामय ।	२

(३) समूह की भावना को प्रबल मानने वाला शिशु वर्ग

क्रम	शिशु चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
१	मोहसिन	ईदगाह	मानसरोवर भाग१	सामान्य	गौण	निम्न
२	महमूद	,,	,,	,,	,,	,,
३	नूरे	,,	,,	,,	,,	,,
४	सम्मी	,,	,,	,,	,,	,,
५	बाल-वृन्द	स्वामिनी	,,	प्रतिष्ठित	,, वातावरण का सृष्टा	,,
६	गया	गुल्ली डंडा	,,	अज्ञात	गौण	,,
७	मैं (सर्वनाम से सम्बोधित)	बड़े भाई साहब	,,	प्रतिष्ठित	मुख्य	मध्य
८	बाल-समुदाय	दो बैलों की कथा, [illegible]	,,भाग२	सामान्य	गौण वातावरण का सृष्टा	मध्य
९	मैं और हलधर	चोरी	,,भाग५	,,	मुख्य	,,
१०	बाल-समुदाय	शंखनाद	,, भाग७	प्रतिष्ठित	गौण	,,
११	बाल-समुदाय	बूढ़ी काकी	,, भाग८	,,	,,	,,
१२	कान सिंह	सच्चाई का उपहार	,,भाग८	,,	कथानक का सूत्रधार	उच्च
१३	जयराम	,,	,,	,,	गौण वातावरण का सृष्टा	,,

विशेषताएं	उम्र वर्ष
त्योहार में आनन्द, सामूहिक खेल, पैसे के अनुसार खिलौने क खरीदने की कल्पना, ज्ञान का प्रदर्शन, खेल में प्रतिद्वन्द्विता, नवीनता के प्रति आकर्षण ।	७-८
त्योहार में प्रसन्नता, पैसा प्रसन्नता का एक कारण, उसका प्रदर्शन, अपने से योग्य साथी से प्रभावित ,कल्पना द्वारा निष्प्राण वस्तु में प्राण देना, स्वतन्त्रता-प्रेमी, खेल द्वारा सीखना ।	,,
त्योहार में प्रसन्नता , समुदाय में शरारत, आत्म-प्रशंसा,अनुकरण,कल्पना द्वारा निष्प्राण वस्तुओं में प्राण देना ।	,,
अल्पभाषी(शिशु-विशेष की प्रवृत्ति) उपयोगिता का ख्याल, दूसरे मित्र को हीन दिखाने की प्रवृत्ति ।	,,
नवीन वस्तु पाने पर गर्व का आविर्भाव, यात्रा के लिए अधिक उत्सुकता और उमंग	--
खेल में वाद-विवाद, मार-पीट	--
खेल के प्रति आकर्षण, सफलता पाने पर निर्भीकता, अधिक दबाव देने पर उस कार्य के प्रति विरोधी प्रतिक्रिया , दण्ड पाने पर सुधार का मंसूबा, स्नेह से सुधार ।	६
ग्रामीण बालकों में पशु-प्रेम, नवीन घटना के प्रति संवेगात्मक प्रतिक्रिया, उसके विषय में वार्तालाप ।	--
सजा पाने पर मृत्यु की सुखद कल्पना , हवाई किले बनाना, निर्दोषिता प्रमाणित होने पर आनन्द ।	८
साप्ताहिक फेरे वाले के प्रति उत्सुकता, चिढ़ाने की प्रवृत्ति	--
कुत्तों को चिढ़ाने की प्रवृत्ति, माता-पिता की उदासीनता से बालकों का उद्दण्ड होना	--
धन का अभिमान, आत्म-प्रदर्शन, सहानुभूति की भावना, गुणग्राहिता,विध्वंसात्मक प्रवृत्ति, प्रतिशोध की भावना ।	११-१२
धन का प्रदर्शन, अनुशासन के अभाव में चरित्र का बिगड़ना, प्रतिशोध की भावना, विध्वंसात्मक प्रवृत्ति, स्नेह और सद्भाव से कार्य में परिवर्तन ।	,,

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
१४	वली मुहम्मद	सच्चाई का उपहार,	मानस० भाग८	प्रतिष्ठित	गौण	उच्च

'गुप्तधन'

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
१	बालकों का समूह	शैलानी बंदर	गुप्तधन भाग२	ग्रामीण	गौण वातावरण का सृष्टा	सामान्य

उपन्यास

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
१	बालकों का समूह	रंगभूमि	--	--	,,	निम्न
२	शिशुओं का समुदाय	गबन	--	--	,,	--
३	बच्चों का समूह	गोदान	अस्पष्ट	अस्पष्ट	,,	निम्न

४ सामाजिक आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा शिशु वर्ग

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
१	आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा नथुवा	सौभाग्य के कोड़े	मानसरोवर भाग३	अप्रतिष्ठित	मुख्य	,,
२	मगनसिंह	गुप्तधन	भाग ८	,,	गौण	,,
३	एक बालिका	जुर्माना	कफ़न	,,	,,	,,
४	भान	शंखनाद	भाग७	,,	मुख्य	मध्य

विशेषताएं	उम्र वर्ष
मित्र की सच्चरित्रता से प्रभावित	
समूह में बालकों का एक-सा व्यवहार करना । बन्दर को देखकर बच्चों का हो-हल्ला मचाना, कंकड़-पत्थर फेंकना, चिढ़ाना । सीखी हुई कविता को यथोचित स्थान पर प्रयोग ।(बन्दर मामूं और , कहां तुम्हारा ठौर)पागल को देखकर समूह की भावना से प्रेरित होना और चिढ़ाना । पागल के प्रति अनेकानेक भावना को तृप्त करने के लिए अनेक प्रश्न पूछना ।	बालकवर्ग
समूह में समूह की भावना से प्रेरित-- किसी बात की गम्भीरता को नहीं समझना गांव में आने वाले अपरिचित बर्ड व्यक्ति को देखकर हांक लगाना तथा बीसों बच्चों का वहां एकत्रित हो जाना, एक खेल के समाप्त हो जाने पर दूसरे खेल के लिए दौड़ना ।	,,
खेल तथा मनोरंजन के लिए दूर-दूर के बालकों के इकट्ठे होने की प्रवृत्ति ।नये व्यक्ति को देखकर बच्चों का खेल के लिए उतावलापन ।बड़ों के आ जाने से खेल में और भी उत्साह और व उमंग का उदय ।	शी शिशु
किसी वस्तु के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न होने पर बालकों में अनेक प्रश्न पूछने की प्रवृत्ति	,,
किसी वस्तु पर अधिकार जमाने के लिए जल्दी से उसपर बैठ जाना । शिशु के मन में सिपाही सें भय ।	
अपरिवर्तनशील उपभोग तथा ऐश-आराम के प्रति आकर्षण, अपने धर्म के प्रति मोह उचित वातावरण से मानसिक विकास ।	--
शिशु की मानसिक वेदना उसके चेहरे पर स्पष्ट	--
शारीरिक प्रतिक्रिया-- बीमारी में चिड़चिड़ापन	--
मानसिक प्रतिक्रिया --शिशु-स्नेह के कारण आलसी, पिता का कर्म-पथ पर अग्रसर होना , किसी वस्तु के लिए मचलना ।	४-५

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
५	मंगल	दूध का दाम	मानसरोवर भाग२	अप्रतिष्ठित	मुख्य	निम्न

ख ५- दुर्ललित शिशु वर्ग

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
१	प्रकाश	माँ	,,भाग१	सामान्य	मुख्य	,,
२	जियावन	मंदिर	,,भाग५	अप्रतिष्ठित	,,	,,
३	दो शिशु	स्वर्ग की देवी	,,भाग३	प्रतिष्ठित	गौण	मध्य
४	सुरेश	दूध का दाम	,,भाग२	प्रतिष्ठित	,,	उच्च
५	मिठुआ	रंगभूमि	रंगभूमि	अप्रतिष्ठित	,,	निम्न
६	घीसू	,,	,,	,,	,,	,,

६- बाल विधवा वर्ग

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
१	सुभागी	सुभागी	मानस० भाग१	सामान्य	मुख्य	निम्न
२	कैलाशकुमारी	नैराश्यलीला	,,भाग३	प्रतिष्ठित	गौण	मध्य
३	झुनिया	गोदान	गोदान	अप्रतिष्ठित	,,	निम्न

प्रेमचन्द के व्यक्तिपरक शिशु-पात्र

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
१	हामिद	ईदगाह	मा०स० भाग१	प्रतिष्ठित	मुख्य	निम्न

विशेषताएं	उम्र वर्ष
मानसिक प्रतिक्रिया खेल में जाति पाँति की भावना से मुक्त ,पशु-प्रेम,स्नेह वंचित शिशु की आत्मा की तृप्ति पशु-प्रेम द्वारा ,स्नेह वंचित बालक, एकान्त प्रेमी ।	८
माता का जीवनाधार, उसके लिए सुन्दर कल्पनाएं , मृत्यु के समय शिशु के भविष्य की चिन्ता, सुख-दु:ख का प्रभाव बाल-मन पर,शरारत की प्रवृत्ति ,बारह चौदह वर्ष में मानसिक द्वन्द्व । प्रकाश के सामने जो कर्तव्य हैं, उन्हें वह नहीं करता । माता की बात नहीं मानता ।	१०
मीठी वस्तु के लिए लालच, बड़ों के लिए अच्छी चीजें लाने की प्रतिज्ञा	--
परिस्थिति-विशेष में सम्मिलित भोजन का अभाव , शिशु का बिगड़ना	३ - ४
अधिक व प्यार से बिगड़ जाना, खेल में धक्का देने की प्रवृत्ति, दूसरे पर प्रभुत्व जमाने का भाव ।	८
सारी इच्छाएं पूरी करने के कारण दुर्लालित होना, अभिभावक की चिन्ता तक न करना, बुरी संगति में पड़कर बिगड़ जाना ।	१२-१३
परिवार के दोहरे शासन से बालक का बिगड़ जाना, तरह-तरह कीकहावतों तथा कविता द्वारा दूसरों को चिढ़ाना, क्षोभ की भावना, लड़ाई में हार जाने पर प्रतिशोध की भावना में प्रतिद्वन्द्वी पर थूकना, ग्रामीण बालकों में विदेशियों के प्रति अजीब कौतूहल ।	,,
विशेष प्रोत्साहन से कार्यदक्षता , विवाह के सम्बन्धमें अज्ञानता,दु:ख से पलायन करने की प्रवृत्ति ,दिवास्वप्न ।	११
विवाह के प्रति अज्ञानता, दु:ख से पलायन की प्रवृत्ति,की बढ़ती हुई दिवास्वप्न सरल ,चंचल, आकर्षक बाल-विधवा का हृदय भाभियों के व्यंग्य और हास-विलास से प्रभावित होकर गोबर के व कौमार्य पर ललच उठता है ।	१३ किशोरावस्था
त्यौहार में सामूहिक खेल और आनन्द, मृत्यु के प्रति आशामय कल्पना,खेल में प्रतिद्वन्द्विता, नवीनता के प्रति आकर्षण,त्याग की भावना,वातावरण से प्रभावित कल्पनाएं,ग्रामीण बालक का मस्तिष्क साफ स्लेट की भांति, चिढ़ाने की प्रवृत्ति ।	५

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
२	कृष्णचन्द्र	डामुल का कैदी	मानस० भाग२	सामान्य	मुख्य	निम्न
३	बाजबहादुर	सच्चाई का उपहार	,,भाग८	अज्ञात	,,	,,
४	बड़े भाई साहब	बड़े भाई साहब	,,भाग१	प्रतिष्ठित	कथानक का सूत्रधार	मध्य
५	एक बालिका	दो बैलों की कथा	,,भाग२	,,	गौण वातावरण का सृष्टा	,,
६	रेवती	मृतक भोज	,,भाग४	,,	मुख्य	मध्य
७	सूर्यप्रकाश	प्रेरणा	,,भाग४	,,	,,	,,
८	चिन्ता	सती	,,भाग५	,,	,,	,,
६	जातसिंह	कप्तानसाहब	,,भाग५	सामान्य	मुख्य	मध्य
१०	मुन्नू	विमाता	,,भाग८	प्रतिष्ठित	कथानक का सूत्रधार	,,
११	रत्ना	सौभाग्य के कोड़े	,,भाग३	,,	गौण	उच्च
१२	सत्यप्रकाश	गृहदाह	,,भाग६	,,	मुख्य	उच्चवर्ग

गुप्तधन में व्यक्तिपरक शिशुपात्र

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
१	मुन्नी	गुप्तधनभाग२ छुट्टी	अज्ञात	मुख्य	अज्ञात	अज्ञात
२	तुलिया	,,भाग२ देवी	~~प्रतिष्ठित~~ गुप्तधन भाग२	~~मुख्य~~ प्रतिष्ठित	~~निम्न~~ मुख्य	निम्न
३	मैं सर्वनाम	होली की छुट्टी	,,	,,	,,	मध्य

उपन्यास

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
१	प्रताप	वरदान	—	,,	,,	,,

विशेषताएं	उम्र वर्ष
माता-पिता के दृढ़ संस्कारों को लेकर शिशु का जन्म ।	जन्म से१५
दृढ़ चरित्र के बालक में सत्य के प्रति निष्ठा ,अपराधी बालक के क्षमा मांगने पर दया का आविर्भाव ।	--
छोटों पर शासन करने की भावना, चित्र आदि बनाकर प्रदर्शन,अन्त:प्रवृत्ति	१४-१५
ग्रामीण बालकों में पशु-प्रेम ,स्नेह वंचित शिशु की आत्मा की तृप्ति पशु-प्रेम के द्वारा ,परतन्त्रता के प्रति विद्रोह ,निर्दोषिता सिद्ध करना ।	--
बड़े बालक में छोटे के प्रति स्नेह और त्याग, मर्यादा की रक्षा का भाव ।	१३
अपराधी बालक में नयी-नयी शरारत खोज निकालने की प्रवृत्ति ।	--
खेल में अनुकरण ।	--
शिक्षा तथा यथोचित शिक्षा तथा बर्ताव के अभाव में बुरी आदतें ।	१५
मृत माता के स्मरण से दु:ख, विमाता के स्नेह से माता का स्मरण, अधिक स्नेह से हठीला बनना ।	-
बालक में बालक के प्रति सहानुभूति ।	--
विमाता, स्नेहवंचित , जीवन से उदासीन, एकान्त प्रेमी, शिशु-स्नेह,दुर्व्यवहार से उद्दण्ड होना ।	-
शैशव तथा बाल्यकाल में सांसारिक चिन्ताओं से मुक्त ,भोली बातों से सब के हृदय में स्थान बना देने वाली ।	५
बालिका के मन में गहने के प्रति आकर्षण ,नारी सुलभ लज्जा का भाव ,बाल्यकाल में पड़ी हुई स्नेहग्रन्थि जीवनपर्यन्त उसी प्रकार निर्मल बना रहना ।	५
इस आयु के बालकों में चोरी करने की निपुणता प्राप्त करने की क्षमता ,चोरी के समय के मनोभाव --अन्तर्द्वन्द्व,प्रथम चोरी के समय अपराध महापाप,धीरे-धीरे आदत और तब चोरी साधारण बात । मनगढ़ंत कहानी तथा आंसुओं द्वारा माता के हृदय पर विजय प्राप्त करना ।	किशोरावस्था
अपने साथियों की शंका का निदान,योग्यतापूर्वक करना।इसमें सत्यवादी होने का विशेष गुण।८से१० वर्ष की आयु में अत्यधिक ज्ञान रखने की उत्कण्ठा ,सेवाभाव अपरिचित व्यक्ति से संकोच ।	८१ ६-१४

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
२	वृजरानी	वरदान	—	प्रतिष्ठित	मुख्य	मध्य
३	मायाशंकर	प्रेमाश्रम	—	प्रतिष्ठित	„ अपरिवर्तनशील	उच्च
४	मुन्नी	प्रेमाश्रम	—	„	गौण	„
५	शंखधर	कायाकल्प	—	„	गौण	उच्च (राजपरिवार)

व्यक्ति-परक और समूहपरक शिशु-पात्र

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
१	एक बालिका	पिसनहारी का कुआं ।	मास०,भाग ५	अप्रतिष्ठित	मुख्य	निम्न

गुप्त धन तथा उपन्यासों में व्यक्तिपरक तथा समूहपरक शिशु पात्र नहीं हैं ।

अपरिवर्तनशील शिशु-पात्र

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
१	मैं(सर्वनाम)एवं	गुल्ली डंडा	मा०स०भाग१	प्रतिष्ठित	मुख्य	मध्य
२	ज्ञानप्रकाश	गृहदाह	मा०स०भाग६	„	गौण	उच्च
३	सत्यप्रकाश	„	„	„	मुख्य	उच्च
४	तुलिया	देवी	गुप्तधन भाग२	„	„	निम्न
५	मायाशंकर	प्रेमाश्रमउपन्यास	—	„	„	उच्च

विशेषताएं	उम्र वर्ष
छोटे बच्चों की मैत्री आरम्भ होते ही चिड़ियों की भांति चहकना । अपने खिलौने बाजे,किताब आदि का प्रदर्शन करना । बुद्धिमान मित्र की बातें चित्रवत सुनना, बालकों की जिज्ञासा मनोवैज्ञानिक ढंग से पूरी न की जाय तो गलत भाव का उदय।	६-१३
होनहार बालक शैशवकाल में ही अधिक समझदार ,मिष्ठभाषी और विनयशील । सेवा भाव का उदय, परिवार में अनेक व्यक्तियों के रहने पर भी पिता का नहीं किन्तु सदाचारी ताऊ का आदर्श ग्रहण करना ,अपने वजीफे के पैसे गरीब बालकों को दे देना ।	३-१५
माता से अत्यधिक स्नेह पाने वाली बालिका, माता के देहान्त के पश्चात् माता के लिए हुड़क-हुड़क कर प्राण दे देना ।	२
शिशु को स्नेह देने वाले व्यक्ति से अधिक प्यार । खोये हुए पिता के प्रति जिज्ञासा और वेदना । मनमें आई हुई बात को पूरी करने की लगन ।	ब--
गढ़ा खोदकर खेलना, खेल में एकान्तता, माता-पिता के दृढ़ संस्कारों को लेकर शिशु का जन्म ,सामूहिक खेल ।	७
सामूहिक खेल में लगन,मारपीट, खेल में जाति-पांति की भावना का अभाव ,आंसू द्वारा धमकी, यात्रा के लिए प्रसन्नता, अपने को बड़ा दिखाने की प्रवृत्ति(प्रेमचन्द ने इस कहानी में इस पात्र को अपरिवर्तनशील दिखाया है यही उसके चरित्र में सर्वप्रमुख है)	१२-१४
अपने पराया का ज्ञान नहीं, दूसरे शिशु के प्रति संवेदनशील	
स्नेह वंचित ,जीवन से उदासीन,एकान्तप्रिय,शिशु-स्नेह,दुर्व्यवहार से उद्दण्ड होना ।	
गहनों के प्रति आकर्षण, बचपन का प्रेम,जीवनपर्यन्त उसी रूप में	५
उच्चवर्ग का पात्र होने पर भी उसमें वर्गगत अहंकार नहीं । चरित्र-निर्माण तथा आदर्श ग्रहण की दृष्टि से किशोरावस्था जीवन की सबसे कोमल अवस्था ।सरल, उदार,निष्कपट,बाबा का प्रभाव चरित्र पर,स्थिर चरित्र का बालक ,साथियों के प्रति सद्भाव ,छोटी बहन से अत्यधिक स्नेह की भावना ।	०२ ३-१५

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
६	सोना	गोदान	--	आरंभ में प्रतिष्ठित बाद में गरीब किसान	गौण	मध्यवित किसान

परिवर्तनशील शिशु-पात्र

१	नथुआ	सौभाग्य के कोड़े	मा०स०३	अप्रतिष्ठित	मुख्य (समूहपरक)	निम्न
२	ज्ञानसिंह	कप्तानसाहब	,, ५	सामान्य	मुख्य (व्यक्तिपरक)	मध्य

उपन्यास

१	मिठुआ	रंगभूमि	--	अप्रतिष्ठित	गौण (समूहपरक)	निम्न
२	घीसू	,,	--	,,	,,	,,

उच्च वर्ग के शिशु चरित्र

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	
१	दो शिशु	शिकारी	मा०स०१	प्रतिष्ठित	समूहपरक,गौणपात्र	
२	नवजात शिशु	मिसपद्मा	,, २	,,	,,	,, वातावरण का स्रष्टा
३	सुरेश	दूध का दाम	,,२	,,	,,	,,
४	परमानन्द	एक आंच की कसर	,,२	,,	,,	कथानक का सूत्रधार
५	एक शिशु	माता का हृदय	,,३	,,	,,	गौण सूत्रधार
६	रत्ना	सौभाग्य के कोड़े	,,३	,,	व्यक्तिपरक गौणपात्र	

विशेषताएं	उम्र वर्ष
वाद-विवाद में अपने तर्क द्वारा दूसरों को पराजित करना । सौगात आने पर चटपट बांट-बखरे लगाना । छोटे बच्चों को पाकर उसे सजाना-संवारना । परिवार में बड़ी बालिका होने के कारण अधिक समझदार ।	१२
उपभोग तथा ऐश-आराम के प्रति आकर्षण, अपने धर्म के प्रति मोह, उचित वातावरण से मानसिक विकास । यथोचित शिक्षा तथा वर्ताव के अभाव में बुरी आदतें ।	
अत्यधिक लाड़-प्यार से बिगड़ जाना ,बुरी आदतें पड़ना ,, ,, ,, परिवार में दो व्यक्तियों के शासन से बच्चों के मनोविकास में बाधा ।	

चरित्रों की विशेषताएं	आयु
डराने पर वस्तु-विशेष से संवेग का प्रस्थापन,शिशु को देखकर नारी के हृदय में मातृत्व का उदय ।	५ -६ २ -३
शिशु जन्म के समय पति की अनुपस्थिति , पत्नी के लिए वेदनापूर्ण ,शिशु के माध्यम से पति की याद ।	नवजात
अधिक प्यार से बिगड़ जाना ,खेल में धक्का देने की प्रवृत्ति,दूसरे पर प्रभुत्व जमाने का भाव ।	८
शिशु की अज्ञानता द्वारा पिता का चरित्र प्रकाश में आता है ।	७
स्नेह देने वाली दाई को शिशु माता के समान व प्यार करता है,जल से खेलने के प्रति आकर्षण,शिशु स्नेह के कारण नारी के प्रतिशोध की भावना का अन्त । बालक में बालक के प्रति सहानुभूति ।	२-३ वेलम्मा

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
७	ज्ञानप्रकाश	गृह्दाह	मा०स०६	प्रतिष्ठित	समूल्यरक अपरिवर्तनशील गौणपात्र
८	सत्यप्रकाश	,,	,,	,,	व्यक्तिपरक अपरिवर्तनशील मुख्यपात्र
६	रामगुलाम	गरीब की हाय	,,८	आरम्भ में प्रतिष्ठित बाद में अप्रतिष्ठित	बाल अपराधी वातावरण का स्रष्टा
१०	जगतसिंह	सच्चाई का उपहार	,,	प्रतिष्ठित	समूल्यरक कथानक का सूत्रधार
११	जयराम	सच्चाई का उपहार	,,	,,	समूल्यरक गौण वातावरण का स्रष्टा
१२	वली मोहम्मद	सच्चाई का उपहार	,,	,,	समूल्यरक गौण पात्र

गुप्तधन में उच्च वर्ग के शिशु-चरित्र

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
१	मगन	त्रिया-चरित्र	गुप्तधन भाग१	प्रतिष्ठित	समूल्यरक मुख्य
२	तिलोत्तमा	प्रतिशोध	,, भाग२	प्रतिष्ठित	समूल्यरक गौण वातावरण का स्रष्टा

उपन्यासों में शिशु पात्र उच्चवर्ग के

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
१	मीनू	गोदान	—	,,	समूल्यरक गौण वातावरण का स्रष्टा।
२	शंखधर	कायाकल्प	—	,,	व्यक्तिपरक गौण

चरित्रों की विशेषताएं	आयु वर्ष
अपने पराये का ज्ञान नहीं, दूसरे शिशु के प्रति संवेदनशील	—
विमाता, स्नेह से वंचित, जीवन से उदासीन, एकान्तप्रेमी, शिशु स्नेह, दुर्व्यवहार से उद्दण्ड होना ।	--
माता -पिता के संस्कारों का प्रभाव, बालक के अचेतन मन पर, अभिभावक की लापरवाही से बालक का पतन ।	—
धन का अभिमान, आत्मप्रदर्शन, सहानुभूति, गुणग्राहिता, विध्वंसक प्रवृत्ति प्रतिशोध की भावना ।	११-१२
धन का प्रदर्शन, अनुशासन के अभाव में चरित्र का बिगड़ना, प्रतिशोध की भावना, विध्वंसक प्रवृत्ति, स्नेह और सद्व्यवहार से काम में परिवर्तन ।	,,
मित्र की सच्चरित्रता से प्रभावित ।	,,
(क) इस शिशु में आनुवंशिकता तथा वातावरण दोनों का प्रभाव (ख) अनाथ बालक यथोचित परिस्थिति पाकर सुशील, दृढ़ तथा अनेकानेक कठिनाइयों का सामना करने वाला बनता है ।	किशोरावस्था
(क) बालकों के मन में खिलौनों के प्रति आकर्षण (ख) इस आयु में दौड़धूप कर काम करना तथा माता की सहायता करने एवं अपने को उपयोगी सिद्ध करने का मनोविज्ञान ।	३-४
(क) दुर्बल और कमजोर शिशु के प्रति माता के हृदय में अगाध स्नेह (ख) शिशु स्नेह द्वारा कृत्यदाम्प्य से पारिवारिक कलह का अन्त । (ग) ममता और शिशु-स्नेह के कारण पारिवारिक उत्पीड़न और यातना की भयानक स्थिति, एक रमणी को देखकर दार्शनिक पुरुष का भी प्रभावित होना ।	१०माह
शिशु स्नेह देने वाले व्यक्ति को माता-पिता से अधिक प्यार करने की भावना खोये हुए पिता के प्रति शिशु का प्रेम और वेदना, किसी कार्य के प्रति लगन ।	--

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी-का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
३	एक बालिका	कायाकल्प	--	प्रतिष्ठित	समूहपरक मुख्यपात्र
४	सोहन	निर्मला	--	,,	गौणपात्र बल
५	मायाशंकर	प्रेमाश्रम	--	,,	व्यक्तिपरक मुख्यपात्र
६	मुन्नी	कर्मभूमि प्रेमाश्रम	--	,,	व्यक्तिपरक गौण
७	लल्लू	कर्मभूमि	--	,,	समूहपरक गौण
८	मैना	,,	--	,,	,, ,,

मध्यवर्ग के शिशु-पात्र

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी-का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
१	बड़े भाई साहब	बड़े भाई साहब	मा०स०भाग१	प्रतिष्ठित	व्यक्तिपरक कथानक का सूत्रधार
२	मैं(सर्वनाम) से संबोधित	,,	,,	,,	समूहपरक मुख्यपात्र
३	मैं(सर्वनाम) से	गुल्ली डंडा	,,	,,	अपरिवर्तनशील मुख्यपात्र

चरित्रों की विशेषताएं	आयु वर्ष
(क) अपरिचित व्यक्ति को देखकर बालक के मन में भय और संशय का आविर्भाव । (ख) इस वय में शिशु अपना पूरा परिचय देने में असमर्थ ।	४
अल्पायु में देहान्त, माता-पिता तथा निर्मला के चरित्र पर प्रकाश डालता है ।	१
संवेगात्मक विकास-- माता को दुखी देखकर उसे प्रसन्न करने के लिए मुस्कुराना	
उच्च वर्ग का पात्र होने पर भी उसमें वर्गगत अहंकार नहीं । चरित्र-निर्माण तथा	३-४
आदर्श ग्रहण की दृष्टि में किशोरावस्था जीवन की सबसे कोमल अवस्था ।	१५
मायाशंकर अपने पर अपने उदार सरल निष्कपट तथा उच्च विचार वाले चाचा का प्रभाव (संस्कारगत प्रभाव, वातावरण का प्रभाव)दोनों , अपने गरीब साथियों के प्रति सहृदय तथा उदार छोटी बहन से अत्यधिक स्नेह की भावना, स्नेह स्थिर चरित्र का बालक ।	
अशान्त परिवार--माता-पिता के आपसी वैमनस्य का प्रभाव अचेतन रूप से शिशु पर, शिशु का माता के स्नेह का केन्द्रबिन्दु बन जाना, माता के देहान्त के बाद मुन्नी का हुड़क-हुड़क कर मर जाना ।	०-२
शिशु का मूंछों की ओर आकर्षण, कभी-कभी स्नेह देने वाले से मुंह मोड़ लेना, ऊपर रखी हुई चीज के प्रति आकर्षण ।	३-४
सुशील बालिका। माता के न चाहने पर भी सौतेले भाई से अधिक स्नेह करना। परिवार का केन्द्र । किशोरावस्था में एक ही परिवार में कई विचारधारा के व्यक्तियों से प्रभावित होने पर भी उदार,सरल तथा उच्च विचार वाले भाई का आदर्श ग्रहण करना । अति संवेदनशील । सब के दुखों में समभागिनी ।	६ १२
छोटे पर शासन करने की भावना, चित्र आदि बना कर प्रदर्शन, अन्त:प्रवृत्ति ।	१४-१५
खेल के प्रति आकर्षण,सफलता पाने पर निर्भीकता, अधिक दबाव देने पर इस कार्य के प्रति विरोधी प्रतिक्रिया, दण्ड पाने पर सुधार का संकल्प, स्नेह से बालक का सुधार ।	६
सामूहिक खेल में लगन,मारपीट,खेल में जाति-पांति की भावना का अभाव,बांसुरी द्वारा बकरी,यात्रा.के लिए प्रसन्नता, अपने को बड़ा दिखाने की प्रवृत्ति ।	१२-१४

क्रम	शिशु-चित्र चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम		सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
४	एक बालिका	कुत्सा	मा०स०२		प्रतिष्ठित	समूहपरक मुख्यपात्र
५	एक बालिका	दो बैलों की कथा	,,	,,	,,	व्यक्तिपरक गौण वातावरण की सृष्टा
६	बालसमुदाय	दो बैलों की कथा	,,	,,	सामान्य	समूहपरक गौण वातावरण के सृष्टा ।
७	एक शिशु	बासी भात में खुदा का साझा	,,	,,	,,	समूहपरक,गौण
८	कुन्नी	लाटरी	,,	,,	,,	,, ,, वातावरण की सृष्टा ।
९	कैलाशकुमारी	नैराश्यलीला	,,	३	प्रतिष्ठित	समूहपरक मुख्य पात्र
१०	दो शिशु	स्वर्ग की देवी	,,	,,	,,	,, गौणपात्र
११	वासुदेव	आधार	,,	३	प्रतिष्ठित	,, कथानक का सूत्रधार
१२	तैंतर	तैंतर	,,	३	,,	समूहपरक मुख्यपात्र
१३	सिद्धू	,,	,,	,,	,,	,, गौणपात्र
१४	रेवती	मृतक भोज	,,	४	,,	व्यक्तिपरक मुख्यपात्र
१५	सूर्यप्रकाश	प्रेरणा	,,	४	,,	व्यक्तिपरक मुख्यपात्र
१६	मोहन	मृतक भोज	,,	भाग४	,,	समूहपरक गौण पात्र
१७	चिन्नी	भूत	,,	,, ४	,,	समूहपरक मुख्य पात्र
१८	[illegible]	मामी की मढ़ी	,,	,, ,,	,,	समूहपरक गौण पात्र

चरित्रों की विशेषताएं	आयु वर्ष
वातावरण का प्रभाव अत: कम आयु में अनुचित ज्ञान ।	१०
[illegible], ग्रामीण बालकों में पशु-प्रेम, स्नेह वंचित शिशु की आत्मा की तृप्ति पशु प्रेम द्वारा ,परतन्त्रता के प्रति विद्रोह ,निर्दोषिता सिद्ध करना।	--
ग्रामीण बालकों में पशु-प्रेम, नवीन घटना के प्रति संवेगात्मक प्रतिक्रिया , उसके विषय में वार्तालाप ।	--
अनैतिक कार्य करने पर माता-पिता के मन में शिशु के अनिष्ट का भय एवम् शंका ।	वर्ष के लगभग
जादू के प्रति जिज्ञासा,बालिका में आभूषण-प्रेम, नये समाचार सुनने की प्रवृत्ति ।	१[illegible]र्ष
विवाह के प्रति अज्ञानता, दुख से पलायन की प्रवृत्ति, दिवा स्वप्न ।	१३
खान-पान की परिस्थिति-विशेष में संयमित भोजन का अभाव ,शिशु का बिगड़ना ।	३-४
स्नेह देने वाली स्त्री को माता समझना,नारी के लिए शिशु-आधार ।	५
स्नेह के अभाव में नवजात शिशु के क्रीड़ाओं में शिथिलता, संतर के जन्म से दादी तथा माता-पिता का चरित्र प्रकाश में आता है ।	नवजात
नवजात शिशु को देखने की जिज्ञासा, नवीन वस्तु के विषय में वार्तालाप बालकों में शिशु-स्नेह ।	--
बड़े बालक में छोटे के प्रति स्नेह और त्याग, मर्यादा की रक्षा का भाव (विशेष आर्थिक स्थिति बदलने पर भी संस्कार वही)	१२-१४
मरावी बालक में नई-नई शरारत खोज निकालने की प्रवृत्ति ,परिस्थिति विशेष में अपराध के प्रति लज्जा , ग्लानि और क्षोभ ।	--
मिठाई के प्रति आकर्षण, स्वार्थी, स्नेह पाकर बाल हठ छोड़ देना ।	८
स्नेह देने वालों को माता-पिता से अधिक प्यार करना, उनके प्रति पक्षपात की भावना, बालक में अनुकरण की प्रवृत्ति ।	४
शिशु-स्नेह का प्रदर्शन कर अभिभावक को मिलाना, नवीन वस्तु के प्रति आकर्षण ।	--

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम		सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
१९	फेंकू	निमन्त्रण	मा०स०५		सामान्य	समूहपरक,कथानक का सूत्रधार
२०	चिन्ता	सती	,,	,,	प्रतिष्ठित	व्यक्तिपरक,मुख्यपात्र
२१	मैं और हलधर	चोरी	,,	,,	सामान्य	समूहपरक,मुख्यपात्र
२२	शारदा	लांछन	,,	,,	प्रतिष्ठित	,, कथानक का सूत्रधार
२३	मैं(सर्वनाम से संबोधित)	कज़ाकी	,,	,,	प्रतिष्ठित	समूहपरक,मुख्य पात्र
२४	जगतसिंह	कप्तान साहब	,,	,,	सामान्य	व्यक्तिपरक, परिवर्तनशील मुख्य पात्र
२५	चुन्नी	इस्तीफा	,,	,,	,,	समूहपरक,गौण,वातावरण की स्रष्टा।
२६	मन्नू	दुर्गा का मंदिर	,,	७	,,	समूहपरक,गौणपात्र
२७	श्यामा	,,	,,	,,	,,	,, ,,
२८	माम	जेल	,,	,,	प्रतिष्ठित	,, ,,
२९	बालसमुदाय	शंखनाद	,,	,,	,,	,, ,,
३०	धाम	,,	,,	,,	अप्रतिष्ठित	,, मुख्यपात्र
३१	रुद्रमणि	महातीर्थ	,,	,,	प्रतिष्ठित	समूहपरक गौणपात्र
३२	तिलोत्तमा	नागपूजा	,,	,,	साधारण	समूहपरक मुख्यपात्र
३३	गंगाजली	बेटी का धन	,,	,,	प्रतिष्ठित	,, कथानक की सूत्रधार
३४	मुन्नू	विमाता	,,	८	,,	व्यक्तिपरक ,, ,,
३५	लाडली	बूढ़ी काकी	,,	,,	,,ठ	समूहपरक,गौणपात्र

चरित्रों की विशेषताएं	आयु वर्ष
अज्ञानता के कारण शिशु के क्रिया द्वारा पिता के चरित्र पर प्रकाश, मिठाई के प्रलोभन देकर उनसे गुप्त बातों की जानकारी करना ।	संभवत:८-१०
खेल में अनुकरण।	—
सजा पाने पर मृत्यु की कल्पना का सुखद अनुभव, हवाई किले बनाना निर्दोष प्रमाणित होने पर आनन्द ।	८-१०
शिशु स्नेह के प्रदर्शन के माध्यम से परिवार वालों से मित्रता, मिठाई खिलौने के प्रति आकर्षण, स्थिति की गम्भीरता के प्रति अज्ञानता, अत: फुसलाने पर मना की गई बातों को बता देना ।	४-५
स्नेह देने वालों के प्रति अगाध प्रेम, शिशु में पशु-प्रेम, दान करने की भावना।	--
यथोचित शिक्षा तथा बर्ताव के प्रभाव में बुरी आदतें पड़ जाना।	१५वर्ष
बाहर से आए हुए पिता के प्रति प्यार का प्रदर्शन।	४-५
मनोरंजन के अभाव में मारपीट, दूसरों का ध्यान आकर्षित करने की प्रवृत्ति।	--
,, ,, ,, ,,	
रूठने की प्रवृत्ति, अनुकरण वातावरण का प्रभाव।	--
साप्ताहिक फेरीवाले के प्रति उत्सुकता, चिढ़ाने की प्रवृत्ति ।	—
शिशु-स्नेह के कारण आलसी पिता का कर्म-पथ में अग्रसर होना, किसी वस्तु के लिए मचलना ।	४-५
स्नेह देने वाली दाई के प्रति अगाध प्रेम, उसकी अनुपस्थिति में दुखी शिशु-स्नेह के द्वारा त्याग का उदय ।	-
नवीन वस्तु के प्रति जिज्ञासा ।	—
मां के न रहने पर सीता से अगाध प्रेम, वाक्पटुता ।	—
मृत-माता के स्मरण से दु:ख, विमाता के स्नेह से माता का स्मरण, अधिक स्नेह पाने पर हठीला बन जाना ।	—
छोटों के साथ संरक्षण का भाव, स्नेह देने वाले के प्रति त्याग, रात्रि में भय, [illegible] ।	—

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
३६	बाल समुदाय	बूढ़ी काकी	मा०स०८	प्रतिष्ठित	समूहमरक गौणपात्र
३७	एक शिशु	तथ्य	कफ़न	,,	,, ,,
३८	मैं(प्रेमचन्द)	मेरी पहली रचना।	,,	,,	,, मुख्यपात्र

गुप्तधन में मध्यवर्ग के शिशु-चरित्र

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
१	हिरामन	नेकी	गुप्तधन भाग१	प्रतिष्ठित	,, मुख्य [illegible] पात्र, कथानक का सूत्रधार।
२	राजा	विक्रमादित्य का तेगा।	,, ,,	सामान्य	समूहमरक, गौण पात्र कथानक का सूत्रधार।
३	कमला	मिलाप [illegible]	,, ,,	,,	समूहमरक,गौण पात्र
४	मसऊद	शेख मखमूर	,, ,,	प्रतिष्ठित	समूहमरक, गौणपात्र
५	बालकों का समूह	सिर्फ एक आवाज	,, १	प्रतिष्ठित	समूहमरक, गौण पात्र, वातावरण के सृष्टा
६	कैशव और ख्वाजा	मादाम दीस्त	,, २	समूहमरक,मुख्य पात्र	

चरित्रों की विशेषताएं	आयु वर्ष
बूढ़ों को चिढ़ाने की प्रवृत्ति ,माता-पिता की उदासीनता से बालकों का उद्दण्ड होना ।	--
स्नेह देने वाले से आत्मीयता ।	--
प्रतिशोध की भावना,घटना से प्रभावित ।	१३

क- मेला आदि देखने के लिए मां के साथ जाना ।	७ वर्ष
ख- इस बालक के डूबने वाली घटना से मानव जीवन में छिपे हुए रहस्यों का उद्घाटन-- लेखक द्वारा ।	
क- मां की अनुपस्थिति में मां के लिए रट लगा देना ।	शिशु वर्ग
ख- माता के प्रति शिशु का अत्यधिक स्नेह होने का मनोवैज्ञानिक सत्य ।	
ग- मिठाई द्वारा उनका ध्यान दूसरी ओर मोड़ देना ।	
क- शिशु-स्नेह अपने कुपथगामी पिता को सद्मार्ग की ओर लाता है ।	३-४
ख- शिशु-स्नेह पिता के मानस-पटल पर अमिट छाप छोड़ देता है । जो समय-समय पर उभर कर उसके मानसिक जगत् में परिवर्तन लाता है ।	
क- आनुवांशिकता का प्रभाव-- शाह का पुत्र गरीबी और मुसीबतोंमें पैदा होने पर जन्म से ही शाही गुणों से आभूषित ।	
ख- गांव में गांव के बालकों का नेता बनना, खेल-खेल में उनपर शासन करना ।	
ग- वीर पिता के वीर-पुत्र की भांति व्यवहार करता है ।	
क- दादा-दादी के साथ चन्द्रग्रहण देखने जाने के लिए हंगामा मचाना ।	बालक वर्ग
ख- बालकों का स्वभाव-- जब कोई घर से बाहर जाता है साथ जाने के लिए मचलना ।	
ग- बाहरसे लौटने पर मनोनुकूल चीजें न मिलने पर रोना-झुंझलाना ।	
क- बालकों के मन में चिड़िया अण्डे बच्चे के विषय में जिज्ञासा तथा कुतूहल की भावना	६-८
ख- अपनी शंका का समाधान स्वयं करने में मग्न	
ग- पशु-पक्षी के लिए उनके हृदय में अधिक संवेदना	
घ- खेल में अधिक ध्यान -- गर्मी की दोपहरी में चुपचाप चोरी से निकलकर खेलना ।	

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
७	मैं(सर्वनामसे)	होली की छुट्टी	गुप्तधन २	प्रतिष्ठित	व्यक्तिपरक,मुख्य,आत्म-कथात्मक रूप में।
८	तीन वर्षीय शिशु	देवी	,, २	प्रतिष्ठित	समूहपरक, वातावरण का सृष्टा।गौड़।
९	रामस्वरूप	दूसरी शादी	,, ,,	सामान्य	समूहपरक,मुख्य,कथानक का सूत्रधार

उपन्यासों में मध्यवर्ग के शिशु पात्र

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
१	निर्मला	निर्मला	--	प्रतिष्ठित	समूहपरक,मुख्य पात्र
२	कृष्णा	,,	--	प्रतिष्ठित,	समूहपरक, गौण,वातावरण का सृष्टा
३	चन्द्रभानु	निर्मला	प्रतिष्ठित	समूहपरक गौण	
४	सियाराम	,,	,,	,,	,, (बाल अपराधी बालक)

चरित्रों की विशेषताएं	आयु वर्ष
(क) इस आयु में चोरी क आदि में विशेष निपुणता प्राप्त कर लेना(परिस्थिति किशोर के अनुकूल)	
(ख) प्रारम्भ में चोरी करते समय मन में अन्तर्वेदना, उसे महापाप समझना । धीरे-धीरे उस भावना का लोप।	
(ग) चोरी करने पर माता के सम्मुख मनगढ़ंत कथा कहकर दंड से मुक्त हो जाना ।	
(क) शिशु की दयनीय स्थिति देखकर दूसरी नारी के हृदय में ममता तथा स्नेह का भाव जागृत होना ।	३वर्ष
(क) मातृ-स्नेह वंचित तथा सौतेली मां वाले शिशु का मनोविज्ञान।	४वर्ष
(ख) शिशु की दयनीय मानसिक स्थिति उसके चेहरे पर अंकित	
(क) इस वय की बालिकाओं का स्वाभाविक गुण-- काम से जी चुराना, मां की आवाज सुनकर अनसुनी करना ।	१५वर्ष
(ख(खेल के प्रति अत्यधिक आकर्षण , बाजे की आवाज सुनकर दौड़ पड़ना	
(ग) स्वप्न का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण--- भविष्य के अज्ञात भय से दुखी, स्वभाव में परिवर्तन ।	
(क) मां की आवाज सुनकर अनसुनी कर देना, खेल में व्यस्त रहना, बाजे की आवाज सुनकर दौड़ पड़ना ।	१०
(ख) इस वय के बालकों में सामाजिकता का भाव ,खेलने के लिए मित्र की आवश्यकता ।	
(ग) अपने समाज तथा व्यवहार आदि के प्रति जिज्ञासा ।	
(घ) मस्तिष्क की अपरिपक्वता के कारण शब्दों का अर्थ अभिधा में ही ग्रहण करना ।	
(क) इस वय के बालक स्वभाव के ऊधमी ।	१२
(ख) अपने से छोटे तथा हमजोली को चिढ़ाने की प्रवृत्ति	
(ग) अपने काम के प्रदर्शन की स्वाभाविक प्रवृत्ति ।	
(घ) परिवार में विमाता के आगमन तथा बूढ़ी विधवा फूआ के होनेके कारण बराबर कलह--- इसका प्रभाव शिशु-मन पर — दोहरे शासन का प्रभाव , बालक का उद्दण्ड हो जाना बिगड़ जाना । बाल अपराधी बन जाना ।	

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर ।	पात्र - प्रकार
५	आशा	निर्मला	—	प्रतिष्ठित	समूहपरक, गौण
६	सियाराम	,,	—	,,	,, ,,
७	सोना	गोदान	—	आरम्भ में प्रतिष्ठित बाद में अप्रतिष्ठित	समूहपरक, गौण पात्र अपरिवर्तनशील

चरित्रों की विशेषताएं	आयु श्रेणी
(क) शिशु का माता की गोद में चिपट जाना दूसरों के बुलाने पर नहीं आना	आ०- ४
(ख) अत्यधिक कष्ट होने पर भी माता की ओर स्नेह विह्वल होकर देखना
(क) मातृ-स्नेह से वंचित बालक के हृदय में अत्यधिक करुणा और विलाप	७ वर्ष
(ख) रोये हुए बालक का सुषुप्तावस्था में माता या आत्मीयजन से चिपट जाना। बालक का मुंह भय और शंका से विकृत हो जाता है।
(ग) बड़े भाई के मार के डर से पिता की आज्ञा का उल्लंघन।
(घ) विमाता की आंखों में आंसू देखकर बालक के मन में ग्लानि नहीं अपितु भय और शंका की इस आंसू का मूल्य उसे किस प्रकार चुकाना पड़ेगा।
(ङ०) बार-बार सौदा लौटाने वाले शिशु की (सौदा लौटाते समय) मानसिक स्थिति।
(च) शिशु की मनोगत वेदना उसके प्रत्येक बात से प्रकट होना।
(छ) संवेदना पाकर शिशु का रो पड़ना और सही बात कह देना।
(ज) बालक का साधु के जीवन के प्रति कौतूहल और जिज्ञासा।
(झ) असहाय बालक का आश्रय पाने पर स्वभाव में निर्भीकता का आविर्भाव।
(ट) स्कूल में अनुपस्थित होने पर शिक्षक के कठोर दण्ड की कल्पना से भयभीत शिशु-मन।
(ठ) विमाता के विवेकपूर्ण सम्भाषण का प्रभाव बालक के मस्तिष्क पर
(ड) स्नेह से ठुकराया बालक स्नेहपूर्ण आश्रय के लिए विह्वल।
(ढ) नवागन्तुक के साथ बालक के व्यवहारकुशलता का प्रदर्शन।
(क) वाद-विवाद में अपने तर्क द्वारा दूसरे को पराजित करने की बाल सुलभ प्रकृति	१२ वर्ष
(ख) अपने वय और वातावरण के अनुसार ही उदाहरण ढूंढना --सोना की मधुमियां कण्ठा, विवाह की पीली साड़ी इत्यादि।
(ग) सौगात आने पर चट पट बांटने की प्रवृत्ति। छोटे बालक को सजाने-संवारने का शौक
(घ) परिवार में बड़ी बेटी होने के कारण परिवार का अधिक बोझ सम्हालना, अधिक समझदार और अधिक चिन्तनशील।
(ङ०) बाल्यकाल के दु:खद वातावरण के प्रति प्रतिक्रिया, सौना को कर्ज से चिढ़, पर पुरुष या पर-स्त्री- प्रेम के विरुद्ध दृढ़ विचार, पति को अपने वश में रखने की भावना।

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
८	रूपा	गोदान	—	आरम्भ में प्रतिष्ठित बाद में गरीब किसान	समूहपरक, गौण पात्र एक विशिष्ट वातावरण की सृष्टा
९	गोपी	ग़बन	—	सामान्य	समूहपरक गौण पात्र।
१०	विश्वम्भर	,,	—	,,	समूहपरक गौण पात्र वातावरण का सृष्टा
११	जालपा	ग़बन	—	प्रतिष्ठित	समूह परक गौण पात्र वातावरण की सृष्टा।
१२	गंगाजली	सेवासदन	—	प्रतिष्ठित	समूहपरक
१३	जान्हवी की दो लड़कियाँ	,,	—	,,	,, गौणपात्र वातावरण की सृष्टा
१४	प्रताप बृजरानी	वरदान	—	,,	व्यक्तिपरक मुख्यपात्र
१५	दो शिशु	कर्मभूमि	—	—	समूहपरक गौणपात्र

(इन दोनों शिशुओं में एक मुन्नी का शिशु है दूसरा मुसाफिरखाने का शिशु है)

(क) परिवार में सबसे छोटी होने के कारण बात-बात पर जिद करना । ५-६

(ख) बात-बात में बड़ी बहन से लड़ने और ठुनकने की प्रवृत्ति ।

(ग) अपने नाम से सम्बन्ध स्थापित करना, बहुत दिन पर बिछड़े भाई को देखकर अत्यधिक खुश , ग्रामीण बालिका के मन में शिशु-प्रेम ।

(घ) विपन्न परिवार में होने के कारण मिठाई को देखकर धैर्य खो देना।

(क) शिशु में यात्रा के प्रति आकर्षण --

(ख) नये स्थान से तुरन्त मन उचट जाना और घर की रट लगाना ।

(ग) नये स्थान में रमने की प्रवृत्ति ।

(घ) इस वय के बालक के मन में काल्पनिकता, अपने प्रति बड़प्पन का भाव ।

(क) बड़े भाई के रौब से अत्यन्त भयभीत । ६वर्ष

(ख) बालकों में प्रतिस्पर्द्धा का भाव ।

(क) वातावरण के अनुसार वस्तु-विशेष के प्रति अभिरुचि । ३६ ३- ६

(ख) शैशव काल में ही किसी वस्तु के प्रति मानसिक प्रतिमा का आविर्भाव

(ग) बालिकाओं के मन में अलंकारों के प्रति आकर्षण ।

(क) बहुत दिनों पर मैके जाने पर शैशव की सुखद स्मृतियां --घरौंदे बनाना, गुड़िया खेलना आदि । --

बालकों से कोई बात न करे तो उनके हृदय पर आघात पहुंचता है। नये स्थान पर जाने पर सब कोई उनसे दूर-दूर रहें तो उनकी मार्मिक वेदना का उदय होना । --

(क) मैत्री होते ही चिड़ियों की भांति चहकना, अपने खिलौने तथा किताबों को दिखाना । ६-१४

(ख) यथोचित वातावरण पाकर शिक्षा प्राप्त करने में आनन्द लेना ।

(ग) शिशु अपने साथियों की शंका का समाधान और अच्छी तरह कर सकते हैं ।

(घ) मन में तरह-तरह के प्रश्न-- रेल कैसे चलती है? गंगा जी का पानी नीला क्यों है ? क्या चिड़ियां भी बातें करती हैं ? आदि

(ङ०) बच्चों के मन में सेवा तथा उदारता का भाव, शिशु अधिक संवेदनशील होते हैं शिशु का अनजान व्यक्ति की ओर भी लपकना, उसके बाद मुंह मोड़ लेना । लोटे को ०-२ को गाड़ी बनाकर चलाना । मातृ-स्नेह-वंचित बालक का स्वर्गवास हो जाना ।

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
	निम्नवर्ग के शिशु पात्र				
१	रग्घू	अलग्योझा	मा०स०भाग१	सामान्य	समूह परक मुख्य पात्र,नि
२	केदार	,,	,, ,,	,,	,, गौण पात्र
३	लछमन	,,	,, ,,	,,	,, ,,
४	खुन्नू	,,	,, ,,	,,	,, ,, वातावरण का सृष्टा
५	कुनिया	,,	,, ,,	,,	,, ,,
६	दो शिशु	,,	,, ,,	अप्रतिष्ठित	समूह परक, गौण पात्र वातावरण का सृष्टा
७	हामिद	ईदगाह	,, ,,	प्रतिष्ठित	व्यक्तिपरक,मुख्य पात्र
८	मोहसिन	,,	,, ,,	सामान्य सामाजिक	समूह परक गौण पात्र
९	महमूद	,,	,, ,,	,,	,, ,,
१०	नूरे	ईदगाह	,, ,,	सामान्य	,, ,,
११	सम्मी	,,	,, ,,	,,	,, ,,
१२	प्रकाश	माँ	,, ,,	,,	,, मुख्य,पात्र
१३	गया	गुल्ली डंडा	,, ,,	—	,, गौण पात्र
१४	सोहन	ज्योति	,, ,,	सामान्य	,, ,,

विमाता, स्नेहवंचित ,अपनी परिस्थिति से उदासीन	१० वर्ष
अपने पराये का ज्ञान नहीं, नवीन घटना की अभिव्यक्ति का प्राबल्य	७वर्ष
खेल के प्रति आकर्षण, स्वार्थ भावना ।	--
सामूहिक विनोद।	४-५
स्नेह करने वाले से लिपटना, आत्माभिव्यक्ति का प्राबल्य।	२-३
दायित्व का भाव, माता के हृदय-परिवर्तन में शिशु-स्नेह।	--
त्यौहार में सामूहिक खेल और आनन्द, मृत के प्रति आशामय कल्पना, खेल में प्रतिद्वन्द्विता, नवीनता के प्रति आकर्षण ,त्याग की भावना, वातावरण से प्रभावित कल्पनाएं , ग्रामीण बालक का मस्तिष्क साफ सिलेट की तरह , चिढ़ाने की प्रवृत्ति ।	५वर्ष
त्यौहार में आनन्द, सामुहिक खेल , पैसे के अनुसार खिलौने खरीदने की कल्पना ज्ञान का प्रदर्शन,खेलमें प्रतिद्वन्द्विता, नवीनता के प्रति आकर्षण ।	७-८
त्यौहार में प्रसन्नता, पैसा प्रसन्नता का एक कारण, उसका प्रदर्शन, अपने से योग्य साथी से प्रभावित, कल्पना द्वारा निष्प्राण वस्तु में प्राण देना, स्वतन्त्रता प्रेमी , खेल द्वारा सीखना ।	६७- ८ के करीब
त्यौहार में प्रसन्नता, समुदाय में शरारत,आत्मप्रशंसा,अनुकरण , कल्पना द्वारा निष्प्राण वस्तु में प्राण-प्रतिष्ठापन ।	७-८
अल्पभाषी (शिशु विशेष की प्रवृत्ति)उपयोगिता का ख्याल,दूसरे मित्र को हीम दिखाने की प्रवृत्ति ।	,,
माता का जीवनाधार,उसके लिए सुन्दर कल्पनाएं ,मृत्यु के समय शिशु के भविष्य की चिन्ता,सुख-दुःख का प्रभाव बाल मन पर, शरारत की प्रवृत्ति, १२-१४ वर्ष में मानसिक द्वन्द्व ।	१०
खेल में वाद-विवाद,मार-पीट ।	--
क्रोध करने वाले से भय, स्नेह देने वाले के प्रति सद्भावना ।	--

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
१५	मैना	ज्योति	मा०स०भा०१	सामान्य	समूहपरक गौण पात्र,
१६	बालक	आखिरी हीला भाग१	,, ,,	,,	शिशुओं के प्रत्यक्ष सम्बन्ध में सामान्य चर्चा।
१७	सुभागी	सुभागी,,	,, ,,	,,	समूहपरक मुख्यपात्र।
१८	मंगल	दूध का दाम	,, ,,२	अप्रतिष्ठित	,, ,,
१९	एक शिशु (नवजात)	बालक	,, ,,२	,,	,, गौणपात्र,सूत्रधार।
२०	कृष्णचन्द्र	डामुल का कैदी	,, ,,२	सामान्य	व्यक्तिपरक मुख्यपात्र
२१	एक बालक	विश्वास	,, ,,३	प्रतिष्ठित	समूहपरक गौणपात्र
२२	मथुवा	सौभाग्य के कोड़े	,, ,,३	अप्रतिष्ठित	समूहपरक मुख्यपात्र परिवर्तनशील
२३	जियावन	मंदिर	,, ,, ५	,,	समूहपरक मुख्यपात्र
२४	एक बालिका	पिसनहारी का कुआं	,, ,, ५	अप्रतिष्ठित	व्यक्तिपरक समूहपरक दोनों मुख्यपात्र
२५	बालसमुदाय	आत्माराम	,, ,, ७	--	सामान्य गौण वातावरण के सृष्टा
२६	तीन लड़के	बैर का अन्त	,, ,, ७	अप्रतिष्ठित	समूहपरक गौणपात्र
२७	साधो	खून सफेद	,, ,, ८	,,	,, मुख्यपात्र
२८	शिवगौरी	,,	,, ,, ८	,,	,, गौणपात्र
२९	बाजबहादुर	सच्चाई का उपहार	,, ,, ८	--	व्यक्तिपरक मुख्यपात्र
३०	मगनसिंह	गुप्तधन		अप्रतिष्ठित	समूहपरक मुख्यपात्र

चरित्रों की विशेषताएं	आयु वर्ग
क्रोध करने वाले से भय , स्नेह प्रीति करने पर भय दूर होना, मिठाई के प्रति मोह	--
खिलौने की दुकान पर मचलना, रोगग्रस्त शिशु का मचलना ।	--
विशेष प्रोत्साहन से कार्य करता, विवाह के सम्बन्ध में अज्ञानता, दुख से पलायन करने की प्रवृत्ति , दिवास्वप्न ।	११
खेल में जाति-पाँति की भावना से मुक्त, पशु प्रेम, स्नेह वंचित शिशु की आत्मा की तृप्ति पशु-प्रेम द्वारा, स्नेहवंचित बालक, एकान्त प्रेमी ।	०[illegible]० -८-
यहाँ नवजात शिशु दूसरे चरित्रों को प्रकाश में ला ता है । उसके चरित्र पर कोई प्रकाश नहीं	नवजात
माता-पिता के दृढ़ संस्कारों को लेकर शिशु का जन्म (रवि बाबू के 'खोखा बाबू' कहानी में यही विशेष (आरम्भ में यह उच्चवर्गीय है, इसके जन्म के समय निम्नवर्गीय)	१५
बालक अपने रक्षक की रक्षा चाहता है ।	५-६
उपभोग तथा ऐश-आराम के प्रति आकर्षण, अपने धर्म के प्रति मोह, उचित वातावरण पर मानसिक विकास ।	--
मीठी वस्तु के लिए लालच, बड़ों के लिए अच्छी चीजें लाने की प्रतिज्ञा ।	--
गढ़ा खोदकर खेलना, खेल में एकान्तता, माता-पिता के दृढ़ संस्कारों को लेकर शिशु का जन्म ,सामूहिक खेल ।	७
असामान्य चरित्र वालों से मज़ाक करने की प्रवृत्ति, नवीन घटना सामूहिक आनन्द	-
अपने पराये शत्रु-मित्र की अज्ञानता, स्नेह देनेवाले से घुल-मिल जाना ।	-
मिठाई से प्रेम, वातावरण का प्रभाव, अपने को माता-पिता की चिन्ता का कारण मानना ।	४
अपरिचित व्यक्ति के सामने आने में हिचक ।	१०-१२
दृढ़ चरित्र के बालक में सत्य के प्रति निष्ठा, अपराधी बालक के क्षमा मांगने पर दया का आविर्भाव ।	--
शिशु की मानसिक वेदना, चेहरे पर स्पष्ट दीखना ।	

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
३१	एक लड़का	बोझ	मा०स०८	अप्रतिष्ठित	समूहपरक गौण पात्र
३२	एक बालिका	जुर्माना	कफन	,,	,, ,,

गुप्तधन में निम्नवर्ग के शिशु-चरित्र

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
१	रोहिणी	अनाथ लड़की	गुप्तधन १	प्रतिष्ठित	,, मुख्यपात्र
२	तुलिया	देवी	,, २	,,	व्यक्तिपरक ,, (अपरिवर्तनशील आत्मकथात्मक रूप में)
३	जोखू	सौत	,, २	(निम्नमध्य वर्गीय ग्रामीण परिवार) प्रतिष्ठित	समूहपरक वातावरण का सृष्टा ।

गुप्तधन उपन्यास में निम्नवर्ग के शिशु-पात्र

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
१	झुन्नू	गोदान	[illegible]	अप्रतिष्ठित	समूहपरक गौण पात्र
२	मंगल	,,	—	प्रतिष्ठित मजदूर परिवार	समूहपरक गौण पात्र वातावरण का सृष्टा — दो पात्रों के प्रेम को चरमोत्कर्ष पर पहुंचाने वाला
३	[illegible]	,,	—	अप्रतिष्ठित	समूहपरक गौणपात्र

चरित्रों की विशेषताएं	आयु वर्ष
सहानुभूति पूर्ण बर्ताव से दोष स्वीकारकरना ।	७-८
बीमारी में चिड़चिड़ापन ।	--
(क) पितृ-स्नेह वंचित शिशु के मन में स्नेह प्राप्त करने की प्रबल उत्कण्ठा	३-४
(ख) स्नेह से सिंचित भोली-भाली बातों द्वारा हृदय को मोह लेना,सेठ पुरुषोत्तमदास को अपना पालक पिता बना लेना ।	
(ग) अनुकूल परिस्थिति पाकर शिक्षा-दीक्षा में उन्नति ।	
(क) बालिका के मन में गहने के प्रति आकर्षण।	५
(ख) इस आयु की बालिका में नारी सुलभ लज्जा का उदय ।	
(ग) बाल्यकाल में पड़ी हुई स्नेह की ग्रन्थि जीवनपर्यन्त उसी प्रकार स्वच्छ और निर्मल बनी रहती है ।	
अपनी रुग्णावस्था में भी विमाता के हृदय को मोह लेना ।	७
(क) शिशु का नवीन वस्तुओं की ओर लपकना ।	
(ख) किसी वस्तु को पकड़ने की उपेक्षा,उसे मुंह में डालना तथा खेलना ।	
(ग) अपरिचित व्यक्ति से भय (घ) शिशु स्नेह के कारण माता के मन में अपराधी पुत्र को क्षमा करने का भाव उदय होना ।	
(क) शिशु के मन में नवीन वस्तु के प्रति [illegible] कौतूहल ।	
(ख) नवीन वस्तु लेने के लिए आग्रह ।	
(ग) शिशु के मन में स्नेह के प्रति [illegible] आग्रह ।	
(घ) शिशु का मूंछ के प्रति आकर्षण, उसे उखाड़ने की प्रवृत्ति ।	
माता की अस्वस्थ अवस्था में शिशु को स्नेह न प्राप्त होना ।	स्वर्ण
दूध न पाने पर दांत काटने की शिशु-प्रवृत्ति । आने वाले शिशु की स्मृति से मृत शिशु की स्मृति अधिक वेदनामय ।	

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार
४	नवजात शिशु	गोदान	--	अप्रतिष्ठित	समूहपरक गौण पात्र
५	बच्चों का समूह	,,	--	अस्पष्ट	,, ,,विशिष्ट, ग्रामीण वातावरण के स्रष्टा।
६	रामू	,,	--	अप्रतिष्ठित	समूहपरक,गौण एक विशिष्ट वातावरण का स्रष्टा।
७	मिठुआ	रंगभूमि	--	,,	समूहपरक गौण पात्र वातावरण का स्रष्टा
८	घीसू	रंगभूमि	--	अप्रतिष्ठित	समूहपरक गौण पात्र
९	[illegible]लकों का [illegible]ह	,,	--	अज्ञात	गौण पात्र समूहपरक वातावरण का स्रष्टा

चरित्रों की विशेषताएं	आयु वर्ष
(क) माता के अस्वस्थ होने के कारण पड़ोसी स्त्री द्वारा शिशु का पालन -- मूल में निरीह शिशु के प्रति स्नेह का भाव ।	नवजात
(ख) शिशु का जन्म अप्रत्यक्षरूप से परिवार तथा पिता के जीवन की दशा बदल देता है ।	
(क) किसी वस्तु के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न होने पर बालकों में अनेक प्रश्न पूछने की प्रवृत्ति ।	--
(ख) किसी वस्तु पर अधिकार जमाने के लिए जल्दी से उसपर बैठने या लेने की क्रिया	
(ग) शिशु के मन में सिपाहीसे भय ।	
(क) शब्दोच्चारण, अवयवों की अपरिपक्वता के कारण,	स्वर्ण
(ख) इस अवस्था के शिशु की भाषा तुतली होती है ।	
(ग) पशुओं की बोली तथा व्यवहार का अनुकरण ।	
(घ) मिट्टी से खेलने की प्रवृत्ति ।	
(क) अधिकस्नेह पाकर बिगड़ जाने वाला बालक ।	१२-१३
(ख) चिढ़ाने की प्रवृत्ति,बालकों के साथ क्रूर विनोद करना ।	
(ग) अपने सहपाठियों को पराजित करने के लिए कुश्ती आदि व्यायाम करके दांव-पेंच सीखना ।	
(घ) अभिभावक के ठीक निर्देशन न प्राप्त करने या अत्यधिक लाड़-दुलार से कुमार्गी तथा स्वार्थी बन जाना ।	
(क) चंचल बालकों के लिए अन्धा विनोद की वस्तु -- बालकों में क्रूर विनोद करने की प्रवृत्ति ।	१२-१३
(ख) शारीरिक बल की वृद्धि के लिए कुश्ती तथा कसरत करना ।	
(ग) ग्रामीण बालकों के मन में विदेशियों के प्रति अजीब कौतूहल जिज्ञासा । (पादड़ी आयेगा, तसवीरें दिखायेगा, किताबें देगा, गीत गायेगा, मिठाइयां देगा) ।	
(क) समूह में बालक सामूहिक भावना से प्रेरित ।	१२-१४
(ख) गांव में आने वाले किसी अपरिचित व्यक्ति को देखकर वहां बीसों लड़कों का एकत्रित हो जाना ।	

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	
१०	एक बालक	कर्मभूमि	--	अप्रतिष्ठित	समूहपरक	गौण
११	अमर के पाठशाला के शिशु।	,,	--	,,	,,	,,

प्रेमचन्द की कहानियों में मुख्य शिशु-पात्र

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	
१	रग्घू	अलग्योझा	मा०स०१	सामान्य	समूहपरक, निम्न	
२	हामिद	ईदगाह	,,	प्रतिष्ठित	व्यक्तिपरक	निम्न निम्न
३						
३	प्रकाश	मां	मा०स०भा०१	सामान्य	समूह परक	निम्न
४	सुभागी	,,	,,	,,	,,	,,
५	मंगल	दूध का दाम	,, २	अप्रतिष्ठित	,,	,,
६	कृष्णचन्द्र	डामुल का कैदी	,, २	सामान्य	व्यक्तिपरक	,,
७	नथुवा	सौभाग्य के कोड़े	,, ३	,,	,, परिवर्तनशील	निम्न

चरित्रों की विशेषताएं	आयु वर्ष

(क) बालक किसी बात को गुप्त नहीं रख सकते । १०- ११
(ख) अपरिचित व्यक्ति से भी अपने परिवार की सारी बातों को कह डालना ।
(क) कहानियों के प्रति अभिरुचि । १०-१२
(ख) बालकों में प्रतिस्पर्धा का भाव ।
(ग) अच्छे शिक्षक के मिलने पर मनोयोग से पढ़ने की इच्छा ।

विमाता, स्नेहवंचित अपनी परिस्थिति से उदासीन १०
(क) त्योहार में सामूहिक खेल और आनन्द ५
(ख) मृत के प्रति आशामय कल्पना खेलमें प्रतिद्वन्द्विता
(ग) नवीनता के प्रति आकर्षण, त्याग की भावना, वातावरण से प्रभावित कल्पनाएं ।
(घ) ग्रामीण बालकों का मस्तिष्क, साफ सलेट की भांति ।
(ङ०) चिढ़ने की प्रवृत्ति ।
(क) विधवा माता का जीवनाधार, उसके लिए सुन्दर कल्पनाएं, मृत्यु के समय शिशु के भविष्य की चिन्ता । १०
(ख) सुख-दुख का प्रभाव बाल-मन पर, शरारत की प्रवृत्ति, १२-१३ वर्ष में मानसिक द्वन्द्व ।
~~(४) सुमनमी ,.... सुमनमि ,, ,, ,,~~
क-विशेष प्रोत्साहन से कार्य में दक्षता (ख) विवाह के सम्बन्ध में अज्ञानता, ११
(ग) दुख से पलायन, (घ) दिवा स्वप्न ।
खेल में जाति पांति की भावना से मुक्त, पशु-प्रेम, स्नेह वंचित शिशु के तृ स्नेह की तृप्ति पशु-प्रेम द्वारा । स्नेहवंचित बालक एकांतप्रेमी । ८
माता-पिता के दृढ़ संस्कारों को लेकर शिशु का जन्म ,विशेष--१रविबाबू के जन्म से१५ लेखोत्रा बाबू में भी यही मनोविज्ञान है,(२)आरम्भ में यह उच्चवर्गीय है इसके जन्म के समय निम्न वर्ग का होता है ।
उपन्यास तथा खेल-आराम के प्रति आकर्षण ,अपने धर्म के प्रति मोह,उचित वातावरण में मानसिक विकास ।

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र-प्रकार	वर्ग
८	जियावन	मन्दिर	मा०स०५	अप्रतिष्ठित	समूहपरक	निम्न
९	एक बालिका	पिसनहारी का कुआ	,, ,,६	,,	व्यक्ति ,,	,,
१०	साधो	खून सफेद	,, ,,८	,,	,,	,,
११	लाजबहादुर	सच्चाई का उपहार	,, ,,८	अज्ञात	व्यक्तिपरक	,,
१२	मगनसिंह	गुप्तधन	मा०स०७	अप्रतिष्ठित	समूहपरक	,,
१३	मैं(सर्वनाम)	बड़े भाई साहब	,, ,,१	प्रतिष्ठित	,,	मध्य
१४	मैं(सर्वनामसे)	गुल्ली डंडा	,, ,,१	,,	अपरिवर्तनशील	मध्य
१५	कैलाशकुमारी	नैराश्यलीला	,, ,,३	,,	समूहपरक,	मध्य
१६	तैंतर	तैंतर	,, ,,३	प्रति०	,,	,,
१७	रेवती	मृतक भोज	,, ,,४	प्रतिष्ठित	व्यक्तिपरक	मध्य
१८	सूर्यप्रकाश	प्रेरणा	,, ,, ४	,,	,,	,,
१९	बिन्नी	भूत	,, ,, ४	,,	समूहपरक	,,
२०	चिन्ता	सती	,, ,, ५	,,	व्यक्तिपरक	,,
२१	मैं और हलधर	चोरी	,, ,, ५	सामान्य	समूहपरक	,,
२२	मैं([illegible])	[illegible]	,, ,, ५	प्रतिष्ठित	समूहपरक	,,

चरित्रों की विशेषताएं	उम्र वर्ष
मीठी वस्तु के प्रति लालच,बड़ों के लिए अच्छी चीजें लाने की प्रतिज्ञा।	१०
गढ़ा खोदकर खेलने की प्रवृत्ति ,खेल में एकान्तता, माता-पिता के दृढ़ संस्कारों को लेकर शिशु का जन्म ।	७
मिठाई से प्रेम, वातावरण का प्रभाव, अपने को माता-पिता की चिन्ता का एक कारण मानना ।	४
दृढ़ चरित्र के बालक में सत्य के प्रति निष्ठा, अपराधी मित्र के क्षमा मांगने पर दया का आविर्भाव ।	--
शिशु की मानसिक वेदना चेहरे पर स्पष्ट दीखना ।	
खेल के प्रति आकर्षण, सफलता पाने पर निर्भीकता, अधिक दबाव देने पर प्रतिक्रिया । दण्ड पाने पर सुधार का संकल्प , स्नेह से सुधरना ।	१४- १५
सामूहिक खेल, मारपीट,जाति की भावना नहीं ,बाबू द्वारा धमकी ,यात्रा के लिए प्रसन्नता ,अपने को बड़ा दिखाना ,वातावरण का प्रभाव--कम आयु में अनुचित ज्ञान ।	१२-१४
विवाह के प्रति अज्ञानता,दु:ख से पलायन, दिवास्वप्न ।	१३
स्नेह के अभाव में नवजात शिशु की क्रीड़ाओं में शिथिलता -- इसके द्वारा दादी,माता के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है ।	नवजात
बड़े बालक में छोटे के प्रति स्नेह और त्याग की भावना,मर्यादा की रक्षा का भाव । (विशेष आर्थिक स्थिति के बदलने पर भी संस्कार वही)	१२-१४
अपराधी बालक में नई-नई शरारत,खोज निकालने की विशेष प्रवृत्ति,विशेष परिस्थिति में अपराध के प्रति क्षोभ,लज्जा,ग्लानि ।	--
स्नेह देने वालों को माता-पिता से अधिक मानना, पक्षपात ,बालक में अनुकरण की प्रवृत्ति ।	४
खेल में अनुकरण ।	--
सजा पाने पर मृत्यु की कल्पना भी सुखद प्रतीत होती है ,खाई किले बनाना निर्दोषिता प्रमाणित होने पर आनन्द ।	८-१०
स्नेह देने वालों के प्रति अगाध प्रेम,शिशु में पशु प्रेम,दान करने की भावना ।	--

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र प्रकार	वर्ग
२३	जगतसिंह	कप्तान साहब	मानस-रोवर भाग५	सामान्य	व्यक्ति परक परिवर्तनशील	मध्य
२४	घाम	शंखनाद	भाग ७	अप्रति-ष्ठित	समूह परक	,,
२५	तिलोत्मा	नागपूजा	,, ७	साधारण	,, ,,	,,
२६.	मैं(प्रेमचंद)	मेरी पहली रचना	कफन	प्रतिष्ठित	,, ,,	,,
२७	सत्यप्रकाश	गृह दाह	मा०स० भाग ६	,,	व्यक्ति परक अपरिवर्तनशील	उच्च
२८	एक बालिका	कुत्सा	,, २	,,	समूह परक	मध्य

गुप्तधन में मुख्य पात्र

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र प्रकार	वर्ग
१	रोहिणी	अनाथ लड़की	गु०ध० भाग१	प्रतिष्ठित	समूह परक मुख्य पात्र	निम्न
२	मगनदास	त्रियाचरित्र	,,	,,	समूह परक	उच्च
३	हीरामन	मैकी	,,	,,	,, ,,	,,
४	मसऊद	शेख मखमूर	,,	,,	सूत्रधार के रूप में	मध्य
५	मुन्नी	खुदी	भाग २	अज्ञात	व्यक्ति परक	अज्ञात
६	बच्चा	बन्द दरवाजा	,,	,,	समूह परक	,,
७	बुढ़िया	देवी	,,	प्रतिष्ठित	व्यक्तिपरक [illegible] [illegible] रूप में	निम्न
८	[illegible]	कुसुम	,,	,,	समूहपरक	उच्च

यथोचित शिक्षा तथा वर्ताव के अभाव में बुरी आदतें ।

शिशु स्नेह के द्वारा आलसी पिता का कर्मपथ में अग्रसर होना , किसी वस्तु के के लिए शिशु का मचलना ।	४-५
नवीन वस्तु के प्रति जिज्ञासा, कौतूहल ।	-
प्रतिशोध की भावना , घटना से प्रभावित ।	१२
विमुग्धता , स्नेह वंचित, जीवन से उदासीन , एकांत प्रेमी, शिशु स्नेह ,दुर्व्यवहार से उदण्ड ।	-
वातावरण का प्रभाव - अत: कम आयु में अनुचित ज्ञान ।	१०
अनुकूल परिस्थिति प्राप्त होने पर उन्नति करना ।	३-४
अनाथ तथा होनहार अनाथ बालक, उच्च परिवार में गोद लिये जाने पर जीवन में उन्नति । उच्च परिवार के वातावरण के अनुकूल व्यवहार करना।	५-६
इस बालक की ७ वर्ष की आयु में घटने वाली घटना के घटने पर जीवन के रहस्य का उद्घाटन ।	७
आनुवांशिकता का प्रभाव शिशु चरित्र पर - राजा का पुत्र गरीब बालकों का नेता तथा दुर्दिन में जन्म लेने पर भी राजा के स्वभाव का ।ग्रामीण बालकों का नेता, पिता से राज-काज की बातों को ध्यान से सुनना ।	७
शैशव तथा बाल्यकाल में सांसारिक चिंताओं से मुक्त , चंचल-चपल तथा भोली बालिका । सबके दुख को मोलने वाली बालिका ।	५
प्रात: काल उठने के पश्चात शिशु मनोविज्ञान - चिड़िया को लपकना, लौमचे वाले की पुकार सुनकर ललचाई आंखों से बड़ों की ओर देखना, आसानी से बहल जाना ।	१½ या
बालिका के हृदय में बच्चे के प्रति आकर्षण , इस आयु में नारी सुलभ लज्जा का उदय, बचपन में बड़ी स्नेह की ग्रन्थि जीवन पर्यन्त निर्मल रूप में रहना,	५
शिशु परिवार का केन्द्र है। शिशु की सरलता , अबोधता तथा स्नेह की याद दिलानी पिता को बहुत दिनों के पश्चात माता से मिला देना ।	३

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र प्रकार	वर्ग
९	रामरूप	दूसरी शादी	गुप्तधन भाग २	साधारण	समूह परक	मध्य
१०	केशव और श्याम	नादान दोस्त	,,	,,	,,	,,
११	(मैं)	होली की छुट्टी	,,	प्रतिष्ठित	व्यक्तिपरक आत्म संस्मरणात्मक	,,

उपन्यासों के मुख्य पात्र

क्रम	शिशु-चरित्र के नाम	कहानी का शीर्षक	संग्रह का नाम	सामाजिक स्तर	पात्र प्रकार	वर्ग
१	प्रताप	वरदान	-	,,	व्यक्तिपरक	,,
२	वृजरानी	,,	-	,,	,,	,,
३	मायाशंकर	प्रेमाश्रम	-	,,	,,	उच्च
४	एक बालिका	कायाकल्प	-	,,	समूह परक	,,
५	जालपा	गबन	-	,,	,,	मध्य
६	निर्मला	निर्मला	-	,,	,,	,,